यूक्लिड

"युवावस्था में इस किताब के हाथ लगते ही यदि किसीकी दुनिया एकदम बदल नहीं जाती थी तो हम यही समझते थे कि वह अन्वेषण की सूक्ष्म बुद्धि से वंचित है।" यह उक्ति आइन्स्टाइन की है। आज इस किताब को लिखे दो हज़ार साल से अधिक हो गए हैं, फिर भी हाईस्कूल के विद्यार्थी आज भी इसे पढ़ते हैं।

आइन्स्टाइन का संकेत यूक्लिड की 'एलीमेंट्स' (ज्यामिति-मूलतथ्य) नामक जानी-मानी पुस्तक की ओर है। दुनिया की हर भाषा में इसका अनुवाद हो चुका है। अंग्रेज़ी में इसका पहला संस्करण 1570 में निकला था। यह अंग्रेज़ी अनुवाद लैटिन अनुवाद पर और लैटिन अनुवाद मूल ग्रीक के अरबी रूपान्तर पर आधारित है। मूल ग्रीक पुस्तक की रचना ईसा से लगभग 300 साल पहले हो गई थी।

अलेक्ज़ेण्ड्रिया का निवासी यूक्लिड एक ग्रीक गणितज्ञ और अध्यापक था। उसके व्यक्तिगत जीवन के बारे में कुछ भी मालूम नहीं। आज तक ऐसे कोई भी कागज़ात नहीं मिले, जिनसे यूक्लिड की जन्म-तिथि या उसके जन्म-स्थान के बारे में जानकारी मिलती। हम इतना ही जानते हैं कि वह अलेक्ज़ेण्ड्रिया के राजकीय विद्यालय में गणित का अध्यापक था और उसकी लिखी पुस्तक की जितनी प्रतियां आज तक बिक चुकी हैं उतनी शायद बाइबल को छोड़कर किसी दूसरी पुस्तक की नहीं बिकीं।

यूक्लिड को ज्यामिति का जनक कहा जाता है, और यह सही है। उसने ज्यामिति के सभी ज्ञात तत्त्वों का संग्रह किया। व्यावहारिक आवश्यकताओं के कारण विकसित हुए इन सामान्यतया विसंगत तत्त्वों को उसने सुबोध, सुसंगत और सुन्दर पद्धति से सुव्यवस्थित

किया ताकि एक प्रमाण अगले प्रमाण की आधारभूमि बनता जाए। यह सब यूक्लिड ने इस खूबी के साथ किया कि एक प्रमेय दूसरे गणितीय प्रमाण का आधार बनता चला गया। और यह सिद्ध किया जा सका कि यदि मनुष्य अपनी विचार-शक्ति का उपयोग करे तो वह क्या नही कर सकता ?

मिस्र को 'नील नदी का उपहार' कहा जाता है। पुराने मिस्र की बहुत कुछ ख्याति इसी नदी के कारण हुई। नील नदी हर साल बाढ मे अपने किनारो को तोडकर सुदूर पहाडियो से काली उपजाऊ मिट्टी बहा लाती है। यही मिस्र की खेती-बाडी का रहस्य है। बाढो से दौलत तो मिली, लेकिन बहुत-सी समस्याए भी सामने आई। नील नदी हर साल अपना रुख बदलती है। इसलिए जमीन की सीमाए बदल जाती है और अस्पष्ट हो जाती हैं। जमीन का कर वसूल करना कठिन होता है, क्योकि हर आदमी के हक मे आनेवाली जमीन की सीमा निश्चित नही होती। कर लगाने के लिए यह बात ज़रूरी होती है।

ज्यामिति शब्द का मूल अर्थ है—'ज़मीन नापना'। जमीन नापने के लिए ही ज्यामिति का विकास हुआ। जान पडता है कि मिस्रवासियो ने ज्यामिति के सैद्धान्तिक पक्ष पर विशेष ध्यान नही दिया। हालाकि वर्षो से वे उन्ही सिद्धान्तो पर अमल कर रहे थे और अपना काम अच्छी तरह चला रहे थे। ज्यामिति-सम्बन्धी उनके ज्ञान मे त्रुटिया भी थी। असम जमीन को छोटे-छोटे त्रिभुजाकार टुकडो मे बाटा जाता था। उनके क्षेत्रफल को जोडकर पूरी ज़मीन के क्षेत्रफल का हिसाब कर लिया जाता था। फल यह होता था कि कितने ही छोटे-छोटे जमीदार हर साल सरकारी खजाने मे कुछ ज्यादा ही रकम देते थे। लाचारी यो थी कि भू-सर्वेक्षक ज़मीन का रकबा निकालने के लिए गलत तरीका अपनाते थे।

मिस्रवासी भू-सर्वेक्षण यत्र के बिना ही समकोण बना लेते थे। हम खेल के मैदान बनाने या खेत पर मचान की नीव डालते समय आज भी वैसा ही करते है। समकोण बनाने के लिए वे एक रस्से के बने त्रिभुज को काम मे लाते थे। इसकी भुजाए क्रमश 3 4 5 होती थी। जब इस रस्से को किनारो की गाठो के सहारे ताना जाता था तो 3 4 की लम्बाई के बीच बना हुआ कोण समकोण बन जाता था। इसीलिए मिस्र के भू-सर्वेक्षको को 'रस्सा ताननेवाला' कहा जाता था।

ग्रीक गणितज्ञ थेलीज ने जब मिस्रवासियो के इन ज्यामितीय नियमो के बारे मे सुना तो उसे आश्चर्य हुआ कि उनका प्रयोग इतना सही कैसे उतरता है। ज्यामिति को विज्ञान के रूप मे विकसित करने के लिए यही जिज्ञासा पहला कदम सिद्ध हुई। अपनी जिज्ञासा के समाधान के लिए थेलीज ने यह नियम बनाया कि किसी भी सिद्धान्त के निष्कर्ष तक पहुचने के लिए ज्ञात तथ्यो को ही आधार मनाना चाहिए और जहा तक हो सके इन्हीके सहारे अपनी चिन्तन-प्रक्रिया मे आगे बढना चाहिए। थेलीज जानता था कि ज्यामिति एक व्यावहारिक विज्ञान है, जिसका उपयोग नौचालन और ज्योतिर्विज्ञान मे उसी तरह किया जा सकता है, जिस तरह जमीन नापने या पिरामिड बनाने मे। ज्यामिति के विकास मे अगला कदम पाइथागोरस और उसके शिष्यो ने उठाया। उन्होने ज्यामिति को उसके व्यावहारिक पक्ष से अलग कर लिया। वे ज्यामितीय तथ्यो के तर्कपूर्ण प्रमाण खोजने मे ही लगे रहे। इस प्रणाली को उन्होंने इस प्रकार विकसित किया कि वह इतना समय बीत जाने के बाद आज भी

स्थिर है और उसका क्षेत्र ज्यामिति तक सीमित नही है बल्कि उसकी उपयोगिता मानवीय बुद्धि के हर क्षेत्र मे सिद्ध हो चुकी है। तर्क की इस प्रणाली को निष्कर्ष प्रणाली (डिडक्टिव रीजनिग) कहते है। पहले से स्वीकृत तथ्यो का उपयोग करके किसी समस्या का हल निकालना, यही इस प्रणाली का उपयोग है। सामान्यत प्रत्येक जासूसी कहानी किसी निष्कर्ष विधि का उदाहरण हुआ करती हे। इस तरह विज्ञान एक सबसे बडी जासूसी कहानी है। कॉनन डायल ने अपनी कल्पना के प्रसिद्ध जासूस शरलॉक होम्स के मुह से एक स्थान पर कहलवाया है कि "पानी की एक बूद से कोई तार्किक अतलातक महासागर अथवा नियागरा प्रपात की कल्पना कर सकता है, यद्यपि न तो उसने महासागर को देखा है और न प्रपात की गर्जना ही सुनी है। इसी प्रकार जीवन मूलत एक बडी शृखला हे, जिसकी एक कडी से ही उसकी सम्पूर्ण प्रकृति का भान हो जाता है। अन्य कलाओ के समान निष्कर्ष और विश्लेपण के विज्ञान को भी दीर्घकालीन अध्ययन और धैर्य के फल-स्वरूप ही जाना जा सकता है।"

यूक्लिड ने थेलीज, पाइथागोरस, प्लेटो तथा अन्य यूनानी और मिस्री वैज्ञानिको द्वारा रचित सारी सामग्री को सकलित किया। ज्यामिति की विविध समस्याओ का समाधान यूक्लिड की देन नही है। जाने-माने तथ्यो को इस प्रकार व्यवस्थित करना ताकि विद्यमान तथ्यो को जोडकर नये विचारो की जानकारी और उनके प्रमाण भी मिलते जाए, यही यूक्लिड की देन है। सामान्य परिभाषाओ (एक्जियम्स) को यूक्लिड ने ऐसी स्थापनाओ (थ्योरम्स) के साथ जोडा, ताकि वे तर्क से प्रमाणित की जा सके।

प्लेटो ज्यामिति का महत्त्व जानता था। उसकी अकादेमी मे प्रवेश के लिए ज्यामिति का ज्ञान आवश्यक था। उसका कहना था कि ज्यामिति न जाननेवालो को उसकी सस्था मे प्रवेश न दिया जाए।

ज्यामिति की महत्ता अब्राहम लिकन ने भी स्वीकार की। 40 वर्ष की आयु मे उन्होने यूक्लिड के ग्रन्थो का अध्ययन किया। यह अध्ययन गणित की जानकारी के लिए न था बल्कि तर्क मे दक्षता प्राप्त करने के लिए होता था। यान्त्रिकी, ध्वनिविज्ञान, प्रकाश-विज्ञान, नौचालन, परमाणुविज्ञान, जीवविज्ञान और चिकित्साविज्ञान आदि विज्ञान और उद्योग की समस्त शाखाओ का अध्ययन यूक्लिड के निष्कर्ष पर आधारित है। और विज्ञान के नये अन्वेषण भी इसी तर्क-प्रणाली पर आश्रित रहेगे।
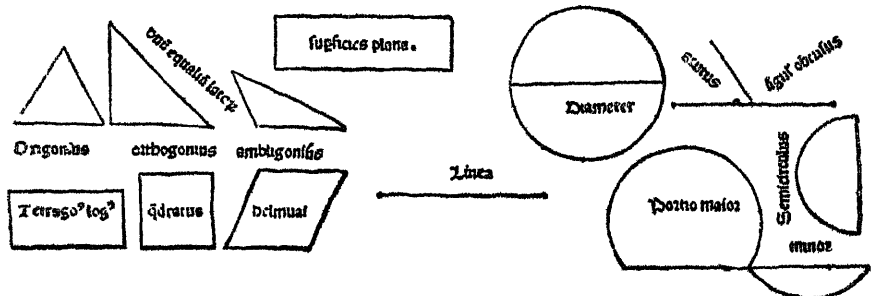
यूक्लिड के प्रथम लैटिन संस्करण में मुद्रित ज्यामितीय आकृतिया
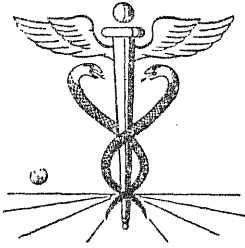
हिपॉक्रेटीज़

"मैं इस व्रत को निभाने का शपथ लेता हूं। अपनी बुद्धि और विवेक के अनुसार मैं बीमारों की सेवा के लिए ही उपचार करूंगा, किसीको हानि पहुंचाने के उद्देश्य से कदापि नहीं। मुझे कितना ही विवश क्यों न किया जाए, मैं किसीको विषैली दवा न दूंगा। मैं किसी भी घर में जाऊं, मेरा उद्देश्य बीमारों की मदद करना ही होगा। अपने पेशे के दौरान में जो कुछ भी देखूं या सुनूं—यदि वह प्रकट करने योग्य न हुआ तो मैं उसे कभी ज़ाहिर न करूंगा।"

ये विचार उस शपथ में आज भी शामिल हैं जो डाक्टरी पास करनेवाले विद्यार्थी ग्रहण करते हैं। पूरे वक्तव्य को 'हिपॉक्रेटिक ओथ' कहते हैं जो यूनान के महान चिकित्सक हिपॉक्रेटीज़ की सीख पर आधारित है।

अनेक प्राचीन ग्रीसवासियों को हम उनकी कृतियों के द्वारा ही जान पाए हैं। हिपॉक्रेटीज़ के व्यक्तिगत जीवन के विषय में भी विशेष उल्लेख नहीं मिलता। इतना ही बृत्तान्त मिला है कि ईसा से लगभग 460 वर्ष पूर्व यूनान के कॉस द्वीप में हिपॉक्रेटीज़ ने जन्म लिया था। एस्क्युलेपिअस का मन्दिर इसी द्वीप पर स्थित था और सम्भवतः हिपॉक्रेटीज़ के पिता इसी मन्दिर के पुरोहित थे।

कुछ ऐसे लोग हैं जो कहते हैं कि हिपॉक्रेटीज़ हुआ ही नहीं; उसके नाम से प्रसिद्ध चिकित्साशास्त्र-विषयक सत्तर पुस्तकें एक लेखक संघ की रचानाएं हैं। जैसा भी हो, प्रसिद्ध यूनानी इतिहासज्ञ और दार्शनिक प्लेटो ने हिपॉक्रेटीज़ नामक व्यक्ति की चर्चा की है। प्लेटो का कहना है कि हिपॉक्रेटीज़ ने दूर-दूर तक भ्रमण किया; जहां भी वह गया, उसने

चिकित्साशास्त्र की शिक्षा दी। थेलीज़ नामक यूनानी गणितज्ञ ने ईसा पूर्व छठी शताब्दी मे कॉस द्वीप मे जिस पाठशाला की स्थापना की थी वही सम्भवत कालान्तर मे हिपॉक्रेटीज की शाला बन गई। चिकित्साशास्त्र के सिद्धान्तो तथा चिकित्सक और रोगी के बीच समुचित व्यक्तिगत सम्बन्धो की शिक्षा इस शाला मे दी जाती थी।

हिपॉक्रेटीज़ के अभ्युदय-काल तक रोगो का निदान और उपचार एस्क्युलेपिअस के पुरोहितो के हाथो मे था। एस्क्युलेपिअस ग्रीक और रोमन का आरोग्य-देवता था। पुराणो के आधार पर यह माना जाता है कि एस्क्युलेपिअस सिद्धहस्त चिकित्सक था और उसमे मृतको को जीवित कर देने की क्षमता थी।

उन दिनो बीमारी को देवताओ की अप्रसन्नता का परिणाम समझा जाता था, अत रोग से छुटकारा पाने का एकमात्र उपाय था देवताओ को भेंट चढाना। बीमार यदि चल पाते तो एस्क्युलेपिअस के मन्दिर तक पैदल जाते थे और पुरोहितो की मदद से देवताओ के कृपा-पात्र बनते थे। बहुतेरे रोगी शरीर के नीरोग होने की स्वाभाविक क्षमता के फलस्वरूप ही चगे होकर घर लौटते थे। कभी-कभी मन्दिर के पुरोहित मरहम या काढा दे देते थे, यद्यपि इस इलाज का उन भाग्यशालियो के अच्छे होने न होने से कोई सम्बन्ध न होता था।

यह समझ लेना कठिन नही है कि लोग हिपॉक्रेटीज को सन्देह की दृष्टि से देखते होगे क्योकि उसने इस विश्वास को समाप्त कर दिया था कि देवताओ मे शरीर को नीरोग करने की शक्ति होती है। फिर भी वह इतना चतुर तो था ही कि देवताओ के प्रति लोगो की इस आस्था का पूरी तरह विरोध न करे। पहले हिपॉक्रेटीज़ की शपथ इस तरह थी, "मैं चिकित्सक अपोलो, एस्क्युलेपिअस, आरोग्य सजीवनी तथा सभी देवी-देवताओ के नाम पर शपथ लेता हू···" किन्तु हिपॉक्रेटीज़ की आस्था प्रत्यक्ष और परीक्षित तथ्यो पर ही थी। रोग और निदान के सम्बन्ध मे प्रचलित अधविश्वास पर विजय पाने की उसने पूरी कोशिश की।

सारे सभ्य ससार ने हिपॉक्रेटीज़ की योग्यता का झडा फहराया। फारस के बादशाह आर्तजिर्क्सीज़ ने उसे अनन्त सम्पदा इसलिए देनी चाही कि वह फारस की फौजो का विनाश करनेवाली महामारी को रोक दे। उस समय फारस और ग्रीस के बीच युद्ध चल रहा था, इस कारण हिपॉक्रेटीज़ ने यह कहकर प्रस्ताव ठुकरा दिया कि देश के शत्रु की सहायता करना उसके सम्मान के अनुकूल नही है। इस घटना को प्रसिद्ध तैल चित्र मे दर्शाया गया है जो पेरिस के मेडिकल स्कूल मे लगा है।

चिकित्सा-ग्रन्थो में विस्तार से लिखित हिपॉक्रेटीज़ के उपदेशो की खोज मध्ययुग मे फिर से की गई। दुर्भाग्य से इन पुस्तको को सम्पूर्ण और अन्तिम रूप से सही मान लिया गया। चिकित्साशास्त्र के सिद्धान्त के रूप मे इनकी मान्यता सर्वोपरि है। सम्भव है हिपॉक्रेटीज़ के लेखो मे अब तक कमी नही आई तथापि उनके शब्दो का आख मूदकर अनुसरण करने का परिणाम यह हुआ कि सदियो तक चिकित्साशास्त्र मे कोई प्रगति नही हुई। ईसा के लगभग दो सौ साल बाद कितनी ही बातो पर गैलेन का हिपॉक्रेटीज से मदभेद था। फिर भी हिपॉक्रेटीज के प्रति लोगो की आस्था मे तनिक भी अन्तर नही आया और

वे यह समझते रहे कि हिपॉक्रेटीज़ का मत अचूक है। फ्रांस के चिकित्सा-विशारद किसी भी गहन प्रश्न के परस्पर-विरोधी उभय पक्षों को प्रकट करने के लिए आज भी यह कहते हैं, "गैलेन हां कहता है पर हिपॉक्रेटीज़ ना कहता है।" इतिहास में अनेक उदाहरण हैं, जिनके कारण एक अच्छे सिद्धान्त की दासता ने विज्ञान की प्रगति को रोका है। विज्ञान को अतीत की पुनर्परीक्षा के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए।

हिपॉक्रेटीज़ के विचार से चिकित्सा का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग शरीर-विज्ञान (ऐनाटॉमी) है। परन्तु आगे चलकर कुछ युगों तक शरीरतंत्र के अध्ययन की उपेक्षा होती रही और पन्द्रहवीं सदी में वैसेलियस ने ही इसका पुनरुद्धार किया। तब तक चीर-फाड़ का काम नाइयों के हाथ में था।

इंग्लैण्ड के राजा हेनरी अष्टम (1509-1547) के राजकाल में एक कानून द्वारा यह आदेश दिया गया था कि खराब खून या दांत निकाल फेंकने के अलावा नाई चीरफाड़ का कोई काम नहीं करेंगे। साथ ही यह मनाही कर दी गई थी कि शल्यशास्त्री हजामत बनाने का काम नहीं करेंगे। इंग्लैण्ड में नाइयों द्वारा प्रदर्शित स्तम्भ 'बार्बर पोल' आज भी नाइयों द्वारा किए गए चीरफाड़ के इतिहास को व्यक्त करता है। नाइयों के इस स्तम्भ
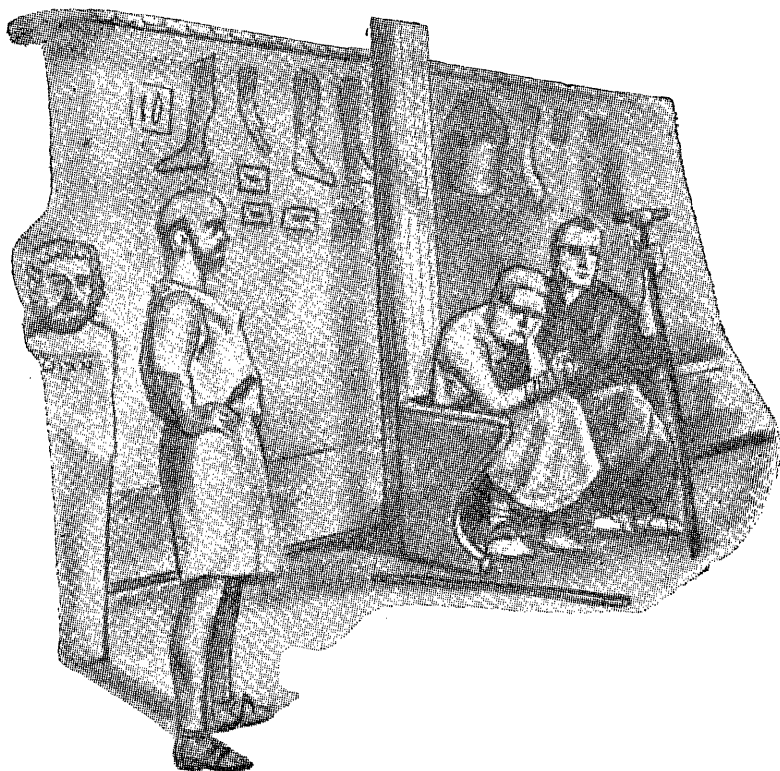
पुराने ग्रीस में रोगी का उपचार

(बार्बर पोल) में लगी झंडी की सफेद धारी पट्टी का प्रतीक है और लाल धारी रक्त का।

हिपॉक्रेटीज़ की शपथ में डाक्टर और सर्जन दोनों का काम पृथक् कर दिया गया है। यथा, "मैं चाकू नहीं चलाऊंगा···यह काम विशेषज्ञों को सौंपूंगा।" हिपॉक्रेटीज़ के मतानुसार सर्जन का पद डाक्टर के पद से ऊंचा है; जैसाकि हम आज भी मानते हैं। हिपॉक्रेटीज़ आधुनिक चिकित्साशास्त्र का जनक है। रोगों के कारणों को आसपास ढूंढ़ना ही वह श्रेयष्कर समझता था न कि देवताओं के प्रकोप में। उसकी शिक्षा यही थी कि चिकित्सक रोगी को ध्यानपूर्वक देखे, उसकी परीक्षा करे और रोग के लक्षणों को लिख डाले। इस तरह वह एक ऐसा लेखा तैयार कर सकता है, जिसके आधार पर यह निश्चित किया जा सके कि रोगी का इलाज किस ढंग से करने पर वह नीरोग हो सकेगा। रोगियों की परीक्षा के लिए उसने कुछ सामान्य नियम निश्चित किए—रोगी की आंखों की त्वचा का रंग कैसा है, शरीर का ताप कितना है, भूख लगती है या नहीं, पेशाब और पाखाना नियमित होता है या नहीं।

हिपॉक्रेटीज़ रोगी के सम्बन्ध में दैनिक विवरण तैयार करता था और ऐसा करने के लिए ज़ोर भी देता था। वह रोगी की प्रगति से सम्बन्धित एक चार्ट भी बनाता था। उसे इस बात का ज्ञान था कि जलवायु और ऋतु-परिवर्तन का विभिन्न रोगों पर क्या असर होता है। उदाहरणार्थ, ज़ुकाम हमें सर्दियों में ही अधिक होता है। इस तथ्य की ओर ध्यान

प्राचीन ग्रीक चिकित्सक अपनी प्रयोगशाला में

देते हुए हिपॉक्रेटीज को एक अन्य बात सूझी कि ज्योतिर्विज्ञान तथा चिकित्साशास्त्र मे कुछ न कुछ गूढ सम्पर्क अवश्य होना चाहिए क्योकि ज्योतिर्विज्ञान विभिन्न ऋतुओ के सम्बन्ध मे निश्चय करने के लिए महत्त्वपूर्ण है। इस सूझ का परिणाम यह हुआ कि आयुर्वेद के विद्यार्थी बिना किसी उपयुक्त कारण के सदियो तक ज्योतिर्विज्ञान का अध्ययन करते रहे। हिपॉक्रेटीज चिकित्सक की सामाजिक मर्यादा और उसमे सामान्य जनता की आस्था पर बहुत जोर देता था। वह डाक्टरो को प्राय यह सलाह दिया करता था कि वे रोगियो को यह बताने मे कभी न हिचकिचाए कि बीमारी कब तक चलेगी क्योकि यदि उनकी यह भविष्यवाणी सही उतरी तो लोग उनपर अधिकाधिक विश्वास करेगे और उपचार के लिए अपने-आप को नि सकोच सौप देगे। हिपॉक्रेटीज के कुछ अनुभव आधुनिकतम प्रतीत होते है, जैसे, मोटे लोग आम तौर से दुबले-पतले लोगो की अपेक्षा जल्दी मर जाते है, बूढो की खूराक नौजवानो की खूराक की अपेक्षा कम हुआ करती है। सर्दियो मे खूराक ज्यादा होती है और गर्मियो मे कम, दुबले-पतले आदमी खूराक को घटा सकते है, लेकिन उसमे चर्बी का अश कम नही होना चाहिए तथा मोटे आदमी खूराक को बढा सकते है, लेकिन उसमे चर्बी का अश कम होना चाहिए, चिन्ता, थकावट और सर्दी के कारण होनेवाली शारीरिक व्याधियो को पानी और शराब की बराबर मात्रा लेने से दूर किया जा सकता है।

एरिस्टॉटल

रोजर बेकन ने एक स्थान पर कहा है, "मेरा बस चले तो मैं एरिस्टॉटल की सब किताबें जलवा दूं। इनसे मुफ्त में वक्त बरबाद होता है, शिक्षा गलत मिलती है, और अज्ञान ही बढ़ता है।"

ये शब्द स्वयं एक ऐसे व्यक्ति के हैं जो अपने युग का एक असाधारण वैज्ञानिक था। इनमें आलोचना की कुछ कटुता अवश्य आ गई है किन्तु वस्तुतः इनमें यूनान के उस प्राचीन दार्शनिक-वैज्ञानिक की अद्‌भुत प्रतिभा की प्रशंसा ही हुई है कि उसका महत्त्व और प्रभाव कितना स्थायी है।

एरिस्टॉटल (अरस्तू) का जन्म ईसा से 384 साल पहले ईजियन समुद्र के उत्तरी छोर पर स्थित स्टैगीरा नाम के शहर में हुआ था। पिता एक शिक्षित और धनी-मानी व्यक्ति था और अलेक्ज़ेण्डर (सिकन्दर) महान के दादा के यहां शाही हकीम था। एरिस्टॉटल की आरम्भिक शिक्षा का प्रबन्ध घर पर ही किया गया और स्वयं पिता ने ही प्राकृत ज्ञान-विज्ञान में बालक की मनोभूमि को संवर्धित-पल्लवित किया।

367 ई० पू० में 17 साल की उम्र में एरिस्टॉटल एथेन्स गया, जो उन दिनों विद्या का प्रसिद्ध केन्द्र था। एथेन्स में उसने प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो की छत्रछाया में विद्याभ्यास किया। बाल्यावस्था से ही एरिस्टॉटल ने अपनी कुशाग्र एवं स्वतन्त्र बुद्धि का परिचय देना शुरू कर दिया—प्लेटो के विचारों को भी उसने बिना आत्मपरीक्षा के कभी स्वीकार नहीं किया। जो कुछ ग्राह्य प्रतीत हुआ वही स्वीकार किया; अन्यथा, जहां मतभेद दीखा वहां, नये सिरे से चिन्तन से हिचकिचाया नहीं।

शीघ्र ही एरिस्टॉटल की ख्याति एक असाधारण अध्यापक के रूप में फैलने लगी।

मेसीडोनिया से उसे बुलावा आया कि वह 14 साल के राजकुमार अलेक्ज़ेण्डर की शिक्षा-दीक्षा को अपने हाथ मे ले ले । यही राजकुमार जब अलेक्ज़ेण्डर महान बन गया, वह अपने गुरु के ऋण को भूला नही और समय-समय पर वैज्ञानिक अध्ययन तथा अनुसन्धान मे एरिस्टॉटल की सहायता भी करता रहा।

अनुमान किया जाता है कि एरिस्टॉटल ने कोई 400 और 1,000 के बीच ग्रन्थ लिखे। स्वभावत सन्देह हो उठता है कि ये किताबे सब उसकी अपनी लिखी हुई है या अन्य सहयोगियो एव वैज्ञानिको की कृतियो का सम्पादन-मात्र है। इनमे इतने अधिक विषयो का विवेचन हुआ है, और इतना सूक्ष्म विवेचन हुआ है, कि इनका सहसा एक ही लेखक की कृति होना असम्भव प्रतीत होता है।

खैर, वैज्ञानिक अनुसन्धान के लिए उस पुराने जमाने मे भी एरिस्टॉटल के पास सहयोगियो का एक खासा वर्ग था। 1,000 के करीब वैज्ञानिक उसके निर्देशन मे सारे ग्रीस मे घूमे और एशिया की भी सैर करके, समुद्रीय और स्थलीय जीवो के नमूने इकट्ठे कर लाए—और इन सग्रहो के विस्तृत वर्णन भी उन्होने आकर एरिस्टॉटल को पेश किए।

एरिस्टॉटल के अनुसन्धानो का सबसे अधिक स्थायी महत्त्व शायद प्राणिविज्ञान तथा पशुविज्ञान मे ही हुआ है। इन गवेषणाओ को देखकर हम आज भी चकित रह जाते है कि वह वैज्ञानिक प्रणाली के आधुनिकतम रूप को किस प्रकार प्रयोग मे ला सका। दिन का कितना ही समय वह खुद समुद्र के किनारे गुज़ारा करता—समुद्र-जीवन का अध्ययन करते हुए उसे खुद अपना होश न रहता। और जो भी अध्ययन वह इर्द-गिर्द के पशु-पक्षियो का कर गया है, उसका महत्त्व आज भी कम नही हुआ है।

कुछ अध्ययन तो उसके ऐसे है जिन्हे अरसे तक निरर्थक समझा जाता रहा किन्तु आज उनकी सत्यता अक्षरश प्रमाणित हो चुकी है। यह प्रतीति एरिस्टॉटल को भी हो चुकी थी कि सृष्टि-व्यवस्था मे कुछ क्रम है—जीवित प्राणियो का, जीवन की प्रक्रिया मे उनकी निरन्तर बढती सकुलता के आधार पर, वर्गीकरण किया जा सकता है। और यह अनुभव भी एरिस्टॉटल को हो चुका था कि इन प्राणियो का अगाग विकास किस प्रकार इनके आसपास की परिस्थितियो के अनुकूल ही हुआ करता है। मानव-सभ्यता के विकास मे एरिस्टॉटल वैज्ञानिको के उस महान वर्ग का अग्रदूत प्रतीत होता है जिनकी दृष्टि मे सृष्टि का कण-कण एक सुन्दर व्यवस्था का जीवित-जागरित प्रमाण है—व्यवस्था-हीन अथवा निरर्थक यहा कुछ भी नही है।

वैज्ञानिक प्रणाली का एक मूलभूत सिद्धान्त यह है कि हम अपने आसपास की दुनिया मे और परीक्षणशाला मे खुली आखो से हर चीज को प्रत्यक्ष करें, तथा उसके सम्बन्ध मे परीक्षण करे। एरिस्टॉटल और उसके सहयोगियो ने प्राणिविज्ञान मे इस प्रणाली को किस सुन्दरता के साथ निभाया! किन्तु एरिस्टॉटल के बाद जैसे 1,500 साल बीत जाने जरूरी थे पेशतर इसके कि एल्बर्टस मैग्नस आकर उसके अधूरे काम को फिर से हाथ मे ले। मैग्नस ने स्वय भी कुछ मौलिक अध्ययन किए जिनके आधार पर वह एरिस्टॉटल के कार्य की कुछ अभिवृद्धि एव आलोचना कर सका।

एरिस्टॉटल की गवेषणाए प्राणिविज्ञान के बहिरग तक सीमित न थी, अगाग-

विच्छेद द्वारा शरीर के अन्तरग का ज्ञान इतिहास मे शायद एरिस्टॉटल ने ही प्रवर्तित किया। आन्तरिक रचना मे भी किस तरह् अन्तर आता रहता है—इसका भी प्रथम प्रत्यक्ष उसीने किया। अर्थात्, प्राणिविज्ञान की आधुनिक प्रणालियो का भी वह् एक तरह् से अग्रदूत ही था, जनक ही था।

एच० जी० वेल्स ने 'इतिहास की रूपरेखा' मे एरिस्टॉटल के बारे मे लिखा है, "ज्ञान-विज्ञान को एक व्यवस्थित क्रम मे बाधने की कितनी आवश्यकता है, यह् अनुभव करते ही एरिस्टॉटल जैसे बेकन का और हमारी आधुनिक वैज्ञानिक गतिविधि का पूर्वाभास ही दे चला हो! और सचमुच उपलभ्य ज्ञान-विज्ञान के सग्रह् मे तथा उस सग्रह के क्रम-बन्धन मे उसने अपने-आप को खपा ही डाला। प्राकृनिक विज्ञान का वह् प्रथम इतिहासकार था। वस्तु-जगत् की प्रकृति के सम्बन्ध मे औरो ने उससे पूर्व कल्पनाए ही की थी, किन्तु एरिस्टॉटल ने आकर, जिस नौजवान को भी वह् प्रभावित कर सका उसे अपने साथ मे लिया और प्रत्यक्ष का तुलनात्मक सग्रह तथा वर्गीकरण शुरू कर दिया।"

तो फिर बेकन एरिस्टॉटल की किताबो के पढने-पढाने के इतना खिलाफ क्यो है ? इसलिए कि प्राणिविज्ञान मे जहा एरिस्टॉटल की दृष्टि इतनी सूक्ष्म थी वहा भौतिकी मे पता नही क्यो वह् इतनी अक्षम्य अशुद्धिया कर कैसे गया। वही वैज्ञानिक प्रणाली थी जिसको इस खूबी के साथ प्राणिविज्ञान मे निभाया गया था, किन्तु नक्षत्रो के अध्ययन मे, तथा इस स्थूल जगत् के अध्ययन मे, उसका या तो सही इस्तेमाल नही हो सका या फिर उपेक्षा हो गई। 1,500 साल तक एरिस्टॉटल असाधारण रूप से विचार-जगत् पर छाया रहा। उसके ग्रन्थो को विद्वन्मण्डल इस तरह कबूल करता रहा जैसे वे कोई बाइबल या कुरान के पन्ने हो, और वह् भी सिर्फ इसलिए कि एरिस्टॉटल की उनपर मुहर लगी हुई थी!

एरिस्टॉटल के इस तरह् के कुछ विचारो का निदर्शन सम्भवत प्रासगिक हो जाता है। उसका ख्याल था कि इस हमारी धरती पर जितनी भी चीजे है, उन्हे गरम-सरद और गीले-सूखे मे, परिमाण-भेद के अनुसार, बखूबी विभक्त किया जा सकता है, और इस तरह् एक क्रम भी दिया जा सकता है। वस्तु-वस्तु मे इन चार गुणो के अन्तर का आधार होते है ये चार तत्त्व जल, वायु, अग्नि और पृथ्वी। उदाहरणतया, लकडी के एक लट्ठे को आग मे झोक दीजिए। उसका पानी तुरन्त बाहर निकलना शुरू हो जाएगा, धुए की सूरत मे उसकी हवा ऊपर को उठ चलेगी, आग तो प्रत्यक्ष है ही, और बच रहेगी राख, अर्थात् मिट्टी। किन्तु हा, आकाश एक और (दैवी) तत्त्व का बना होता है जिसमे कुछ परिवर्तन नही आता। अर्थात् यह विश्व हमारा पाच तत्त्वो या भूतो का ही एक विलास या विकार है।

आकाश—बाहर, खाली जगह मे, सभी कही फैला होता है। आग की लपट स्वभावत ऊपर को उठती है। पानी धरती के ऊपर बहता है। हवा पानी से भी ऊपर, किन्तु आग के नीचे, घूमती-फिरती है। पृथ्वी के ये चार तत्त्व, इस प्रकार, परस्पर ऊपर-नीचे एक अधरोत्तरी-सी मे गतिमान होते हैं किन्तु आकाश एक परिधि मे वृत्ताकार परिक्रमा करता हुआ सर्वत्र व्याप्त है। आकाश ही इन पाच तत्त्वो मे दैवी है, पूर्ण है।

उसका परिक्रमा-मार्ग भी, एक पूर्ण तत्त्व के लिए एक पूर्ण परिक्रमा-मार्ग होने के नाते, एक पूर्ण आकृति ही होना चाहिए वृत्त ही एकमात्र पूर्णतम आकृति है।

1609 मे केपलर ने जब प्रत्यक्ष किया कि इन ग्रह-नक्षत्रो के परिक्रमा-मार्ग वृत्ताकार नही, अण्डाकार होते है तो उसे मानो अपनी ही आखो पर, अपनी ही गणनाओ पर विश्वास नही आया, क्योकि एरिस्टॉटल के आकाश-तत्त्व का इतना पुराना बद्ध-मूल इतिहास जो चला आता था।

गैलीलिओ के वक्त से अब हर कोई जानता है कि हवा जो रुकावट पेश करती है उसे अगर दूर किया जा सके तो हलकी और भारी, सभी चीज़े एक साथ छोडने पर एक ही साथ जमीन पर आ गिरेगी। किन्तु एरिस्टॉटल का प्रत्यक्ष कुछ अधूरा था। इसलिए जरूरी था कि उसका नतीजा भी कुछ गलत ही निकलता। उसने देखा कि एक पत्थर एक पत्ते की अपेक्षा ज्यादा तेज़ी के साथ जमीन पर आ जाता है—और यह सच भी है—और वह एकदम से इस परिणाम पर पहुच गया कि भारी वस्तुए हल्की वस्तुओ की अपेक्षा जल्दी ज़मीन पर गिरती है। उसकी युक्ति थी कि दो सेर वज़न की कोई चीज एक सेर वज़न की किसी दूसरी चीज से आधे वक्त मे जमीन पर आ जानी चाहिए। लेकिन इस सम्बन्ध मे उसने कोई परीक्षण नही किया, उसे यही कुछ युक्तियुक्त प्रतीत हुआ।

1585 के आसपास एक डच गणितज्ञ ने रागे की दो गेदे अपने घर की खिडकी से एक साथ नीचे की ओर छोड़ी। इनमे एक, वजन मे, दूसरी से दस गुना भारी थी। खिडकी से 30 फुट नीचे लकडी का एक प्लेटफार्म था। दोनो के गिरने पर एक ही आवाज सुनाई पड़ी जो इस बात का सबूत थी कि दोनो वजन एक ही साथ जमीन पर गिरे है।

एरिस्टॉटल एक महान वैज्ञानिक था। दुर्भाग्य से, आवश्यकता से कुछ अधिक महान। क्षुद्रबुद्धि लोग जो उसके बाद मे आए उसकी गलतियो को भी उसकी महान गवेषणाओ के साथ बाबा-वाक्य मानकर चलते रहे, और हर प्रश्न का समाधान उसकी उन पुरानी पोथियो मे ही पडतालते रहे जैसे वे त्रि-काल सत्य हो।
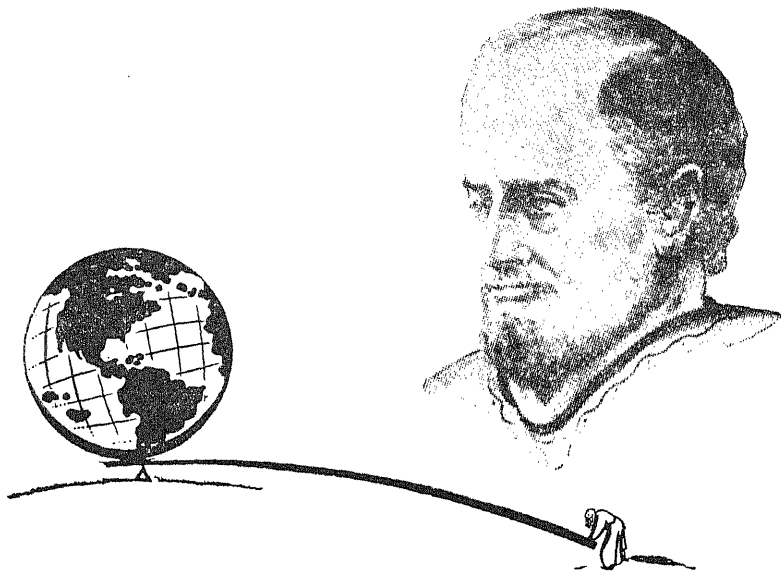
आर्किमिडीज़

जो कुछ सामने हो रहा है उसे देखने की अक्ल हो, जो कुछ देखा उसे समझ सकने की अक्ल हो, और जो कुछ समझ लिया उसके आधार पर उसके मूल में काम कर रहे नियम को खोज निकालने की अक्ल हो—एक वैज्ञानिक की यही पहचान है। आर्किमिडीज़ एक दिन स्नान करके बाहर निकला तो शरीर तो उसका स्वच्छ हो ही चुका था, विज्ञान का एक नया नियम भी वह टब से बाहर निकलते हुए साथ लेता आया। आज इस नियम को हम 'विशिष्ट गुरुता' (स्पेसिफिक ग्रैविटी) के नाम से जानते हैं।

आर्किमिडीज़ का जन्म ईसा से लगभग 287 साल पहले सिसिली के सिराक्यूज़ द्वीप में हुआ था। प्रसिद्ध ग्रीक ज्योतिर्विद फीडियाज़ का वह पुत्र था। आर्किमिडीज़ की शिक्षा-दीक्षा अलेक्ज़ेण्ड्रिया के प्रसिद्ध 'गणित विद्यालय' में हुई। यह विद्यालय उन दिनों ग्रीस के गिने-चुने विद्या-केन्द्रों में था। यहां आर्किमिडीज़ का आचार्य था, यूक्लिड का एक परम्परा-शिष्य और सामोस का विख्यात गणितज्ञ सेनों।

आर्किमिडीज़ ने अपनी तमाम ज़िन्दगी दर्शन और गणित के अध्ययन में गुज़ार दी। ग्रीस में उन दिनों हाथ से काम करने को नफरत की निगाह से देखा जाता था। कोई परीक्षण करना तो दूर, उसे होता हुआ देखकर भी लोगों की नाक-भौं सिकुड़ जाती। कुछ हो, कई विद्वानों का विचार है कि इतने नपे-तुले नतीजों पर पहुंचने के लिए आर्किमिडीज़ ने पहले कुछ न कुछ वास्तविक परीक्षण भी अवश्य किए होंगे। आर्किमिडीज़ ने इन परीक्षणों का ज़िक्र कहीं नहीं किया। वैसे, उसके निष्कर्षों को पढ़ने से कुछ ऐसा ही लगता है, जैसे

विशुद्ध मानसिक चिन्तन द्वारा ही वह इन परिणामो पर पहुचा था। अन्य लोगो के लेखो से हमे मालूम होता है कि इन निष्कर्षों का भौतिक प्रयोग भी आर्किमिडीज ने कुछ कम नही किया था।

किस्सा मशहूर है कि 'विशिष्ट गुरुता' नियम का बोध, जिसे आज भी 'आर्किमिडीज का नियम' करके ही स्मरण किया जाता है, आर्किमिडीज को एक दिन टब मे नहाते-नहाते हुआ था। बादशाह हीरो द्वितीय ने एक ताज बनाने का हुक्म दिया था और उसके लिए साथ ही कुछ सोना भी सुनार को दिया था। जब ताज बनकर बादशाह के यहा आया तो उसका वजन उतना ही था जितना असली सोने का था, लेकिन बादशाह को शक था कि सुनार ने उसमे चादी मिलाकर बेईमानी से कुछ कमाई और भी कर ली है।

अब यह तो हर कोई उस जमाने मे भी जानता था कि भिन्न किस्म की धातुओ का वजन भिन्न होता है। एक ही रूप और मात्रा के सोने और चादी के दो टुकडो के वजन अलग-अलग होगे—सोना भारी होता है, और चादी हलकी होती है। मुश्किल का एक आसान हल तो यह था कि ताज को पिघलाकर उसका सोना फिर से इकट्ठा करके तोल लिया जाए। अगर असल सोने से वह कम उतरे तो उसका मतलब साफ होगा कि सुनार ने कुछ सोना निकाल लिया है और उसकी जगह चादी भर के बादशाह को धोखा दिया है। यह हल लगता तो आसान है, लेकिन इसके लिए ताज को बरबाद करना होगा। सो प्रश्न यह था कि ताज भी बना रहे और उसमे सोने के परिमाण का पता भी लग जाए। बादशाह ने मामला आर्किमिडीज के सुपुर्द कर दिया।

और इस तरह कहानी मे हम आर्किमिडीज के ऐतिहासिक स्नानागार मे आ पहुचते है। टब मे जब आर्किमिडीज़ नहाने के लिए उतरा तो स्वाभाविक ही था कि टब का पानी टब मे ऊपर की ओर उठने लगा। जितना-जितना वह अन्दर उतरता गया, पानी भी उतना-उतना ही अधिक ऊपर चढता गया। आर्किमिडीज को सूझा कि इस चीज़ के इस्तेमाल से किसी भी वस्तु के परिमाण को बखूबी मापा जा सकता है, उसकी कसर को भी जाचा जा सकता है। आर्किमिडीज ने टब को लबालब भर दिया और बडी एहतियात के साथ उसमे ताज को डालना शुरू किया। जो पानी ताज को डुबाने से बाहर निकल आया, उसे उसने इकट्ठा कर लिया—"इस गिरे पानी का परिमाण भी ताज के परिमाण के बराबर ही होना चाहिए।" अब मसला आसान हो गया। इस बाहर गिरे पानी के बराबर वजन का सोना लिया जाए और उसके तोल की तुलना ताज के तोल के साथ कर ली जाए, बस।

पता चल गया कि सुनार ने लालच मे आकर बेईमानी की है, और उसे मौत की सज़ा दे दी गई। खैर, जो चीज़ इस घटना से कही अधिक महत्त्व की है, वह यह कि दुनिया-भर के वैज्ञानिक और इजीनियर तब से एक ही परिमाण की किसी भी चीज़ के और पानी के दोनो वज़नो का मुकाबला करते आ रहे हैं, और तुलना के इस निष्कर्ष को 'विशिष्ट गुरुता' अथवा 'स्पेसिफिक ग्रेविटी' नाम देते है।

सोने की 'विशिष्ट गुरुता' 20 है, जिसका मतलब यह हुआ कि एक प्वाइण्ट सोने का वज़न 20 पौड होगा क्योकि एक प्वाइट पानी का वज़न एक पौंड होता है। और एक

प्वाइण्ट चांदी वज़न में सिर्फ दस पौंड होनी चाहिए।

साने के ताज में असली और नकली वज़न की इस जानकारी के साथ-साथ एक और
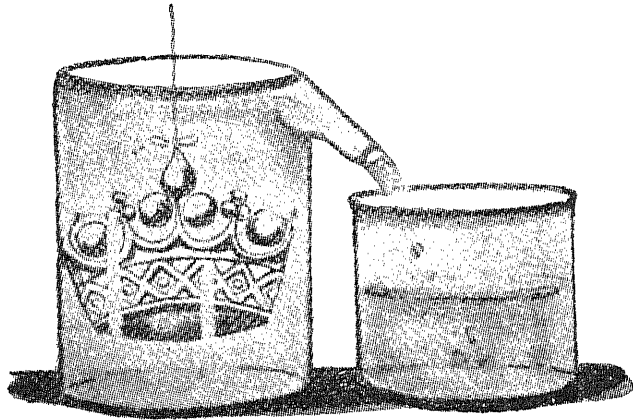
मसला भी अपने-आप हल हो जाता है। वह मसला है—पानी में पड़ते ही चीज़ों के हल्का होकर ऊपर उठने लगने का। शायद आर्किमिडीज़ ने भी यह महसूस ज़रूर किया होगा कि टब के पानी में चीज़ को ऊपर धकेलने की कुछ ताकत होती है, पानी में मनुष्य खुद ही जैसे तैरने-सा लगता है। या हो सकता है, उसने यह भी देखा हो कि लकड़ी वगैरह कुछ चीज़ें ऐसी भी होती हैं जो पानी में डालने पर डूबती नहीं। सतह पर तैरना शुरू कर देती हैं। उसके मन में सम्भवतः प्रश्न उठा होगा कि क्या जो चीज़ें नीचे डूब जाती हैं उनका भार भी पानी में पड़ने के बाद कुछ कम नहीं हो जाता? आर्किमिडीज़ ने समस्या का खूब अध्ययन किया और वह इस परिणाम पर पहुंचा कि "किसी भी चीज़ को पानी में डालो, उसका वज़न उतना कम हो जाएगा जितना पानी। उसकी इस डूबने की हरकत से अपनी जगह से हटकर ऊपर को आ जाता है या बाहर गिर जाता है।"

इसका अर्थ यह है कि मान लीजिए एक आठ पौंड वज़नी लोहे के टुकड़े को हम लेते हैं। इस लोहे का कुछ-न-कुछ परिमाण है। अब इसे अगर किसी भरे टैंक में डालें तो कुछ-न-कुछ पानी टैंक से बाहर उछलकर गिरेगा। मतलब यह कि अगर पानी में पड़ी लोहे की इस सलाख को इसी हालत में तौलें तो उसका वजन अब सात पौंड होगा। वज़न में आठ से सात पौंड की यह कसर एक पौंड पानी के वहां से हट जाने की वजह से आई है। जितना पानी इसने परे कर दिया उसीके बराबर वज़न की ताकत पानी में इसे ऊपर उठाने की आ गई।

पानी में हम भी तैर सकते हैं; इसका कारण यही होता है कि हमारे शरीर का भार प्रायः उतना ही होता है जितना कि हमारे पानी में दाखिल होने से इधर-उधर खिसक गए पानी का भार होता है। पानी में हमारा भार जैसे कुछ भी नहीं रह जाता। और यही कारण है कि पानी में तैरना हमारे लिए और भी आसान हो जाता है जबकि हमारा

सारा जिस्म सिर-पैर सब पानी के अन्दर डूबा होता है। कोई भी हिस्सा उसका पानी के बाहर नही रह जाता। लकडी का टुकडा या कोई किश्ती पूरी की पूरी ही पानी पर नही तैरा करती, उतना हिस्सा उसका पानी के अन्दर डूबना जरूरी होता है जितना कि उसके बराबर वजन का पानी अपनी जगह छोड जाए। जहाजो मे माल भी लदा होता है, इस वजह से वे और भी ज्यादा पानी मे डूबते चलते है क्योकि अपने वजन के बराबर का पानी नीचे से निकाल परे करना उनके लिए इस तरह जरूरी हो जाता है। आजकल का एक यात्री जहाज 80,000 टन पानी को अपनी जगह से परे कर सकता है, अर्थात् जहाज का अपना वजन आजकल 80,000 टन तक होता है। पनडुब्बियो का, परमाणु-चालित पनडुब्बियो तक का आधार भी यही 'आर्किमिडीज का सिद्धान्त' ही है।

आर्किमिडीज को पानी को ऊपर उठाने का एक यन्त्र आविष्कृत करने का श्रेय भी दिया जाता है। इस यन्त्र का नाम है—'आर्किमिडीज स्क्र्यू'। इसकी बनावट एक मेहराबदार शक्ल की लम्बी-चौडी चूडी की होती है, जो आराम से एक सिलिंडर की शक्ल के बक्स के अन्दर कायम की हुई होती है। चूडी को जब घुमाया जाता है, तो पानी उसके साथ-साथ ऊपर को चलने लगता है, जैसा कि तस्वीर से जाहिर है। इसी नियम का प्रयोग गेहू के ढेर को एक जगह से दूसरी जगह हटाने के लिए भी करते है। इसका एक और रूप, जिसे 'स्क्र्यू ड्राइव' कहते है, कोयले को भट्टी मे उतारने के लिए और वहा से राख को हटाने के लिए बने 'आटोमैटिक स्टोकरो' मे काम मे आता है। उसी एक बुनियादी नियम का प्रयोग घरो मे कितने ही ढग से हम रोज करते है। गोश्त को कीमे की सूरत में काटने के लिए औरतें एक तरह के स्क्र्यू या पेंच का इस्तेमाल करती हैं जिसमे साफ-साफ नजर आता है कि किस तरह गोश्त छोटे-छोटे टुकडो मेकटकर एक तरफ इकट्ठा होता जाता है।

आर्किमिडीज ने यह भी जान लिया कि लीवर के पीछे गणित का कौन-सा नियम काम करता है, और उसने इस नियम की क्रियात्मक परीक्षा भी प्रत्यक्ष दिखा दी। इस नियम के प्रयोग द्वारा कोई भी मनुष्य अपने हाथो की ताकत को कितने ही गुना बढाकर बडे से बडे बोझो को यो ही उठा सकता है और एक स्थान से उठाकर दूसरे स्थान पर पहुचा सकता है। इसी बात को बलपूर्वक कहने का ढग भी आर्किमिडीज का अपना ही था. "खडे होने के लिए बस, मुझे कुछ जगह दे दो, और फिर देखना— मैं पृथ्वी को ही हिला-कर कहा की कहा कर देता हू।" लीवर के सिद्धान्त को 25 पृष्ठ पर चित्रो की सहायता से स्पष्ट किया गया है।

लीवर के एक सिरे पर कितना बोझ उठाया जा सकता है, कितनी कम ताकत इस्तेमाल करके उठाया जा सकता है—यह लीवर के ध्रुव (पिवट) की दोनो सिरो से दूरी पर निर्भर करता है। उदाहरणार्थ, 1000 पौड के वजन को उठाने के लिए 100 पौड की ताकत ही काफी है, अगर पिवट की दूरी लीवर के ताकत लगानेवाले सिरे से बोझे को उठानेवाले परले सिरे की दूरी की अपेक्षा दसगुनी हो। पार्कों मे 'सी-सौ' का खेल आपने कभी देखा है ? उसके एक सिरे पर—क्रास-बार से दूर के सिरे पर—बैठा कोई हल्का-फुल्का बच्चा भी क्रास-बार के नजदीक दूसरे सिरे पर बैठे एक ज्यादा वजनी

लड़के को बैलेंस कर लेता है; और कितनी आसानी के साथ कर सकता है।

गणित को आर्किमिडीज़ की देन, मूल सिद्धान्तों की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है और क्रियात्मक प्रयोगों की दृष्टि से भी। गणित में एक प्रश्न जिसका कभी कोई समाधान नहीं निकाला जा सका—वृत्त के वर्गीकरण का, अथवा सही-सही क्षेत्रफल निकालने का प्रश्न
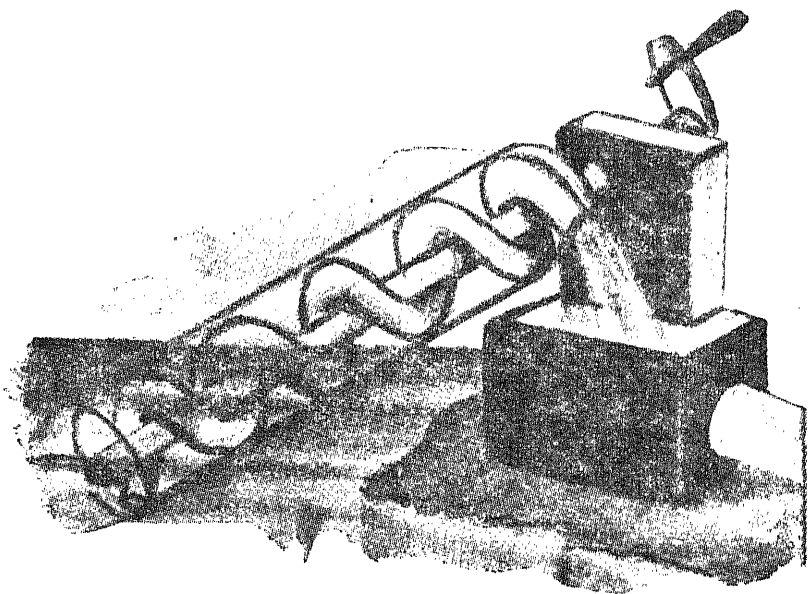
है। गणितशास्त्र अब तक हमें इसका कुछ निकटतम उत्तर ही दे पाया है जिसके अनुसार वृत्त का क्षेत्रफल π × व्यासार्द्ध होता है। और π (पाई) का निकटतम मूल्य होता है—**3.1416**। इस 'पाई' का सही-सही मूल्यांकन कभी नहीं हो सका, आज की हमारी दानवी इलेक्ट्रॉनिक्स मशीनें भी इसमें असफल रही हैं; लेकिन आर्किमिडीज़ ने बड़ी ही होशियारी के साथ इसका अन्दाज़ 3.1408 और 3.1429 के बीच तब लगा लिया था। यही नहीं, विश्लेषणात्मक ज्यामिति (एनेलिटिकल ज्योमेट्री) के क्षेत्र में भी वह बहुत कार्य कर गया—खास तौर से गोलों (स्फियर्ज़) तथा शंकुओं (कोन्ज़) के पिंडांशों (सेक्शंज़) की विशेषताओं के स्पष्टीकरण में। एक सर्पिल (स्पाइरल) जिसका नाम भी 'आर्कि-मिडीज़ का सर्पिल' है, का अध्ययन कैल्कुलस के हर विद्यार्थी के लिए आज भी आवश्यक है।

आर्किमिडीज़ को अपने किए कामों में विशेष गर्व—'स्फियर' और 'सिलिंडर' के बारे में जो कुछ वह मालूम कर सका, उसकी सफलता पर था। स्फियर या गोले के बहिरंग का क्षेत्रफल तथा गोले का परिमाण (वॉल्यूम) निकालने के लिए उसने नियम निर्धारित किए। यही नहीं, ऐसे सिलिंडर बनाने की विधि भी वह विज्ञान को दे गया जिनमें कि विशिष्ट परिमाण के दूसरे गोले ऐन फिट अन्दर डाले जा सकते हैं। आर्कि-

मिडीज़ ने यह भी दिखा दिया कि स्फियर या गोला ही मूर्त्त आकृतियों में पूर्णतम आकृति है। पाठक इस उक्ति की सत्यता के प्रत्यक्ष के लिए गोलाकार टैंकों के दर्शन कर सकता है : यही बरतन हैं जिनमें ज़्यादा से ज़्यादा पानी आ सकता है और जिनके बनाने में कम से कम मसाला खर्च आता है।
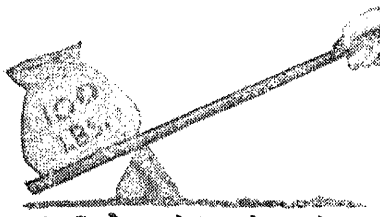
100 पौंड के भार को 5 फुट के एक पोल से उठाने में लीवर सिद्धान्त के प्रयोग
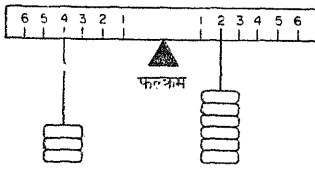
आर्किमिडीज़ का सर्पिल

4 फुट पर स्थित 3 पौंड भार का 2 फुट पर स्थित 6 पौंड भार से संतुलन
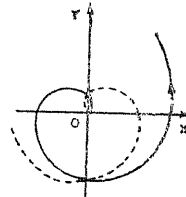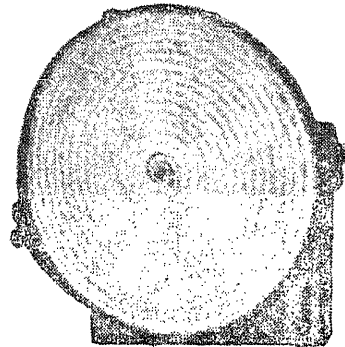
आर्किमिडीज़ के सर्पिल पर आधारित एक आधुनिक रेडार एरिटना

आर्किमिडीज़ ने अपनी प्रतिभा को युद्ध की दिशा में मोड़ दिया। हमारी सभ्यता के इतिहास में कितने ही अन्य वैज्ञानिक भी ऐसा करते आए हैं। लीवर-सम्बन्धी उनके विज्ञान को 'कैटापुल्ट्ज़' बनाने में प्रयुक्त किया गया। इतिहासकार लिखते हैं कि यह आर्किमिडीज़ के कैटापुल्ट्ज़ की बदौलत ही मुमकिन हो सका था कि 215 ई० पू० में सिराक्यूज़ की रक्षा में दुश्मन हर तरफ—दूर-नज़दीक, दायें-बायें बुरी तरह घायल हुआ और जीत ग्रीस वालों को ही हासिल हुई। पॉलीबस इसका ज़िक्र करते हुए लिखता है : "कितनी सच है यह बात कि एक ही आदमी और एक ही अक्ल, जोकि उस खास काम को करने में पूरी-पूरी माहिर है, अपने-आप में एक पूरी फौज ही बन जाती है !" जिसकी गवाही हम आज भी उतनी ही दे सकते हैं : परमाणु के बारे में दिन-रात एक कर देनेवाले वैज्ञानिक गिनती में कितने (थोड़े) थे—और कितनी ज़्यादा तबाही करनेवाले परमाणविक हथियार ईज़ाद कर गए।

अन्त में काफी साल बाद, रोमन जनरल मार्सिलस ने सिराक्यूज़ पर कब्ज़ा कर

लिया। उसका हुक्म था कि आर्किमिडीज़ पर, और उसके घर पर, आंच न आने पाए। कहीं कुछ गलती रह गई और आर्किमिडीज़ रोम के एक सिपाही की तलवार का शिकार हो गया। रोमनों ने आकर पूर्ण आदर-सम्मान के साथ उसकी अन्त्येष्टि की और उसकी कब्र पर उसके प्रिय चिह्न—एक स्फियर और एक सिलिण्डर को अंकित किया।
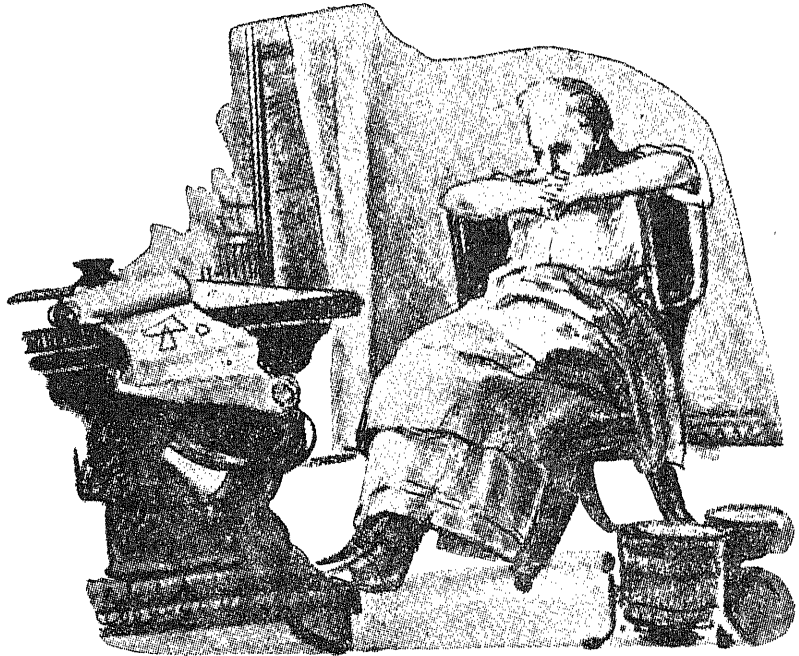
आर्किमिडीज़ एक दिग्गज था—विज्ञान और गणित के क्षेत्र में एक अद्‌भुत प्रतिभा का धनी दिग्गज : 'एक ही आदमी और एक ही अक्ल—लेकिन खुद में पूरी एक फौज !'
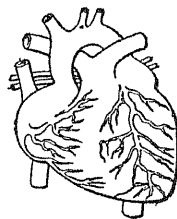
गैलेन

"इन स्थापनाओं में से किसीपर भी एकाएक विश्वास कर लेना मेरे लिए असंभव है जब तक कि मैं, जहां तक भी मेरी ताकत में है, इनकी परीक्षा खुद नहीं कर लेता। मैं तो कहूंगा कि मेरे बाद भी अगर किसीको मेरी ही तरह कर्मयोगी होने की धुन सवार हो, और सत्य की तह तक पहुंचने की हवस हो, तो वह केवल दो या तीन उदाहरणों से ही जल्दबाज़ी के साथ किसी नतीजे पर पहुंचने की कोशिश न करे। जिज्ञासु को, प्रतिबोध, प्रायः मेरी तरह लम्बे अनुभव के बाद ही उपलब्ध होगा।"

ये शब्द प्रसिद्ध चिकित्साशास्त्री गैलेन के हैं : गैलेन—जिसकी गणना विश्व के धन्वन्तरियों में की जाती है और जिसे शरीर-रचना-विज्ञान का जनक माना जाता है। उसकी 'एनेटॉमिकल एक्सरसाइज़ेज़' चिकित्साशास्त्र का वह विश्वकोष है जो चिकित्सा को सचमुच एक नये मोड़ पर ले आया—एक कर्मयोगी जीवन का एक जीवित स्मारक, तथा चिकित्सकों के लिए प्रायः 15 सदियों से चला आ रहा 'अन्तिम प्रमाण'। गैलेन के उद्धृत शब्दों का महत्त्व हमारे लिए आज और भी बढ़ जाता है जब हम उनमें—परीक्षण द्वारा सत्य की परीक्षा करने की आधुनिक प्रणाली की, तथा निष्कर्षों की अनेकानेक परीक्षाओं के सिद्धान्त की प्रतिध्वनि पाते हैं।

गैलेन का जन्म ईसा के 129 साल बाद, एशिया माइनर के पर्गेमम द्वीप में हुआ था। एशिया माइनर कालासागर तथा भूमध्यसागर के बीच में स्थित एक प्रायद्वीप है जो बीच में ईजियन सागर द्वारा ग्रीस से विभक्त हो जाता है। अर्वाचीन युग में यह प्राय-द्वीप प्रायः टर्की की अधीनता में ही रहा है, किन्तु गैलेन के दिनों में यह सभ्य विश्व के समृद्धतम प्रदेशों में था। तब रोमन राज्य का दबदबा था और रोम ने तब इसका प्रशासन

सचमुच बडी बुद्धिमत्ता और सुन्दरता के साथ किया था ।

गैलेन का पिता ग्रीक था और सुशिक्षित था। अकगणित, ज्यामिति तथा ज्योतिर्विज्ञान में उसे निपुणता प्राप्त थी। वह एक गणितज्ञ भी था और वास्तुशिल्पी भी। पिता का पुत्र पर महान तथा निर्णायक प्रभाव पडा। उसीके कारण उसकी मनोवृत्ति मे, उसके जीवन में, वैज्ञानिकता आई। पिता का उपदेश था "सत्य ही की आराधना करनी चाहिए। सुना और सुनकर उसपर चिन्तन किया। किसी भी मत और सम्प्रदाय के अनुसरण की आवश्यकता नही।" उधर, मा का प्रभाव भी कुछ कम न था। उससे उसने धैर्य सीखा, खुद पर काबू रखना सीखा, कुछ भी जबान पर लाने से पहले उसपर खूब सोचना सीखा। सबक तो मा ने ठीक दिया लेकिन वह खुद एक तुर्श-मिजाज औरत थी, नतीजा यह हुआ कि गैलेन ने फैसला कर लिया कि मा का कहना वह कभी नही मानेगा।

चौदहवें साल तक, जैसा कि उन दिनो रिवाज था, गैलेन की पढाई-लिखाई घर पर ही हुई। 15वे साल मे उसे विभिन्न शिक्षा-केन्द्रो मे व्याख्यान सुनने भेज दिया गया ताकि वह ग्रीक दार्शनिको के महावाक्यो का चयन कर सके। गैलेन जब सत्रह वर्ष का हो गया तब जाकर कही निश्चय किया गया कि उसे डाक्टर बनना है; और आश्चर्य यह है कि बालक की जीवन-दिशा निर्धारित करने के इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न का समाधान एक स्वप्न के आधार पर किया गया! उन दिनो लोगो को स्वप्न की सत्यता पर बहुत ही अधिक विश्वास हुआ करता था, यहा तक कि गैलेन और उसके पिता जैसे सुशिक्षित और सुलझे विचारो के लोग भी उसे तथावत् स्वीकार करते थे।

चिकित्साशास्त्र का अध्ययन गैलेन ने उन दिनो के माने हुए विशेषज्ञो के यहा जाकर किया। इसके लिए उसे देश-विदेश—पर्गेमम, स्मर्ना, कोरिन्थ तक जाना पडा। उन दिनो जितने भी विषय एक विद्यार्थी को पढाए जाते थे—ज्यामिति, ज्योतिर्विज्ञान, सगीत, भाषाविज्ञान तथा आयुर्वेद—सभी का मनोयोगपूर्वक स्वाध्याय गैलेन ने किया।

उनतीस साल तक उनका यह विद्यार्थी-जीवन चलता रहा। उन दिनो भी यह एक लम्बा अरसा माना जाता था। खैर, वापस घर लौटने पर उसने प्रैक्टिस शुरू कर दी और इसमे उसे पर्याप्त सफलता भी मिली। उधर रोम से ग्लैडियेटरो की मरहम-पट्टी के लिए उसके पास बुलावे आने लगे। 'ग्लैडियेटर' लोग तलवार हाथ मे लेकर एक-दूसरे की जान ले लेने के उद्देश्य से द्वद्वयुद्ध किया करते थे। यह रोमनो का एक मनपसन्द खेल था। किन्तु इन्सान के जिस्म पर चीराफाडी पर उन्हे आपत्ति थी! गैलेन ने अपने पद का फायदा उठाया, और वह वहा भी शल्य-चिकित्सा-सम्बन्धी अपने अध्ययन बदस्तूर करता रहा।

शरीर-रचना-विज्ञान तथा शरीर-विज्ञान (फीजियॉलोजी) दोनों—मे ही गैलेन ने बडे महत्त्वपूर्ण और व्यापक अनुसन्धान किए। उसकी उन गवेषणाओ के हज़ार-हज़ार पृष्ठ के 21 विपुलाकार ग्रन्थ सुरक्षित है। कानूनन वह मनुष्य के शरीर की रचना का पूरा-पूरा अध्ययन नही कर सकता था, वह कसर उसने 31 बन्दरो के शारीरिक अध्ययन द्वारा पूरी की। इन ग्रन्थो का पृष्ठ-पृष्ठ गैलेन के सूक्ष्म अन्वीक्षणो का परिचायक है।

गैलेन ने हृदय-सस्थान का अध्ययन किया—उसकी तहो को टटोला, उसकी

पेशियों के बलाबल को प्रत्यक्ष किया, और उसके मुखद्वारों की गतिविधि का साक्ष्य किया। खून किस तरह शरीर में दौरा करता है, इस सिद्धान्त पर भी वह लगभग पहुंच ही गया था कि एक गलत अनुमान उसकी उस सारी खोज को ही विकृत कर गया, वह यह कि रक्त हृदय के दक्षिण पार्श्व से किसी प्रकार बीच की दीवार में से रिसकर दूसरी ओर पहुंच जाता है। यही नहीं, मुख्य रक्तवाहिनियों की पहचान भी उसने खूब कर ली थी, किन्तु यह निश्चय वह नहीं कर पाया कि 'हृदय से' तथा 'हृदय की ओर'—दोनों प्रक्रियाओं—को एक करनेवाली वह नियामक 'वाहिनी' क्या है। उसका ख्याल था कि ये नीली-नीली और लाल-लाल नसें किसी अज्ञात, अनियमित-वृत्ति द्वारा खून को दिल से बाहर की ओर और फिर वापस दिल ही में ले जाती हैं।

नाड़ी-तन्त्र के विषय में भी गैलेन हमारे आधुनिक ज्ञान के बहुत निकट पहुंच गया था। उसने यह अनुभव कर लिया था कि ये नाड़ियां ही होती हैं जो स्वयं, अथवा सुषुम्ना नाड़ी के माध्यम द्वारा, ऐन्द्रिय-प्रत्यक्ष को मस्तिष्क तक पहुंचाती हैं। पशुओं पर, उनके
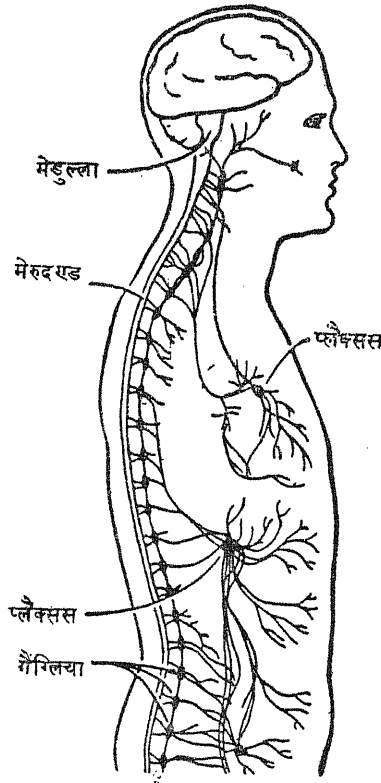
नाड़ी तन्त्र

मेरुदण्ड को जगह-जगह छेदते हुए, उसने अनेक परीक्षण किए और पाया कि किस प्रकार

वह बेचारा बेज़ुबान जानवर शरीर के कितने ही धर्मों को सही-सही निभाने मे निकम्मा हो चुका है। एक मध्यच्छद-स्नायु (फ्रेनिक नर्व) के ही कट जाने से कितना नुकसान हो सकता है—इसका भी उसे सही-सही आभास हो चुका था। यही वह नाड़ी है जो श्वास-प्रश्वास की प्रक्रिया मे फेफडे के परदे की गतिविधि को नियमित किया करती है।

यह पहचान भी गैलेन को हो चुकी थी कि नब्ज की रफ्तार किस प्रकार मरीज़ की हालत के बारे मे सही-सही खबर देती रहती है, और यह भी कि यही नाडी-स्पन्दन व्यक्ति की आन्तर स्थिति का, भाव-भूमि का, परिचायक भी हो सकता है। मैण्डेल के प्रजनन-सिद्धान्तो का पूर्वज्ञान भी जैसे उसे हो चुका था क्योकि उसने भी प्रत्यक्ष किया था कि बच्चे शक्ल-सूरत मे अक्सर मा-बाप से नही, दादा-दादी से अधिक मिलते है। और उसने यह भी देखा कि पसीने की हालत मे, भले ही हमे यह अनुभव न हो रहा हो, हमारा सारा शरीर ही पानी-पानी हो रहा होता है।

1500 साल से अधिक गुजर गए किन्तु चिकित्सा-जगत् की यह धारणा बनी ही रही कि गैलेन के सिद्धान्तो मे कोई त्रुटि नही हो सकती। किसी एकाध ने यदि उनपर आपत्ति की तो उसका अर्थ होता—अब उनकी न कोई मरीज सुनेगा न कोई सहयोगी वैद्य ही। और यह तब जबकि गैलेन का खुद आदेश है कि बिना परीक्षा के किसी भी निष्कर्ष को आख मूदकर कभी स्वीकार न करना।

16वी सदी मे बेल्जियम के एक डाक्टर आन्द्रेआस वैसेलिअस ने मानव-शरीर के अगाग-सन्धानके सम्बन्ध मे अनेक परीक्षण किए और गैलेन की प्रामाणिकता को किंचित् विचलित करने की कोशिश की। किन्तु एक सदी और बीत गई, जब विलियम हार्वे ने आकर रक्त-प्रवाह के सम्बन्ध मे अपने परीक्षणो को प्रकाशित किया, तब जाकर कही चिकित्सा के क्षेत्रो से गैलेन का प्रभाव कुछ हटना शुरू हुआ। वैसेलिअस के समय मे तो—शरीर-तन्त्र विषयक कोई अनुसन्धान यदि यह सकेत देता प्रतीत होता कि गैलेन मे कही गलती रह गई है, तो चिकित्सा के महारथी यही कह देते कि हमारा यह शरीर ही गैलेन के वक्त से बदल चुका होना है, गैलेन गलती नही कर सकता!

बुद्धि की यह दासता, स्वय उसके अपने ही ग्रन्थो के प्रति यह क्यो न हो, गैलेन को कभी मजूर न होती। उसने तो कहा था, "हर चीज़ की सच्ची कसौटी प्रत्यक्ष है, स्वानुभव है।"

लियोनार्दो दा विंची

फ्लॉरेंस (इटली) में एक पहाड़ी है। एक दिन यहां सुनहरे बालोंवाला एक नौजवान आया जिसके हाथ में एक पिंजरा था। पिंजरे को उसने खोला और पिंजरे में बन्द परिन्दों को आसमान में छोड़ दिया। परिन्दे खुली हवा में तैरते गए। हमारा नौजवान उन्हें बड़े ध्यान से देखता रहा। जो कुछ लियोनार्दो दा विंची ने देखा उसके वह नोट्स लेता गया।

वह परिन्दों को देख भी इसी से लिए रहा था। क्योंकि उसे यह यकीन हो चुका था कि हवा में उड़ने के जो कुछ भी नियम हो सकते हैं वे आदमी के लिए और परिन्दों के लिए एक-से ही होने चाहिएं। वह अपने नोट्स उल्टी लिखावट में ले रहा था कि कहीं किसी और के हाथ न आ जाएं। इटली में पहले से ही बहुतों का ख्याल बन चुका था कि लियोनार्दो पागल है और लियोनार्दो भी नहीं चाहता था कि वह किसी तरह भी जले पर नमक छिड़कने की एक गलती और कर जाए। आदमी उड़ने लगे—? नामुमकिन।

कितने ही इतिहासकारों का मत है कि लियोनार्दो दा विंची अपने युग का सबसे बड़ा परीक्षणशील वैज्ञानिक था, और यह तो सभी मानते ही हैं कि उसकी गणना मानव-इतिहास के श्रेष्ठतम कलाकारों में होनी चाहिए। चित्रकला में उसकी इस प्रसिद्धि का आधार दो चित्र माने जाते हैं—'लास्ट-सपर' और 'मोनालीसा'। कितने ही विश्वविख्यात चित्र वह अपने पीछे छोड़ गया और, इनके अतिरिक्त, 5000 से अधिक बड़े छोटे-छोटे अक्षरों में लिखे हुए सचित्र पृष्ठ भी जिनमें जो कुछ प्रत्यक्ष उसने किया और उन प्रत्यक्षों के आधार पर जितने भी आविष्कार (सभी तरह के) उसे सूझे, उनकी रूपरेखा अंकित है। जो कुछ भी उसने जिन्दगी-भर में लिखा, शीशे पर अक्स की शक्ल में उल्टी लिखावट में ही लिखा ताकि वह लोगों की निगाह से बचा रह सके। लियोनार्दो दा विंची एक

आविष्कारक था। वह एक सिविल इजीनियर, सैनिक इजीनियर, ज्योतिर्विद, भूगर्भ-शास्त्री और शरीर-शास्त्री था। और साथ ही, शायद, वह दुनिया का पहला हवाबाज भी था। उसका हर क्षेत्र मे, प्रवेश ही नही, एक विशेषज्ञ के समान पूर्ण अधिकार था। सर्वप्रथम वह एक कलाकार था, और कला के माध्यम से ही उसने विज्ञान मे प्रवेश किया, और उसके वैज्ञानिक अध्ययनो ने भी सम्भवत उसकी कला को चार चाद और लगा दिए।

लियोनार्दो का जन्म १४५२ मे, इटली के प्रसिद्ध शहर फ्लॉरेंस के निकट विंची गाव मे हुआ था। उसका पिता गाव का एक अफसर था, और मा विंची की ही किसी सराय मे कभी नौकरानी रही थी। विंची का बचपन अपने दादा के घर मे बीता।

स्कूल से ही लियोनार्दो की प्रतिभा सामने आने लग गई थी जबकि गणित की मुश्किल से मुश्किल समस्याओ का समाधान वह चुटकियो मे ही कर देता था। और इसी समय से ही चित्रकला मे उसकी अद्‌भुत शक्ति भी अभिव्यक्ति पाने लगी थी। सोलह साल की उम्र मे आन्द्रेआ देल वेर्रोचिओ के यहा वह एप्रेण्टिस हो गया, और उसकी छत्रछाया मे लकडी, सगमरमर, तथा अन्यान्य धातुओ पर शिल्पकारी करना सीख गया। वेर्रोचिओ अपने शिष्य की अद्‌भुत योग्यता से प्रभावित हुआ और उसने लियो-नार्दो को प्रेरित किया कि वह लेटिन और ग्रीक के गौरव-ग्रथो का स्वाध्याय करे और दर्शन, गणित तथा शरीर-विज्ञान मे दक्षता प्राप्त करे। वेर्रोचिओ का विचार था कि एक सच्चा कलाकार बनने के लिए इन ग्रथो और विषयो का स्वाध्याय आवश्यक है।

छब्बीस वर्ष की आयु मे कही लियोनार्दो की यह शागिर्दी समाप्त हुई, जिसके बाद वह 'कलाकार सघ' का सदस्य बन गया। अब वह पूर्णत स्वतन्त्र था कि उसकी कला के भी अपने ही प्रशसक हो, अपने ही पारखी हो। सघ की छत्रछाया मे उसने सगीत-वाद्यो मे एक नया परीक्षण किया। घोडे के सिर की शक्ल मे एक वीणा आविष्कृत की जिसके दांतो मे यह विशेपता थी कि वे सगीत के स्वरो का यथेष्ट 'सकलन' कर सकते थे। इस वीणा से ड्यूक लूदोविको स्फोर्जा, जो उन दिनो मीलान का राजा था, लियोनार्दो की ओर आकृष्ट हो गया।

इटली उन दिनो कितनी ही छोटी-छोटी रियासतो मे बटा हुआ था जिनमे आए दिन कोई न कोई झडप हो जाती। लियोनार्दो दा विंची का ध्यान परिणामत युद्ध के लिए उपयोगी सामग्री के निर्माण की ओर गया। और, ड्यूक की नौकरी करते हुए, उसने कुछ नये शहर बसाने की योजना-सी भी बनाई कि वह प्लेग की महामारी से तग आए शहरो को कुछ मुक्ति दिला सके। उसकी योजनाओ मे शहर की गन्दगी को नालियो द्वारा दूर ले जाने की व्यवस्था का महत्त्व भी स्पष्ट है। कितनी ही योजनाए उसने ड्यूक के सामने पेश की लेकिन मालिक को शायद उनमे कोई भी पसन्द नही आई, सो, ड्यूक के लिए वह एक सुन्दर चित्र 'दि लास्ट सपर' ही प्रस्तुत कर सका जिसे सान्ता मारिया की रिफेक्टरी को पेश करने के लिए बनाने का उसे हुक्म खुद ड्यूक ने दिया था।

मीलान मे रहते हुए उसकी अभिरुचि 'शरीर-रचना-विज्ञान' (एनाटमी) मे जाग उठी। उस जमाने के मशहूर डाक्टरो के पास वह गया कि मुर्दों की चीरा-फाडी वह

अपनी आंखों से देख सके। इस सबका नतीजा यह हुआ कि मानव-शरीर के अंग-अंग का सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत करनेवाले लियोनार्दो के कितने ही कलापूर्ण रेखाचित्र आज विज्ञान की विरासत बन चुके हैं।

ड्यूक स्फोर्ज़ा को फ्रांस के बादशाह ने पकड़ लिया और कैद में डाल दिया। परिणामतः लियोनार्दो का अब कोई अभिभावक न रहा। इस संकटकाल में वेनिस जाकर उसने अपने युद्ध-सम्बन्धी आविष्कारों को वहां के अधिकारियों के सम्मुख पेश किया—जिनमें गोताखोरों के लिए एक खास किस्म की पोशाक और एक तरह की पनडुब्बी भी थी। ये ईजादें विंची के उन थोड़े-से आविष्कारों में से हैं जिनका कि उसकी नोट-बुकों में पूरा-पूरा ब्यौरा नहीं मिलता। विंची का कहना था कि इन्हें बनाने के तरीकों को वह खोलकर पेश नहीं कर रहा क्योंकि उसे डर था कि "कहीं मनुष्यों की पशुता इनका प्रयोग समुद्र-तल में उतरकर संहार के लिए न करने लगे।"

कुछ अरसे के लिए लियोनार्दो सेसारे बोर्गिया के यहां नक्शाकशी की नौकरी भी करता रहा। बोर्गिया एक जालिम हाकिम था जिसकी तजवीज़ सारे इटली को अपने कब्ज़े में ले आने की थी; उसने लियोनार्दो को नौकरी दी भी इसी इरादे से थी कि उसे इस बहाने टस्कनी और अम्ब्रिया के सही-सही नक्शे मिल जाएंगे। ये नक्शे लियोनार्दो ने—खुद मौकों पर पहुंचकर, निरीक्षण के अनन्तर, और इंच-इंच ज़मीन को औज़ारों से मापकर, फिर—तैयार किए थे।

1500 ई० में, जब उसकी आयु 50 के करीब होने लगी, लियोनार्दो अपनी मातृ-भूमि फ्लॉरेंस को लौट आया और, अब 6 साल लगातार, यहीं रहा। इसी अरसे में उसने
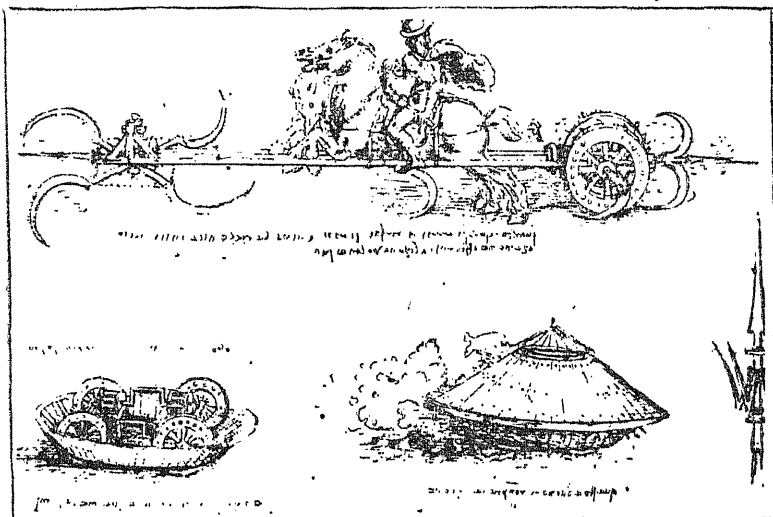
युद्धोपयोगी अस्त्रों के लिए लियोनार्दो के रेखाचित्र

'मोनालीसा' की वह प्रसिद्ध तस्वीर तैयार की जिसकी लुभावनी मुस्कराहट को फ्रांस के

लूव्र म्यूजियम मे देखकर, आज भी हजारो की आखो को तरावट मिलती है, और आध्यात्मिक तृप्ति मिलती है।

लियोनार्दो के ही समकालीन अन्य प्रसिद्ध कलाकार—रैफेल तथा माइकेलैंजेलो—उन्ही दिनो वैटिकन मे, और वैटिकन के सिस्टीन चैपल मे, तस्वीरे बना रहे थे। लियोनार्दो भी रोम पहुचा, किन्तु एक भी आर्डर लेने मे असफल रहा। लोग लियोनार्दो को नही चाहते थे, क्योकि उसने आदमी के जिस्म को अन्दर से झाका था और—अपने उन अध्ययनो की उसने तस्वीरे भी खीची थी। जनता की, तथा अधिकारी वर्ग की, इस उपेक्षा का परिणाम यह हुआ कि उसे इटली छोडना पडा और वह लौटकर फिर घर कभी नही आया। उसकी जिन्दगी के बचे आखिरी साल फ्रास के राजा की सेवा मे गुजरे।

कलाकार लियोनार्दो दा विंची के प्रामाणिक सस्करण निकल चुके है। आज भी उसके उन चित्रो मे मानव-प्रतिभा की अद्भुत अभिव्यक्ति प्रत्यक्ष है, किन्तु वैज्ञानिक एव आविष्कारक लियोनार्दो दा विंची का वर्णन कर सकना कुछ टेढी खीर है। वह अपने जमाने से कही आगे था। उसने जितनी भी कल्पनाए की, सभी को मूर्त-रूप दिया जा सकता था; लेकिन अपने ही साथियो से वह इतने दूर की सम्भावनाए पेश कर रहा था जिसके लिए समर्थन उसे शायद कही भी नही मिल सका। उसकी एक मुश्किल यह भी थी कि वह एक ही वक्त पर कितने ही काम अपने हाथ मे ले लेता और वक्त पर एक भी निभा न पाता क्योकि वक्त ही थोडा होता, और उन सभी पर एक साथ ध्यान वह खुद भी केन्द्रित नही कर सकता था।

उसके आविष्कार, जितने ही रोचक है, उतने ही विविध भी है। उसकी मशीनगन स्पेनिश-अमेरिकन युद्ध मे इस्तेमाल की गई अमेरिकन गैटलिंग गन का पूर्व सस्करण है। लियोनार्दो की गन मे एक तिकोने आधार पर रखे बहुत-से बैरल इस्तेमाल होते है. एक ग्रुप की गने जब कारतूस छोड रही होती है तो—दूसरे ग्रुप की भराई हो रही होती है, और तीसरा ग्रुप ठडा हो रहा होता है। उसका ईजाद किया हुआ मिलिटरी टैंक एक चलता-फिरता घर है जिसमे कारतूसी ब्रीचो की भरी कितनी ही तोपें छिपाकर रक्खी होती है। टैंक चार ऐसे पहियो पर आगे बढता जिन्हें किसी भी दिशा मे घुमाया-फिराया जा सके और, ज़रूरत के वक्त, अलग भी किया जा सके, लेकिन टैंक को आगे धकेलने के लिए आदमी ही काम मे लाए जाते। यह उन दिनो की बात है जबकि पानी और हवा को शक्ति के रूप में इस्तेमाल करने के अतिरिक्त कोई और कारगर वैज्ञानिक तरीका अभी विकसित नही किया जा सका था।

पनडुब्बियो और गोताखोरो की पोशाक के अलावा लियोनार्दो ने एक दो-मस्तूल वाला पानी का जहाज़ भी बनाया. बाहर के मस्तूल को यदि दुश्मन बमबारी से तबाह भी कर दे तो जहाज़ बाकायदा चलता ही रहेगा।

विज्ञान के उस क्षेत्र मे भी जिसे आधुनिक परिभाषा मे यत्र-विज्ञान कहते है लियोनार्दो का उतना ही प्रवेश था। हवा की रफ्तार को जानने के लिए उसने एक एनीमोमीटर ईजाद किया। यह एक तरह का पखा था जिसे बीचोबीच इस प्रकार से टिका दिया जाता था कि ज़रा-सी भी हवा उसमे गति उत्पन्न कर जाए . पखा हवा में किस

कोण पर डुलता है, उससे हवा की रफ्तार बडी आसानी से मापी जा सकती है।

लियोनार्दो की बडी घडी ही दुनिया मे पहली घडी थी जिसमे घटे और मिनट एक साथ पढे जा सकते थे। घडी की गतिविधि को नियत्रित करने के लिए अन्दर एक भार लटका होता और एक तरफ से रेत के खिसकने के लिए एक 'एॅस्केपमेण्ट' की व्यवस्था होती।

आजकल की मोटरगाडियो मे एक प्रकार का आॅडोमीटर लगा होता है जो यह बतलाता है कि गाडी कितना फासला तय कर चुकी है। आॅडोमीटर का काम यह होता है कि पहियो ने कितने चक्कर काटे है। उनको बाकायदा दर्ज करता चले और, गियरो और कैबलो के ज़रिए, इस सूचना को मीलो मे बदल दे। लियोनार्दो के पास कोई मोटर-गाडी नही थी लेकिन अपनी नक्शाकशी के दौरान फासले मापना उसके लिए भी उतना ही जरूरी था जिसके लिए उसने एक तरह का आॅडोमीटर-सा ईज़ाद कर लिया . एक ह्वील बैरो की शक्ल की-सी कुछ चीज़ जिसे आपरेटर सडक पर धकेलता हुआ आगे ले चलता जैसे-जैसे पहिये चलते, मशीन के गियर घूमने लगते, जिनका सम्बन्ध एक डायल की सुइयों के साथ पहले से ही बना हुआ होता। ये सुइया किसी भी वक्त यह बता सकती थी कि ह्वील-बैरो कितने मील चल चुका है।

लियोनार्दो ने कितनी ही इस तरह की छोटी-मोटी ईजादें की जो आज भी, थोडी-बहुत हेरा-फेरी के साथ, उसी शक्ल मे इस्तेमाल हो रही है। उनमे कुछ फर्क अगर आ गया है तो यही कि लकडी की जगह अब स्टील इस्तेमाल होने लगा है किन्तु उनके मूल मे काम कर रहे नियम सर्वप्रथम लियोनार्दो की सूक्ष्म बुद्धि ने ही विकसित किए थे। भारी वज़नो को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुचाने के लिए भी उसने एक यत्र का निर्माण किया था जो हमारे आधुनिक 'आॅटोमोबाइल जैक' से बहुत भिन्न नही है। एक 'वेरियेबल स्पीड ड्राइव' का माडल भी उसकी नोटबुको मे दर्ज है जिसमे गियर की शक्ल के भिन्न-भिन्न व्यास वाले पहिये इस्तेमाल होते है—और इन पहियो का सम्पर्क आप-से-आप एक किस्म के कोन ड्राइव के साथ होता चलता है। इस्तेमाल करनेवाला जैसी भी रफ्तार चाहे इस सम्बन्ध को अदल-बदलकर मुमकिन कर सकता है। और तो और, लियोनार्दो ने रोलर बेयरिंग की ईज़ाद भी उन दिनो कर ली थी जबकि अभी ऐसी किसी चीज़ का किसीको ख्वाब भी न आ सकता था। उसने एक किस्म का डिफरैन्शल भी तैयार कर लिया था जिसका इस्तेमाल मोटरगाडियो के पिछले पहियो मे सिद्धान्तत. हम आज भी उसी रूप मे करते हैं। डिफरैन्शल का काम होता है कि दोनों पहियो मे एक की रफ्तार दूसरे से कुछ ज्यादा हो ताकि मोटरगाडी को किसी मोड पर मोडने मे कोई दुर्घटना न पेश आए।

मशीनी औज़ार तैयार करनेवाली फैक्टरिया शायद यह जानकर आज हैरान हो कि उनकी चूडिया काटने की और रेतिया काटने की मशीनें प्रयोग मे लियोनार्दो की उन रूपरेखाओ से कोई बहुत भिन्न नही है।

हाइड्रॉलिक्स, अर्थात् जलशक्ति, लियोनार्दो का एक बहुत ही प्रिय विषय था। उसने एक ऐसा पम्प आविष्कृत किया जिसमे प्रवाह की शक्ति स्वय पानी को ऊपर उठा

सकती थी। बहते पानी में एक पैडल-ह्वील होता जो एक बड़े भारी काग-ह्वील को आगे धकेलता, और यह काग-ह्वील अब कुछ पिस्टन पंपों को चालू कर देता जिनसे पानी धीमे-धीमे खुद-ब-खुद ऊपर उठने लगता। सारी मशीन कुल मिलाकर कोई 70 फुट ऊंची बन जाती है। इसके अतिरिक्त जलशक्ति के अन्य पार्श्वों का भी विंची ने अध्ययन किया। पानी में तैरती-फिरती मछलियों की शक्लों को उसने बड़े गौर से देखा जिसके आधार पर उसने पानी के जहाज़ों के कुछ ऐसे डिज़ाइन बनाए कि वे भी मछलियों की तरह ही आज़ादी के साथ जिधर चाहें, बग़ैर किसी रोक-टोक के, आ-जा सकें।

जलशक्ति से सम्बद्ध दो ही प्रश्न महत्त्वपूर्ण थे—एक तो खेतों की सिंचाई का प्रश्न और दूसरा समुद्री यात्रा का प्रश्न ; और इन्हींको लक्ष्य में रखते हुए, लियोनार्दो ने नदी-प्रवाह की दिशा को बदल देने की कुछ महान् योजनाएं भी तैयार कीं।

1490 के लगभग लियोनार्दो ने हवा में उड़ने की एक मशीन का नक्शा भी तैयार कर दिया। इस मशीन को, जो उड़ी कभी नहीं लियोनार्दो की योजना में शुरू से आखीर तक खुद इन्सान को ही चालू करना था। ख्याल था कि उड़नेवाला ही अपने पैरों को चला-चलाकर मशीन के बड़े-बड़े पंखों को गति देगा ! एक किस्म का हेलीकोप्टर भी लियोनार्दो ने तैयार कर लिया था जिसका मुख्य पुर्जा एक भारी स्क्रयू या चूड़ी था—लेकिन इस चूड़ी को आगे-पीछे धकेलने के लिए एक स्पिंग लगा दिया गया। इसमें काम-याबी उसे इस वजह से नहीं मिल सकी कि स्क्रयू को चालू करने के लिए जो ताकत उस वक्त उपलब्ध थी वह बहुत ही थोड़ी थी। लियोनार्दो ने, लकड़ी का, पिरामिड की शक्ल का एक बड़ा ढांचा भी तैयार किया और उसे लिनन से ढंक दिया : यह था
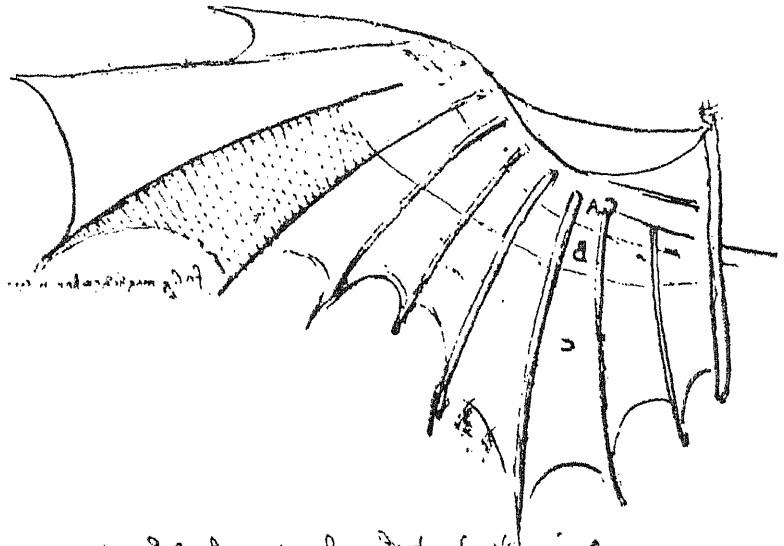
इन्सान के उड़ने के लिए एक पंख का लियोनार्दो द्वारा प्रस्तुत स्केच

हमारा पहला पैराशूट जिसकी परीक्षा एक ऊंचे बुर्ज़ से करके दिखाई भी गई—कि किस प्रकार ऊपर से गिरता हुआ कोई वज़न ज़मीन पर पहुंचते-पहुंचते अपनी रफ्तार को मद्धिम कर सकता है।

वनस्पतिशास्त्र में भी लियोनार्दो दा विंची का प्रवेश अद्‌भुत था। उसके रेखा-चित्रों में तथा लेखों में स्पष्ट संकेत मिलते हैं कि वनस्पतियों की प्रकाश-ग्रहण की प्रवृत्ति का उसे पूर्ण ज्ञान था—कुछ पौधे स्वभावत: 'सूर्यमुखी' होते हैं जबकि कुछ दूसरे सूर्य के उदय होते ही अपना मुंह फेर लेते हैं। यही नहीं, लियोनार्दो ने यह भी प्रत्यक्ष किया कि कुछ जड़ों की प्रवृत्ति ज़मीन के नीचे की ओर बढ़ने की होती है, जबकि दूसरी किस्म की कुछ जड़ें स्वभावत: धरती के बाहर निकलने के लिए जैसे बेचैन रहती हैं। वनस्पतियों में, प्रकाश-वृत्ति की भांति, यह (एक प्रकार की) 'भूमुखी-वृत्ति' भी पाई जाती है—जो भिन्न-भिन्न वनस्पतियों में प्रवृत्ति अथवा निवृत्ति के रूप में उसी प्रकार दृष्टिगोचर होती हैं। वृक्षों के तने को या शाखाओं को काटें तो हम देखेंगे कि कटी हुई जगह पर कुछ घेरे-से पड़े होते हैं। लियोनार्दो ने इन घेरों का सम्बन्ध वृक्ष की आयु से स्थापित कर लिया। फूलों के जो रेखाचित्र लियोनार्दो पीछे छोड़ गया है, उनसे यह स्पष्ट है कि उसे वनस्पति-जीवन में नर-नारी अथवा स्त्री-पुरुष की सत्ता का परिज्ञान था।
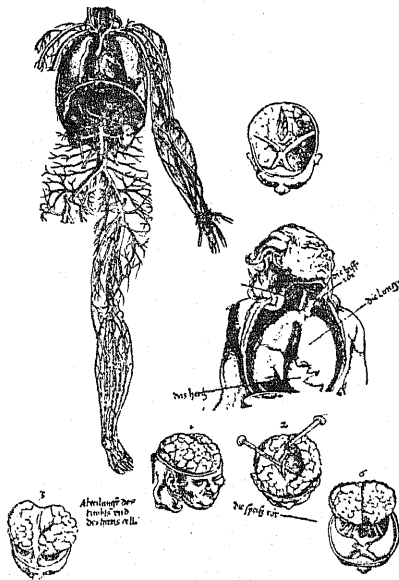
शरीर-रचना विषयक अध्ययन

शरीर के अंगांग तथा अन्तरंग जानने की उत्सुकता भी लियोनार्दो को हुई तो इसके लिए भी उसने एक चिकित्सक के साथ अपना गठबन्धन कर लिया। जहां तक मानव-शरीर की रचना का प्रश्न है, उसकी अन्तर्व्यवस्था का लियोनार्दो को गम्भीर ज्ञान था। यह उसके शरीर विषयक रेखाचित्रों से ही स्पष्ट है। इन रेखाचित्रों से यह भी

इतिहास मे पहली ही बार जाहिर हो सका कि मनुष्य के मस्तक मे तथा जबडो मे मुखद्वार होते है जिन्हे चिकित्साशास्त्री, क्रमश, 'फ्रन्टल' तथा 'मैक्सिलरी' साइनस कहते है। चिकित्साशास्त्र मे लियोनार्दो के रेखाचित्र ही पहली बार रीढ के दोहरे झुकाव को ठीक तरह से अकित कर सके है, और, इतिहास मे, पहली ही बार मा के पेट मे पडे (अ-जात) शिशु की स्थिति बडी सूक्ष्मता के साथ दरशाई गई है। लियोनार्दो के हृदय-सम्बन्धी रेखा-चित्रो तथा उपवर्णनो मे भी, अद्भुत यथार्थ अकित हुआ है जिसमे—हृदयकक्ष, हृदयद्वार, तथा हृदय की आपूर्ण रचना सभी कुछ यथावत् चित्रित है।

लियोनार्दो के अनेक रेखाचित्रो को आज के माडलो के रूप मे परिवर्तित किया जा चुका है। कभी-कभी इन प्रतिमूर्त आकृतियो का प्रदर्शन भी किया जाता है। 'इण्टर-नेशनल बिजनेस मशीन कॉर्पोरेशन' के पास इनका एक प्रामाणिक एव विपुल सग्रह है भी। कॉर्पोरेशन के सस्थापक टॉमस जे० वाट्सन के शब्द है

"आविष्कार मनुष्य की महानतम कलाओ मे एक है। शब्द के व्यापकतम अर्थों मे सभी कलाओ का समावेश आविष्कार मे हो जाता है। लियोनार्दो दा विची का अध्ययन —जब हम उसके चित्रो, रेखाचित्रो, अन्वेषणो, वैज्ञानिक गवेषणाओ तथा आविष्कारो के माध्यम से करते है, तो हमे एक अपूर्व उल्लास का अनुभव होता है कि एक ही मनुष्य अपनी विचारशक्ति, अनुभवशक्ति तथा निर्माण-शक्ति का अपने साथी मानवो की सेवा मे पूर्णतम प्रयोग करते हुए—क्या कुछ नही कर जा सकता।"
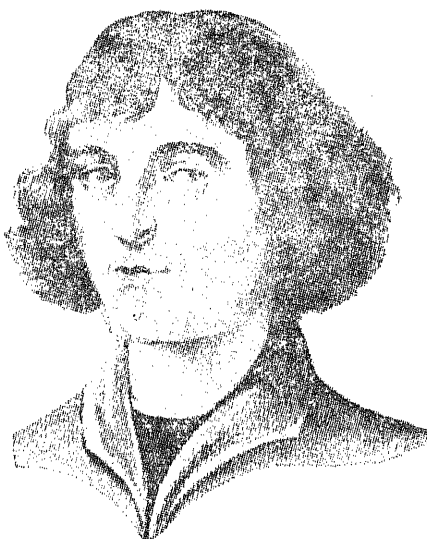
निकोलस कोपर्निकस

"क्यों, भैया, सूरज कुछ आगे बढ़ा ?" "सूरज निकलता किस वक्त है ?" "देखा है कभी डूबते सूरज को, कितना खूबसूरत लगता है।"—हमारी ज़बान भी उसीका समर्थन करती है जो कुछ कि हमारी इन्द्रियां हमें बतलाती हैं। यह—कि सूरज चलता है।

लेकिन हमें मालूम है कि हमारी ज़बान भी गलत है, और हमारी इन्द्रियां भी—क्योंकि सूरज नहीं, जमीन चलती है। किन्तु कितनी सदियां, आम लोगों का ही नहीं, वैज्ञानिकों का, ज्योतिर्विदों तक का यही विश्वास था कि पृथ्वी स्थिर है और सारा ब्रह्मांड इसकी प्रदक्षिणा करता है।

ईसा के लगभग 150 साल बाद मिस्र के एक प्रसिद्ध वैज्ञानिक टालमी ने कुछ गणनाएं कीं और ग्रह-नक्षत्रों की भावी स्थिति के बारे में कुछ संकेत दिए—जो बहुत कुछ सच निकले। पर क्योंकि इन गणनाओं में पृथ्वी को केन्द्र मान लिया गया था, इसलिए, कुछ बातें टालमी को खुद ही समझ नहीं आ सकीं कि ये नक्षत्र कभी-कभी अपने रास्तों से हटकर क्यों चलने लगते हैं। (नक्षत्र के लिए ग्रीक भाषा में 'प्लैनेट' शब्द प्रयुक्त होता है जिसका मूल अर्थ है 'आवारा'—अपने रास्ते से हटकर चलनेवाला।)

टालमी से भी लगभग 400 साल पहले एक ग्रीक ज्योतिषी, सामोस-निवासी एरिस्टार्कस ने एक स्थापना पेश की थी कि ब्रह्मांड का केन्द्र सूर्य है,किन्तु यह विचार उस समय कुछ इतना असाधारण था कि एरिस्टार्कस के ज्योतिर्विज्ञान की एकदम उपेक्षा कर दी गई।

सदियां बीत गईं और 1540 ई० के करीब जाकर कहीं, पोलैंड के ज्योतिर्विद निकोलस कोपर्निकस ने अनुभव किया कि ग्रह-नक्षत्रों की जटिल गतिविधियों की व्याख्या बड़ी आसानी से की जा सकती है यदि हम सूर्य को अचल बिंदु मान लें, और पृथ्वी तथा

नक्षत्रो आदि को उसकी परिक्रमा करनेवाले तारो के रूप मे स्वीकार कर ले। कोपर्निकस पोलैंड का एक ज्योतिर्विद तो था ही, साथ ही वह गणितज्ञ, वैज्ञानिक, चिकित्सक, पादरी तथा राजनीतिज्ञ भी था। किन्तु कोपर्निकस के सिद्धान्त को स्वीकार करने मे दुनिया को 150 साल और लग गए, क्योकि यह कल्पना हमारे ऐन्द्रिय ज्ञान के विरुद्ध जो उतरती है।

निकोलस कोपर्निकस का जन्म, 19 फरवरी, 1473 के दिन, पोलैंड के तौरून नामक शहर मे हुआ था। कोपर्निकस निकोलस कौप्परनिड् तथा बार्बरा वाक्जेनरोद के दो पुत्रो और दो पुत्रियो मे सबसे छोटा था। (निकोलस कोपर्निकस—मूल 'निकोलस कौप्परनिड्' का लैटिन रूपान्तर है।) कोपर्निकस के माता-पिता नगर के प्रतिष्ठित परिवारो से आए थे। तौरून एक समृद्ध व्यापार-केन्द्र था, और निकोलस का पिता न केवल एक धनीमानी व्यापारी था अपितु शहर का एक मजिस्ट्रेट और सामाजिक जीवन का प्राण भी था। निकोलस जब दससाल का हुआ, उसके पिता की मृत्यु हो गई और घर के लोगो ने मिलकर फैसला किया कि बच्चो का पालन-पोषण अब उनके मामा पादरी ल्यूकस वाक्जेनरोद के यहा ही होना चाहिए।

ल्यूकस के प्रभाव मे—क्योकि वह खुद एक पादरी था, और स्वाध्यायशील व्यक्ति था—निकोलस ने भी यही निश्चय किया कि मै भी बडा होकर धर्म-प्रचार करूगा। उसकी शिक्षा-दीक्षा भी इस प्रकार, स्वय बालक के निजी प्रण के अनुसार, धर्मनिष्ठ कर दी गई।

18 वर्ष की आयु मे निकोलस पोलैंड के क्रैको विश्वविद्यालय मे दाखिल हो गया। क्रैको उन दिनो पोलैंड की राजधानी थी, और यूरोप-भर मे उसकी समृद्धि तथा सस्कृति की ख्याति थी। देश-विदेश से—जर्मनी, हगरी, इटली, स्विट्ज़रलैंड, स्वीडन से—विद्यार्थी खुद-ब-खुद खिचे-खिचाए क्रैको की ओर चले आते, जहा पहुचकर लैटिन मे उनकी शिक्षा का आरम्भ होता। उन दिनो ज्ञान-विज्ञान का प्रतिपादन लैटिन मे ही हुआ करता था और पढा-लिखा कहलाने के लिए यह एक आवश्यक शर्त-सी ही बन चुकी थी कि पहले लैटिन पर अधिकार प्राप्त करो। लैटिन पर अधिकार प्राप्त करके निकोलस ने दर्शन, ज्योतिर्विज्ञान, ज्यामिति तथा भूगोल आदि विषयो का अध्ययन शुरू कर दिया।

ज्योतिर्विज्ञान का अध्ययन उन दिनो बहुत आवश्यक था। समुद्र के द्वारा व्यापार बडी तेजी के साथ बढ़ रहा था। जहाज़ दिनो-दिन बडे से बडे होते जा रहे थे और उन्हे दूर, और और दूर, यात्राए करनी पडती। कोपर्निकस अभी 19 साल का ही था जब कोलम्बस ने समुद्र पार करके अमेरिका की खोज की थी। समुद्र-यात्रा का सारा दारोमदार ज्योतिष-गणनाओ पर ही निर्भर करता था। एक बात और जो उन दिनो बहुत जरूरी हो गई, वह थी एक सही-सही कलैडर का बनाया जाना—क्योकि चर्च के पर्व-उत्सवो को उसके अभाव मे ठीक ढग से मनाया नही जा सकता था।

कोपर्निकस की शिक्षा-कथा हमे शायद कुछ अजीब लग सकती है, क्रैको विश्वविद्यालय छोड़कर वह इटली के बोलोना स्कूल ऑफ लॉ मे जाकर दाखिल हो गया। और बोलोना के बाद वह पेदुआ विश्वविद्यालय मे पहुचा, जहा उसकी पढाई बदस्तूर चलती

रही। आखिर 1503 मे फैरारा विश्वविद्यालय से उसने डाक्टर ऑफ लॉज की उपाधि प्राप्त की। उन दिनो विद्यार्थी पढने के लिए एक विश्वविद्यालय से दूसरे विश्वविद्यालय मे और दूसरे से तीसरे मे पहुचा करते थे।

निकोलस पोलैंड घर वापस आ गया, पर वहा बहुत दिन नही रहा। उसने मामा को समझाया कि धर्मसेवा के लिए डाक्टरी पढना बहुत जरूरी है और लगता है कि अब घर मे आर्थिक समस्याए कोई नही रह गई थी, क्योकि—निकोलस इस बार 30 साल की उम्र मे मैडिकल स्कूल मे और पढाई करने के लिए पेदुआ वापस लौट आया।

उस ज़माने मे चिकित्साशास्त्र और ज्योतिषशास्त्र मे परस्पर बहुत निकट सम्बन्ध हुआ करते थे। समझा यह जाता था कि शरीर के अगो मे तथा ग्रहमण्डल की राशियो मे कुछ गुह्य सम्बन्ध है। जोडियाक अथवा राशिमण्डल, ब्रह्माड मे उस क्षेत्र को कहा जाता है जहा सूर्य और अन्य प्रमुख नक्षत्र परिक्रमा करते दिखाई देते है। यह क्षेत्र 30-30 अश के 12 भागो मे विभक्त है और हर भाग के लिए एक पृथक् सकेत व शकुन होता है जिसे राशिमण्डल का शकुन कहते है। प्राय हर महीने सूर्य इस क्षेत्र के एक सर्वथा भिन्न भाग मे आ जाता है, किन्तु नक्षत्र जैसे मौज मे आकर राशिमण्डल मे जहा-तहा आवारागर्दी करते फिरते हैं। आज तक भी ऐसे लोग है जो अपने-आपको ज्योतिषी कहते है और आपकी जन्मतिथि के अनुसार सूर्य तथा नक्षत्रो की गणना करके, उस कुडली के आधार पर, आपका सारा भाग्य (सारा जीवन) पहले से ही पढ के बता देंगे।

पढाई के इन्ही दिनो कभी निकोलस को फ्राएनबर्ग के गिरजे मे एक छोटे पादरी के तौर पर नौकरी मिल गई। नौकरी के मिलने मे जहा उसके पादरी मामा की प्रतिष्ठा का योग था, वहा कोपर्निकस की अपनी योग्यता भी उसमे कुछ कम कारण न थी। कुछ हो, वह इस ओहदे को सभालने के लिए पूरी तरह से तैयार होकर आया था धर्म-विज्ञान मे तथा दर्शन मे उसे यथाविधि दीक्षा मिली थी, और वह इटली, ईसाइयत के केन्द्र इटली, के अन्दर तक कितनी ही बार यात्राए कर आया था—चर्च के कानून मे वह डाक्टरेट की एक उपाधि भी हासिल कर चुका था, हिकमत मे भी माहिर था, ग्रीक और लैटिन दोनो उसे आती थी, और ग्रीस तथा रोम के प्रख्यात दर्शन, गणित तथा विज्ञान-सम्बन्धी ग्रन्थो में वह निष्णात था।

33 वर्ष की उम्र मे कोपर्निकस की शिक्ष-दीक्षा आखिर समाप्त हो ही गई, और वह अपने बूढे और बीमार मामा की सेवा-शुश्रूषा के लिए पोलैंड वापस लौट आया। काफी फालतू समय था, जिसमे वह अपनी पढाई-लिखाई और स्वतत्र अध्ययन भी जारी रख सकता था; इन्ही स्वतत्र अध्ययनों का परिणाम यह हुआ कि वह ब्रह्माड-व्यवस्था के बारे मे एक नया दृष्टिकोण विज्ञान को दे सका। मामा की मत्यु पर कोपर्निकस फ्राएनबर्ग मे फिर से अपनी नौकरी पर चला आया। बहुत देर से धर्मसेवा का उसका यह मिशन बीच मे ही रह गया था। यहा पहुचकर चर्च के परकोटे की एक बुर्जी मे उसने डेरा डाला। यह बुर्ज आज भी कायम है, और इसका नाम है 'कोपर्निकस टावर', यही उसकी वेधशाला थी।

शुरू-शुरू मे ग्रहगणना करते हुए और नक्षत्र-मडल का अध्ययन करते हुए कोपर्नि-

कोपर्निकस की गणना के अनुसार सौर-परिवार
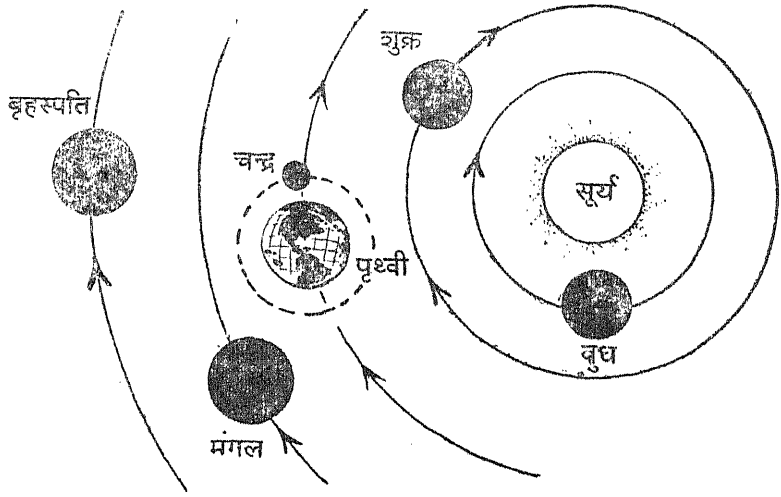
कस ने भी प्राचीन ग्रीक तथा अरबी गणनाओं को ही यथावत् स्वीकार कर लिया। किन्तु उसके मन में अब भी यह था कि कुछ नई गणनाएं अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं: क्योंकि—लोगों में एक सन्देह-सा उत्पन्न हो चुका था कि उस जमाने से इस जमाने तक पहुंचते-पहुंचते ब्रह्मांड की स्थिति में कुछ न कुछ परिवर्तन आ चुके हैं। कोपर्निकस के यंत्र कोई सूक्ष्म यंत्र न थे; उनके द्वारा की गई आकाशीय गणनाओं में यूनानियों द्वारा की गई 1,500 साल पुरानी गणनाओं की अपेक्षा कोई अधिक सत्यता आने की उम्मीद न थी; और आज जो विश्व में एक महावैज्ञानिक के रूप में उसकी ख्याति है वह उसके साधनों एवं उसकी गणनाओं के कारण नहीं, अपितु गणित तथा दर्शन के आधार पर, तथा सूक्ष्म चिन्तन के द्वारा ब्रह्मांड की एक नूतन व्यवस्था परिकल्पित कर सकने के कारण ही है। कोपर्निकस के बाद भी—ताइको ब्राहे तथा योहेन्नीज़ कैपलर सरीखे अन्य ज्योतिर्विद आए और उन्होंने उसकी 'भविष्यवाणियों' में कुछ संशोधन भी किए, किन्तु—इस दिशा में उपक्रम तथा प्रेरणा स्वयं कोपर्निकस ही दे गया था।

1539 के वसन्त में 25 साल का एक जर्मन युवक जार्ज योएखिम रैटिकस कोपर्निकस के यहां आया। रैटिकस भी अपने-आपमें एक प्रतिभाशाली मनीषी था और, 28 साल की छोटी उम्र में, वित्तेनबर्ग विश्वविद्यालय में उसे प्रोफेसरी भी मिल चुकी थी। कोपर्निकस, जो अब बूढ़ा हो चुका था, रैटिकस से मिलकर बड़ा खुश हुआ; और रैटिकस ने भी दो साल से ऊपर कोपर्निकस के साथ उसकी वैज्ञानिक गवेषणाओं तथा हस्तलेखों का अध्ययन करते हुए गुजार दिए। और यह रैटिकस ही था जिसने कोपर्निकस से अनुरोध किया कि उसकी इन महान खोजों का प्रकाशन होना चाहिए, और रैटिकस को ही पहले-पहल मूल हस्तलेख (कोपर्निकस के सिद्धान्तों का) जर्मनी में छपने के लिए भेजा गया था।

इस पुस्तक का पूरा नाम है 'रैवोल्यूशनिबस आर्बिअम सिलेस्टिअम' (ब्रह्माड की दैवी प्रदक्षिणाए) जिसको सक्षेप मे आज हम 'रैवोल्यूशन्स' (प्रदक्षिणाए) के नाम से जानते है ।

बदकिस्मती से जब किताब छपकर पहले-पहल कोपर्निकस के हाथ मे पहुची—और यह वह किताब है जिसको विज्ञान-जगत् न्यूटन की 'प्रिसीपिया' (मूल सिद्धान्त) के समकोटि रूप मे स्मरण करता है, तब वह इस हालत मे नही था कि वह किसी भी मामले पर साफ-साफ कुछ भी सोच सकता। वह मर रहा था। वह दौरो का शिकार था। दिमाग को उसके, अन्दर से, चोट पहुच चुकी थी। और दिल भी उसका कुछ कम बीमार न था।

'रैवोल्यूशन्ज' का एक सक्षिप्त परिचय—उसके लेखक की महानता के विषय मे कुछ ही सकेत छोड सकता है। कोपर्निकस के सिद्धान्त का केन्द्र-बिन्दु यह है कि ब्रह्माड को यदि एक सामान्य चित्र द्वारा प्रस्तुत करना हो तो सूर्य को केन्द्र मानते हुए यह मानना होगा कि हमारी पृथ्वी एक ग्रह की तरह उसकी परिक्रमा कर रही है। पृथ्वी की इन्ही परिक्रमाओ मे हमारे ऋतु-परिवर्तन का रहस्य छिपा हुआ है। कोपर्निकस ने ही पहली बार यह बात स्पष्ट की कि आसमान मे तारो की स्थिति, उन्हे इटली से देखने पर, वही कदापि नही हो सकती जो मिस्र से देखने पर होगी। उत्तरार्ध से हम उन्ही तारो को नही देख सकते जिन्हे कि हम दक्षिणार्ध से देख सकते है। जहाज़ के मस्तूल पर अगर एक दीपक थमा दिया जाए तो ज्यो-ज्यो जहाज़ समुद्र की ओर बढेगा दीपक की लौ मद्धिम पडती-पडती कुछ देर बाद अदृश्य हो जाएगी ऐसा मालूम पडेगा जैसे वह पानी मे प्रविष्ट होती जा रही है। इन तथ्यो को उसने एक युक्तिक्रम मे बाधा और सिद्ध कर दिखाया कि ज़मीन गोल है।

कोपर्निकस इस बात की गहराई मे भी, विवेचना करते-करते जा पहुचा कि ये तारे और नक्षत्र कभी-कभी क्यो अपने परिक्रमापथ से विचलित होते नज़र आते है—कभी एकदम से आगे बढ जाते है, और कभी बिना किसी वजह के जैसे पीछे की ओर मुड आते हैं और बीच-बीच मे जैसे चलना बिलकुल बन्द कर देते हैं। उसने स्पष्ट कर दिखाया कि यदि सूर्य को नक्षत्रो की इस गतिविधि का केन्द्र मान लिया जाए, तो उनकी परिक्रमाओ मे दृश्यमान यह अनियमितता जैसे एकदम छूमतर हो जाती है। दोष हमारे दृष्टिकोण मे था, निर्जीव नक्षत्रो की यात्राओ मे नही।

टालमी की स्थापनाओ का अनुसरण करते हुए कोपर्निकस भी अपने गणित की सहायता से इसी निष्कर्ष पर पहुचा कि ग्रह-यात्राओ मे यह अव्यवस्था एक वृत्त मे अथवा अनेक वृत्तो मे उनकी गतिविधि को मानने के कारण ही शायद आती है, क्योकि वृत्तो की स्थापना स्वीकार करके ही हम इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि नक्षत्रो की परिक्रमाए आवृतिशील है। कोपर्निकस ने यह भी सिद्ध कर दिखाया कि पृथ्वी को ब्रह्माड का केन्द्र मानने की आवश्यकता नही है—अर्थात्, यह आवश्यक नही कि वह सचमुच इस सम्पूर्ण ग्रह-मण्डल का केन्द्र हो ही—जब तक कि हमे इतनी बात बिलकुल स्पष्ट है कि इन सब मण्डलो का पार पा सकना हमारी मानव-बुद्धि के लिए असम्भव है और 'मण्डलो' की इस विपुलता मे शायद ब्रह्माड के असली केन्द्रबिन्दु मे तथा पृथ्वी मे दूरी का कुछ भी महत्त्व रह नही जाता। कोपर्निकस की बात हमे आसानी से समझ मे आ सकती है यदि हम

12 इच व्यास का एक वृत्त खीचे और उसके अन्दर एक छोटा-सा बिन्दु, वृत्त के केन्द्र से इच के 16वें हिस्से के बराबर फासले पर, रख दें। अब यह छोटा-सा बिन्दु ही देखनेवाले को स्वय वृत्त का केन्द्र प्रतीत होने लगेगा।

कोपर्निकस ने 'रैवोल्यूशन्ज़' मे पृथ्वी, चन्द्रमा तथा अन्य नक्षत्रो की गतिविधि का बडा सूक्ष्म विवेचन अकित किया है। पुस्तक मे पृष्ठ-पृष्ठ पर रेखाचित्र है जिनमे हर नक्षत्र का मार्ग अकित है। और साथ ही गणना-सारणिया प्रस्तुत है जिनके द्वारा पाठक नक्षत्रो की पृथ्वी से, आपेक्षिक दूरी तथा स्थिति के विषय मे बहुत-कुछ सही 'भविष्यवाणी' कर सकता है। इन 'भविष्यवाणियो' मे सचमुच कुछ गलतिया भी रह गई थी जिन्हे कैपलर ने आकर दुरुस्त किया। इसके दो कारण थे। एक तो यह कि कोपर्निकस के यत्र कुछ सूक्ष्म-दर्शी न थे। दूसरा यह कि जैसाकि कैपलर ने सिद्ध कर दिखाया कि नक्षत्रो के परिक्रमा-मार्ग वास्तव मे शुद्ध वृत्ताकार न होकर कुछ-कुछ अडाकार है। फिर भी, इन गणनाओ मे पर्याप्त यथार्थता थी जिसके आधार पर एक नया और ज्यादा सही, कलैण्डर—ग्रेगोरियन कलैण्डर—निर्माण किया जा सकता था।

कोपर्निकस के अनुसन्धान का क्षेत्र, उसके युग के अनेक महापुरुषो की भाति, विज्ञान तक ही सीमित नही था। पोलैड उन दिनो बहुत-सी छोटी-छोटी रियासतो मे बटा हुआ था, कही कोई स्थायी अर्थ-व्यवस्था नही थी। आए दिन कही न कही दो रियासतो मे लडाई छिडी रहती, जिसका नतीजा यह होता कि लोगो के लिए चीजो के दाम चढते जाते। कोपर्निकस को यह भी मालूम था कि खोटे और खरे दोनो किस्म के, सिक्के चल रहे थे, और यह भी कि लोग खरे सिक्के को छिपाकर रख लेते और खोटे से ही अपना काम चला रहे थे। इस वस्तुस्थिति के अध्ययन का ही यह परिणाम हुआ कि बहुत साल बाद अर्थशास्त्र को एक नया नियम, 'ग्रेशम का नियम' के रूप मे मिल गया।

कोपर्निकस ने एक किताब लिखी जिसके जरिए उसने यह सलाह दी कि पोलैण्ड की हर रियासत मे एक ही सिक्का चले—सभी-कही उस सिक्के का एक ही वज़न हो, और उसकी एक ही बनावट हो। और इसके लिए यह भी जरूरी था कि पुराने सारे सिक्के पहले एकदम सरकार के हवाले कर दिए जाए। मुनाफाखोरो ने कोपर्निकस का भरपेट विरोध किया, और कोपर्निकस के परामर्शों को क्रियात्मक रूप न दिया जा सका। यह बडे अच-रज की बात है कि लगभग इन्ही हालात मे ब्रिटिश सरकार ने जब सर आइजक न्यूटन को देश की आर्थिक अवस्था सुधारने के लिए आमन्त्रित किया था, तो न्यूटन ने भी अक्षरश: यही परामर्श देश के कर्णधारो को तब दिए थे और ब्रिटेन की खुशकिस्मती से न्यूटन के परामर्श मान लिए गए थे।

कोपर्निकस इतिहास मे पहला व्यक्ति नही है जिसने सूर्य को विश्व का केन्द्र माना हो। सदियो पहले एक ग्रीक ज्योतिर्विद—सामोसनिवासी एरिस्टार्कस ने यही सिद्धान्त स्थापित कर लिया था। किन्तु सिद्धान्त की परिपुष्टि मे वह, बस, तथ्य पर आधारित एक युक्तिश्रृखला को उपस्थित नही कर सका था। प्रतीत होता है जैसे प्रकृति ने यह रहस्य कोपर्निकस द्वारा उद्घाटन के लिए ही इतने समय तक अपने हृदय मे छिपाए रखा था, जैसे एरिस्टार्कस के 1800 साल बाद ही मनुष्य की बुद्धि इसकी सत्यता को मान सकती

थी ! कोपर्निकस ने सिद्धान्त-स्थापना कितने सुन्दर ढंग से की है : "और इन सबके बीच में सूर्य है ! और, है कोई जो इस चमकते सितारे को किसी भी और—और बेहतर—जगह में रख सके ?—यह ब्रह्मांड एक सुन्दर पूजा-मन्दिर है, जिसमें मन्दिर का अर्चना-दीप वहीं स्थापित किया जा सकता था, जहां से मन्दिर का कोना-कोना जगमगा सके।"
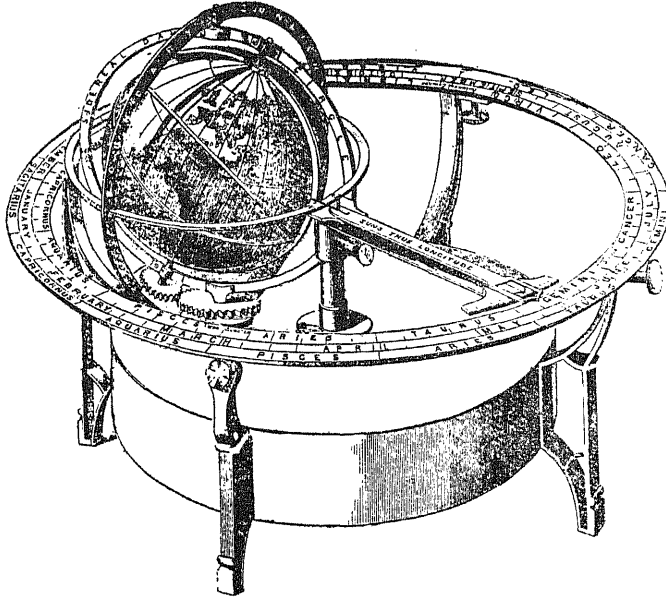
पृथ्वी की परिक्रमाओं को प्रदर्शित करने के लिए एक 'ग्लोब'

आन्द्रेआस वैसेलियस

"मैं जानता हूं कि मेरी जवानी ही, मेरी उम्र ही, मेरे रास्ते में आ खड़ी होगी और मेरी कोई सुनेगा नहीं; और यह भी कि—जब एनाटमी में वे लोग जिनकी अपनी आंखें नहीं हैं मुझपर वार करना शुरू कर देंगे, मेरी हिफाज़त में एक भी उंगली कहीं नहीं उठेगी।" ये शब्द हैं जिनमें अट्ठाईस साल की कच्ची उम्र के आन्द्रेआस वैसेलियस ने सम्राट चार्ल्स पंचम से प्रार्थना की थी कि मुझे आश्रय दें। वैसेलियस अपनी गवेषणाओं का एक संग्रह (सात भागों में) प्रकाशित करने चला था : 'डि ह्यूमेनि कार्पोरिस फैब्रिका'—('मानव शरीर की रचना के विषय में कुछ')।

वैसेलियस को मालूम था कि उसकी आलोचना होगी और कटु आलोचना होगी। वह खुद डाक्टरों की चलती प्रैक्टिस की और प्रचलित शिक्षा-प्रणाली की आलोचना करने की ठान चुका था और स्वयं गैलेन की ही वेद-वाक्यता पर सन्देह उठाने की ठान चुका था! तेरह सदियों से चलता आ रहा शरीर-रचना विज्ञान सिद्धान्ततः, तथा परीक्षणतः जिस मोड़ पर आ पहुंचा था, वैसेलियस ने अपने को उसपर पाया। सो, इसमें कुछ आश्चर्य की बात नहीं कि नौजवान छोकरे को स्वभावतः कुछ संकोच अनुभव हुआ कि राजकीय अभिरक्षा के बगैर वह कुछ भी प्रकाशित करने का साहस करे या नहीं।

आन्द्रेआस वैसेलियस का जन्म 1514 में, ब्रुसेल्स शहर में हुआ था। उसका पिता सम्राट चार्ल्स पंचम के यहां शाही औषधिविक्रेता था, और उसके पूर्वजों में (उसकी रगों में [illegible] खून था) कितने ही आयुर्वेदशास्त्री हो चुके थे। जवानी में वह ज़रूर अपने ही

घरवालो के लिए एक खासा सिरदर्द रहा होगा क्योकि छोटे-छोटे जानवरो, चूहो, परिन्दो वगैरह पर चीराफाडी करने का उसे शुरू से शौक था। वश मे उपयुक्त परम्परा ने और अपनी निजी अभिरुचि ने मिलकर जैसे पहले से ही फैसला कर रखा हो वह चिकित्सक बनेगा। वैसेलियस की शिक्षा-दीक्षा, तदनुसार, लूवें विश्वविद्यालय मे तथा पेरिस विश्वविद्यालय के मेडिकल स्कूल मे हुई। वैसेलियस के विद्यार्थी-जीवन का दीक्षान्त पेदुआ विश्वविद्यालय मे हुआ और, पढाई खत्म करते ही, वही मेडिकल फैकल्टी मे शल्य-शास्त्र तथा शरीरशास्त्र के प्रोफेसर के रूप मे उसे नियुक्ति मिल गई। 1543 तक वह वही बना रहा और अध्यापन-स्वाध्याय मे, तथा अपने जीवन के महान कार्य की अहर्निश पूर्ति मे लगा रहा। लेकिन किताब छपते ही उसकी नौकरी जाती रही—एक तूफान उठ खडा हुआ और तरह-तरह की मजबूरिया बन आई। खैर, स्पेन के चार्ल्स पचम के यहा वह राजकीय वैद्य नियुक्त हो गया। यहा पहुचकर उसने शरीर-रचना पर आगे कुछ भी अनुसन्धान नही किया। चार्ल्स के बाद उसके बेटे फिलिप्स द्वितीय के यहा भी वह उसी तरह राजवैद्य ही बना रहा।

आन्द्रेआस वैसेलियस को चिकित्साशास्त्र की अध्ययन-अध्यापन विधि मे त्रुटियो का आभास तभी से कुछ न कुछ मिल चुका था जब वह पेरिस मे खुद एक विद्यार्थी था। शरीर-रचना चिकित्साशास्त्र का एक मुख्य अग है और चिकित्सा-विषयक सही-सही शिक्षा, बिना शरीर के अगाग का प्रत्यक्ष कराए, दी भी कैसे जा सकती है? मुरदे को देखते ही कुछ लोगो की तबियत खराब होने लगती है, लेकिन मानव-शरीर के सम्बन्ध मे वैज्ञानिको का परिचय और किसी तरह बढ भी कैसे सकता है? बीमारो का ठीक तरह से इलाज किसी और तरह शुरू भी कैसे किया जा सकता है? आज भी कितने ही लोग है, कितने ही धर्म है, जिन्हे इनसान के जिस्म पर चाकू चलाने से नफरत है। चीरा-फाडी होते देख लोगो को उलटी आने लगती है। उन दिनो, जब वैसेलियस एक विद्यार्थी के तौर पर शरीर-रचना विज्ञान पढ रहा था, प्रोफेसर आता और सामने कुर्सी पर बैठकर गैलेन के ग्रन्थ का श्रद्धाभक्ति के साथ कुछ पाठ करके चला जाता। 200 ई० मे गैलेन की मृत्यु हुई थी और उसके ग्रन्थो मे जो कुछ मानव-शरीर के सम्बन्ध मे लिखा था वह प्राय (बार्बेरी) बन्दरो की चीराफाडी पर ही आधारित था। उधर, प्रोफेसर अपने घिसे-पिटे नोट्स पढता जाता, और इधर एक सहायक उघडे मुरदे के अगाग तदनुसार जल्दी-जल्दी दिखाते चलने की रस्म पूरी करता जाता! कही-कही ऐसा भी आ जाता कि गैलेन के वर्णन मे और सामने पडे नमूने मे परस्पर सगति बनती नही—बन ही नही पाती। ऐसे स्थलो पर प्रोफेसर साहब यही कहकर झट से आगे चल देते कि जरूर गैलेन के बाद से मनुष्य के शरीर मे कुछ परिवर्तन आ गए है। गैलेन के विरुद्ध सम्मति के लिए किसीमे साहस नही था गैलेन स्वत-प्रमाण था, और यह तब जबकि खुद गैलेन मे स्थान-स्थान पर परस्पर-विरोध कुछ कम नही है।

वैसेलियस चिकित्सा-शिक्षा की इस प्रणाली से असन्तुष्ट था। उसे याद था कि बचपन मे उसे किस प्रकार परिन्दो पर, चूहो पर खुद चीराफाडी करने का शौक था, उसने निश्चय कर लिया कि इन्सान के बारे मे भी वह अपना ज्ञान इसी तरह बढाएगा।

अब मुश्किल यह थी कि—फालतू शरीर कहां से हासिल किए जाएं ? एक ही रास्ता रह गया था कि मुरदों को उड़ाया जाए (आज भी 'हॉरर' फिल्म्ज़ में, जब यह दहशत परदे पर पेश हो रही होती है, देखनेवालों में कितने ही मुंह फेर लेते हैं) यही एक रास्ता रह गया था जिसका परिणाम यह हुआ कि कुछ अनधिकारी लोग भी जा-जाकर कब्रों को पलीत करने लग गए ।

कुछ हो, वैसेलियस ने निश्चय कर लिया कि वह किसी भी और के लिखे-कहे पर आंख मूंदकर विश्वास कभी नहीं करेगा, अपने ही हाथों जो कुछ सामने खुलेगा उसीके आधार पर वह अगला कदम रखेगा—अपने सिद्धान्त बनाएगा । उसे भी रोज़ शरीर-रचना-विज्ञान पर लैक्चर देने होते थे; इन लैक्चरों में अब हाज़िरी बढ़ने लगी । विद्यार्थियों के लिए उसने एक नियम ही बना दिया कि वे, उसकी क्लास में, आप जिस्म को चीरने-फाड़ने की आदत बनाएं—प्रोफेसर के गिर्द बुत बनकर खड़े न रहा करें : "मेरी यह अपनी पुस्तक भी एक मार्गदर्शिका ही है, प्रत्यक्ष का स्थान यह नहीं ले सकती । सत्यासत्य की एक ही कसौटी हो सकती है—प्रत्यक्ष दर्शन ।"

वैसेलियस ने अपने ज़माने के डाक्टरों की आलोचना की : "आज जब बाकी सबने अपने उत्तरदायित्व का वह अरुचिकर अंश त्याग दिया है (किन्तु साथ ही, पैसे और ओहदे की अहमियत से मुंह ज़रा भी नहीं फेरा), तब भला ये मेरे साथी डाक्टर पुराने ज़माने के उन हकीमों के साथ, उन च्यवनों के साथ, अपना मुकाबिला कर कैसे सकते हैं ? ··· "खुराक के तरीके और तौर क्या हों—यह प्रश्न आज नर्सों के जिम्मे छोड़ दिया जाता है । दवाइयां मिलाने का काम पंसारी करे, और चीराफाड़ी का नाई । फिर डाक्टर के लिए क्या रह गया ?" वैसेलियस ने चिकित्सकों को प्रबोधित किया कि वे मरीज़ की सेहत का जिम्मा अपने हाथ ले लें—अपनी कुछ जिम्मेदारी समझें ।

वैसेलियस के ग्रंथ 'फैब्रिका' का महत्त्व बहुत कुछ उसके चित्रकार यान स्टीफन-वॉन काल्कार की बदौलत है । वॉन काल्कार प्रसिद्ध कलाकार टीटियन का शिष्य था । आज तक उसके रेखाचित्रों की सूक्ष्म-दृष्टि को तथा स्वाभाविकता को मात नहीं दिया जा सका; और, शरीररचना-शास्त्र की वे स्थायी सम्पत्ति बन चुके हैं ।

1564 में आन्द्रेआस वैसेलियस का देहांत हुआ, आखिर वह भी इन्सान था—उसकी प्रणाली की तथा उसके निष्कर्षों की आलोचना अब भी बन्द होने में नहीं आ रही थी । वह भी इन्सान था—कहां तक बरदाश्त करता चलता ?

वैसेलियस का महत्त्व शरीररचना-विज्ञान मे यही कुछ है कि चिकित्सा-शास्त्र को शरीर के प्रत्यक्ष शल्योद्घाटन की ओर फिर से ले आनेवाला 'आदि पुरुष' वही था। वैसेलियस की यह स्थापना, यह निधि, आज चिकित्सा के क्षेत्र मे सभी कही प्रामाणिक रूप मे गृहीत हो चुकी है।

गैलीलिओ
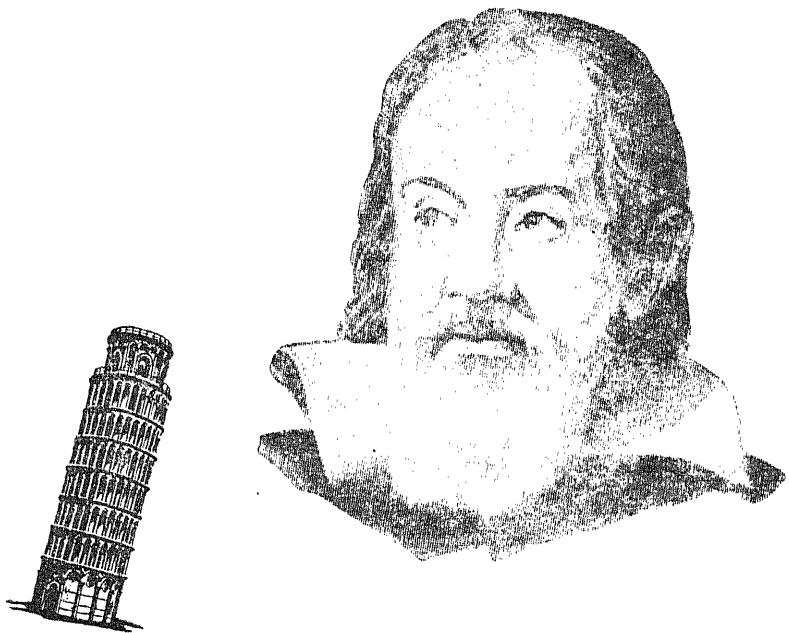
"मैं, गैलीलिओ गैलिलाई—स्वर्गीय विंसैंजिओ गैलिलाई का पुत्र, फ्लॉरेन्स का निवासी, उम्र सत्तर साल—कचहरी में हाज़िर होकर अपने असत्य सिद्धान्त का त्याग करता हूं कि सूर्य ब्रह्मांड की गतिविधि का केन्द्र है (और स्वयं स्थिर है)। मैं कसम खाकर कहता हूं कि इस सिद्धान्त को अब मैं कभी नहीं मानूंगा, इसका समर्थन-प्रतिपादन भी अब मैं किसी रूप में नहीं करूंगा।"

गैलीलिओ को जब यह शपथ लेने के लिए कचहरी में लाया गया था, वह बूढ़ा हो चला था और अक्सर बीमार रहा करता था। दुनिया का वह माना हुआ गणितज्ञ था—वैज्ञानिक, ज्योतिर्विद तथा परीक्षणात्मक प्रतिभा का अद्‌भुत धनी गैलीलिओ; लेकिन कानूनदानों ने अपने ओहदे के बल पर उसके खिलाफ फैसला सुना दिया कि—ब्रह्मांड का केन्द्र पृथ्वी है (सूर्य नहीं) ! गैलीलिओ को जो प्रतिष्ठा विश्व के इतिहास में प्राप्त है वह शायद किसी भी वैज्ञानिक को आज तक नहीं मिल सकी, लेकिन मौत की धमकी ने उसे भी मजबूर कर दिया था कि जो सचाई उसने प्रत्यक्ष द्वारा, तथा अनुमान द्वारा प्रमाणित की थी उससे वह खुलेआम मुकर जाए।

गैलीलिओ का सारा जीवन पुराने अन्ध-विश्वासों के प्रत्याख्यान में ही गुज़रा। एरिस्टॉटल के समय से चले आ रहे कितने ही तथाकथित 'सत्यों' को उसने असत्य सिद्ध कर दिखाया, और न्यूटन के परतर अनुसन्धानों के लिए नींवें डालीं। आज हम उसे परीक्षणात्मक विज्ञान-प्रणाली का जनक मानते हैं, यद्यपि उन दिनों विज्ञान के यन्त्रों में अपेक्षित शुद्धता एवं सूक्ष्मता कुछ बहुत न आ पाई थी।

गैलीलिओ का जन्म 1564 मे हुआ था। शेक्सपियर और गैलीलिओ—विश्व की दो विभूतिया—एक ही वर्ष ससार मे आई। गैलीलिओ का पिता इटली के पीसा शहर मे ऊन का सौदागर था। उसकी गिनती आसपास के शहरो मे भी एक प्रतिष्ठित व्यक्ति के रूप मे होती थी, परन्तु आर्थिक दृष्टि से वह इतना सम्पन्न नही था कि समाज मे अपनी प्रतिष्ठा को सभाले रह सके। उसने अपने परिवार का पोषण कुछ सगीत-रचनाओ द्वारा करने की भी चेष्टा की, किन्तु मजबूरन उसे व्यापार का आश्रय लेना पडा। गैलीलिओ मे अद्भुत प्रतिभा का प्रमाण बचपन से ही मिल रहा था। सगीत मे भी उसकी बुद्धि उसी सहज भाव से प्रवेश पा चुकी थी। सितार और तुरही बजाने मे वह सिद्धहस्त था, और चित्रकला मे भी स्थानीय पारखियो को उसने अपनी ओर आकृष्ट कर लिया था, बच्चो के खिलौने या घर मे काम आनेवाली और छोटी-मोटी चीजे, बनाना तो जैसे उसके बाए हाथ का काम था।

पीसा इटली की टस्कनी रियासत मे है। बडे पुराने समय से यह कला तथा विद्या के एक प्रतिष्ठित केन्द्र के रूप मे चला आता था। गैलीलिओ के आत्म-विकास के लिए यह सास्कृतिक वातावरण स्वभावत बहुत अनुकूल ही था—घर मे भी, और आस-पास भी, सभी कुछ प्रेरणा-प्रद। पिता ने प्रेरणा दी और प्रोत्साहित किया कि बेटा, तुम्हे डाक्टर बनना है, और गैलीलिओ पीसा विश्वविद्यालय मे चिकित्साध्ययन के लिए दाखिल हो गया।

विश्वविद्यालय मे, जब वह अभी 20 वर्ष का ही था, गैलीलिओ ने अपना प्रथम वैज्ञानिक-अनुसन्धान किया। कहानी इस तरह है कि पीसा के गिरजे मे छत से लटकते कदील को उसने डोलते हुए देखा और अपनी नब्ज को घडी की टिकटिक के तौर पर इस्तेमाल करते हुए, उसने नोट किया कि कदील के इस दाये-से-बाये, बाये-से-दाये जाने मे कुछ नियमितता है। किन्तु उसने कुछ परीक्षण किए और, उसके अनन्तर, वह इस परिणाम पर पहुचा कि एक ही लम्बाई के पेण्डुलम, उनको कितने ही ज़ोर से या कितने ही धीरे से गति दी जाए, हमेशा एक ही रफ्तार से इधर-से-उधर, उधर-से-इधर डोलते है।

उसने इस वैज्ञानिक तथ्य का प्रयोग करने के लिए परामर्श भी दिया कि रोगियो की नब्ज मापने के लिए पैण्डुलम का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। पैण्डुलम से चलने वाली एक घडी भी उसने 'ईजाद' कर दी। पर उसकी रूपरेखा पर कोई अमल शायद नही हो सका। कुछ समय बाद ही क्रिश्चन ह्यूजेन्स ने मिनटो और सैकण्डो को सही-सही बतानेवाली एक घडी तैयार की थी, जिसमे समय को नियन्त्रित करने के लिए पैण्डुलम का ही इस्तेमाल किया गया था।

1585 मे गैलीलिओ को पैसे की किल्लत हो गई। उसकी पढाई विश्वविद्यालय मे जारी नही रह सकी। वह आप ही थोडा-बहुत पढता रहा, लेकिन उसका झुकाव अब गणित की ओर हो गया। इन्ही दिनो की बात है जब वह एरिस्टॉटल द्वारा प्रतिपादित 'गति के नियमो' की कुछ खुलकर आलोचना करने लगा था।

उसके कार्य की ओर टस्कनी के ग्राड ड्यूक का ध्यान भी आकर्षित हुआ। टस्कनी

के राज-परिवार मे प्रतिभाशाली कलाकारो तथा सूक्ष्म चिन्तको को सम्मानित करने की परम्परा बरसो से चली आती थी। ग्राड ड्यूक ने उसे पीसा विश्वविद्यालय मे गणित के प्रोफेसर के रूप मे नियुक्ति दिला दी। किन्तु 25 वर्ष के 'नौसिखिया' गैलीलिओ को उसके और साथी प्रोफेसर पसन्द कैसे कर सकते थे ? छोटी उम्र, और कोई डिग्री नही, और तिस पर—एरिस्टॉटल की सत्यता पर सन्देह उठाने की हिम्मत !

एरिस्टॉटल ने एक पत्ते को और एक पत्थर को कभी जमीन पर गिरते देखा था, और झट से परिणाम निकाल लिया था कि हलकी चीजो को जमीन पर आने मे कुछ देर लगती है (भारी चीजे अपेक्षया कुछ जल्दी ही जमीन पर आया करती है)। और यह सच भी है कि एक पत्ते को, एक पत्थर की बजाय, जमीन पर आने मे कुछ ज्यादा वक्त लगता है, किन्तु उसका कारण—हवा की रुकावट होता है, पत्त का हलका या कम वजनी होना नही। इस छोटी-सी बात की एरिस्टॉटल उपेक्षा कर गया था। गैलीलिओ को सन्देह हुआ कि क्या एरिस्टॉटल का निष्कर्ष सचमुच सही है ? अगर दो चीजो को इतना भारी कर दिया जाए कि हवा उनके रास्ते मे रुकावट बन ही न सके, क्या तब भी वे दोनो चीजें अलग-अलग ही (एक पहले, दूसरी पीछे) जमान पर गिरेगी ?

कहानी है—और शायद एक कल्पित कहानी है—कि गैलीलिओ ने दो भिन्न भार वाली गेदे ली और दोनो को पीसा के प्रसिद्ध एक ओर को झुके 'लीनिंग टावर' से एक साथ छोड दिया। नीचे विश्वविद्यालय के विज्ञान विभाग के सभी प्राध्यापक इर्द-गिर्द जमा थे। दोनो गेदो के भार मे बहुत अन्तर था, किन्तु दोनो एक ही साथ जमीन से टकराई। गैलीलिओ सही था, और एरिस्टॉटल गलत। लेकिन प्रोफेसरो को अपनी ही आखो पर विश्वास न आया।

कहानी सच भी हो सकती है, झूठ भी। लेकिन गैलीलिओ ने गिरती चीजो से सम्बद्ध समस्याओ के बारे मे और भी गहन अध्ययन किया, जिसका वैज्ञानिक महत्त्व दो चीजो को किसी ऊचाई से एकसाथ गिराने के खेल या मजाक से कही अधिक है। असल प्रश्न था—किसी भी वस्तु को कुछ निश्चित दूरी, पृथ्वी तक पहुचने मे समय कितना लगता है ? स्मरण रहे, उन दिनो घडिया कोई बहुत अच्छी किस्म की थी नही। स्टॉप वाच, या इलैक्ट्रॉनिक टाइमिंग का स्वप्न भी तब तक किसीने देखा नही था, और फिर पीसा के टावर से किसी चीज को जमीन तक पहुचने मे तीन सैकण्ड से कोई बहुत ज्यादा नही लगता।

पाठक गैलीलिओ की समस्या का कुछ अनुमान कर सकता है। उसे एक उपाय निकालना था जिसके द्वारा गिरती चीजो के तुलनात्मक अध्ययन मे समय की सूक्ष्मता कुछ अधिक बाधा न डाल सके। गैलीलिओ ने इसके लिए एक सीधा सपाट शहतीर लिया। इस शहतीर की लम्बाई 22 फुट थी। शहतीर मे एक लम्बा खाचा काट दिया गया। अब, शहतीर को कुछ तिरछा किया जाए तो, खाचे के रास्ते गेंद धीरे-धीरे जमीन तक पहुच जाएगी। और वक्त का सही अन्दाजा करने के लिए उसने एक बाल्टी ली जिसमे से पानी बूद-बूद करके, एक और बर्तन मे, इकट्ठा किया जा सके। अर्थात्, कितना पानी निकल चुका है—इसके आधार पर समय का अनुमान गैलीलिओ ने लगाया। पहली बार, गेंद सारे रास्ते को

तय कर गई; दूसरी बार, उसे ऐन बीच में रोक दिया गया; और तीसरी बार, उसे शहतीर का चौथाई हिस्सा ही तय करने दिया गया। फिर शहतीर की तिरछावन को
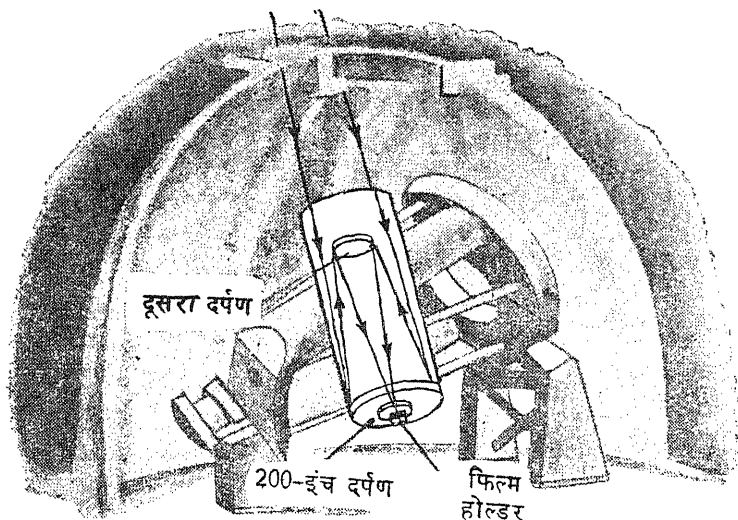
माउंट पालोमार पर रखे विशाल परावर्ती दूरदर्शक यंत्र का एक दृश्य

बदल-बदलकर परीक्षण किए गए, और इस प्रकार सैकड़ों गणनाएं की गईं। और इन सब परीक्षणों का सार उसकी गणित-विषयक प्रतिभा ने दो शब्दों में इस प्रकार अनुसूचित कर डाला—चौगुनी दूरी को तय करने में गेंद को सिर्फ दूना समय लगता है। उदाहरण के लिए, यदि एक सैकण्ड गुज़र जाने पर गेंद 5 फुट रास्ता तय कर चुकी हो तो, दो सैकण्ड के बाद वह 5 फुट के दुगुने का दुगुना (यानी 20 फुट) तय कर चुकेगी, और तीन सैकण्ड गुज़र जाने पर 5 फुट का 3 × 3 गुणा (45 फुट) तय कर लेगी।

गोलीलिओ ने इसी को सिद्ध करने के लिए एक और परीक्षण इसीको कुछ बदल कर किया। इस बार उसने दो शहतीर लिए, और दोनों को नीचे से जोड़ दिया। दोनों में कटे हुए रास्तों को बड़ी सफाई के साथ मिला दिया गया, इस प्रकार कि उनमें से एक के उपरले सिरे से कोई गेंद अगर छोड़ी जाए तो वह ज़मीन के पास पहुंचते ही दूसरे शहतीर के ऊपर की ओर चढ़ना शुरू कर दे। इस परीक्षण के लिए शहतीरों में खुदे खांचों में, और गेंदों में सफाई बहुत ज़्यादा होनी चाहिए। गैलीलिओ ने दिखा दिया कि गेंद एक रास्ते से जितना ही नीचे आती है उतना ही रास्ता दूसरे शहतीर में वह खुद-ब-खुद ऊपर पहुंच जाती है। होता यह है कि ऊपर से नीचे की ओर आते हुए गेंद की रफ्तार लगातार बढ़ती जाती है। ज़मीन पर पहुंचकर उसकी रफ्तार अब और नहीं बढ़ेगी, और दूसरे शहतीर के ज़रिये ऊपर की ओर जाते हुए उसकी यह रफ्तार उसी हिसाब से, अब, कम होनी शुरू हो जाती है। अब, अगर शहतीर की सतह या अवतारणा एक रुकावट बनकर उसकी रफ्तार को और कम न कर दे तो, गेंद का यह ऊपर-नीचे जाने का सिल-

सिला, लगातार, इसी तरह चलता ही रहेगा, कभी बन्द नहीं हो सकेगा। गेंद की इस हरकत का विज्ञान में नाम है 'इनर्शिया'—अ-गति, गति-शून्यता। सिद्धान्त रूप में इसकी सभ्यता पर संशय असम्भव है। न्यूटन ने गैलीलिओ की इसी कल्पना को, अपने 'प्रिन्सीपिया' में समाविष्ट करते हुए, इसका कुछ परिष्कार किया था और गति के प्रथम नियम के रूप में इसे प्रतिष्ठित किया था।
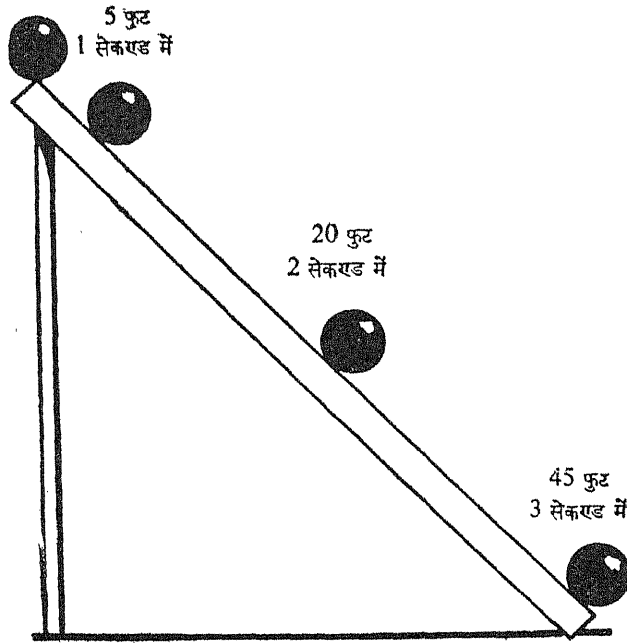
गुरुत्वाकर्षण के सम्बन्ध में गैलीलिओ का परीक्षण

अब गैलीलिओ ने दो नियमों को एक साथ समन्वित करके सैन्य-युद्ध सम्बन्धी एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न का समाधान निकालने का प्रयत्न किया। प्रश्न था कि तोप का गोला जिस रास्ते चलकर अपने निशाने पर पहुंचता है, क्या उसकी दिशा पहले से ही निश्चित नहीं की जा सकती ? गैलीलिओ ने इसका समाधान भी ढूंढ़ निकाला। वह यह मानकर चला कि तोप से यह गोला एक दिगन्त समरेखा में—न ज़मीन की ओर, न आसमान की ओर—निकल पड़ता है, किन्तु, साथ ही, वह धीरे-धीरे आप-से-आप ज़मीन की ओर भी आ रहा होता है। पृथ्वी की ओर आने की उसकी गति के बारे में हम ऊपर शहतीर और गेंद के परीक्षण द्वारा निकाले गए (गुरुत्वाकर्षण) नियम से जान सकते हैं। गैलीलिओ इस परिणाम पर पहुंचा कि गोले का रास्ता कुछ उस शक्ल का होना चाहिए जिसे ग्रीस के कुछ पुराने गणितज्ञ 'पैराबोला' के नाम से जानते थे। इस तथ्य के अन्वेषण का सीधा परिणाम यह हुआ कि तोप-बन्दूक से निशाना लगाने में अब बड़ी ही बारीकी आ गई।

विश्व के वैज्ञानिको मे अब भी बहुत मतभेद था कि कोपर्निकस का सिद्धान्त क्या सचमुच सत्य है। पृथ्वी चलती है, सूर्य नही— क्या यह बात सच है ? गैलीलिओ ने यह सिद्ध कर दिखाया कि बुर्ज के ऊपर से छोडी हुई गेद इस बात का कोई सबूत नही है कि ज़मीन इस अरसे मे अपनी जगह से नही हिली। चलते हुए जहाज़ के मस्तूल पर से अगर यही गेद गिराई जाए तो वह मस्तूल के साथ-साथ होती हुई ज़मीन पर आ गिरेगी। गैली-लिओ ने बतलाया कि बुर्ज पर से ज़मीन की ओर गेद छोडते हुए भी यही कुछ होता है।

कोई चीज स्थिर है या (एक ही रफ्तार से) चल रही है—हम दोनो अवस्थाओ मे कोई भेद नही कर सकते जब तक कि हम किसी दूसरी चीज़ पर अपनी निगाह नही रखते। मोटरगाडी जब हरी रोशनी के इन्तज़ार मे खडी हो, और साथ की गाडी आगे चलना शुरू कर दे, सवारी को लगेगा जैसे वह उसकी अपनी गाडी पीछे की ओर जा रही है—अगर उसकी निगाह पास खडी इमारतो पर न हो। यह थी युक्त-श्रृखला जो गैलीलिओ के मन मे चल रही थी उसने सोचा—कोपर्निकस सच भी हो सकता है कि ज़मीन ही चल रही हो और हमारी इन्द्रिया हमे धोखा दे रही हो !

गैलीलिओ के निष्कर्ष सत्य थे—जिन्हे उसने परीक्षणो द्वारा प्रत्यक्ष प्रमाणित भी कर दिखाया। फिर भी, 1591 मे, उसे विश्वविद्यालय की प्रोफेसरी से बरखास्त कर दिया गया। उसका कसूर यह था कि उसने अपने साथियो के दिल मे सदियो से चले आ रहे एरिस्टॉटल के सिद्धातो के प्रति सन्देह उत्पन्न कर दिया था। दुनिया थी कि एरि-स्टॉटल की गलतियो के साथ चिपटे रहना ही उसे पसन्द था। खैर, एक साल बाद गैलीलिओ को दूसरी नौकरी मिल गई। पेदुआ विश्वविद्यालय मे वह गणित का प्रोफेसर नियुक्त हो गया। विज्ञान-जगत् में 'समीक्षण तथा परीक्षण' मे उसकी कीर्ति इतनी फैल चुकी थी कि अब यूरोप-भर से विद्यार्थी पढने के लिए पेदुआ ही आने लगे।

पेदुआ मे आकर वह ज्योतिर्विज्ञान की ओर आकृष्ट हुआ। उसे पता लगा कि दूरबीन ईजाद की जा चुकी है, उसने भी लेन्स घिस-घिसकर अपनी ही एक दूरबीन बनानी शुरू कर दी। जब वह बन गई, तो उसने उसे आसमान की तरफ मोडा और कितने ही अद्‌भुत तथ्यो को वह तत्क्षण जान गया—किस प्रकार चन्द्रमा की बाहरी शतह सपाट नही है (उसपर भी, ज़मीन की ही तरह, पहाड है, घाटिया हैं) यही नही, उन पहाडो की ऊचाइयो का भी उसने हिसाब लगा लिया। गैलीलिओ ने देखा कि ये नक्षत्र तारो की तरह स्वत:-प्रकाशयुक्त नही है बल्कि, चाद की तरह ही, उधार की रोशनी से बाहर ही बाहर से चमकते हैं। "और ये तारे ज्वालाओ के पुज है, और इधर-उधर मोटी-मोटी किरणे हर वक्त बिखेरते रहते हैं—जिसे हमारी दुर्बल आखें टिम-टिम के रूप मे ग्रहण करती है।"

उसने दूरबीन को आकाश-गगा की ओर फेरा, और देखा कि यह गगा लाखो तारो के एक झुरमुट के अतिरिक्त और कुछ नही है। यही नही, गैलीलिओ ने ज्यूपिटर (बृहस्पति) के अनेक उपग्रहो मे चार का पता कर लिया। चन्द्रमा पर पडे काले धब्बे का भी उसने प्रत्यक्ष किया और, इस प्रत्यक्ष के आधार पर वह इस निर्णय पर पहुचा कि हमारी पृथ्वी भी अन्य नक्षत्रो की भाति सूरज की रोशनी को वापस फेंकती है, जिसके कारण अन्य नक्षत्रवासियो की दृष्टि मे यह पृथ्वी भी चन्द्रमा की तरह ही चमकती—परिवर्तनशील—

दिखाई देती होगी। चन्द्रवासियों के पास यदि दूरबीन हो तो वे भी देखकर उछल पड़ें कि आज पृथ्वी 'पूर्णिमा' में है ! इन सत्यान्वेषणों ने गैलीलिओ की कीर्ति को विश्वव्यापी कर दिया। किन्तु, साथ ही 'विद्वत्ता' की वह पुरानी अन्धता भी चली आती थी जो यह सीधी-साधी बात स्वीकार नहीं कर सकी कि यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड का केन्द्र नहीं है। इन विद्वानों ने गैलीलिओ पर गालियां बरसाना शुरू कर दिया।

गैलीलिओ का एरिस्टॉटल से सिद्धान्त-गत मतभेद पर्याप्त था, किन्तु दोनों ही चिन्तकों के विचार-मार्ग प्रायः एक ही थे। भौतिकी के क्षेत्र में जो निष्कर्ष उसने उपस्थित किए उनमें बहुधा अन्तःपरीक्षण अर्थात् चिन्तन द्वारा ही उसे सफलता प्राप्त हुई थी, बाह्य परीक्षणों के आधार पर नहीं। तीन सदी पश्चात् आइन्सटाइन ने भी इसी तरह के कुछ परीक्षण किए—परीक्षण भी कल्पनापरक और उन परीक्षणों के निष्कर्ष भी कल्पनापरक ! शहतीर और गेंदवाला परीक्षण शुरू-शुरू में कम से कम गैलीलिओ को उसके अन्तस्तल में ही स्पष्ट हुआ था। वैसे, यह सच है कि इस प्रकार के चिन्तन और तर्क के समर्थन के लिए गैलीलिओ ने, प्रायः, कुछ न कुछ वास्तविक परीक्षण भी उसके बाद किए।

अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में गैलीलिओ ने 'डायलोग्ज़ औन टू न्यू साइन्सेज़' लिखना शुरू किया; जिसमें गति, गति में अभिवृद्धि, तथा गुरुत्वाकर्षण सम्बन्धी उसकी सम्पूर्ण अन्वेषणाएं साररूप में प्रस्तुत हैं। 'दो नई विज्ञान-पद्धतियों पर कुछ सम्वाद' नाम की यह पुस्तक 1636 में प्रकाशित हुई। चार साल पहले वह एक और सम्वाद भी प्रकाशित कर चुका था—जिसका विषय था 'ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में दो मुख्य व्यवस्था-सूत्र' (ए डायलॉग औन द टू सिस्टम्स आफ द वर्ल्ड)। इस पुस्तक का ध्येय कोपर्निकस के सिद्धान्त का विशदीकरण था, गैलीलिओ ने इस सिद्धान्त को और भी पल्लवित किया और विश्व की व्यवस्था में, सूर्य को केन्द्रबिन्दु पर प्रतिष्ठित करते हुए, पृथ्वी को तथा अन्यान्य नक्षत्रों को उसके इर्दगिर्द परिक्रमा करते दिखाया। यही वे ग्रन्थ थे जो सरकारी अफसरों का कुफ्र बरपा लाए, और जिनकी सत्यता से मुकर जाने के लिए उसे खुद मजबूर होना पड़ा, किन्तु यही उसकी वे कृतियां हैं जिनको दुनिया आज भी याद करती है।
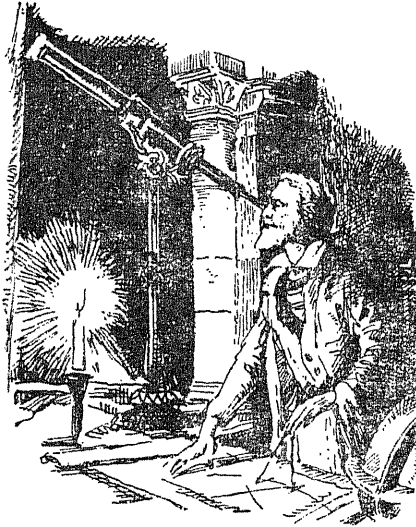
गैलीलिओ की मृत्यु 1642 में हुई। गैलीलिओ एक दिग्गज था जिसके कंधों पर कभी न्यूटन खड़ा हुआ था—कुछ आगे देख सकने को !

योहैन्नीज़ केपलर

"और सम्भव है यह सत्य ही स्वयं अब किसी अध्येता की प्रतीक्षा में एक पूरी सदी आकुल पड़ा रहे, वैसे ही जैसे—सृष्टि का सूत्रधार 6,000 साल इसके अन्वेषक की प्रतीक्षा में अब तक आकुल रहा है !"

इन शब्दों में ग्रहों-उपग्रहों की परिक्रमा के सम्बन्ध में एक वैज्ञानिक-तथ्य का प्रख्यापन योहैन्नीज़ केपलर ने पहले-पहल किया था। उसे मालूम था कि ग्रहों की गति-विधि में उसकी व्याख्या, जो उसने 1618 में तब प्रकाशित की थी, लोकप्रिय नहीं होगी—और उसे 'धर्म-विरुद्ध' समझा जाएगा। केपलर कोपर्निकस के इस विचार से सहमत था कि ब्रह्माण्ड का केन्द्र सूर्य है, और कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है। वैज्ञानिक सत्य था भी यही कुछ, किन्तु 'लोक-धारणा' उसके पक्ष में नहीं थी।

और इसके अतिरिक्त एक और भी सिद्धान्त केपलर ने प्रस्तुत किया जोकि उसके निजी प्रत्यक्ष पर आधारित था—कि ये ग्रह-नक्षत्र सूर्य के गिर्द पूर्णवृत्त मंडलों में परिक्रमा नहीं करते। इस सिद्धान्त को भी लोकप्रियता कैसे मिल सकती थी। सदियों से वैज्ञानिक वृत्त को ही श्रेष्ठतम आकृति—अथवा परिक्रमा-मार्ग मानते आ रहे थे। वृत्त एक ईश्वर-प्रदत्त वस्तु थी और, इसलिए, गगनचारी वस्तुओं के लिए अब परिक्रमा का और कोई मार्ग सम्भव रह ही न गया था।

खैर, योहैन्नीज़ केपलर ने अपने सिद्धान्तों को प्रकाशित कर दिया कि एक सदी बाद ही सही, कोई तो उससे सहमत होनेवाला पैदा हो जाएगा। केपलर के ये नियम इतने पूर्ण थे कि दो सदियां बीत गईं और उनमें संशोधन की सम्भावना तब भी नहीं निकल पाई।

योहैन्नीज़ केपलर का जन्म, 1571 में दक्षिणी जर्मनी के एक शहर वाइल में हुआ

था। अभी वह चार साल का ही था कि चेचक का बडी बुरी तरह से शिकार हो गया। इसमे उसकी आखे बहुत कमज़ोर हो गई, और हाथो से वह लगभग लूला ही हो गया।

उसका बाप एक सिपाही था और भाग्यशाली माना जाता था। मा उसकी एक सराय-मालिक की बेटी थी।

बाप अक्सर नशे मे होता, मा का दिमाग भी अक्सर कोई बहुत ठिकाने न होता। उसकी अपनी आखे जवाब दे चुकी थी, हाथ लूले, और बाकी जिस्म भी कमज़ोर और बेकार इन सब बाधाओ के बावजूद योहैन्नीज बचपन से ही एक प्रतिभाशाली विद्यार्थी था। चर्चो की व्यवस्थापिका सस्था ने उसका भविष्य निर्धारित कर दिया और वह, धर्म-विज्ञान का अध्ययन करने के लिए, ईसाइयो के 'गुरुकुल' मे दाखिल हो गया।

ट्यूबिजेन विश्वविद्यालय की एक छात्रवृत्ति उसने उपार्जित की। यहा पहुचकर वह कोपर्निकस के विचारो के सम्पर्क मे आया कि किस प्रकार ग्रह-नक्षत्र सूर्य के गिर्द परिक्रमा करते है। विज्ञान और गणित के प्रति उसका यह आकर्षण शीघ्र ही एक व्यामोह मे परिवर्तित हो गया। उसने पादरी बनने के अपने वे पुराने सब विचार छोड दिए। 23 वर्ष की आयु मे ग्रात्स विश्वविद्यालय ने उसे निमन्त्रित किया और उसने नक्षत्र-विज्ञान के प्राध्यापक के रूप मे वह नियुक्ति स्वीकार कर ली।

केपलर ने एक धनी परिवार की लडकी से शादी कर ली, और प्रतीत यही होता था कि उसके जीवन की दिशा अब निश्चित हो चुकी है। परन्तु धार्मिक आन्दोलन उठ खड़े हुए और उसके लिए—वह प्रोटेस्टैण्ट था—ग्रात्स मे रहना अब असम्भव हो गया।

बडा आश्चर्य होता है यह जानकर कि इस व्यक्ति की, विज्ञान का एक पुजारी होते हुए भी, सामुद्रिक-शास्त्र मे कुछ आस्था थी। तारो और नक्षत्रो की स्थिति अकित
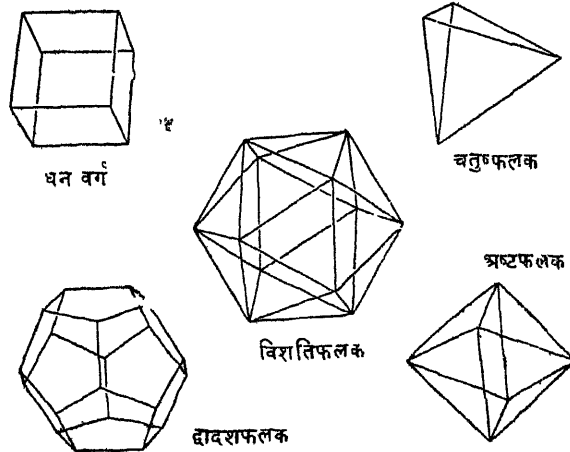
करते हुए वह अपने जीवन की दैवी घटनाओ का भी यथावत् रिकार्ड रक्खा करता था, हालाकि उसका अपना कहना यही था कि मुझे ज्योतिष मे रत्ती-भर भी विश्वास नही है

किन्तु अतीत के अन्ध-विश्वासो का प्रभाव उसके विचारो पर कुछ न कुछ निस्सन्देह, पडा। गणित पर आधारित नक्षत्रो की गतिविधि का 'सूक्ष्म' अध्ययन जहा उसका विषय था, वहा उसने मूर्त-आकृतियो—घन वर्ग, चतुष्फलक, अष्टफलक, द्वादशफलक तथा विंशतिफलक की पूर्णता के सम्बन्ध मे भी एक अन्त सूत्र-सा, एक 'स्थूल' नियम-सा, प्रस्तुत करने की कोशिश की। विज्ञान की दृष्टि से यह उसका एक गलत दिशा मे कदम था जिसमे, शायद अनजाने मे, वह प्राचीन ग्रीक दार्शनिको की उस अवैज्ञानिक धारणा का ही अनुसरण कर रहा था जिसके अनुसार ब्रह्माण्ड कुछेक पूर्ण आकृतियो का एक पुज बनकर रह जाता है।

केपलर को ग्रात्स छोडना पडा। उन दिनो डेनमार्क का प्रसिद्ध नक्षत्रविद ताइको ब्राहे भी देश-निर्वासित होकर प्राग मे आ बसा था। यही दोनो वैज्ञानिको का सम्मिलन हुआ। किंतु ब्राहे कोपर्निकस का विरोधी था। उसकी आस्था थी ईश्वरीय नियमो मे, और विज्ञान के नियमो मे खलल पड जाएगा यदि हम यह मान लें कि ब्रह्माड का केन्द्र सूर्य ही है। इसी आस्था के अनुसार उसने पुराने ज़माने से चली आ रही इस भ्रान्त धारणा को ही वैज्ञानिक रूप मे समर्थित करने का प्रयत्न किया कि नक्षत्र-मडल का केन्द्र पृथ्वी है। ब्राहे के नक्षत्र-सम्बन्धी प्रत्यक्ष तथा सूक्ष्म अन्वेषणो की सख्या कितने ही हज़ार तक पहुच चुकी थी, और विज्ञान-जगत् आज भी 1592 मे प्रकाशित तारो की आकाश मे आपेक्षिक स्थिति के उसके प्रतिपादन के लिए कृतज्ञ है। सम्भव है उसने स्वय अनुभव भी किया हो कि वह अब तक गलती पर था—क्योकि केपलर को उसने अपने सहायक और उत्तराधिकारी के रूप मे नियुक्त कर दिया, यद्यपि केपलर की धारणा यह थी कि ब्रह्माड का केन्द्र सूर्य है, पृथ्वी नही।

1601 मे ताइको ब्राहे की मृत्यु हो गई। उसके बाद भी केपलर की ग्रह-गणनाए चलती रही। उसकी अध्यक्षता मे 228 अन्य तारो का सूक्ष्म अध्ययन किया गया। ब्राहे के सगृहीत अध्ययनो का विश्लेषण करते हुए ही केपलर ग्रहो की गतिविधि के सम्बन्ध मे कुछ नियम का निर्धारण कर सका, जिनकी व्याख्या न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण के मूल सिद्धात के आधार पर आगे चलकर की। विज्ञान मे आज भी कैपलर और न्यूटन के उन नियमो का प्रत्याख्यान नही हो सका है। यही नियम हैं जो मानव-निर्मित उपग्रहो के भी नियामक है।

केपलर की नई खोज यही नही थी कि सूर्य के गिर्द नक्षत्रो का परिक्रमा-मार्ग अडाकार होता है, अपितु यह भी कि अपनी-अपनी परिधि मे परिक्रमा करते हुए हर नक्षत्र की गति मे निरन्तर परिवर्तन आता रहता है। नक्षत्र ज्यो-ज्यो सूर्य के निकट पहुचते जाते हैं, उनकी यह गति बढती जाती है। केपलर ने गणना द्वारा यह भी जान लिया कि किसी नक्षत्र को सूर्य की परिक्रमा काटने मे कितना समय लगता है। जो ग्रह और नक्षत्र सूर्य के निकट होते है, उन्हे इस परिक्रमा मे समय अपेक्षया कुछ कम ही लगता है।
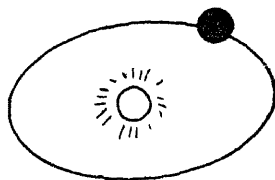
गणित के नियमो के अनुसार नक्षत्रो के सम्बन्ध मे केपलर ने घडी-पल सब-कुछ

गिनकर दिखा दिया कि प्रत्येक नक्षत्र की वास्तविक स्थिति और गतिविधि कब क्या होनी चाहिए। जब हम केपलर के इन सूक्ष्म अध्ययनो को पढते है तो आश्चर्यचकित रह जाते हैं कि वह, पृथ्वी के सम्बन्ध मे विशेषत , इतना सही अनुमान कैसे कर सका, जबकि आज हम जानते है कि पृथ्वी की सूर्य के गिर्द परिक्रमा का मार्ग प्राय वृत्ताकार है। एक दिशा मे यदि उसकी परिधि 100 फुट हो तो दूसरी दिशा मे वह $99\frac{7}{8}$ फुट होगी। इससे कुछ अन्दाजा लग सकता है कि किस प्रकार इस अण्डाकृत 'मडल' मे पृथ्वी सूर्य के गिर्द घूमती है। और, इससे यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि वृत्त-मडल को पूर्णतम परिधि मानने के सदियो से चले आ रहे विचार को परास्त कर सकना किस कदर मुश्किल था।

केपलर ने विज्ञान के अन्य सम्बद्ध क्षेत्रो मे भी अन्वेषण किए। मानव दृष्टि तथा दृष्टि विज्ञान के सम्बन्ध मे जो स्थापनाए उसने विकसित की उनका प्रकाश के 'अपसरण' के क्षेत्र मे बहुत महत्त्व है। यहा तक कि नक्षत्रो-ग्रहो के अध्ययन के लिए एक दूरबीन तैयार करने की आधारशिला भी, नियमो के रूप मे, वह रखता गया। गणित के क्षेत्र मे उसकी खोजें प्राय कैल्क्युलस का आविष्कार करने के निकट आ पहुची थी और, साथ ही, गुरुत्वाकर्षण तथा समुद्रो के ज्वार के सम्बन्ध मे भी उसने सही-सही कल्पनाए कर ली थी।

योहैन्नीज़ केपलर की मृत्यु 1630 मे, आइज़क न्यूटन के जन्म से 12 वर्ष पूर्व, हुई। न्यूटन ने अपने महान कार्य को सग्रथित करने के लिए कम से कम एक पैर विज्ञान के इस दिग्गज के कन्धो पर रखा था।

विलियम हार्वे

"आज की सबसे बड़ी खबर चुड़ैलों के एक बड़े भारी गिरोह के बारे में है, और शक किया जा रहा है समुद्र में भारी तूफान लाने में भी इन्हींका हाथ था।"

1634 में इस खबर की अहमियत थी भी, क्योंकि लोगों का अब भी चुड़ैलों में विश्वास था। राजवैद्य डा० विलियम हार्वे को हुक्म हुआ कि वह जाकर इन चुड़ैलों की पड़ताल करें, और, सचमुच इस परीक्षा का श्रेय हार्वे को ही जाना भी चाहिए क्योंकि उसकी रिपोर्ट के आधार पर ही इन चुड़ैलों को तब छोड़ दिया गया था।

किन्तु डा० हार्वे का परिगणन विज्ञान के दिग्गजों में इस कारण से नहीं किया जाता कि उसने चुड़ैलों के सम्बन्ध में अपने युग के इस असत्य विश्वास का उन्मूलन किया, अपितु इसलिए कि शरीर में रक्त-संचार का वह प्रथम अन्वेषक है। हार्वे का 78 पृष्ठ का एक निबन्ध 1628 में प्रकाशित हुआ। शीर्षक था 'पशुओं में हृदय तथा रक्त की गतिविधि के सम्बन्ध में तात्त्विक विश्लेषण।' इसके द्वारा वह विज्ञान के क्षेत्र के एक बड़े बद्धमूल अन्धविश्वास को उखाड़ फेंकने में सफल रहा था। इसके बाद से प्राणियों के शारीरिक कार्यों के सम्बन्ध में हमारा ज्ञान बहुत ही अधिक स्थिरता के साथ निरन्तर आगे ही आगे बढ़ता आया है।

विलियम हार्वे का जन्म इंग्लैंड के फोकस्टोन शहर में 1578 ई० की पहली अप्रैल को हुआ था। उसके पिता का नाम था टामस हार्वे, जो अपने समय का एक समृद्ध व्यापारी था तथा अपने कस्बे का ऐल्डरमैन, और फिर मेयर भी रह चुका था। विलियम के परिवार में सब मिलाकर दस बच्चे थे—तीन लड़कियां, और सात लड़के। परिवार में समृद्धि थी, स्वस्थता थी, और खुशहाली थी।

1588 मे 10 साल की उम्र मे विलियम कैन्टरबेरी के किंग्ज़ स्कूल मे दाखिल हुआ। यह वही साल था जब स्पेनिश आर्माडा को ब्रिटेन की समुद्री ताकत ने तहस नहस कर दिया था। जब विलियम 15 साल का हुआ तो उसे केम्ब्रिज के केन्स कालेज मे प्रवेश मिल गया। खुशकिस्मती से दो बडे अपराधियो के शव कालेज को, शल्य-परीक्षा तथा अनुसन्धान के लिए, मिल गए और स्वभावत हार्वे की चिकित्सा-शास्त्र में रुचि जाग उठी।

कैम्ब्रिज से वह पेडुआ की प्रसिद्ध सस्था मे गया, जिसे गैलीलिओ और वैसेलियस के सम्पर्क ने चिकित्साशास्त्रीय तथा वैज्ञानिक अनुसन्धान के क्षेत्र मे जगत्-प्रसिद्ध कर दिया था। दुर्भाग्य से वैसेलियस का प्रभाव अब नष्टप्राय हो चुका था। शरीर-सस्थान के सम्बन्ध मे उसके अन्वेषणो की उपेक्षा करके गैलेन के वही सदियो पुराने विचार इन दिनो वहा पढाए जा रहे थे। हार्वे पेडुआ मे विद्यार्थी बनकर प्रविष्ट हुआ। स्वभावत हार्वे इस सबसे असन्तुष्ट था, किन्तु उसने अपने सन्देहो को व्यक्तिगत रूप मे तब तक कही प्रकट नही किया जब तक कि उसे मैडिकल डिग्री मिल नही गई। इधर, वह प्रैक्टिस के लिए लन्दन लौट आया और उधर उसी समय कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के 'कालेज आफ फिजीशन्ज़' मे उसे आगे पढने की अनुमति भी मिल गई।

तीन साल बाद उसे कालेज का फेलो बना दिया गया और सेण्ट बार्थालोमिओ के अस्पताल मे चिकित्सक के तौर पर उसकी नियुक्ति हो गई। उसके व्याख्यान होते 'चिकित्सा के मूल तत्त्वों' पर। हार्वे मे योग्यता थी, आत्म-विश्वास था। यद्यपि वह कद से छोटा था, और चमडी उसकी कुछ-कुछ काली थी। शीघ्र ही चिकित्सा के मूर्धन्य आचार्यों मे उसकी गिनती होने लगी।

इसके साथ ही वह सम्राट चार्ल्स प्रथम का राज-चिकित्सक भी था। पर उसकी यह नौकरी बडे सकटो और तूफानो से भरी थी, क्योकि चार्ल्स तब पार्लियामेट के साथ और ऑलिवर क्रामवेल के साथ एक ऐसे सघर्ष मे व्यस्त था जिसमे कि उसकी हार निश्चित थी। सौभाग्य से 1642 मे ही वह ऑक्सफोर्ड मे वैज्ञानिक अन्वेषणो को अपना जीवन अर्पित कर चुका था। इसलिए 1649 मे जब चार्ल्स का सर उडा दिया गया, सम्राट से उसका किसी प्रकार का सम्बन्ध न रह गया था।

क्या चीज़ है जो हार्वे कर गया है, जिसकी वजह से चिकित्सा के इतिहास मे उसको यह मान दिया जाता है ? और, वह किस तरह यह सब कर सका ?

उसकी प्रवृत्ति जीवित पशुओ पर शल्य-क्रिया करने की थी। वह पशुओ के वक्ष-स्थल खोलकर उसकी स्पन्दन-क्रिया का प्रत्यक्ष अध्ययन किया करता। उसने देखा कि हृदय गति करता है और अगले ही क्षण गतिविहीन हो जाता है, और कि यह गति और यह अगति, दोनो, उसी क्रम मे निरन्तर आवृत्ति करती चलती हैं। उसने जीवित प्राणी के हृदय को हाथ मे थामा और अनुभव किया कि हृदय एक क्षण कठोर हो जाता है और दूसरे ही क्षण कोमलता ग्रहण कर लेता है। और यह भी कि हृदय की यह प्रक्रिया प्राय उस प्रकार से ही होती है जैसे बाज़ू की पेशी तनते हुए हम रोज़ अनुभव करते हैं। जब हृदय मे यह कठोरता आती है तो वह आकृति मे छोटा हो जाता है, और शिथिलता की

दशा में उसकी आकृति कुछ बढ़ जाती है। दोनों अवस्थाओं में उसका रंग एक-सा नहीं रहता—जब वह सख्त और सिकुड़ा हुआ होता है, तब निस्बतन कुछ ज्यादा पीला होता है। अनेक प्राणियों में अनेकानेक परीक्षण करके विलियम हार्वे इस परिणाम पर पहुंचा कि हमारा हृदय एक खोखली पेशी की शक्ल का है, और पेशी में जब सक्रियता आती है, कुछ बल आता है तब उसके अन्दर का यह रिक्त-स्थान सिकुड़ना शुरू कर देता है और खून को बाहर फेंकना शुरू कर देता है और, इसी कारण, उसमें कुछ पीलापन आ जाता है। यही पेशी जब शिथिल होती है, उसमें वह तनाव नहीं होता उसकी आन्तरिक रिक्तता में बाहर से खून भर आता है और इसी कारण उसमें कुछ लाली भी आ जाती है। यह हमारा दिल इस प्रकार से एक पम्प ही है।
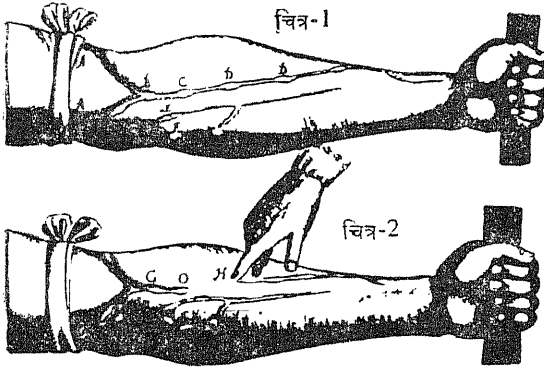
हार्वे के मूल संस्करण से एक चित्र : भुज प्रकोष्ठ की शिराएं

इस मूल स्थापना को प्रतिष्ठित करके हार्वे ने अब शरीर में रक्त-संचार की प्रक्रिया का अध्ययन शुरू कर दिया। उसने देखा कि रक्त की धमनियां स्पन्दित हो उठती हैं उस क्षण जब कि हृदय सिकुड़ रहा होता है। यदि एक सुई चुभो दी जाए तो उनसे खून का एक फव्वारा-सा छूटने और बन्द होने लगेगा। यही नहीं, इन धमनियों को शरीर के विभिन्न स्थानों पर अवरुद्ध करते हुए, वह इस परिणाम पर पहुंचा कि स्पन्दन की यह प्रक्रिया उनकी कोई अपनी प्रक्रिया नहीं है, अपितु सर्वथा हृदय की गति पर ही निर्भर करती है।

अब उसकी रुचि इस प्रश्न के समाधान में जाग उठी कि रक्त का कितना परिमाण इन धमनियों के माध्यम से शरीर में पहुंचता है। यह अनुमान करके कि प्रत्येक स्पन्दन में हृदय से दो औंस रक्त का गमनागमन होता है, और एक मिनट में वह 72 स्पन्दन करता है, बड़ी जल्दी ही उसने यह गणना कर ली कि हृदय एक मिनट में एक गैलन से ज्यादा या—शायद विश्वास न आ सके—दिन में 1,500 गैलन से ज्यादा खून जिस्म में पम्प करता है। हार्वे के मन में स्वभावतः यह कुतूहल उठा कि यह हो कैसे सकता है। और अपने प्रश्न का आप उत्तर देते हुए वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि ऐसा तभी सम्भव है जब कि रक्त का प्रवाह हृदय से ही आरम्भ हो और, सारे शरीर से घूमघाम कर फिर से हृदय में ही वापस लौट आए, अर्थात् रक्त-संचार का मार्ग एक 'परिक्रमा का मार्ग' ही होना चाहिए।

हार्वे ने शरीर-रचना की पुनः परीक्षा की, और कुछ परीक्षण और भी किए। शिराओं और धमनियों का, नीली और लाल नसों का, बड़ी सूक्ष्मता के साथ अध्ययन किया और पाया कि उनमें खून के बहने की दिशा हमेशा एक ही रहती है। दोनों में ही एक तरह का कुछ वाल्वों की-सी शक्ल का, एकदिक् द्वार, परदा-सा लगा होता है जो धमनियों में तो रक्त को हृदय से बाहर ही प्रवाहित होने देता है, और शिराओं में हृदय की ओर ही। इन एकमुखी द्वारों की उपयोगिता भी उसने पशुओं के हृदयों पर परीक्षण करके प्रत्यक्ष प्रमाणित कर दी। एक शिरा को खोलकर उसमें उसने लम्बी पतली-सी एक सलाख डाल दी। यह सलाख बड़े आराम के साथ दिल की ओर तो चलती गई किन्तु विपरीत दिशा में उसकी यह गति एकदम अवरुद्ध हो गई, क्योंकि—बीच में वाल्वों ने जैसे अपने दरवाज़े बन्द कर लिए थे।

फिर परीक्षण किए गए और फिर परीक्षण किए गए कि कहीं कुछ गलती रह गई हो। और तब कहीं जाकर, रक्त के संचार का सही चित्र उपस्थित हो सका कि हृदय से निकलकर, धमनियों के मार्ग से प्रवृत्त होता हुआ और शिराओं के मार्ग से प्रत्यावृत्त हुआ, खून फिर से दिल में ही वापस आ जाता है।
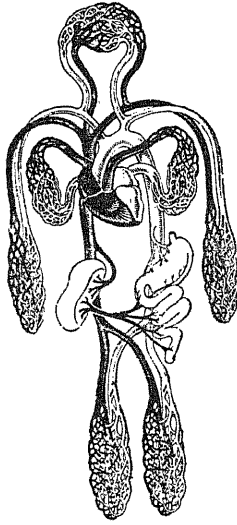
शरीर में रक्त-संचार क्रिया का निदेशक एक चित्र

आजकल हम रोज़ सुनते हैं कि कितने आश्चर्यकारी आपरेशन ये शल्य-चिकित्सक आए-दिन और किस आसानी के साथ, कर लेते हैं। दिल को कोई चोट पहुंची हो तो उसका भी इलाज हो सकता है। वाल्व, शिराएं और धमनियां अगर जवाब देने लग जाएं तो उनके स्थान पर प्लास्टिक की कृत्रिम नलियां और दूसरे वाल्व लगाए जा सकते हैं और जब आपरेशन हो रहा होता है, उस वक्त खून की हरकत जिस्म में बाकायदा होती रहे उसके लिए आधुनिक चिकित्साशास्त्र में एक कृत्रिम पम्प भी है। यह सब सुनकर हम दंग रह जाते हैं। किन्तु हमारे इस ज़माने में भी कोई कितना ही अधिक पढ़ा-लिखा सर्जन क्यों न हो, वह बिलकुल नाकारा ही साबित होता, अगर विलयम हार्वे के वे महान परीक्षण चिकित्सा के क्षेत्र में पहले हो न चुके होते।
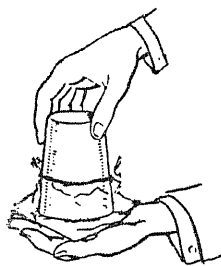
एवेंजेलिस्टा टॉरिसेलि

अब ज़रा यह परीक्षण खुद कर देखिए तो—लेकिन किसी चिरमिच्ची या हौदी पर। एक गिलास में तीन-चौथाई पानी भर लीजिए। गिलास के मुंह पर एक रूमाल, ढीला-ढाला लपेट लीजिए। एक धागे से रूमाल को चारों तरफ से बांध दीजिए किन्तु रूमाल पानी को छूता रहे। और अब गिलास को एकदम से उलटा दीजिए।

एरिस्टॉटल ने कभी कहा था, "शून्य अथवा रिक्त-स्थान से प्रकृति को सम्भवतः नफरत है।" और आज कितने ही अद्‌भुत आविष्कार हम कर चुके हैं, और हर क्षेत्र में मशनरी हमारी कितनी ही विकसित हो चुकी है, किन्तु एरिस्टॉटल की उक्ति में कुछ सचाई अवश्य थी : 'सर्वथा-शून्य' नाम की वस्तु शायद कहीं है नहीं। किसी भी स्थान को गैस वगैरह से कितना ही खाली करने की कोशिश क्यों न करें, कुछ न कुछ द्रव्य-कण उस रिक्त-स्थान में रह ही जाएंगे। किन्तु ये बचे-खुचे कण नहीं थे जो गैलीलिओ का सिरदर्द बने हुए थे जबकि उसने अपने एक शिष्य (एवेंजेलिस्टा टारिसेलि) के सम्मुख पंपों के सम्बन्ध में एक समस्या उठाई थी। बिलकुल शून्य न सही, लगभग खाली ही सही—रिक्तता की समस्या का समाधान तब तक हो नहीं पाया था।

टारिसेलि—भौतिक तथा गणित-विशारद टारिसेलि का जन्म, 15 अक्तूबर, 16·8 के दिन, उत्तरी इटली के फैंज़ा शहर में हुआ था। फैंज़ा के जैसुइट कालेज में वह इतना सफल रहा कि उसके पादरी चाचा ने उसे बेनेडेट्टि कैस्टेलि की छत्रछाया में विज्ञान की विविध शाखाओं में दक्षता प्राप्त करने के लिए रोम भेज दिया! कैस्टेलि स्वयं गैलीलिओ का एक शिष्य था और सेपिएंज़ा के कालिज में गणित का प्राध्यापक था। कैस्टेलि ने

टॉरिसेलि का प्रथम निबन्ध 'प्रौजेक्टाइल्ज़ के सम्बन्ध में' गैलीलिओ के पास भेजा। गैलीलिओ युवक की गणित-विषयक प्रतिभा से तथा विवेचना-बुद्धि से बहुत प्रभावित हुआ, किन्तु टॉरिसेलि गैलीलिओ के व्यक्तिगत सम्पर्क में बहुत देर बाद ही आ सका—1641 में, गैलीलिओ की मृत्यु से तीन महीने पहले, जब कि विज्ञान का वह महान आचार्य अन्धा हो चुका था। इन तीन महीनों में वह आचार्य का सहायक भी रहा, अन्धे की लाठी भी।

गैलीलिओ ने ही पहले-पहल टॉरिसेलि को प्रेरणा दी थी कि 'शून्य' की समस्या का कुछ समाधान निकलना चाहिए। टस्कनी के ग्राण्ड ड्यूक के यहां पम्प बनानेवाले कोशिश करके हार गए किन्तु पानी को वे 40 फुट ऊपर नहीं चढ़ा सके: सक्शन पम्प के द्वारा जल 32 फुट से ज़्यादा ऊंचाई तक पहुंचाया नहीं जा सकता था। गैलीलिओ ने टॉरिसेलि के सम्मुख प्रश्न रखा कि वह इसका कुछ कारण तथा समाधान निकाले।

दो साल बाद टॉरिसेलि ने, जो अब फ्लौरेण्टाइन एकेडेमी में गणित का प्राध्यापक तथा ग्राण्ड ड्यूक के यहां निजी गणितज्ञ था, यह परीक्षण कर दिखाया जो अब लोक-विश्रुत है। इस परीक्षण से भी अधिक महत्त्व की बात यह थी कि ऐसा क्यों होता है। इसका कारण भी उसने स्पष्ट कर दिखाया।

सौभाग्य से शीशे की वस्तुएं बनाने की कला एवं शिल्प रोम में उन दिनों बहुत उन्नति पर था। टॉरिसेलि को चार-चार फुट लम्बी ट्यूबें बनवाने में कुछ मुश्किल पेश नहीं आई। इन ट्यूबों का एक सिरा बन्द था। टॉरिसेलि ने ट्यूब को पूरा, लबालब, पारे से भर लिया, मुंह को उंगली से बन्द कर दिया, और ट्यूब को एक प्याले में उलटा दिया—प्याले में भी काफी पारा भरा हुआ था। अब उसने उंगली हटा ली, और लो, पारा निकलकर प्याले में आ गया—सारा नहीं, कुछ। ट्यूब के ऊपरले सिरे में पारा प्याले की तह से कोई 30 इंच ऊपर तक ही रह गया। उसके ऊपर जो स्थान था वह 'खाली' था। टॉरिसेलि ने ट्यूब को तिरछा किया। पारा ट्यूब में और भर गया, किन्तु उसकी ऊंचाई अब भी 30 इंच ही थी! ट्यूब को और ज्याद तिरछा किया गया। और अब भी पारे की ऊंचाई प्याले में पड़े पारे से 30 इंच से भी कम रह गई और ट्यूब सारी की सारी भर गई। ट्यूब को ज़रा सीधा करें तो वही 'शून्य' फिर से वापस आ जाए! इस रिक्त-स्थान में, हम जानते हैं, पारे के ही कुछ वाष्प रह गए थे किन्तु—वस्तुतः अब यह 'शून्य' ही था।

किन्तु एक प्रश्न अब भी रह गया था जिसका समाधान अभी तक नहीं हुआ था: पारा इतनी ऊंचाई तक खुद कैसे खड़ा रहा? वह बहकर सारा का सारा प्याले में क्यों नहीं आ गया! टॉरिसेलि के पास इसका जवाब भी था। "जिस वातावरण में हम रहते हैं," टॉरिसेलि के शब्द हैं, "वह एक समुद्र की निचली तह है—हवा का एक अनन्त समुद्र। और हवा में भी भार होता है, परीक्षणों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है। प्याले में पड़े द्रव के ऊपर 50 मील ऊंचा हवा का एक भारी अम्बार है जिसका दबाव हमपर हमेशा पड़ रहा होता है। सो, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि यह द्रव ट्यूब में ऊपर की ओर चढ़ना शुरू कर देता है, क्योंकि इसकी प्रगति में बाधा कोई होती नहीं, और चढ़ता ही जाता है जब तक कि यह बाहर की हवा के दबाव के मुकाबिले में नहीं आ जाता।"

यह बाहर की हवा ही है जो इसे इस ऊंचाई तक इस तरह संभाले है कि इसे गिरने नहीं देती—परीक्षण का निष्कर्ष अथवा तात्पर्य यह था।
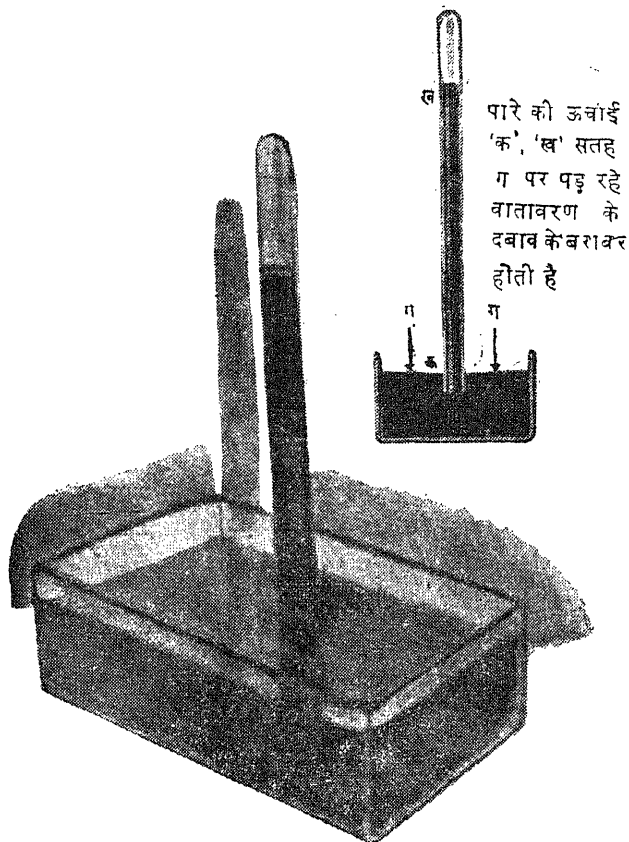
हवा के दबाव के सम्बन्ध में टॉरिसेलि का परीक्षण

अब टॉरिसेलि के लिए इसकी व्याख्या कर सकना मुश्किल नहीं था कि सक्शन पम्प के द्वारा पानी को 32 फुट से ऊपर क्यों नहीं ले जाया जा सकता। पानी का इससे अधिक भार, हमारा यह वातावरण बरदाश्त नहीं कर सकता। पारा कुल 30 इंच ऊपर उठ सकता है और पानी 32 फुट। पारे की आपेक्षिक घनता 13·6 है। टॉरिसेलि ने यह भी अनुभव किया कि अब हवा की घनता को मापने के लिए भी हमारे हाथ में एक उपकरण आ गया है। किन्तु इस उपकरण का नाम—भार-मापक या बैरोमीटर—ब्लेज़ पास्कल ने दिया था, टॉरिसेलि ने नहीं। और बात यह भी है कि यदि वायुमण्डल की घनता कुछ कम हो—जैसेकि पहाड़ की चोटी पर हुआ करता है—ऐसी जगह पर पारे की ऊंचाई स्वभावतः कुछ कम होगी। एवरेस्ट की चोटी पर हवा का भार, भार-मापक

मे, सिर्फ 11 इच पारे को ही सभाल सकता है।

बैरोमीटर का एक प्रयोग मौसम के आसार बताने मे होता है। पाठक को यह जानकर आश्चर्य हो शायद कि नम हवा का भार खुश्क हवा से कम होता है। कहने का मतलब यह कि बैरोमीटर मे पारा नीचे आ गिरेगा जब हवा मे कुछ नमी होगी, और हवा मे नमी का मतलब होता है कि आसार बारिश के है। यही पारा फिर से ऊपर चला जाएगा जब हवा फिर खुश्क हो जाएगी। मौसम की खबर जानने के लिए मात्र बैरोमीटर को पढ लेना ही पर्याप्त नही होता किंतु हा, हवा के दबाव मे कमी का अर्थ होता है कि कल मौसम खराब रहेगा, और पारा चढने लगे तो समझ लो कि कल आसमान साफ रहेगा।

टॉरिसेलि ने 'शून्य' सम्बन्धी अपनी इस नयी खोज के आधार पर कुछ परीक्षण और भी किए। उसने प्रत्यक्ष किया कि प्रकाश शून्याकाश मे से भी उसी सुगमता के साथ गति करता है जैसे हवा मे से। और यही सूत्र था जिसने ह्यूजेन्स को एक नयी कल्पना दी कि "प्रकाश एक तरग-समुच्चय के अतिरिक्त कुछ नही है।" टॉरिसेलि ने ध्वनि तथा चुम्बक की शक्ति के सम्बन्ध मे भी परीक्षण किए। गणित मे तथा जलशक्ति के क्षेत्र मे भी उसके अनुसन्धान कुछ कम महत्त्वपूर्ण नही हैं।

1647 मे, 39 साल की आयु मे, टॉरिसेलि की मृत्यु हुई थी। किन्तु इस छोटी-सी उम्र मे भी वह बहुत कुछ कर गया। जब कभी हम बैरोमीटर पढ रहे होते हैं या मौसम के बारे मे खबरें सुन रहे होते हैं, हम एक तरह से टॉरिसेलि के ऋण को ही स्वीकार कर रहे होते हैं। और हवा का यह अनन्त समुद्र, वायुमण्डल ही है जो पानी को गिलास से बाहर नही गिरने देता, उलटे रूमाल को भी धकेल देता है कि उसे सभाले रखे!

रॉबर्ट बॉयल

रॉबर्ट बॉयल का जन्म, 26 जनवरी, 1627 के दिन आयरलैण्ड के मुन्स्टर शहर में हुआ था। वह कॉर्क के अतिसमृद्ध, अतिसम्पन्न अर्ल की 14वीं सन्तान, एवं 10वां पुत्र, था। उसकी अद्‌भुत प्रतिभा के सम्बन्ध में कभी भी किसीको सन्देह नहीं हुआ। इसके अतिरिक्त उसे वे सारी सुविधाएं यूं ही प्राप्त थीं जो एक सुलझा हुआ और सम्पन्न बाप अपने बेटे के लिए जुटा सकता है। अंग्रेज़ी के साथ-साथ उसने लैटिन और फ्रेंच का अध्ययन किया और, आगे चलकर, अपनी इस बढ़ती भाषा-सम्पद् में हिब्रू, ग्रीक और सीरियैक का समावेश भी कर लिया। इस सबका परिणाम यह हुआ कि बाइबल का गम्भीर अध्ययन वह उसकी मूल भाषाओं के माध्यम से करने में सफल रहा।

8 साल की उम्र में वह ईटन कालिज में दाखिल हुआ। ईटन उन दिनों इंग्लैंड की प्राथमिक पाठशालाओं में सबसे बड़ा और सबसे प्रसिद्ध विद्यालय था। तीन साल बाद उसे स्कूल से उठा लिया गया ताकि वह महाद्वीप यूरोप की यात्रा कर आए। इंग्लैंड का एक श्रेष्ठ नागरिक बनने के लिए यह यात्रा भी उस युग में आवश्यक समझी जाती थी। तब विद्यार्थी के लिए एक प्रकार से यही 'दीक्षान्त' हुआ करता था। किन्तु उसके लिए ग्यारह साल की उम्र आम तौर पर काफी नहीं होती। 1641 में 14 साल का रॉबर्ट इटली पहुंचा और वहां वह प्रख्यात वैज्ञानिक गैलीलिओ के सम्पर्क में आया। उसने निश्चय कर लिया कि अब वह अपना जीवन विज्ञान के अध्ययन को ही अर्पित करेगा।

इंग्लैंड वापस पहुंचकर वह ऑक्सफोर्ड का विद्यार्थी बन गया। विज्ञान का उन दिनों वहां यही प्रसिद्ध केन्द्र था। ऑक्सफोर्ड में उसने पाया कि वह, अनजाने में ही, विश्वविद्यालय के प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के एक 'अदृश्य कुल' का सदस्य बन चुका है। इस कुल व समाज के कुछ लिखित नियम-उपनियम नहीं थे—बस, हर विषय पर खुल-

कर विवेचन, विनिमय। 1660 मे बादशाह ने इन वैज्ञानिको को एक घोषणा-पत्र प्रदान कर दिया जिसके परिणामस्वरूप उनकी वह 'इन्विजिबल सोसाइटी' अब 'रायल सोसाइटी' बन गई। इस सोसाइटी के सदस्यो का ध्येय था—विज्ञान का परीक्षणात्मक अध्ययन। "सत्य की उपलब्धि केवल प्रत्यक्ष द्वारा—अन्त -प्रत्यक्ष (चिन्तन) तथा बहि -प्रत्यक्ष (परीक्षण) द्वारा—ही हो सकती है।"

बॉयल की ख्याति विज्ञान मे एक परीक्षण-प्रिय वैज्ञानिक के रूप मे ही है, 'बॉयल्ज़ लॉ' के जनक के रूप मे। बॉयल का नियम गणित का वह नियम है जिसके द्वारा हम बता सकते हैं कि दबाव के घटने-बढने से हवा की हालत मे क्या अन्तर आ जाता है। इस नियम का आविष्कार परीक्षणो द्वारा हुआ था और बहुत देर बाद ही जाकर कही उसे गणित के एक सूत्र का रूप मिल सका था।

बॉयल ने अपना वह प्रसिद्ध परीक्षण, पहले-पहल, इस तरह किया था। पहले तो उसने अग्रेजी वर्णमाला के 'जे' अक्षर की शक्ल की एक शीशे की ट्यूब बनवाई जिसका छोटा-सिरा मुहबन्द था। ट्यूब काफी लम्बी थी। उसकी लम्बी भुजा कोई 10 फुट ऊची थी। अब, इतनी बडी ट्यूब को किसी कमरे मे फिट कैसे किया जाए ? एक सीढी इस्तेमाल करनी पडी। बडी सावधानी के साथ कुछ पारा ट्यूब मे डालना शुरू किया गया कि दोनो भुजाओ मे उसका स्तर एक ही रहे अर्थात्—इस स्थिति मे—मुहबन्द सिरे मे गैस का दबाव वही था जो खुले-मुह मे बाह्य वायुमण्डल का था। पाठक स्वय अनुमान कर सकता है कि यदि दोनो सिरो पर दबाव एक न हो तो पारे का स्तर ट्यूब की दोनो भुजाओ मे अलग-अलग होगा, बराबर नही।

इन परीक्षण करनेवालो को खूब मालूम था कि उनके उपकरण किस किस्म के है जे ट्यूब का निचला सिरा एक बडे बॉक्स मे रखा हुआ था—शीशा जरा टूटा नही कि बॉक्स पारे की झपेट मे आया नही। और कितनी ही बार यह दुर्घटना हुई भी। खैर, जब पारा दोनो भुजाओ मे एक स्तर पर आ गया, बॉयल ने कागज की दो लम्बी पर्चिया, इचो और इच के आठवे हिस्सो मे अकित करके, दोनो पर चिपका दी। धीरे-धीरे, फिर, पारे को ट्यूब के खुले-मुह मे उडेलना शुरू किया गया—दोनो ओर पारा ऊपर को उठना शुरू हुआ किन्तु समान ऊचाई तक नही बन्दमुह वाले हिस्से मे कुछ हवा थी जिसका दबाव पारे को उसमे और ऊपर न आने देता। परिणाम यह हुआ कि खुले-मुह वाले हिस्से मे पारा कुछ अधिक ऊचाई तक पहुच गया। ऊचाई एक नही किन्तु, दोनो ही भुजाओ मे पारा समतुलित। ट्यूब के अन्दर वायुमण्डल के दबाव के अतिरिक्त पारे का अपना भार भी होता, बन्दमुह वाले सिरे मे गैस का दबाव कितना है, यह अब सिलिण्डर पर चिपकी परचियो पर अकित सख्याओ द्वारा बखूबी जाना जा सकता है। बॉयल ने एक अद्भुत स्थिति प्रत्यक्ष की, वह यह कि—लम्बी भुजा मे जब छोटी भुजा की अपेक्षा २९ इच पारा अधिक होता है, ट्यूब मे गैस का परिमाण उसके मूल के परिमाण का बिलकुल आधा रह जाता है, बॉयल को ज्ञात था कि वायुमण्डल का भी अपना दबाव होता है और उसे यह भी मालूम था कि यह दबाव पारे के 29 इच को उठाए रखने के लिए पर्याप्त है। खुले-मुह मे 29 इंच दबाव, इस प्रकार बढ़ जाने से, बन्दमुह सिरे मे

दबाव को दुगुना कर जाता है जिसका परिणाम यह होता है कि उसमे पडी गैस का परिमाण आधा रह जाता है। किन्तु बॉयल को इतने अनुमान से ही सन्तोष नही हुआ। उसने सैकडो गणनाए और की। आठ फुट ऊचा पारे का स्तूप अन्दर बन्द हवा को अपने मूल परिमाण की चौथाई तक ले आया।

बॉयल के प्रत्यक्ष को आज भौतिकी मे हर वैज्ञानिक प्रतिदिन प्रयुक्त करता है गैस का परिमाण, दबाव के अनुसार, विपरीत अनुपात मे अदलता-बदलता रहता है। बॉयल के नियम की यही सूत्रात्मक परिभाषा है। अगली पीढी के वैज्ञानिको ने विशेषत जैकीज़ चार्ली ने, इसमे इतना और जोड दिया कि 'यदि तापमान मे परिवर्तन न आए, तब'।
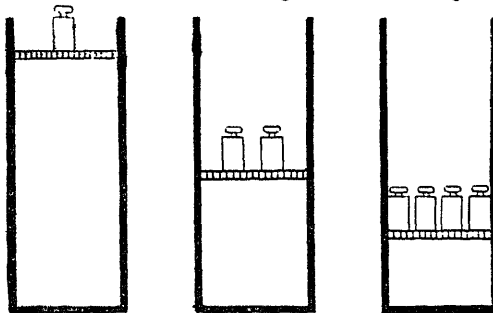
बॉयल का नियम : गैस का परिमाण दबाव के विपरीत अनुपात में परिवर्तित हो जाता है।

बॉयल के बहुत-से परीक्षणो तथा अन्वेषणो का वर्णन हमे उसके भतीजे के नाम लिखे गए पत्रो मे मिलता है। बॉयल का यह भतीजा भी आगे चल कॉर्क का अर्ल बना। कभी-कभी ये पत्र सौ-सौ से भी ज़्यादा पृष्ठ के हो जाते।

बॉयल एक महान् वैज्ञानिक था, और उसकी अभिरुचि भी विज्ञान की एक ही शाखा तक सीमित न थी। शब्द की गति, वर्ण-भगिमा के तथा वर्णो के मूल कारण तथा स्फटिको की रचना के सम्बन्ध मे उसने अनुसधान किए। जिसे आदमी चला सके ऐसे एक वैकुअम पम्प का निर्माण भी किया, और साबित कर दिखाया कि हवा से महरूम जगह मे कोई प्राणी जीवित नही रह सकता, यह भी कि वायु से शून्य स्थान मे गन्धक जलेगी नही। 'रासायनिक तत्त्व' का एक लक्षण भी, कहते है इसे बॉयल ने सुझाया था और जो हमारी वर्तमान 'रसायन दृष्टि' से कोई बहुत भिन्न नही। "वह द्रव्य जिसे छिन्न-भिन्न नही किया जा सकता", किन्तु एक सच्चे वैज्ञानिक की भाति उसने इसका जैसे सशोधन भी साथ ही कर दिया था कि "किसी भी अद्यावधि ज्ञात तरीके से (तोडा-फोडा नही जा सकता)।" किन्तु आजकल की परीक्षणशालाओ मे इन तत्त्वो की आन्तर-रचना मे भी परिवर्तन लाया जा चुका है।

बॉयल एक उदारहृदय व्यक्ति था। और यदि उसने 'बॉयल्ज़ लॉ' का आविष्कार न भी किया होता, तब भी इतिहास के अमर पुरुषो मे उसका नाम सदा स्मरण किया ही जाता क्योकि न्यूटन के 'प्रिन्सीपिया' के प्रकाशन की व्यवस्था उसीने पहले-पहल की थी।

30 दिसम्बर, 1691 को लन्दन मे उसकी मृत्यु हुई। उसकी उम्र तब 64 साल थी। अन्धविश्वासो और चुडैलो के उस ज़माने मे भी वह विज्ञान मे कुछ महत्त्वपूर्ण दिशाए और प्रणालिया प्रस्तुत कर गया—और अपने समकालीन कितने ही वैज्ञानिको के लिए प्रेरणा एवं अर्थ की दृष्टि से सचमुच एक स्रोत बनकर। वे लोग कहा भी करते थे, "रॉबर्ट बॉयल तो सत्य को, जैसे, सूघ ही लेता है।"

क्रिश्चन ह्यूजेन्स

क्रिश्चन ह्यूजेन्स की ईजाद की गई पेण्डुलम घड़ी को जब फ्रेंचगायना ले जाया गया तो उसके वक्त में कुछ कसर आ गई। ह्यूजेन्स को जब पता लगा कि कितना समय वह इस प्रकार खो बैठी है तो गणनाएं करते हुए वह इस परिणाम पर पहुंचा कि "भूमध्य-रेखा पर पृथ्वी में कुछ उभार आ जाता है।"

विज्ञान की इस विलक्षण प्रतिभा का जन्म, जिसे इतिहास में पेण्डुलम घड़ियों के, तथा प्रकाश के सिद्धान्त के, आविष्कर्ता के रूप में स्मरण किया जाता है, 14 अप्रैल, 1629 को नेदरलैण्ड की राजधानी हेग में हुआ था। ह्यूजेन्स का पिता कान्स्टेन्टाइन ह्यूजेन्स बिरादरी का एक धनी-मानी व्यक्ति और कवि, राजनीतिज्ञ, संगीतज्ञ तथा मशहूर पहलवान था। बचपन से ही क्रिश्चन को गणित तथा विज्ञान में विशेष रुचि थी। लाइदन और ब्रेदा के विश्वविद्यालयों में उसकी शिक्षा-दीक्षा हुई। बाईस वर्ष की कच्ची उम्र में गणित तथा ग्रह-गणना सम्बन्धी उसके कुछ निबन्ध जब छपे तो उन्हें पढ़कर प्रसिद्ध दार्शनिक रेने डेकार्ट तक चकित रह गया था।

उस युग में ज्योतिर्विज्ञान को सम्पूर्ण विज्ञानलोक का केन्द्रबिन्दु समझा जाता था। ह्यूजेन्स ने उसमें भी कार्य किया है। टेलिस्कोप का इस्तेमाल अब शुरू हो चुका था किन्तु जो उपकरण उन दिनों मिलते थे, ह्यूजेन्स उनसे सन्तुष्ट न था। परिणामतः ह्यूजेन्स ने अपने ही लेन्स बनाने शुरू कर दिए। इस काम में उसका सहायक होता एक यहूदी डच बेनिडिक्ट स्पिनोज़ा। वही बेनिडिक्ट स्पिनोज़ा जो विश्व का एक विश्रुत दार्शनिक है, किन्तु लेन्स घिस-घिसकर ही वह अपने लिए रोज़ी कमाया करता था।

टेलिस्कोप के निर्माण में जो बेहतरी वह इस तरह ले आया उसकी बदौलत ह्यूजेन्स ने शनिग्रह के उस ज्योतिर्मण्डल का प्रत्यक्ष किया, जिसे उससे पहले केवल

गैलीलिओ ही देख सका था। किन्तु ह्यूजेन्स ने इस 'मण्डल' की प्रकृति को पहचान लिया कि यह एक 'भारी चपटी परिधि' है। आज के कहीं अधिक शक्तिशाली टेलिस्कोप द्वारा यदि इस परिधि को देखें तो हम पाएंगे यह परिधि वस्तुतः तीन परिधियों का एक समुच्चय है—'धूल' के बड़े-बड़े तीन ढेर जो बड़ी तेज़ी के साथ शनि के गिर्द चक्कर काट रहे हैं। नेत्र-सम्बन्धी कितने ही उपकरण ह्यूजेन्स ने ईजाद किए जिनमें—ह्यूजेन्स का आई-पीस आज भी हमारे सूक्ष्मदर्शी यन्त्रों में प्रयुक्त होता है।

24 साल की उम्र में ह्यूजेन्स को लन्दन की रायल सोसाइटी का सदस्य चुन लिया गया। इस सम्मान को ग्रहण करने के लिए जब वह इंग्लैंड पहुंचा, तब न्यूटन से उसकी भेंट हुई। न्यूटन भी उसकी बहुमुखी-प्रतिभा से कम प्रभावित नहीं हुआ। उसने कोशिश भी की कि लन्दन में ही ह्यूजेन्स का काम बन जाए। किन्तु इसमें उसे सफलता नहीं मिली। बात यह थी कि हालैण्ड के इस वैज्ञानिक को अभी उसके अपने देश के बाहर बहुत ही कम लोग जानते थे, और वह भी कुछ वैज्ञानिक मित्र ही। परिणामतः न्यूटन भी, किसी समृद्ध अभिभावक को उसके सम्पर्क में न ला सका जिससे कि एक विदेशी वैज्ञानिक को उसकी आर्थिक चिन्ताओं से मुक्त रखा जा सके।

काफी साल बाद लुई चौदहवें ने जिसने कसम खा रखी थी कि किसी भी कीमत पर फ्रांस का सिर विज्ञान के अध्ययन में ऊंचा रहना चाहिए, ह्यूजेन्स को एक वैज्ञानिक अनुसन्धान संस्था का अध्यक्ष-पद प्रस्तुत किया जिसपर कि वह 1666 में 1681 तक बना रहा।

फ्रांस में रहते हुए ही उसने अपने महान् ग्रन्थ 'प्रकाश पर एक निबन्ध' लिखा। किन्तु इसका प्रकाशन बहुत बाद में 1690 में हुआ। स्वयं ह्यूजेन्स ने स्वीकार किया है कि, वह भी आखिर एक इन्सान था, किस तरह इसके छपने में इतना वक्त लग गया। मूल पुस्तक फ्रेंच में लिखी गई थी और उसका विचार था कि वह इसका अनुवाद लैटिन में भी करेगा। किन्तु वह पहली प्रत्यग्रता, विचार की और उसे प्रस्तुत करने की, जब एक बार शिथिल पड़ गई, और ही और काम उसे निरन्तर आकर्षित करते गए, और अनुवाद की वह योजना पीछे और पीछे पड़ती गई। अनुवाद का विचार उसे छोड़ना ही पड़ा और फ्रेंच में ही जल्दी से उसे मुद्रित कराकर एक तरफ कर देना पड़ा कि इतनी देरी से कहीं उसका वह उन विचारों की मौलिकता का श्रेय भी अपना न रह जाए तथा कोई और बाज़ी मार ले जाए।

अपने दिनों में क्रिश्चन ह्यूजेन्स की प्रतिष्ठा पेण्डुलम घड़ी के आविष्कर्ता के रूप में थी। वह उसका केवलमात्र आविष्कर्ता ही नहीं था, अपितु पेण्डुलम की गतिविधि के मूल में क्या नियम है और कैसे वह काम करता है इसकी व्याख्या भी वह कर सकता था। यह विचार कि पेण्डुलम का प्रयोग घड़ी-पल गिनने में किया जा सकता है सूझा तो पहले गैलीलिओ को भी था, किन्तु घड़ी बनाने में उसकी उपयोगिता को क्रियात्मक रूप ह्यूजेन्स से पूर्व कोई दे न सका था।

कितने ही वैज्ञानिकों ने समस्या से अपना दिमाग लड़ाया, किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। 1657 में ह्यूजेन्स ने पहली पेण्डुलम घड़ी तैयार की। घड़ी की सफल गति-

विधि के मूल थे—एक समिश्र पेण्डुलम के सचालन के काम मे आनेवाले नियम। इनका 'प्रत्यक्ष' ह्यूजेन्स ने कर लिया था। गोले के एक आन्दोलन के साथ घडी की सूइयो को कितना 'खिसक' जाना चाहिए। एक प्रकार की 'ऐस्केपमेण्ट'-सी कुछ वह प्रत्यक्ष सिद्ध कर चुका था और, इसके साथ ही, पेण्डुलम के खुले लटकाने के (साइक्लायडल सस्पैन्शन) सिद्धान्त का अनुमान भी वह कर चुका था। ह्यूजेन्स की घडी सही-सही घण्टे-मिनट बताने लग गई। चाद, तारो के साथ एक मानव-निर्मित यन्त्र भी काल-गणना करने लग गया ! अब इस पेण्डुलम घडी को समुद्र-यात्रा मे सहायता पहुचाने के लिए भेज दिया गया और, तभी, उसकी मुश्किले शुरू हो गई। 'पृथ्वी की गुरुता' की ओर आविष्कर्ता का ध्यान अभी तक नही गया था।
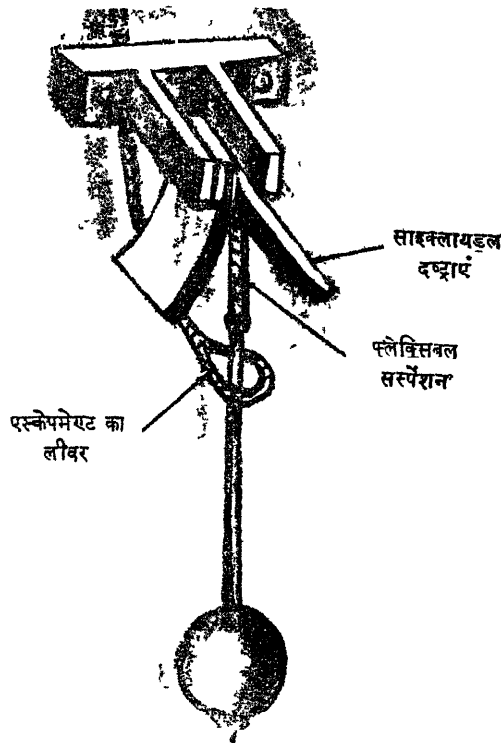
पेण्डुलम के हर आन्दोलन को वही समय लगता है—हा, यदि पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण वही रहे, तब। दरअसल तो पेण्डुलम अपनी ऊंचाई से निम्न-बिन्दु पर गिरता ही इसीलिए है कि पृथ्वी की गुरुता उसे प्रतिक्षण नीचे की ओर खीच रही होती है। घडी को ज़रा किसी पहाड की चोटी पर ले जाइए—पृथ्वी के केन्द्र से दूर—और फिर देखिए पेण्डुलम के पतन मे वही तेज़ी नही रह जाती, उसे इधर से उधर डोलने मे अब ज़्यादा वक्त लगेगा—जिसका परिणाम यह होगा कि घडी धीरे-धीरे मिनट-सैकण्ड खोने लग

जाएगी। पहाड की चोटी पर यही कुछ सभव था, यही कुछ 'नियमानुकूल' था। किन्तु इसी घडी को फ्रेंच गायना के सायेन द्वीप मे ले जाया गया। सायेन समुद्र-स्तर पर है किसी पहाडी चोटी पर नही। वहा भी वह सुस्ताने लगी। ऐसा क्यो हुआ ? क्या बात थी ?

ह्यूजेन्स ने प्रश्न का विश्लेषण किया। वह जानता था कि रस्सी मे एक पत्थर को बाधकर अगर उसे चक्कर पर चक्कर दिए जाए तो यह पत्थर, गुरुत्वाकर्षण को मानो निष्क्रिय करता हुआ, सूत्र-वृत्त की परिधि-सीमा से खुद को बाध लेता है। और सच तो यह है कि यदि सूत्र की इस 'परागति' मे बल कुछ अधिक हो तो यही रस्सी टूट भी सकती है। ह्यूजेन्स ने इस शक्ति व बल को 'सेण्ट्रीफ्यूगल' केन्द्र-प्रतिगामी-शक्ति का नाम दे दिया। पृथ्वी भी तो लट्टू की तरह घूमती है और खूब तेजी के साथ परिक्रमा करती है। अपनी धुरी के गिर्द एक चक्कर पूरा करने मे इसे 24 घण्टे लगते है। भूमध्यरेखा पर पृथ्वी की परिमा 1,000 मील प्रति घण्टा से भी ज्यादा की अविश्वसनीय गति से यह परिक्रमा कर रही होती है। भूमध्यरेखा पर स्थित कोई भी वस्तु, धागे के सिरे पर बधे पत्थर की तरह ही, जैसे पृथ्वी से अपना बन्धन तोड देने को आकुल होती है। अब यदि हम, विषुवत् रेखा को छोड, उत्तर व दक्षिण ध्रुव की ओर चल पडें, धरती तो अब भी 24 घण्टो मे एक ही चक्कर अपना पूरा करेगी किन्तु इन दोनो बिन्दुओ पर उसकी गति मे वही आवेश अब नही होगा जो कि भूमध्यरेखा पर था। अपनी साइकिल को ज़रा एक ओर मोड देकर देखिए—सिरे पर उसके स्पोक्स धुधले-से दिखाई देगे जबकि केन्द्र के पास उन्हे स्पष्ट देखा जा सकता है—क्योकि वहा उनकी गति मे वही तेज़ी नही है। और परिक्रमा के केन्द्रबिन्दु मे तो, जैसे, कोई गति होती ही नही !

पृथ्वी के हर बिन्दु पर, हर स्थान पर, गुरुत्वाकर्षण का कार्य होता है—वस्तु-मात्र को खीचकर पृथ्वी के केन्द्र की ओर गिराने का प्रयास। उत्तरी ध्रुव पर गुरुता का काम यही कुछ है, किन्तु अन्य किसी भी स्थान पर उसका काम 'साथ मे' यह भी होता है कि चीज़ें अपनी ही केन्द्र-प्रतिगामिनी वृत्ति द्वारा आवेश मे आकर धरती से अपना नाता ही न तोड जाए—इसकी सभाल भी करना। और वस्तुओ की यह केन्द्रप्रतिगामिता भूमध्य-रेखा पर अपनी पराकाष्ठा पर होती है क्योकि इसी रेखा पर पृथ्वी की गति भी अपनी पराकाष्ठा पर होती है।

अर्थात्, भूमध्यरेखा पर पृथ्वी मे गुरुत्वाकर्षण अब वही नही रह सकता, अपेक्षाकृत कुछ कम हो जाएगा, जिसके परिणामस्वरूप घडियो की सुइयो मे स्वभावत अब कुछ सुस्ती आ जाएगी, क्योकि पेण्डुलम के उत्थान-पतन मे अब वही रफ्तार नही रह सकती। ह्यूजेन्स ने गणना की कि घडी की गति को भूमध्य रेखा पर कितना शिथिल पड जाना चाहिए। उसकी गणना का आधार था भूमध्य रेखा पर तथा पेरिस मे पृथ्वी की गतियो की परस्पर तुलना। किन्तु घडी की सुइया उसके अनुमान से कही ज्यादा सुस्त निकलीं। अब एक ही सभावना रह गई थी कि भूमध्यरेखा पर पृथ्वी मे उभार होना चाहिए, जिसके कारण उसके गुरुत्वाकर्षण मे और भी कसर आ जाती है। यह केन्द्र-प्रतिगामिता तथा भूमध्यरेखा के उभार का सम्मिलित प्रभाव था कि वही घडिया अब एक दिन में ढाई मिनट पिछडने लग गई थी।

समुद्र-यात्रा मे यदि ये पेण्डुलम घडिया नाकारा साबित होती है, तो उसका भी कुछ उपाय होना चाहिए। अब ह्यूजेन्स के सम्मुख यह एक नया प्रश्न था। उसका समाधान भी उसने निकाल लिया—'स्पाइरल वाच-स्प्रिंग'। ह्यूजेन्स ने इस स्प्रिग को पेटेण्ट करा लिया, क्योकि उसे पता था कि राबर्ट हुक उससे पहले ही इसका आविष्कार कर चुका है। और बात दरअसल यह भी है कि हुक अपनी तजवीज को सामने लाया ही तब जबकि ह्यूजेन्स के आविष्कार को सभी कही सम्मान मिल चुका था। घडियो के सम्बन्ध मे ह्यूजेन्स ने एक यही आविष्कार नही किया था, उसकी युग-प्रतिष्ठा हो चुकी थी, उसका ईजाद किया 'साइक्लायडल सस्पेन्शन' आज भी हम पेण्डुलम घडियो मे प्रयोग मे लाते हैं।

ह्यूजेन्स की प्रतिष्ठा एक और कारण से भी है। प्रकाश की किरणो की मूल प्रकृति क्या है इसके विषय मे भी उसने एक स्थापना प्रस्तुत की कि ध्वनि और जल की भाति ज्योति भी प्रकृत्या तरगमयी ही होती है। ह्यूजेन्स कहता है "यह सन्देह करना व्यर्थ है कि प्रकाश वस्तुत 'एक प्रकार के द्रव्य की गति' (का परिणाम) है।" उसका अनुमान था कि प्रकाश भी तरगो मे ही इधर-उधर फैलता है किन्तु, साथ ही, इस बात का भी उसे निश्चय था कि जहा ध्वनि की गति 'शून्य' मे अवरुद्ध हो जाती है, प्रकाश की नही हो सकती।

ये तरगें किस प्रकार गति करती है इसका एक माडल भी ह्यूजेन्स ने प्रस्तुत किया था "किसी कर्कश धातु के एक ही परिमाण के कुछ गोले लीजिए और उन्हे एक सरल रेखा मे व्यवस्थित कर दीजिए—इस प्रकार कि वे एक-दूसरे के स्पर्श मे रहे। अब यदि उसी प्रकार के एक और गाले से पास पडे गोले को बजा दिया जाए तो यह हलचल तत्क्षण दूरदराज पडे उस पहले गोले मे भी खुद-ब-खुद पहुच जाएगी—हमारी आख यह भाप भी न पाएगी कि यह सब हो कैसे गया।"

सत्रहवीं सदी का एक बैलेन्स स्प्रिग
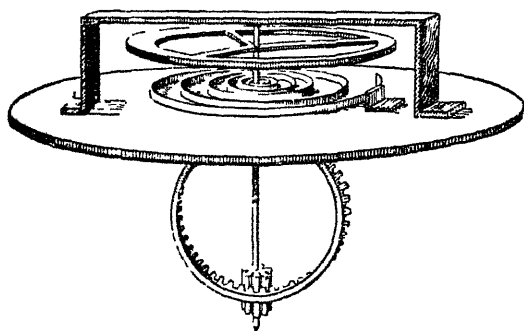
इसी आदर्श की उसने दो प्रकार से परीक्षा की। कुछ गोलो को तो उसी रेखा मे रहने दिया और कुछको उसके 90° के कोण पर उसी प्रकार 'अवलम्बित' करके रख दिया गया। किन्तु स्पन्दन की गति दोनो दिशाओ मे एक ही थी—पूर्व-पश्चिम की ओर भी और दक्षिण-उत्तर की ओर भी। अर्थात् प्रकाश की दो किरणें एक-दूसरे का 'उल्लघन' करती हुई भी रल-मिल नही जाती!

ह्यूजेन्स ने इस प्रकार प्रकाश के सम्बन्ध मे 'तरग सिद्धान्त' (वेव थीअरी) की स्थापना की और उसके आधार पर प्रकाश के क्षेत्र मे प्रत्यावर्तन (रिफ्लैक्शन), अभ्या-

वर्तन (रिफ्रेक्शन), तथा गुणान्तरण (पोलराइजेशन) की व्याख्या भी कर डाली। किन्तु न्यूटन तभी प्रकाश के ही विषय मे अपना 'कार्पस्क्युलर सिद्धान्त' प्रस्तुत कर चुका था, और न्यूटन उस युग का वैज्ञानिक-शिरोमणि था। प्रकाश के इस 'कण सिद्धान्त' की स्थापना यह है कि प्रकाश, प्रकाश के स्रोत से, कण-वाही छोटे-छोटे स्फुलिगो मे निरन्तर फूटता रहता है। विश्व के वैज्ञानिक इसी सिद्धान्त को दो सौ साल आख मूद कर मानने चले गए। आखिर मैक्सवेल ने आकर सिद्ध कर दिखाया कि तरग-सिद्धान्त प्रकाश के क्षेत्र मे अधिक उपयुक्त भी है, सरल भी। इसके अनन्तर, फोटो-इलैक्ट्रिसिटी के अध्ययन मे आइन्स्टाइन और प्लैंक ने न्यूटन की 'कार्पस्क्युलर थीअरी' का पुनरुद्धार किया। आधुनिक प्रवृत्ति 'कण' और 'तरग' की उन दोनो, मूर्त तथा अमूर्त, दृष्टियो को समन्वित कर देने की है।
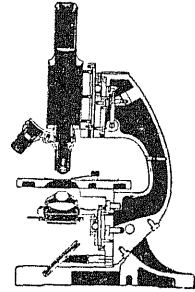
ऐण्टन वॉन ल्यूवेनहोक

1673 में लन्दन की रॉयल सोसाइटी के नाम एक खासा लम्बा, और अजीब किस्म का पत्र पहुंचा जिसे पढ़कर सोसाइटी के विद्वान सदस्यों की हंसी रुकने में ही न आती थी। पत्र को लिखनेवाला एक डच दुकानदार था जो साथ ही, दिन के कुछ वक्त चौकीदारी करके अपनी गुज़र जैसे-तैसे कर रहा था। हंसी एकाएक रुक गई और सभी चेहरों पर कुछ हैरानी और इज्ज़त का मिला-जुला-सा एक भाव स्थिर हो गया; क्योंकि पत्र में जहां इस सीधे-सादे और निश्छल व्यक्ति ने अपने स्वास्थ्य के बारे में, अपने पड़ोसियों और उनके अन्धविश्वासों के बारे में, ब्यौरा दिया था, वहां खुद पत्र का शीर्षक देते हुए लिखा था, "मिस्टर ल्यूवेनहोक के ईजाद किए एक माइक्रोस्कोप द्वारा प्रत्यक्षदृष्ट—चमड़ी पर और मांस आदि पर पड़ी फफूंदी की, तथा डंग वगैरह की, एक और ही दुनिया के कुछ नमूने।"

उस ज़माने में जबकि अभी, छोटी-छोटी चीज़ों को बड़ा करके दिखाने के लिए बना, मैग्निफाइंग ग्लास एक मामूली लेन्स ही होता था जिसे हाथ में ही पकड़ना पड़ता था और जिसकी ताकत भी कोई बहुत नहीं होती थी, उस ज़माने में—एक बेपढ़े-लिखे स्टोरकीपर ने शीशे घिस-घिसकर लेन्स तैयार करने की अपनी हवस को एक माइक्रोस्कोप बनाने में कृतार्थ कर लिया था—जिसके ज़रिये अब वस्तुओं को सैकड़ों गुना बड़ा करके दिखाया जा सकता था। रॉयल सोसाइटी ने ल्यूवेनहोक को बाकायदा आमन्त्रित किया कि वह अपने परीक्षण जारी रखे, जिसके परिणामस्वरूप अगले पचास सालों में सोसाइटी को उसके 375 पत्र और आए!

ऐण्टन वॉन ल्यूवेनहोक का जन्म हालैण्ड के डेल्फ्ट शहर में 14 अक्तूबर, 1632

के दिन हुआ था। टोकरिया बना-बनाकर, और देसी शराब बेचकर भी, परिवार ने अपनी प्रतिष्ठा बना रखी थी। अब पिता की मृत्यु हुई, बालक ऐण्टन अपने इस नीली-नीली पवनचक्कियो और नहरो वाले, छोटे-से कस्बे को छोडकर एम्स्टरडम मे आ बसा। यहा पहुचकर एक पसारी के यहा वह काम करने लगा। 21 साल की उम्र मे वह एम्स्टरडम से फिर घर वापस आ गया और डेल्फ्ट मे ही उसने एक अपनी पनसारी की दूकान खोल ली। साथ ही, उसे सिटी हाल मे चौकीदारी की नौकरी भी मिल गई।

ऐण्टन को एक हवस बडी बुरी तरह से चिपटी हुई थी—दिन-रात लेन्स घिसते रहना। एक के बाद दूसरा लेन्स, दूसरा पहले से बेहतर। कार्य वह जो निरन्तर पूर्ण से पूर्णतर होता चले। कुल मिलाकर उसने 400 मेग्निफाइग ग्लास बनाए। छोटे छोटे लेन्स, जिनका व्यास इ च के आठवे हिस्से से भी कम—पृष्ठ पर छापे एक अक्षर से जरा बडा नही। किन्तु उन्ही लेन्सो को आज तक मात नही दी जा सकी। अपने इन्ही लेन्सो के ज़रिये उसने 'मामूली सूक्ष्मदर्शी यन्त्र' तैयार किए, किन्तु उनकी उपयोगिता कितनी अद्भुत थी! कितना अद्भुत शिल्पी था ऐण्टन जिसने इन नन्हे-नन्हे लेन्सो को थामने के लिए नाज़ुक और ताकतवर स्टैण्ड भी खुद अपने ही हाथो से तैयार किए थे।

गैलीलिओ ने अपने टेलिस्कोप को निरन्तर आकाश की ओर मोडा था, ल्यूवेनहोक ने अपने लेन्सो को सामान्यत अदृश्य जगत् की निरन्तरता पर टिका दिया। जो कुछ भी उसके हाथ मे सूक्ष्म आ सका—चमडी मे दरारें हो, पशुओ के बाल हो, मक्खी की टागे और सिर, सभी कुछ माइक्रोस्कोप द्वारा परीक्षित होना चाहिए।

पडोसियो की निगाह मे ये सब पागलो के आसार थे—घण्टो गुज़र जाए और वह अपने माइक्रोस्कोप से हिलता ही नही! डेल्फ्ट की भोली-भाली जनता उसकी क्या आलोचना करती है, वह जरा विचलित नही हुआ। वह दुनिया को अपने माइक्रोस्कोप के ज़रिये ही देखता रहा और सदा उसे अजीब से अजीब, और नये से नये, नज़ारे पेश आते। एक दिन उसने बारिश रुकने पर एक गड्ढे मे से कुछ पानी इकट्ठा किया और उसमे बडे ही छोटे-छोटे जलचरो को तैरते-फिरते पाया, इतने छोटे कि मनुष्य की आख बगैर इस प्रकार की किसी सहायता के उन्हे देख भी नही सकती। "बेचारे असहाय जन्तु!" उसके मुह से बेबसी मे निकला, क्योकि माइक्रोस्कोप द्वारा सहस्र-गुणित होने पर ही वह उनका प्रत्यक्ष कर पाया था।

उसे कुछ एहसास-सा था कि ये जीवाणु आकाश से ज़मीन पर नही उतरे। जिसे सिद्ध करने के लिए उसने वर्षा-जल को इस बार एक निहायत ही साफ प्याले मे इकट्ठा किया। माइक्रोस्कोप फिट किया गया—किन्तु अब की बार उसी पानी मे कोई कीडे वगैरह नही थे। किन्तु कुछ दिन तक पानी को उसी प्याले मे रहने दिया गया तो 'छोटे-छोटे जानवर' उसी मे खुद-ब-खुद फिर से पैदा होने लग गए। ल्यूवेनहोक इस परिणाम पर पहुचा कि हवा जो धूल उडाकर अपने साथ ले आती है उसीके साथ ये भी कही से आ जाते है।

अपनी उगली को ज़रा काटकर वह माइक्रोस्कोप के नीचे ले आया और उसने खून की परीक्षा की। लाल-लाल छोटे-छोटे कीटाणु! 1674 मे, उसने अपने इन प्रत्यक्षो

का एक यथार्थ विवरण रॉयल सोसाइटी को भेज दिया। तीन साल बाद उसने कुत्तों तथा अन्य पशुओं के बीजाणुओं का ब्यौरा भी सोसाइटी को लिख भेजा।
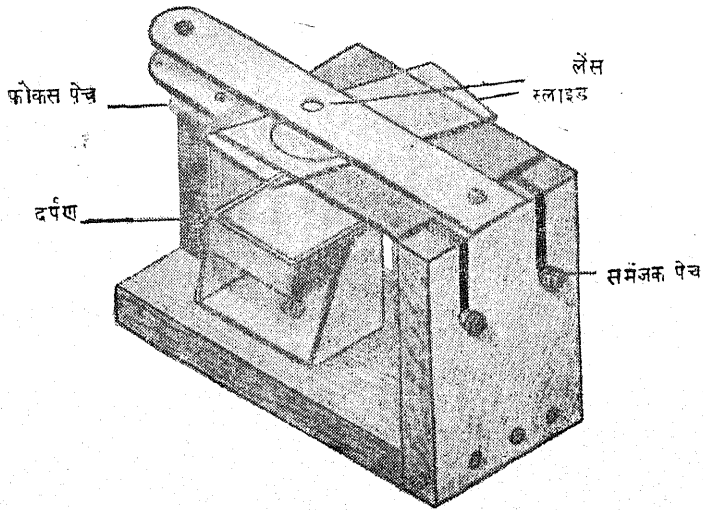
ल्यूवेनहोक का सूक्ष्मदर्शक यंत्र

रॉयल सोसाइटी हैरान रह गई। हालैण्ड का यह बाशिन्दा कोई वैज्ञानिक है या विज्ञानकथाओं का कल्पनाकार ? सोसाइटी ने लिख भेजा : कुछ दिन के लिए अपना माइक्रोस्कोप सोसाइटी को उधार भेज दो। जवाब में एक लम्बा खत और आ गया—एक निहायत ही छोटी दुनिया को खोलकर उसमें दिखा रखा था। लेकिन ल्यूवेनहोक संशयात्मा था उसने माइक्रोस्कोप नहीं भेजा। रॉबर्ट हुक और नेहीमिया ग्र्यू को हुक्म हुआ कि एक निहायत ही बढ़िया माइक्रोस्कोप तैयार करें, क्योंकि ल्यूवेनहोक के अनुसन्धानों की भी आखिर परीक्षा होनी चाहिए। माइक्रोस्कोप तैयार हो गया। उन्होंने माइक्रोस्कोप से खून को देखा, मसाले के पानी में बैक्टीरिया उत्पन्न कर उन्हें देखा, अपने दांतों का मैल खुरचकर उसे देखा, कीटाणुओं को गरम पानी से मारकर देखा, और पाया कि नन्हे-नन्हे जीवों की यह दुनिया ही कुछ दूसरी है—वैसी ही जैसी कि ल्यूवेनहोक के खतों को पढ़कर उन्होंने कल्पित कर रखी थी। अब आकर रॉयल सोसाइटी ने इस अनपढ़ डच का सम्मान किया। 1680 में ऐण्टन वॉन ल्यूवेनहोक को रॉयल सोसाइटी का फेलो चुन लिया गया।

1683 में वॉन ल्यूवेनहोक ने इन जीवाणुओं के रेखाचित्र बनाए। अन्धविश्वासों के उस युग में, जबकि साधारण जनता की आस्था थी कि मक्खियां वगैरह कुछ खास किस्म के प्राणी स्वयंभू होते हैं और सड़ती मिट्टी से, गोबर से, खुद-ब-खुद पैदा हो आते हैं, ल्यूवेनहोक ने प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिखाया कि इनकी उत्पत्ति के नियम भी वही सामान्य प्रजजन-सिद्धान्त हैं। गेहूं को बरबाद करनेवाले घुनों का उसने अध्ययन किया और खबर

दी कि ये घुन-सुसरी भी अण्डज हैं। मछली की पूंछ को माइक्रोस्कोप के नीचे रखकर उसने देखा कि उसमें भी रक्त की बड़ी ही सूक्ष्म वाहिनियां हैं, कोषिकाएं हैं।

रॉयल सोसाइटी के नाम, तथा पेरिस की एकेडमी आफ साइन्सेज़ के नाम, लिखे पत्रों की जहां-तहां चर्चा होने लगी और, परिणामतः, ल्यूवेनहोक की कीर्ति अब विश्व-भर में फैल गई। इन वर्णनों को पढ़-पढ़कर रूस का ज़ार और इंग्लैण्ड की महारानी तक अपने कुतूहल को संभाल नहीं सके। उन्हें भी उत्सुकता थी कि ऐण्टन के माइक्रोस्कोप में से कुछ खुद प्रत्यक्ष कर सकें। वे खुद चलकर उसके यहां आए। उसकी दैनिक गतिविधियों में अन्त तक कुछ परिवर्तन नहीं आया। उसने स्वास्थ्य असाधारण पाया था। 91 साल की उम्र तक उसी तरह काम में लगा रहा। 26 अगस्त, 1723 को उसकी मृत्यु हुई। किन्तु
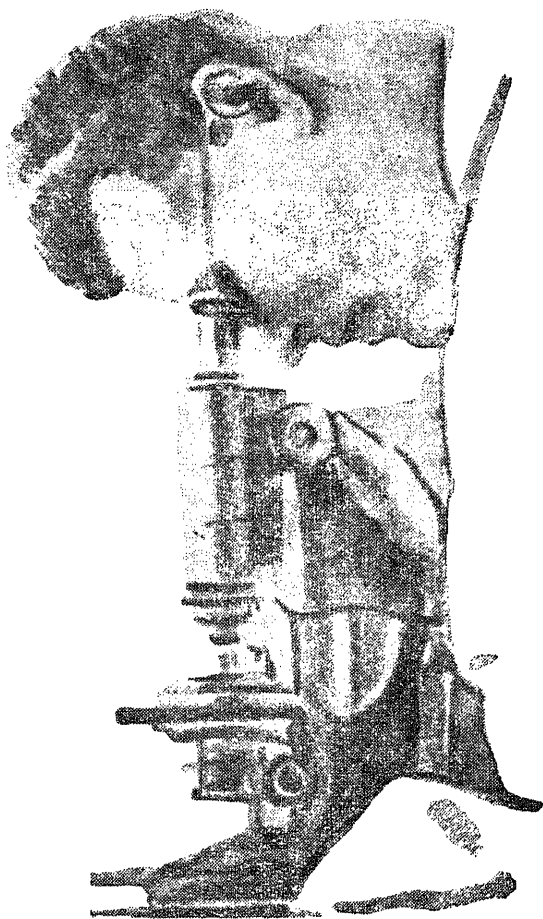
एक आधुनिक सूक्ष्मदर्शक-यन्त्र का प्रयोग

मरने से पहले वह अपने एक मित्र को दो अन्तिम खत दे गया था कि इन्हे रॉयल सोसाइटी के नाम डाल देना।

वॉन ल्यूवेनहोक का माइक्रोस्कोप एक बहुत ही सरल उपकरण था सिर्फ एक ही लैन्स, और वह भी बहुत ही छोटा। दो तरह के लैन्सो को मिलाकर एक तरह के कम्पाउण्ड माइक्रोस्कोप की ईजाद वैसे 1590 मे हो ही चुकी थी, लेकिन उसके बनाने मे कुछ टेक्निकल मुश्किलात इस कदर पेश आती कि हमेशा वॉन ल्यूवेनहोक का सीधा-सादा यन्त्र ही बेहतरीन नतीजे दिया करता। तब से लेकर आज तक लैन्स बनाने की कला बहुत उन्नति कर चुकी है। आधुनिक सूक्ष्मदर्शी यत्र वस्तुओ के व्यास को 2,500 गुना करके दिखा सकता है। और वैज्ञानिको की जरूरत तो चीजो को इससे भी ज्यादा बडा करके देखने की है। जिन जीवाणुणो अथवा बैक्टीरिया को ल्यूवेनहोक ने देखा था, आधुनिक चिकित्साशास्त्र के 'वाइरस' अथवा विषाणु उनसे कही ज्यादा छोटे होते है। आज तो प्रकाश की किरण की बजाय विज्ञान मे, जब इलैक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का प्रयोग आम होता जा रहा है, इलैक्ट्रॉनो की धाराओ से काम लिया जाता है जिसके द्वारा क्षुद्रवस्तुओ को 100,000 व्यास तक फैलाकर वैज्ञानिक देख सकता है।

ऐण्टन वॉन ल्यूवेनहोक के पास वर्तमान विज्ञान के अद्‌भुत उपकरण नही थे, किन्तु उसके पास भी कुछ था, जिसे विज्ञान आज भी और बेहतर नही कर सका एक विचार के प्रति अविचल भक्ति, निरतिशय धैर्य, और वस्तु को प्रत्यक्ष करने के लिए असाधारण अन्तर्बल, अन्तर्दृष्टि।

रॉबर्ट हुक

क्या पाठक ने 'वर्ण-विपर्यास' की पहेली कभी बूझी है ? उलटा-सीधा करके देखें तो ज़रा —इन अक्षरों का कुछ सिर-पैर बन सकता है क्या—C E I I I N O S S T T U V ?

रॉबर्ट हुक का जन्म 18 सितम्बर, 1635 को इंग्लैण्ड के दक्षिणी तट से कुछ परे, वाइट द्वीप में हुआ था। पिता स्थानीय चर्च में सहायक-पादरी के पद पर था, और पद की दृष्टि से उसकी आर्थिक स्थिति भी कुछ बुरी नहीं थी। किन्तु रॉबर्ट अभी 13 वर्ष का ही था कि पिता की मृत्यु हो गई, जिसका परिणाम यह हुआ कि रॉबर्ट को घर छोड़ लन्दन जाना पड़ा—जहां उसे उन दिनों के माने हुए पोर्ट्रेट-चित्रकार सर पीटर लेली के यहां नौकरी मिल गई। चित्रकला में भी उसकी प्रतिभा कुछ कम न थी, किन्तु रॉबर्ट अक्सर बीमार रहा करता, और चित्रकारी में प्रयुक्त होनेवाले रंगों-तेलों को उसकी प्रकृति बरदाश्त नहीं कर सकती थी। यहां शागिर्दी करते हुए उसका भविष्य सुरक्षित था, तरक्की के लिए अवकाश भी पर्याप्त थे, पर सेहत ने साथ न दिया। किन्तु कला में यह 'प्रारम्भिक' दीक्षा भी आगे चलकर उसके काम आई।

सौभाग्य से पिता पीछे उसके लिए 100 पौंड छोड़ गया था। उन दिनों यह रकम काफी मानी जाती थी और, इसीके बल पर, राबर्ट वैस्टमिन्स्टर स्कूल में दाखिल हो गया। 18 वर्ष की आयु में उसे ऑक्सफोर्ड में दाखिला मिल गया। कालिज की पढ़ाई के लिए उसे कुछ काम-धाम भी करने पड़े—क्राइस्ट चर्च में सम्मिलित गान, छोटी-मोटी चपरास-गीरी और इसी तरह के छुट-पुटे सम्बद्ध-असम्बद्ध कुछ दूसरे काम। कितने ही क्षेत्रों में उसने कुछ न कुछ दक्षता प्राप्त कर देखी थी। नक्शाकशी, किताबों में चित्र जुटाना, लकड़ी और धातु पर काम, और इन सबसे बढ़कर वह एक प्रतिभाशाली विद्यार्थी भी था।

ऑक्सफोर्ड के दिनो मे उसका क्रिस्टोफर रेन तथा रॉबर्ट बॉयल से मेल हुआ। रॉबर्ट बॉयल स्वय एक प्रतिभाशाली व्यक्ति था और सम्पन्न भी था। वह हुक से आठ साल आगे था। उसने देखा कि हुक मे प्रतिभा भी है निश्छलता भी—अनुसधान कार्य मे तथा परीक्षणशाला मे। सो, इस होनहार विद्यार्थी को उसने अपना सहायक लगा लिया। क्रिस्टोफर रेन का क्षेत्र था ज्यामिति, और 1660 मे उसकी नियुक्ति आक्सफोर्ड मे ही ज्योतिर्विज्ञान के प्रोफेसर के रूप मे हो चुकी थी। 1663 मे रेन ने अपनी जीवन दिशा बदल ली। वह एक वस्तुशिल्पी बन गया, और आज भी उसकी ख्याति लन्दन के सेण्ट पाल गिरजे के निर्माता के रूप मे ही अधिक है। रेन के घर मे आये दिन इग्लैण्ड के माने हुए वैज्ञानिक इकट्ठे हुआ करते। यही वस्तुत 'अदृश्य कुल' का सकेत-स्थान था, वही 'अदृश्य कुल' जो आगे चलकर वैज्ञानिको की रॉयल सोसाइटी बन गया।

कुछेक का विश्वास है कि विज्ञान के क्षेत्र मे रॉबर्ट बॉयल के नाम से प्रसिद्ध बहुत-कुछ कार्य—गैसो-सम्बन्धी बॉयल का नियम भी—वस्तुत हुक की ही योग्यता और करामात का नतीजा था। असल मे हुक मे कही-कही ऐसे सकेत मिलते भी है। किन्तु ईमानदारी का सेहरा बॉयल का भी कुछ कम नही ठहरता—क्योकि खुद बॉयल की ही परीक्षणशालाओ मे जिस वेकुअम पम्प का आविष्कार हुआ था बॉयल ने उसकी ईजाद का श्रेय खुलेआम हुक को ही दिया था—यद्यपि तब भी उसका नाम 'बॉयल का इजन ही था।

एक अजीब ढक की नौकरी हुक को रॉयल सोसाइटी मे मिली हुई थी, जिसके लिए तनख्वाह उसे एक पैसा भी नही मिलती थी। वह यह कि सोसाइटी के हर अधिवेशन से पहले जो भी परीक्षण दरशाने उसके सदस्यो को अभीष्ट होते उन सबका प्रबन्ध हुक के जिम्मे था। इस तजरबे से उसे काफी फायदा हुआ। एक तो युग के ज्ञान-विज्ञान की प्राय सभी शाखाओ से उसका सम्पर्क नित्य हो गया और दूसरे उसकी निजी परीक्षण-बुद्धि का विकास भी इस प्रकार स्वत सिद्ध हो गया।

रॉयल सोसाइटी के पास उन दिनो लम्बी-लम्बी चिट्ठिया आये-दिन आया करती थी जिनमे ल्यूवेनहोक की—जीवाणुओ-कीटाणुओ के जीवन की छोटी-सी दुनिया के ब्यौरे छिपे रहते। ल्यूवेनहोक के घर मे कितने ही माइक्रोस्कोप तैयार हो चुके थे—एक ही लैस वाले अद्भुत सूक्ष्मदर्शी यन्त्र, जो छोटी-छोटी चीजो को खूब बडा करके दिखा सकते थे। 400 लैस उसने बना लिए थे किन्तु वह एक भी लैस किसी भी कीमत पर, किसीको देने को तैयार न था। रॉयल सोसाइटी ने यह काम रॉबर्ट हुक के जिम्मे लगाया कि वह एक ऐसा माइक्रोस्कोप तैयार करे जिससे ल्यूवेनहोक के दावो की परीक्षा की जा सके। हुक ने दो-दो, तीन-तीन लैस मिलाकर कुछ कम्पाउण्ड माइक्रोस्कोप तैयार किए और जो कुछ उनके द्वारा प्रत्यक्ष किया उसके कोई साठ-एक रेखा-चित्र भी तैयार किए। उसकी आरम्भिक दीक्षा चित्रकला मे हुई भी थी। मक्खी की आख, डिम्ब का कायान्तर, पखो की आन्तर रचना, जूए, मक्खिया—इन सबके चित्र जो असल को कही बढा-चढाकर लेकिन 'हूबहू' पेश किए गए ताकि इन वस्तुओ के सम्बन्ध मे कुछ ज्ञान हासिल हो सके। इन अद्भुत चित्रो की प्रकाशन-व्यवस्था भी 1664 मे कर दी गई—'माइक्रोफेजिया'

के प्रामाणिक पृष्ठो मे। हुक ने माइक्रोस्कोप की रचना का सिद्धान्त तथा कार्य सार्वजनीन कर दिखाया, किन्तु इतिहास सूक्ष्मेक्षण-विज्ञान का जनक ल्यूवेनहोक को ही मानता है।

1666 मे लन्दन मे एक बडी आग फैली। इससे पहले कि आग की लपटो को काबू मे लाया जा सकता, अस्सी फीसदी शहर जलकर खाक हो चुका था। रैन को, जो अब एक प्रख्यात वास्तुशिल्पी था, लन्दन के पुन निर्माण कार्य मे हुक का मुहताज होना पडा। शहर के पुनरुद्धार की योजना, जिसका श्रेय प्राय रैन को दिया जाता है, वस्तुत हुक की कृति है। इस योजना मे परामर्श दिया गया था कि नगर को एक आयताकार रूप मे पुनर्जीवित किया जाए जिसमे गलिया और सडके एक-दूसरे को लम्ब पर काट रही हो। यह योजना स्वीकृत हो गई—किसी योजना-गत दोष के कारण नही, अपितु इसलिए कि जो मकान जलकर ढेर नही हो गए थे उनके मालिका ने खुलकर इसका विरोध किया। और नतीजा साफ था—आज भी लन्दन मे कितनी ही तग और टेढी-मेढी गलिया विद्यमान है।
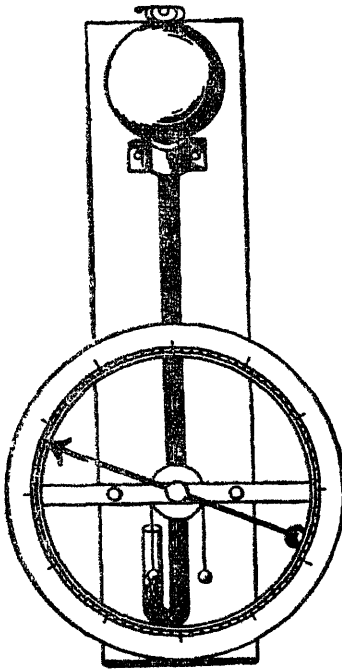
हुक का डायल बैरोमीटर

वैज्ञानिक उपकरणो के निर्माण मे हुक की दक्षता अद्‌भुत थी। दृष्टि-विज्ञान मे उसका खासा प्रवेश था, जिसका उपयोग उसने नक्षत्र-सम्बन्धी गणनाओ मे कर दिखाया—एक ऐसी क्वाड्रैण्ट बनाकर, जिसमे दूर-लोक के दृश्य भी उतर सकें और, साथ मे, उसे यथेच्छ आगे-पीछे करने के लिए कुछ स्क्रयू-एड्जस्टमेट भी हो। समुद्रयात्रा के लिए इष्ट

सर्वेक्षण की सुविधा के लिए भी उसने कुछ उपयोगी उपकरण तैयार किए—समुद्र की विभिन्न गहराइयो से पानी इकट्ठा करने के लिए, उन गहराइयो को शब्द-गति द्वारा सही-सही जानने के लिए भी। मौसम का हाल मालूम करने के लिए भी उसके अपने ईजाद किए कुछ साधन थे—वायु की गतिविधि मापने का एक गेज, डायल-पाइप बैरोमीटर और वर्षामापक तथा आर्द्रता-ज्ञापक यन्त्र। यही नही, रॉयल सोसाइटी के प्रश्रय मे उसने ऋतु-सम्बन्धी सूचनाओ के प्रकाशन की भी कुछ व्यवस्था की। ऋतु-सम्बन्धी इन पूर्व सूचनाओ का हम हुक को एक प्रकार से प्रवर्तक ही मान सकते है। सिद्धान्त की दृष्टि से हुक का विचार था कि इन ऋतु-परिवर्तनो के मूल मे सूर्य का प्रकाश-विकिरण तथा पृथ्वी की परिक्रमा—ये दो कारण ही प्रमख होते है।

अभी न्यूटन के 'प्रिंसीपिया' का प्रकाशन नही हुआ था कि किस प्रकार ये ग्रह-नक्षत्र गुरुत्वाकर्षण द्वारा एक-दूसरे को थामे हुए है। इसके कोई पाच साल पहले ही हुक का रॉयल सोसाइटी के सम्मुख एक व्याख्यान हुआ था जिससे स्पष्ट है कि गुरुता के सामान्य विश्व-व्यापक प्रभाव को वह भी कहा तक समझ सका था। इस प्रसग मे उसके शब्द अकित है कि "ये सभी ग्रह और नक्षत्र आकार मे प्राय वर्तुल हैं और इनमे प्राय सभी अपनी धुरी के गिर्द ही परिक्रमा करते हैं। यदि इनमे एक प्रकार का कुछ गुरुत्वाकर्षण परस्पर सक्रिय न होता तो ये कभी के टूट-फूटकर, गुलेल से एक बार छूट गए पत्थर की तरह नष्ट हो चुके होते।"

न्यूटन अपने गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त का प्रतिपादन दस साल पहले कर चुका था किन्तु उसके प्रकाशन की कुछ व्यवस्था नही बन सकी थी। और जब सचमुच 'प्रिंसीपिया' छपकर लोगो के सामने आ गई, हुक यह सोचकर बडा विचलित हुआ कि न्यूटन ने उसी के अनुसन्धानो को उलथा करके छाप दिया है और किंचित् भी आभार-प्रदर्शन नही किया। इस छोटी-सी घटना से विज्ञान के दोनो महान प्रवर्तको मे काफी विद्वेष एव वैमनस्य आ गया।

यह कथानक शुरू करने से पहले हमने एक वर्ण-पहेली पाठक के सम्मुख रखी थी, क्या पाठक उसका कोई समाधान निकाल सका ? प्रश्न का सही उत्तर है—'Ut tensio, sic, vis' यह लैटिन मे एक वाक्य है जिसमे हुक का 'इलैस्टिसिटी का नियम' दर्ज है। किन्तु 1676 मे हुक ने इस 'विपर्यास' का प्रयोग अपने एक वैज्ञानिक निबन्ध मे एक बिलकुल ही दूसरे अभिप्राय से किया था। अभी उसे इसकी सत्यता के पूरे प्रमाण मिल भी नही पाए थे। उसे स्वय भी अभी यकीन नही आया था कि यह नियम सचमुच सही भी है या नही। खैर, इसे प्रकाशित करने का उसका ध्येय यही था कि 'एक वैज्ञानिक स्थापना' सबसे पहले मैंने दुनिया को दी है। पुस्तक पर अकित वर्ष इस दावे मे उसके समर्थन मे एक अकाट्य प्रमाण था। लैटिन वाक्य का अनुवाद है "(धागे या स्प्रिंग का) खिचाव उसपर लगी शक्ति का समानुपाती होता है।" यह नियम देखने मे इतना सरल प्रतीत होता है कि बुद्धि को सहसा विश्वास भी नही आता। यदि एक पौंड लटका-भार रस्सी को या स्प्रिंग को एक इच तक खीच सकता है, तो दो पौंड उसे दो इच तक और दस पौंड दस इच तक खीचता जाएगा (अलबत्ता उसमे इतना भार बरदाश्त करने का

माद्दा हो)।

नियम का प्रयोग हुक ने एकदम एक स्प्रिंग बैलेन्स बनाने मे कर दिखाया। तराजू तैयार करके हुक उसे सेण्ट पाल के गिर्जे पर ले गया, और एक ज्ञात भार भी साथ लेता गया, यह दिखाने के लिए जितना अधिक हम ऊचाई पर पहुचते जाते हैं गुरुत्वाकर्पण का बल वहा उतना ही कम होता जाता है। इस वस्तुस्थिति के मूल मे जो सिद्धान्त काम कर रहा होता है वह यह है कि पृथ्वी के केन्द्र के निकटतर पडे द्रव्य पर यह आकर्षण अपेक्षया अधिक होना चाहिए, और केन्द्र से दूर कम।

स्प्रिग की गतिविधि का विश्लेषण करके, अब वह उसके आधार पर, घडिया बनाने की ओर प्रवृत्त हुआ। उन दिनो पेण्डुलम घडियो का इस्तेमाल आम था। घडी को, बस, किसी जगह पर रख दिया, कही उठाकर ले नही जा सकते। इसके अलावा, जहाजो पर इसका प्रयोग अक्सर एक समस्या हो जाता, क्योकि भूमध्यरेखा की ओर चलते हुए इसकी सूइया सुस्त पडने लग जाती, क्योकि वहा गुरुत्वाकर्षण जो कम हो जाता है इसलिए पेण्डुलम को हटाकर हुक ने उसकी जगह एक बैलेस ह्वील, और बाल-नुमा एक महीन स्प्रिग, का प्रयोग शुरू कर दिया। हुक का विचार यह था कि यह स्प्रिंग अपने केन्द्रबिन्दु के गिर्द एक ही रफ्तार से स्पन्दन करता रहेगा। किन्तु यहा भी हुक को सफलता नही निराशा ही मिली, क्योकि फ्रास मे क्रिश्चन ह्यूजेन्स इसी तरह की कुछ व्यवस्था प्रस्तुत करके उसे 1676 मे पेटेण्ट करा चुका था। हुक ने सिद्ध कर भी दिखाया कि पहले-पहल यह विचार उसीके दिमाग से निकला था ह्यूजेन्स के दिमाग से नही, किन्तु ह्यूजेन्स का पेटेण्ट फिर भी बदस्तूर चलता ही रहा। आविष्कार सचमुच हुक का था, किन्तु उसकी आगे छानबीन मे उसने और दिलचस्पी फिर नही दिखाई।

आखिर हुक रॉयल सोसाइटी का सेक्रेटरी भी बन गया। 1682 मे उसने यह नौकरी छोड दी। किन्तु विज्ञान-सम्बन्धी उसके निबन्ध उसके बाद भी सोसाइटी को बाकायदा मिलते रहे। वह अन्त तक अविवाहित ही रहा। लेकिन एक भतीजी उसके साथ ही रहा करती थी और उसके घर की देखभाल किया करती थी। 1687 मे इस भतीजी की मृत्यु हो गई और इस धक्के को वह बरदाश्त न कर सका। वह बिलकुल ही बुझ गया। 1703 मे उसकी मृत्यु के दो साल बाद उसके नोट्स प्रकाशित हुए। इन 400,000 शब्दो मे उस महान वैज्ञानिक की अभिरुचियो की व्यापकता एव परिपूर्णता प्रमाणित है।

लोकदृष्टि से हुक को कीर्ति एव सफलता शायद नही मिल सकी, किन्तु उसकी मौलिक प्रतिभा कितने ही वैज्ञानिक आविष्कारो एव सिद्धान्तो का पूर्वाभास दे गई। जब उसने पेचकस के मुह को अपनी घडी पर टिकाया और लकडी के सिरे को अपने कान पर लगाया—क्या स्टेथस्कोप की उत्पत्ति का पूर्वाभास उसमे नही आ चुका था? विज्ञान-जगत् को इसे क्रियात्मक रूप देने मे यद्यपि 150 साल और लग गए। एक कार्क को माइक्रोस्कोप से देखते हुए उसने नोट किया कि इसकी आन्तर रचना बिलकुल एक शहद के छत्ते की-सी है— जिसका वर्णन करते हुए उसने 'सेल' (घर, कोष) शब्द का प्रयोग भी किया है।

ऐसे वैज्ञानिक भी कितने ही उन दिनों थे जिनकी रुचि समाज-सेवा में भी कम नहीं थी। उनमें ही हुक भी एक था जो दिलोजान से इन्सान की ज़िन्दगी में कुछ सुविधाएं क्रियात्मक विज्ञान द्वारा लाना चाहता था। खानों में काम करनेवाले मजदूरों की और किसानों की कुछ समस्याओं का कुछ वास्तविक समाधान उसने किया भी था।

रॉबर्ट हुक की प्रतिभा बहुत अद्‌भुत थी। विज्ञान में उसकी गवेषणाओं का वही महत्त्व है जो न्यूटन, ह्यूजेन्स, और ल्यूवेनहोक के अन्वेषणों का है। किन्तु आज इतिहास उसे मुख्यतया स्प्रिंग के लचीलेपन को भांपनेवाले प्रथम वैज्ञानिक के रूप में ही स्मरण करता है कि—खिंचाव लटक रहे भार का समानुपाती होता है।
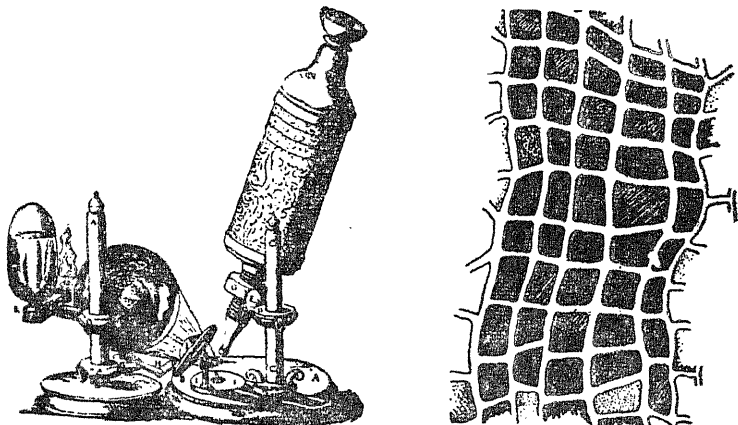
हुक का पहला सूक्ष्मदर्शक-यन्त्र, उसमें से कार्क के एक टुकड़े को देखते हुए नजर आए कुछ 'सेल'।
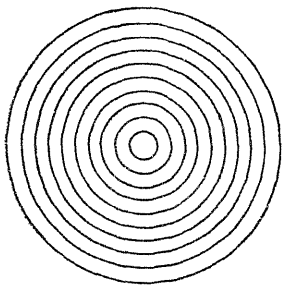
सर आइज़क न्यूटन

आइज़क न्यूटन का जन्म इंग्लैंड के एक छोटे-से गांव में, खेतों के साथ लगे एक घरौंदे में, 1642 में क्रिसमस के दिन हुआ था, मानो सचमुच वह संसार को क्रिसमस का एक उपहार हो ! एक नन्हा-सा उपहार—क्योंकि मां अक्सर बताया करती थी कि आइज़क जन्म की वेला में इतना छोटा था कि उसे क्वार्ट-साइज़ के एक बर्तन में बड़ी आसानी के साथ रखा जा सकता था। मां पहले ही विधवा हो चुकी थी, और अब यह नन्ही-सी जान नौ महीने से पहले ही पृथ्वी पर आ गई। डाक्टरों ने कह दिया कि इसके ज़्यादा जीने की उम्मीद नहीं है। किन्तु बड़ा होने पर उसकी गिनती इतिहास में इने-गिने महान वैज्ञानिकों में की जाने लगी।

गणित में, मैकेनिक्स में, गुरुत्वाकर्षण में, तथा दृष्टि-विज्ञान में न्यूटन के अन्वेषण इतने विस्तृत और इतने मौलिक हैं कि उनमें से कोई भी उसके आविष्कर्ता को इतिहास में अमर कर जाने को पर्याप्त है, भले ही उसने सारे जीवन में और कुछ भी न किया होता।

मां ने जब पुनर्विवाह कर लिया अभी वह दो बरस का ही था, तो बालक आइज़क को परवरिश के लिए उसकी दादी के यहां भेज दिया गया। बचपन में उसने कुछ भी चीकने पात नहीं दिखाए कि वह कोई अद्‌भुत प्रतिभा लेकर अवतरित हुआ है। हां, अल-बत्ता सच यह है कि वह तब भी कुछ न कुछ अपने हाथों खुद करता ही रहा करता था। हवाई चक्की का एक छोटा-सा मॉडल उसने तैयार किया था जो कि सचमुच चलता भी था, पानी से चलनेवाली घड़ियां, और पत्थर की सिल पर एक सूर्य-घड़ी, जो आजकल रॉयल सोसाइटी लन्दन की सम्पत्ति बन चुकी है। उसे शौक था दिन-रात पढ़ते रहने का, रेखाचित्रों की नकल उतारने का, फूल और जड़ी-बूटियों का इकटठा करने का।

14 साल का होते ही आइज़क को फिर से अपनी मा के पास ले आया गया, वह फिर विधवा हो गई थी और उसे फार्म सभालने के लिए एक सहायक की ज़रूरत भी थी। किन्तु कृषि के इन कामो के लिए युवा न्यूटन बिलकुल अयोग्य सिद्ध हुआ। उसे इन कामो मे कोई अभिरुचि नही थी, उलटे वह कुछ न कुछ पढता ही पाया जाता या फिर दिवा-स्वप्नो में, या लकडी के मॉडल बनाने मे, दुनिया की सुध से बेबहरा। मा भी आखिर मान गई कि उसे कालिज मे दाखिले के लिए तैयार करना चाहिए। 18 वर्ष की आयु मे न्यूटन, तदनुसार, कैम्ब्रिज मे पढने के लिए दाखिल हुआ—विश्वविद्यालय के ट्रिनिटी कालिज मे उसका वेदारम्भ हुआ।

कैम्ब्रिज मे चार साल बिताने के बाद 1665 मे उसे बी० ए० की उपाधि मिली। कैम्ब्रिज मे पढते हुए ही उसकी अपने गणित के प्राध्यापक आइज़क बैरो से मित्रता हो गई। बैरो पहचान गया कि न्यूटन असाधारण प्रतिभा लेकर आया है। उसने उसे प्रोत्सा-हित भी किया कि वह गणित मे ही अपनी योग्यता को विकसित करे।

इग्लैड मे उन दिनो ब्यूबॉनिक प्लेग की महामारी का आतक था। आबादी का दसवा हिस्सा साफ हो चुका था। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय मे छुट्टिया घोषित कर दी गईं और विद्यार्थी अपने-अपने घरो को चल दिए। न्यूटन भी अपनी मा के पास लौट आया और, प्राय डेढ साल तक अपने जन्म-गृह, उस फार्म हाउस, मे ही रहा, जब तक कि कैम्ब्रिज मे फिर से पढाइया शुरू नही हो गईं।

खेतो पर गुज़ारे ये 18 महीने विज्ञान के इतिहास मे शायद बहुत ही महत्त्व के दिन थे, क्योकि इन्ही दिनो न्यूटन ने मैकेनिक्स के मौलिक सिद्धान्त ज्ञात किए, और उनका प्रयोग ग्रह-मण्डल की गतिविधि मे भी उसी प्रकार कर दिखाया, गुरुत्वाकर्षण के मूल का अवगमन किया, डिफरेन्शल तथा इण्टैग्रल कैल्क्युलस का आविष्कार किया, और दृष्टि-विषयक अपने प्रसिद्ध नियमो का अनुसन्धान किया। शेष जीवन अपना उसने इन्ही नियमो की व्याख्या मे, उनके पल्लवीकरण मे तथा क्रियात्मक प्रयोगो मे गुजारा। किन्तु बौद्धिक सर्जन को उसकी वैज्ञानिक वृत्ति इन्ही अट्ठारह महीनो मे प्रदर्शित कर चुकी थी जबकि वह अपनी उम्र के 23वें-24वें साल मे से गुज़र रहा था।

किन्तु अपने इन विलक्षण अनुसन्धानो व अन्वेषणो को उसने एकदम प्रकाशित नही कर दिया। चुप रहने की यह उसकी कुछ तबियत ही बन चुकी थी जिसके कारण तमाम ज़िन्दगी उसे किसी न किसी झमेले या वाद-विवाद मे उलझे ही रहना पडा।

1667 मे जब कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय फिर से खुला न्यूटन को पढाने का वहा कुछ थोडा-सा काम मिल गया। यहा उसने आशातीत उन्नति की, क्योकि 26 बरस की उम्र मे वह अपने गुरु एव अभिभावक आइज़क बैरो का उत्तराधिकारी एव गणित का प्रोफेसर नियुक्त हो चुका था।

बडे अरसे से न्यूटन प्रकाश के सम्बन्ध मे काफी व्यापक पैमाने पर परीक्षण करता आ रहा था। उसने कुछ टेलिस्कोप भी तैयार किए थे, और वह अपने इस सब कामकाज से असन्तुष्ट था कि उसके बनाए ये उपकरण भी जो छाया दूर-लोक की उतारते थे, समकालीन अन्य दूरवीक्षण यन्त्रो की भाति, उनके किनारो मे भी कुछ न कुछ रगीनी-सी आ ही जाती

थी। ऐसा क्यों ? और इसी समस्या का समाधान निकालने के लिए उसने प्रकाश की वृत्ति का किंचित् सूक्ष्म अध्ययन किया। एक त्रिभुजाकार प्रिज़्म पर सूर्य की किरणें डालीं। कमरा बन्द करके खिड़की में एक छेद में से ही ये किरणें अन्दर प्रवेश पातीं। उसने देखा कि किस प्रकार वह श्वेत किरण फटकर दूसरी ओर दीवार पर एक सुन्दर सतरंगिनी बन जाती है। सातों रंगों में भी एक निश्चित क्रम था—लाल, नारंगी, पीला, हरा, नीला, जामुनी और बैंगनी।

अब उसने ऐसा किया कि सिर्फ एक ही रंग—मान लो, बैंगनी, दीवार पर पड़े, बाकी रंग आगे न आने पाएं। यह बैंगनी रंग की किरण अब, एक-दूसरे प्रिज़्म में से गुज़ारी गई : न्यूटन ने देखा कि इस बैंगनी किरण की दिशा तो कुछ बदल जाती है किन्तु प्रिज़्म में से दोबारा गुज़रने पर उसके रंग में फर्क नहीं आता, वह अब भी बैंगनी ही रहती है। यही परीक्षण उसने हर रंग से बार-बार करके देखा। सफेद किरण से एक बार विभक्त होकर ये रंग और आगे अब, नहीं फटते थे। हां, दोबारा प्रिज़्म में से गुज़ारने पर हर रंग की दिशा में एक विशेष और अलग ही अन्तर आ जाता है। न्यूटन का निष्कर्ष बड़ा सरल, यद्यपि आश्चर्यकारी था कि सूर्य की श्वेत किरण वस्तुतः सातों रंगों का एक समास है। प्रिज़्म का शीशा इन सातों को अलग-अलग दिशान्तरण दे देता है, जिससे ये अलग-अलग फट जाते हैं।
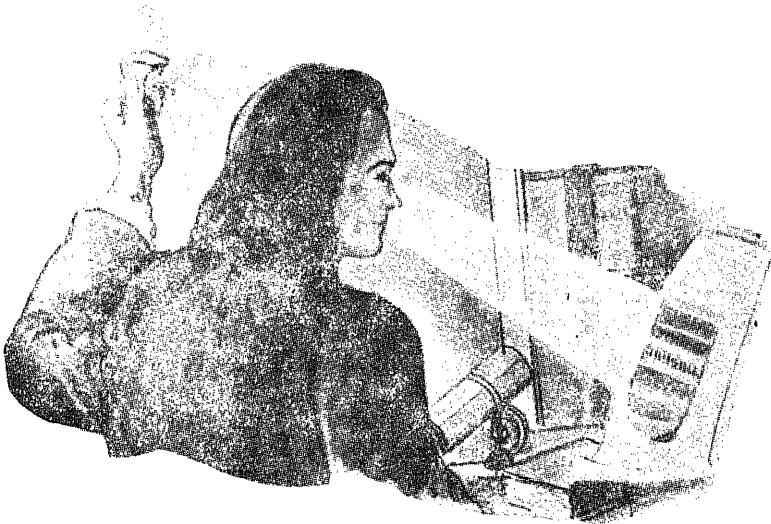
इन परीक्षणों के आधार पर न्यूटन इस परिणाम पर पहुंचा कि ऐसा लेन्स बना सकना असंभव है जिसमें कि रंगीनी की यह झालर-सी ज़रा भी न आए। उसने सोचा कि यदि लेन्सों का प्रयोग ही न किया जाए, तो ? और एक रिफ्लैक्टिंग टेलिस्कोप ईजाद किया गया—जिसमें तारों की रोशनी को एक बिन्दु पर केन्द्रित करने के लिए धातु-विनिर्मित,

प्याले की शक्ल का, एक दर्पण इस्तेमाल किया जाता है। क्योंकि इस किस्म के टेलिस्कोप मे रोशनी को शीशे मे से गुजरना ही नही पडता—किरण के अशो को अलग-अलग दिशा ग्रहण नही करनी पडती और इसीलिए वह वर्ण-व्यामिश्रण भी अब नही होता। हैरानी तो इस बात पर होती है कि ऐसे लेन्स तैयार करने मे जिनमे कि यह रगीनी का स्पर्श आए ही नही, वैज्ञानिको को एक सदी और लग गई। अलग-अलग किस्म के शीशो को मिलाकर बनाए गए लेन्सो मे आजकल वह पुराना वर्ण-स्पर्श नही आता।

अपने बनाए टेलिस्कोप की सारी आन्तर रचना न्यूटन ने खुद अपने हाथो ही की थी। न्यूटन के दर्पण का व्यास लगभग एक इच था, जबकि माउण्ट पैलोमार की कैलीफोर्निया इस्टीट्यूट आफ टेक्नालोजी की वेधशाला मे एक रिफ्लैक्टिंग मिरर का व्यास लगभग 17 फुट है।

न्यूटन का परावर्ती दूरदर्शक यन्त्र

दृष्टि-विज्ञान के सम्बन्ध मे उसके अनुसन्धानो की ओर यही न्यूटन के प्रथम वैज्ञानिक निबन्ध का विषय था, विद्वज्जगत् ने आलोचना भी कम नही की थी और प्रशसा भी कम नही। न्यूटन को अपनी स्थापनाओ के प्रतिपादन मे उस युग के योग्यतम वैज्ञानिको, क्रिश्चन ह्यूजेन्स, रॉबर्ट हुक इत्यादि के आक्षेपो का प्रतिवाद करना पडा था। इन वाद-विवादो के प्रसग से ही विज्ञान की प्रणाली के सम्बन्ध मे एक नूतन दिशा-सकेत देने का अवसर उसे मिला था कि "विज्ञान मे कुछ भी कार्य करने का सबसे अच्छा, सुरक्षिततम

तरीका यही हो सकता है कि पहले तो वस्तुओ के गुणो का अन्तर-वीक्षण मनोयोग के साथ किया जाए और फिर इन गुणो को परीक्षण द्वारा समर्थित करते हुए उनकी व्याख्या मे धीरे-धीरे कुछ उपयुक्त स्थापनाए उपस्थित की जाए।"

तब न्यूटन की आयु मुश्किल से 30 ही पार कर पाई थी, किन्तु विज्ञान-जगत् मे उसकी प्रतिष्ठा एक समीक्षात्मक एव परीक्षात्मक वैज्ञानिक के रूप मे स्थायी हो चुकी थी। आलोचको के प्रत्याख्यान से वह खिन्न हो चुका था, सो उसने निश्चय कर लिया कि अपनी और गवेषणाओ को वह अब प्रकाशित नही करेगा। वैज्ञानिक अनुसन्धान मे और नई स्थापनाओ मे तो वह पूर्ववत् अब भी लगा रहा, और विश्वविद्यालय का प्रतिनिधित्व पार्लियामेट मे करने के लिए भी उसके पास समय निकल आता था।

1684 मे विश्व-विश्रुत नक्षत्रविद् एडमण्ड हैली ग्रहो की गतिविधि के सम्बन्ध मे केपलर के सिद्धान्तो पर विचार-विनिमय के लिए न्यूटन के पास आया। इस परस्पर दानादान का परिणाम यह हुआ कि हैली को भी पता चल गया कि न्यूटन सभी भौतिक सिद्धान्तो के मूलभूत सिद्धान्त—ब्रह्माण्ड-व्यापी सामान्य गुरुत्वाकर्षण के अगाग की स्थापना कर चुका है। हैली ने न्यूटन को प्रेरित किया कि इन अन्वेषणो को प्रकाश मे लाना चाहिए और न्यूटन को कोई फालतू कठिनाई न हो इसलिए (यद्यपि हैली खुद कोई अमीर आदमी नही था) वह यह भी मान गया कि मुद्रण का सारा खर्चा वही उठाएगा।

परिणाम—'फिलासोफियाए नेचरलिस प्रिंसीपिया मैथमेटिका' का प्रकाशन तीन खडो मे, युग की वैज्ञानिक भाषा लैटिन मे, प्रस्तुत हुआ, जिसका अनुवाद कुछ-कुछ य् हो सकता है—'विज्ञान के गणनात्मक सिद्धान्त।' प्रिंसीपिया—विश्व के इतिहास मे एक प्रस्थानबिन्दु, 'प्रिंसीपिया'—का प्रतिपाद्य यह है कि गति मात्र—वह गति धरती पर हो, आकाश मे ही कही हो—एक ही नियम-शृखला मे बद्ध है, एक ही नियम मे अनुस्यूत है।

न्यूटन के गति के नियमो की रूपरेखा 'प्रिंसीपिया' मे प्रस्तुत है। पहला नियम है अचल स्थिति मे पडी कोई वस्तु अचल ही पडी रहेगी जब तक कि उसकी उस स्थिति को बलात् परिवर्तित नही कर दिया जाता, और गति की स्थित मे प्रवर्तमान कोई भी वस्तु उसी गति से निरन्तर चलती ही रहेगी जब तक कि उसकी उसी स्थिति मे कोई बलात् परिवर्तन नही ले आया जाता। न्यूटन ने अनुभव किया कि किसी भी वस्तु को चलायमान करने के लिए वह वस्तु चाहे वृक्ष से गिरता कोई फल हो या समुद्र मे आया ज्वार हो, स्थिति परिवर्तन के लिए—शक्ति की, बल की, आवश्यकता होती है। ज़रा सोचिये—जिस गाडी मे हम यात्रा कर रहे है, सहसा रुक जाए तो क्या होगा? क्योकि हमारे शरीर मे तो अभी वही गति है, हम नही रुक सकेगे (अगर हमारा सिर सामने की सीट मे से एकदम टकरा नही जाता)। इन तथ्यो का प्रत्यक्ष तो लोग पहले भी करते आए थे किन्तु न्यूटन ने उन्हे, गणित के नियमो के अनुसार, एक 'सूत्र' का रूप दे दिया।

गति के दूसरे नियम मे यह प्रतिपादित किया गया है कि—गति मे परिवर्तन किस कदर आ रहा है, यदि हमे यह पता चल जाए तो, हम उस परिवर्तन के लिए वाछित शक्ति का परिमाण भी जान सकते है। गति मे परिवर्तन की इस नियमितता को विज्ञान मे आरोहावरोह (एक्सिलरेशन) कहते हैं—जिसका अर्थ गति मे घटती, बढती, दोनो,

हो सकती है। उदाहरण के तौर पर एक मोटरगाड़ी को 25 मील फी घंटा की रफ्तार पर लाने के लिए ज़्यादा ताकत की ज़रूरत होती है बजाय उसी गाड़ी को उतने ही वक्त में शून्य से 15 मील फी घण्टा की रफ्तार में ले आने के लिए।

दूसरे नियम का एक और निष्कर्ष यह भी निकलता है कि 60 मील प्रति घण्टा की रफ्तार से चली जा रही एक मोटर को दस सैकण्ड के अन्दर-अन्दर रोकने के लिए वही ताकत आवश्यक है जो 30 मील की रफ्तार से चली जा रही उसी गाड़ी को 5 सैकण्ड में रोकने के लिए अपेक्षित होगी।

गति का तीसरा नियम यह है कि हर भौतिक क्रिया की 'प्रतिक्रिया' अवश्यम्भावी है और यह प्रतिक्रिया जहां परिमाण में 'क्रिया' के तुल्य होगी वहां दिशा में उसकी विरोधी भी होगी। इस एक नियम के कितने ही उपयोग हैं जिनमें सबसे अद्‌भुत संभवतः रॉकेटों की उड़ान में प्रत्यक्ष होता है: उधर, गरमागरम गैसें पीछे की ओर निकलनी शुरू होती हैं और, इधर, रॉकेट आगे की ओर चलना शुरू कर देता है। या फिर—अपने बगीचे में छिड़काव करते हुए शाम को देखें कि किस तरह, जैसे-जैसे पानी नॉज़ल से बाहर की ओर निकलता है, नॉज़ल खुद चक्कर करता हुआ पीछे की ओर जा रहा होता है।

और अकेला गुरुत्वाकर्षण का व्यापक नियम शायद इन सब सिद्धान्तों से कहीं अधिक आश्चर्यकारी था। न्यूटन ने इसमें प्रतिपादित किया कि पृथ्वी का हर कण हर दूसरे कण के साथ, जैसे एक खिंचाव के द्वारा, बंधा हुआ है। धरती जहां पेड़ पर लदे फल को अपनी ओर खींचती है, वहां फल भी धरती को अपनी ओर खींच रहा होता है। यह नियम ग्रह-नक्षत्रों पर भी उसी तरह लागू होता है: सूर्य पृथ्वी को अपनी ओर खींचता है, पृथ्वी चन्द्रमा को और चन्द्रमा पृथ्वी को। गणित के एक सूत्र में यही बात प्रस्तुत करनी हो, तो—दो वस्तुओं का यह परस्पर आकर्षण दो बातों पर निर्भर करता है: एक तो इसपर कि दोनों चीज़ें कितनी भारी हैं, और दूसरे इसपर कि उनमें निकटता व दूरी कितनी है।

'प्रिंसीपिया' के दूसरे भाग में प्रथम भाग की कल्पनाओं को पल्लवित भी किया गया है और कुछ नये विचार—गति के अवरोध के सम्बन्ध में—भी आए हैं। यहां, उदाहरणतया, न्यूटन ने सुझाया है कि समुद्र में जहाज़ बिना किसी प्रकार की रुकावट के चुपचाप चलता चल सके इसके लिए उसकी शक्ल कैसी होनी चाहिए। पुस्तक के इसी भाग में तरंगों की गति का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत हुआ है जिसका समर्थन आधुनिक विज्ञान अक्षरशः कर चुका है, क्योंकि आज के युग में, भौतिकी को, उसकी आवश्यकता बहुत अधिक है।

ग्रन्थ के तीसरे भाग को मानवबुद्धि का एक महान चमत्कार माना जाता है। पृथ्वी पर प्रत्यक्षित वस्तुओं की गतिविधि के अध्ययन द्वारा न्यूटन गति तथा गुरुत्वाकर्षण के मौलिक सिद्धान्तों पर पहुंचा और दोनों ही नियमों को सूर्य की परिक्रमा कर रहे सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पर अभिव्याप्त देख गया: इन्हींके द्वारा सूर्य तथा पृथ्वी के परिमाण तक को सदा के लिए माप-तोल कर रख गया! गणित के आधार पर वह यह भी दरशा गया है कि ध्रुवों पर धरती चपटी क्यों होती है, और भूमध्यरेखा पर उभरी हुई क्यों?

चन्द्रमा के परिक्रमण मार्ग में ये अनियमितताएं क्यों आती हैं ? क्योंकि सूर्य का भारी-भरकम परिमाण उसे निरन्तर अपनी ओर खींच रहा होता है। सूर्य और चन्द्रमा, दोनों, समुद्रों को अपनी-अपनी ओर आकृष्ट करते हैं—इन ज्वार-भाटों की गणना भी गणित के दो-एक सरल नियमों द्वारा की जा सकती है।

दो वस्तुओं में परस्पर आकर्षण कितना होता है—न्यूटन का गणित सही-सही बता सकता था। किन्तु इस गुरुत्वाकर्षण का कारण क्या होता है ? इस प्रश्न पर वह कुछ भी सुनने को तैयार नहीं था। "हमारे लिए बस, इतना जान लेना ही पर्याप्त है कि गुरुत्वाकर्षण कुछ है जो हमारे निर्दिष्ट इन 'नियमों' के अनुसार सक्रिय होता है और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की, समुद्रों की, गतिविधि की व्याख्या करने के लिए पर्याप्त है।"

वैज्ञानिक के तौर पर—न्यूटन की ख्याति का मुख्य आधार उस युग में 'प्रिंसीपिया' थी यद्यपि कुछ और निबन्ध भी उसने लिखे, विशेषतः दृष्टि-विज्ञान के सम्बन्ध में और प्रकाश के सम्बन्ध में तथा कैल्क्युलस का आविष्कार भी किया।

1699 में उसे टकसाल का 'मास्टर' बना दिया गया और उसके पर्यवेक्षण में सिक्कों की बनावट में कुछ सुधार किए गए ताकि उनकी नकल अब न की जा सके। 1703 में उसे रॉयल सोसाइटी का प्रेज़िडेण्ट चुना गया जहां वह मरने तक कायम रहा। 1705 में महारानी ऐनी ने उसे सर की उपाधि प्रदान की।

1727 में सर आइज़क की मृत्यु हुई। तब उसकी आयु 85 वर्ष थी। वैस्ट-मिन्स्टर ऐबे में उसकी अंत्येष्टि सम्पन्न हुई। युगों में ऐसी प्रतिभा कभी-कभी जन्म लेती हैं। किन्तु उसने स्वयं अपने पूर्वाचार्यों का ऋण स्वीकार करते हुए कहा था, "अगर मैं कुछ भी आगे देख सका हूं तो वह दिग्गजों के कन्धों पर खड़े होकर ही।"
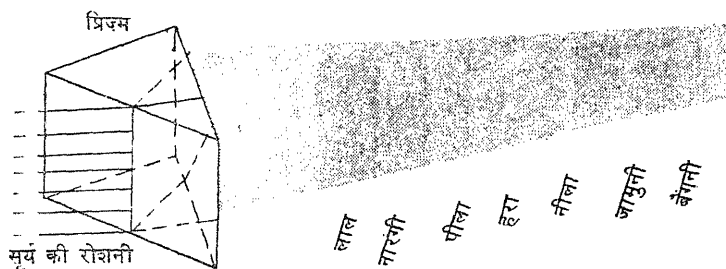
शीशे के प्रिज़्म में से फटकर सूर्य की सफेद किरण एक सतरंगिनी को जन्म दे जाती है।
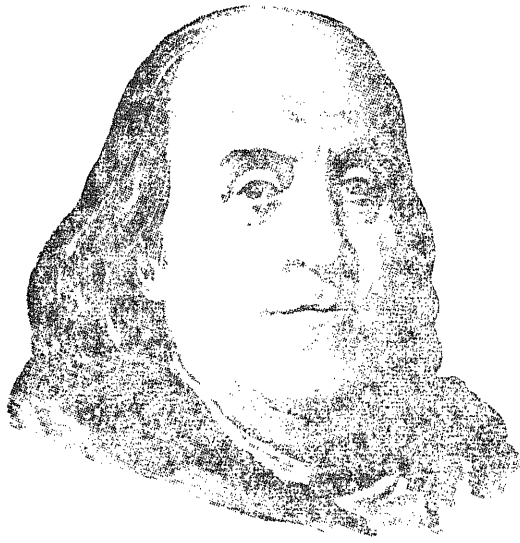
बेंजामिन फ्रैंकलिन

"डैब्बी", पत्नी को सम्बोधित करते हुए बेंजामिल फ्रैंकलिन ने कहा, "कभी-कभी सोचता हूं परमात्मा ने ये दिन हमारे लिए यदि दुगुने लम्बे बनाए होते, तभी मैं वास्तव में कुछ काम की चीज़ दे जा सकता।"

वास्तव में कुछ काम की चीज दे जा सकता ?—बेंजामिन फ्रैंकलिन की दुनिया को कितनी ही देनें हैं, और सभी एक से एक बढ़कर—राष्ट्रीयजीवन में भी, अन्तर्राष्ट्रीय जीवन में भी : विज्ञान में, आविष्कारों में, शिक्षा में, साहित्य में, प्रकाशन-व्यवस्था में, सामाजिक सेवा में, तथा अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में। कुछ कल्पना कर सकना मुश्किल है कि, यदि दिन सचमुच दुगुने या तिगुने बड़े होते तो, वह और क्या-कुछ कर जाता ?

बेन फ्रैंकलिन का जन्म मैसेचुसेट्स कॉलोनी के बोस्टन शहर में, 17 जनवरी, 1706 को हुआ था। 15 भाई-बहिन उससे पहले पैदा हो चुके थे ; और कुल मिलाकर परिवार में 17 बच्चे थे। बाप का पेशा था मोमबत्तियां बनाना। काम तो बड़ा महत्त्वपूर्ण था, किन्तु उसीपर गुज़र कर सकना कोई आसान नहीं था।

बेन ने अपनी पढ़ाई-लिखाई खुद शुरू कर दी, और आठ वर्ष का होते ही स्कूल दाखिल हो गया। किन्तु स्कूल की यह पढ़ाई भी उसकी दो साल बाद बन्द कर दी गई। उन दिनों शिक्षा मुफ्त नहीं हुआ करती थी। बाप के पास इतना पैसा था नहीं, सो बेन को भी स्कूल से उठाकर दूकान में डाल दिया गया कि वह भी मोमबत्तियां बनाया करे। किन्तु बेन को चैन नहीं था। वह हमेशा बोस्टन बन्दरगाह की ओर देखता रहता और कहता कि मैं समुद्र जाऊंगा। बाप को यह सुनकर डर लगने लगा और उसने जेम्स से कहा कि बेन को छापाखाने का काम सिखाया जाए। जेम्स बेन से कुछ बड़ा था और वह एक साप्ताहिक पत्र प्रकाशित किया करता था—'दि न्यू इंग्लैंड कूरैण्ट।' यहां आकर

अलबत्ता, 12 साल के बालक को कुछ शान्ति मिली और वह टाइप सेट करना, और प्रेस की मशीनो को चालू करना सीख गया ।

फ्रैंकलिन को शिक्षा ग्रहण करने का शौक था। जो कुछ हाथ मे आया आद्योपान्त पढ डाला, यहा तक कि कोई किताब खरीदने के लिए एक-दो वक्त रोटी भी छोडनी पडे तो कोई बात नही। और इसी तरह करते-करते वह गणित, बीजगणित ज्यामिति, नौचालन, व्याकरण तथा तर्क-सिद्धान्त मे प्रवेश पा गया। यही नही, उसने लेखन कला पर भी अच्छा अधिकार प्राप्त कर लिया। मरने पर जब उसकी आत्मकथा छपी, अमरीका के साहित्य मे उसका स्थान उसी क्षण से स्थायी बन गया।

बेंजामिन के मन मे समा गया कि उसके लेख 'दि न्यू इग्लैंड कूरैण्ट' मे भी छपने चाहिए, किन्तु भाई को विश्वास नही आया कि बेन सचमुच एक लेखक भी बन सकता है। बेन ने नाम बदल लिया और मिसेज साइलैन्स डॉगवुड के नाम से लेख भेजने शुरू कर दिए। आखिर जब जेम्स को पता लग गया इन लेखो का लेखक कौन था, उसे अपने पर काबू न रह सका—और बेन के लिए भी जीना उसने दुश्वार कर दिया। फ्रैंकलिन ने भी निश्चय कर लिया कि अब वक्त अपने पैरो पर खडा होने का आ गया है। वह 18 का हो चुका था। घर छोड वह फिलाडेल्फिया चला गया।

फिलाडेल्फिया मे पहुचते ही लोगो को पता लग गया कि वह प्रिंटिंग मे किस कदर माहिर है, सभीने उसे नौकरी पेश की। किन्तु उसका अपना ख्याल अपना स्वतत्र छापाखाना चालू करने का था। कॉलोनियो मे तब छापेखाने की मशीनरी बनाने का कोई प्रबन्ध नही था। खैर, पेनसिल्वेनिया की कॉलौनी के गवर्नर सर विलियम कीथ ने उसे आर्थिक सहायता का वचन दिया और वह प्रिंटिंग प्रेस चुनने के लिए इग्लैंड के लिए जहाज पर सवार हो गया।

किन्तु वायदे की वह रकम पहुची नही, कुछ बात हो गई थी; सो, बेंजामिन डेढ साल इग्लैंड मे ही किसी न किसी काम मे लगा रहा कि रकम इकट्ठी हो सके। उधर फिलाडेल्फिया मे जब उसकी कोई खबर देर तक न पहुची तो प्रेयसी डेबोरा रीड ने एक और शख्स से शादी कर ली। किन्तु कुछ वर्ष पश्चात्, जब उसका प्रथम पति लापता हो गया बेंजामिन और डेबोरा विधिवत् पति-पत्नी बन गए। उनके तीन बच्चे हुए।

फिलाडेल्फिया लौटकर उसने 'पेनसिल्वेनिया गजेट' की स्थापना की। इसके अतिरिक्त एक वार्षिक प्रकाशन 'पुअर रिचर्ड्'स आल्मेनैक' भी उसके यहा से प्रकाशित होता था, जिसमे सूर्योदय, सूर्यास्त, चान्द्रतिथियो, मौसम की खबरो और धार्मिक छुट्टियो वगैरह का पूरा-पूरा ब्यौरा हुआ करता था। ('आल्मेनैक' का अर्थ होता है—जत्री।) यही नही, जत्री मे कुछ 'नीति के दोहे' वगैरह भी दर्ज होते थे—ईमानदारी, कार्यकुशलता, मितव्ययिता, देशभक्ति आदि पर छोटे-छोटे वाक्य, जिनमे कुछ तो आज भी सजीव है

परमेश्वर उन्हीकी सहायता करता है जो खुद परिश्रमी होते है।

जल्दी सोना और जल्दी ही जग उठना—स्वास्थ्य, सपद्, और बुद्धिमत्ता की कुजी यही है।

जो कुछ आज कर सकते हो कल पर कभी मत छोडो।

42 बरस की उम्र तक पहुचते-पहुचते बेंजामिन काफी पैसा कमा चुका था। अब उसे काम-धन्धे मे जुते रहने की ज़रूरत नही थी, मुक्त होकर वह अब समाज-सेवा मे और वैज्ञानिक अनुसन्धान मे लग सकता था। छपाई वगैरह के काम मे लगे रहने पर भी उसकी प्रवृत्ति इधर सक्रिय हो चुकी थी।

21 साल की आयु मे उसने फिलाडेल्फिया के मिस्त्रियो और व्यापारियो मे वाद-विवाद सस्था जैसी एक सस्था स्थापित भी कर दी थी। किन्तु इस मण्डल की गतिविधि फिलाडेल्फिया तक ही सीमित नही रही, फैलता-फैलता आखिर वह 'अमरीकन फिलो-सॉफिकल सोसाइटी' मे परिणत हो गया। उपनिवेशो के सभी प्रबुद्ध विद्वान् इस सोसाइटी के सदस्य थे। इन्होने ही 'कमिटी आफ सीक्रेट कारस्पाण्डेन्स' नामक कुछ समितिया स्थापित की थी, जिनके द्वारा ही कभी 'स्वतन्त्रता के घोषणापत्र' तथा 'अमरीका की क्रान्ति' की आधार-शिला पडी थी। अमरीकन फिलोसॉफिकल सोसाइटी का वह कार्यालय आज भी फिलाडेल्फिया मे स्थित है।

1753 मे बेंजामिन फ्रैंकलिन को कॉलोनियो का पोस्टमास्टर जनरल नियुक्त कर दिया गया। फ्रैंकलिन मे योग्यता भी थी, शक्ति भी थी—नये ओहदे को सभालते ही उसने कॉलोनियो मे डाक के आवागमन को सुधारना शुरू कर दिया। यही नही, इससे डाकखाने को अब कुछ कमाई भी होने लगी। 1847 मे जब अमरीका मे पहली-पहली टिकटें चली, तो उनपर बेंजामिन फ्रैंकलिन का ही चित्र अकित था—डाक के महकमे मे उसकी सेवाओ के प्रति राष्ट्र की यह एक श्रद्धाजलि थी।

25 साल की उम्र मे बेंजामिन ने अमरीका की पहली चलती-फिरती लाइब्रेरी प्रवर्तित की। उसे अपने बचपन के दिन याद थे जब एक किताब खरीदने के लिए उसे कई बार उपवास तक करना पडता था। फिलाडेल्फिया मे आग बुझाने के लिए एक महकमा भी उसने खोल दिया, और अग्नि-पीडितो को और मुश्किले पेश न आए इसलिए अमरीका की पहली आग-बीमा कम्पनी भी उसने चालू कर दी। पेनसिल्वेनिया एकेडमी की स्थापना मे भी उसका हाथ था, और यही एकेडमी आगे चलकर पेनसिल्वेनिया विश्वविद्यालय बन गई। कॉलोनियो मे फिलाडेल्फिया की जो कुछ समृद्धि व प्रतिष्ठा थी वह बहुत कुछ बेंजामिन की महिमा एव प्रभाव के कारण ही थी। और वह विज्ञान मे भी एक महान् विभूति माना जाता है।

फ्रैंकलिन का विज्ञान-कार्य उसके 38वे वर्ष से शुरू होता है। इससे पहले उसकी कीर्ति व्यापार और समाज-सेवा के क्षेत्रो मे स्थिर हो चुकी थी। विज्ञान मे उसका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य 'इलैक्ट्रोस्टैटिक्स'—स्थिति की अवस्था मे विद्युत् की प्रवृत्ति—के क्षेत्र मे है।

आज सभी जानते हैं कि किस प्रकार उसने विद्युत् से प्रभावित तूफान पतग उडाई थी और सिद्ध कर दिखाया था कि यह कृत्रिम-विद्युत् और आकाश की प्राकृतिक बिजली, दोनों एक ही वस्तु हैं। अमरीका मे यह कथा एक सर्वाधिक लोकप्रिय कथा है किन्तु अन्य उपाख्यानो की भाति यह कथा झूठ नही, सच है। बेंजामिन ने इसे उन दिनों साइण्टिफिक

जर्नल में प्रकाशित किया था और दुनिया-भर के वैज्ञानिकों ने तभी खुद इस परीक्षण की आवृत्ति अपने-अपने यहां की भी थी।

फ्रैंकलिन का इलैक्ट्रोस्टैटिक्स सम्बन्धी नियम एक बहुत ही सरल सिद्धान्त है जो आज तक वैसा ही अपने मूल, अपरिवर्तित रूप में विज्ञान-जगत् को ग्राह्य चला आता है। उसका कहना था कि—सभी प्रश्नों के निर्माण में दो तत्त्व काम में आते हैं—'पृथ्वी' तत्त्व तथा 'विद्युत्' तत्त्व। 'शून्य' (सामान्य) अवस्था में हर वस्तु में विद्युत् एक अन्तर्-द्रववत् अभिव्याप्त रहती है—किन्तु वस्तुओं में इस विद्युत्-तत्त्व में घटती-बढ़ती आ सकती है। विद्युत् अंश में यह कमी-बेशी आते ही वस्तु में एक प्रकार का आवेश आ जाता है, एक प्रकार की विद्युन्मयता-सी आ जाती है।

आसमानी बिजली के साथ फ्रैंकलिन का परीक्षण

विद्युन्मयता बढ़ने का अर्थ होता है कि वस्तु का आवेश अब शून्य नहीं रहा, योगात्मक हो गया है; और विद्युन्मयता घट जाने का अर्थ होता है—आवेश में ऋणात्मकता।

आजकल की परिभाषा में शायद हम यह कहना अधिक पसन्द करें कि हर वस्तु प्रोटॉन्स तथा इलेक्ट्रॉन्स के व्यामिश्रण का परिणाम होती है : आवेश-शून्य वस्तु में ये

इलेक्ट्रान और प्रोटॉन समान सख्या मे होते है। किन्तु मूल दृष्टि दोनो सिद्धान्तो की एक ही है।

फ्रैकलिन ने इस सिद्धान्त के समर्थन मे कुछ परीक्षण आविष्कृत किए। शीशे की एक छड को जब हम रेशम के रूमाल पर रगडते है तो छड मे पाज़िटिव चार्ज भर जाता है और रेशम मे नेगेटिव। कितने ही वैज्ञानिको का विचार था कि रगड से बिजली पैदा हो जाती है। फ्रैकलिन की स्थापना यह थी, और यही युक्तियुक्त स्थापना भी थी कि विद्युत् की उत्पत्ति नही होती—'वैद्युत द्रव' केवल रेशम से निकलकर शीशे मे चला गया है।

'वैद्युत द्रव के सचार' के सम्बन्ध मे फ्रैकलिन ने जो परीक्षण किए, मूल सिद्धान्त की पुष्टि मे उनसे कुछ नाटकीयता-सी भी आ जाती थी। उसने दो स्टूल लिए और दो आदमियो को उनपर अलग-अलग बिठा दिया—ज़मीन पर शीशा बिछा दिया, एक मे धनात्मक बिजली भर दी गई और दूसरे मे ऋणात्मक—अर्थात् एक मे विद्युत् का यह आवेश जितना ही अधिक था, दूसरे मे उतना ही कम था। जब दोनो ने हाथ मिलाया, दोनो का ही आवेश जाता रहा और परिणामत दोनो ने महसूस किया, जैसे, उन्हे अकस्मात् कोई धक्का लग गया हो। इस प्रकार 'वैद्युत सचरण' द्वारा एक की कसर दूसरे ने पूरी कर दी। अब, यदि कोई आवेशरहित व्यक्ति भी इनमे किसीको छू देता, धक्का उसे लगता ही—क्योकि शून्यावस्था, जहा धनावस्था से कुछ कम आवेशमय होती है, वहा वह ऋणावस्था से उसी कदर कुछ ज्यादा आवेशमय भी तो हुआ करती है।

फ्रैकलिन के विद्युत्-सम्बन्धी अध्ययनो का स्वाभाविक विकास था—'बिजली की छड' (बिजली को निष्क्रिय कर देनेवाला 'तार') का आविष्कार। उसने देखा कि यदि किसी नोकदार चीज़ को एक आवेश-युक्त वस्तु के निकट ले जाए तो वह आवेश इस नोक के ज़रिये दूसरी ओर पहुच जाता है। उसे यह भी मालूम था कि बादलो मे विद्युत् भरी होती है। अब उसने सुझाया कि लोहे के एक निहायत नुकीले तार को मकान के शिखर पर टिका दे और एक ओर तार के ज़रिये इस छड का सम्बन्ध ज़मीन से कर दिया जाए, तो इस तरह बादल की बिजली धीरे-धीरे (एकदम झटके से नही) आवेश-शून्य होती जाएगी और मकान मे कोई दुर्घटना अब नही घटित हो सकेगी। परीक्षणो द्वारा फ्रैकलिन इस नतीजे पर पहुचा कि बादलो की यह बिजली नेगेटिव भी हो सकती है, पाज़िटिव भी, अर्थात्—बिजली जहा आसमान से ज़मीन पर गिर सकती है, वहा वह उठकर ज़मीन से बादलो को विचलित भी कर सकती है! आधुनिक अनुसन्धान इस का समर्थन करता है।

फ्रैकलिन ने 'लीडन जार' का सूक्ष्म अध्ययन किया—उन दिनो विद्युत्-सचय के लिए हर-कही इसीका इस्तेमाल हुआ करता था। लीडन जार शीशे की एक बोतल ही होती है। बाहर किसी धातु की पतली-सी पतरी मढी होती है और अन्दर पानी भरा होता है। लीडन जार मे होता क्या-कुछ है—इसका सूक्ष्म विश्लेषण जब फ्रैकलिन ने कर दिखाया तो विज्ञान-जगत् सचमुच चकित रह गया। उसने जार के पानी को फेक दिया और उसकी जगह ताज़ा पानी उसमे डाल दिया, किन्तु जार मे अब भी आवेश था। अर्थात्—वैद्युतावेश धातु मे था, पानी मे नही! अब तक वैज्ञानिक उल्टा ही माने बैठे थे। इन परीक्षणो के आधार पर उसने एक 'पैरेलल प्लेट कैपेसिटर' का आविष्कार भी किया
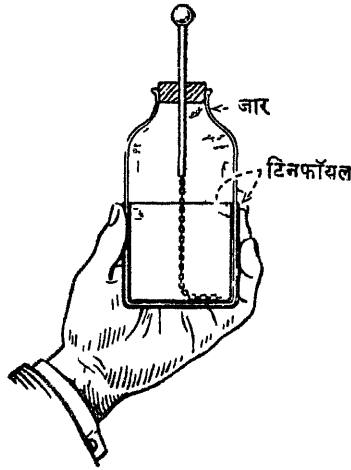
'लीडन जार' पुराने किस्म के इस कण्डेन्सर का उपयोग फ्रैंकलिन ने अपने विद्युत्-सम्बन्धी परीक्षणों में किया था।

जिसका प्रयोग हम आज अपने टेलीविज़न और रेडियो-सेटो मे करते है।

विद्युत् के सम्बन्ध मे जो कुछ प्रेक्षण तथा प्रयोग फ्रैकलिन ने सिद्ध किए, वे उसकी पाण्डित्यपूर्ण पुस्तक 'अमरीका के फिलाडेलफिया शहर मे विद्युत्-परक प्रेक्षण एव प्रयोग' मे सगृहीत है। इस महान् ग्रन्थ का विश्व-भर मे प्रकाशन हुआ और जर्मन, फ्रें च तथा इटैलियन मे अनुवाद भी हुआ।

विश्व के मूर्धन्य वैज्ञानिको ने इसकी तुलना न्यूटन के 'प्रिंसीपिया' के साथ की : "डाक्टर फ्रैकलिन के ये अन्वीक्षण तथा परीक्षण विद्युत् के 'प्रिंसीपिया' अथवा मूल सिद्धान्त हैं—इनमे भी एक ऐसी व्यवस्था अनुसूत्रित है जो कि अन्त -सगति मे उतनी ही सरल एवं आधारभूत भी है।" एक पत्र मे उसकी इस प्रकार आलोचना भी हुई थी। फ्रैकलिन को हर किस्म के वैज्ञानिक सम्मान मिले। उसे लन्दन की रॉयल सोसाइटी का तथा पेरिस की रॉयल एकेडमी आफ लाइसेंज़ का सदस्य चुना गया। आज हम कहते है विद्युत्, प्रकृत्या, इलेक्ट्रॉनो की एक धारा के अतिरिक्त कुछ नही है, और फ्रैकलिन कहा करता था कि विद्युत् एक द्रव है (वाहिनी है)। दोनो दृष्टियो मे मूल भेद है कितना ?

विज्ञान मे ये अनुसन्धान भी होते रहे, प्रकाशन भी होते रहे, और लोक-सेवा के लिए समय भी निकल ही आता। वे अमरीकी क्रांति के दिन थे और काण्टिनेण्टल काग्रेस ने टामस जेफरसन, जॉन एडम्स और बेंजामिन फ्रैकलिन की एक समिति नियुक्त कर दी कि वे 'स्वतन्त्रता का घोषणापत्र' तैयार कर दें।

फ्रैकलिन—अमरीका के सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन का एक माना हुआ दिग्गज, फ्रैकलिन—विद्युत् के विषय मे अपने मूल सिद्धान्त का प्रतिपादन करने के कारण विज्ञान के दिग्गजो मे भी उतना ही अग्रणी है, उतना ही महान है।

हेनरी कैवेण्डिश

हेनरी कैवेण्डिश अपने ज़माने में इंग्लैंड का सबसे अमीर आदमी था। मरने पर उसकी सम्पत्ति का अन्दाज़ा लगाया गया तो वह 10 लाख पौंड से भी ज़्यादा निकली, हालांकि जीते-जी उसकी पोशाक इतनी घिसी-पुरानी होती थी कि देखते ही बनता—कपड़े नहीं, चीथड़े, अब गिरे कि उड़े। एक सनकी—किन्तु विश्व का एक बहुत ही बड़ा वैज्ञानिक था वह।

कैवेण्डिश का जन्म फ्रांस के नीस शहर में 1731 के अक्तूबर महीने में हुआ था। वह इंग्लैंड में लार्ड चार्ली तथा लेडी एन० कैवेण्डिश के दो पुत्रों में पहली सन्तान था। उसके पूर्वजों में—किन्तु क्या उसे स्वयं इन छोटी-छोटी चीज़ों की कुछ चिन्ता थी? कुछ ऐसे लोग भी थे जो चौदहवीं सदी में ब्रिटिश के धनी-मानी परिवारों के कर्णधार समझे जाने लगे थे। इन पुरखों में यदि एक लार्ड चीफ जस्टिस था, तो एक और—टामस कैवेण्डिश—दूसरा अंग्रेज़ था जिसने जहाज़ में दुनिया-भर का चक्कर काटा था। स्वयं हेनरी का पिता लार्ड चार्ली भी एक माना हुआ वैज्ञानिक था जिसे मैक्सिमम-मिनिमम थर्मामीटर के आविष्कार की बदौलत लन्दन की रॉयल सोसाइटी की ओर से कॉप्ले मेडल भी मिला था।

दुर्भाग्य से, इधर उसके भाई का जन्म हुआ और उधर उसकी मां स्वर्ग सिधार गई। किन्तु हेनरी की शिक्षा-दीक्षा, बाप की अमीरी के बावजूद, पुरानी घिसी-पिटी लीक के मुताबिक ही हुई। 11 साल की उम्र में उसे हैकनी के बोर्डिंग स्कूल में भेज दिया गया और 15 साल का होने पर, तब, चार साल की उसकी अगली पढ़ाई कैम्ब्रिज में हुई। धर्मशिक्षा में उसकी कतई रुचि नहीं थी, किन्तु डिग्री हासिल करने के लिए इसका अध्ययन आवश्यक था इसलिए कैवेण्डिश ने स्नातक हुए बगैर ही विश्वविद्यालय छोड़ दिया।

हेनरी और उसका भाई फ्रेडरिक, गणित और भौतिकी के अध्ययन के लिए

लन्दन और उसके बाद पेरिस निकल गए। विद्यार्थीकाल मे पिता से उसे एक बहुत ही छोटी छात्रवृत्ति मिला करती थी, लेकिन 40 तक पहुचते-पहुचते वह एक भारी जायदाद का उत्तराधिकारी बन गया। फिर जिन्दगी मे पैसे की किल्लत उसे कभी भी नही आई।

हेनरी कैवेण्डिश की शिक्षा भी कम न थी, सम्पत्ति भी कम नही, किन्तु कोई भी लडकी शायद उससे शादी करने को कभी तैयार न होती। मर्दो की सोसाइटी मे ही खुलना उसके लिए कुछ मुश्किल था, औरतो के सामने तो उसके होश-हवास ही जाते रहते। घर-गिरस्ती चलाने के लिए जो दो-एक माइया उसके यहा कभी रहीं, उन्हे हुक्म था कि उसकी आखो के सामने न आया करे। जो कुछ हुक्म देना होता नोट्स के जरिये पहुच जाता, उसके कमरे मे गलती से भी पहुची नही कि नौकरी से बरखास्त।

लोग आम तौर पर बेसिर-पैर की बातो मे अपना वक्त बरबाद किया करते है, हेनरी के पास विज्ञान के बारे मे ही कुछ कहने को होता और उसपर बात कुछ करनी भी जरूरी होती, तो वह भी कितनो से की जा सकती थी ? रुपये-पैसे की बात वह अपने महाजनो से भी नही कर सकता था। वे अक्सर उससे पूछते कि इतनी अधिक सम्पत्ति को व्यापार मे कैसे लगाया जाए, कैवेण्डिश का जवाब हमेशा वही होता—मेरा दिमाग न चाटो, जो ठीक समझ मे आए खुद कर लिया करो। शब्द-प्रयोग मे उसने कभी फिजूल-खर्ची नही की, उसके पास शब्द थे ही कहा ?

दुनिया से उसका कुछ नाता अब अगर रह भी गया था तो वह रॉयल सोसाइटी के माध्यमद्वारा ही। 1760 मे उसे इसका फेलो मनोनीत किया गया—तब उसकी आयु केवल 29 थी और इन साथियो के क्लब मे वह बस रोटी के वक्त ही नियमित रूप से शामिल होता था।

उस युग की महान् समस्या थी—आग यह आग क्या चीज है ? दो जर्मन वैज्ञानिको तथा आविष्कारको योहान बैरवर तथा उसके शिष्य जार्ज अन्सर्ट स्टाल ने 'अग्नि की प्रकृति' के सम्बन्ध मे एक स्थापना-सी रखी थी कि चीज़े जलती किस तरह है। यह स्थापना ऊपर से देखने मे काफी ठीक लगती थी और विज्ञान-जगत् ने इसे सिद्धान्त के रूप मे, इसकी कुछ त्रुटियो के बावजूद, स्वीकार कर भी लिया था। यहा तक कि ऑक्सीजन के आविष्कर्ता प्रीस्टले को भी 'ज्वलन' की इस व्याख्या को मानने मे कोई आपत्ति नही लगी। 'फ्लोजिस्टन' का यह सिद्धान्त कुछ इस प्रकार था, जलनेवाली सभी वस्तुओ मे दो तत्त्व होते है—एक तो राख (भस्म) और, दूसरी, एक ज्वलनशील द्रव्य जिसका नाम उन्होने रखा 'फ्लोजिस्टन'। जब कोई चीज़ जलना शुरू करती है, यह ज्वलन-द्रव्य फ्लोजिस्टन उसमे से बाहर निकलना शुरू हो जाता है, और जब वह वस्तु जलना बन्द कर देती है तो उसका मतलब होता है कि उसमे विद्यमान फ्लोजिस्टन अब खत्म हो चुका है।

फ्लोजिस्टन को द्रव्य से पृथक् अब तक किसीने नही किया था। कैवेण्डिश ने सोचा, मैं ही क्यो न यह कर देखू ? अब, शुरू के कुछ दिनो तो उसने पुस्तकालय मे गुजारे जहा उसे पता लगा थिओफ्रेस्टस पेरासेल्सस और यान वॉन हेल्मोण्ट कभी एक प्रकार की 'ज्वलन-शील हवा' का आविष्कार कर चुके है। गन्धक के तेज़ाब मे कुछ लोहा डालकर उन्होने देखा था कि यह 'हवा' जल जाती है। किन्तु इसके अतिरिक्त 'ज्वलन-वात' के

सम्बन्ध मे और कुछ अनुसन्धान उन्होने नही किया था। कैवेण्डिश को सूझा, हो सकता है, यही 'हवा' थी शायद जिसकी खोज विज्ञान आज कर रहा है।

कैवेण्डिश अब अपनी निजी परीक्षणशाला मे, जो उसने अपने ही घर के अन्दर रखी थी, आ गया। पैरासेल्सस और वॉन हेल्मोण्ट के अनुसन्धान पर उसने परीक्षण शुरू किए और उनकी स्थापना को कुछ आगे विकसित भी किया। लोहे, जस्त, और टिन के टुकडे लेकर उसने सल्फ्यूरिक एसिड और हाइड्रोक्लोरिक एसिड मे उन्हे डालकर कुछ 'हवा' पैदा की सल्फ्यूरिक एसिड वाले बरतन मे लोहे के टुकडे डाले तो वहा से बुलबुले उठ-उठकर ऊपर की ओर आने लगे। और, ऊपर, इन बुलबुलो को एक किस्म के गुब्बारो मे भर लेने की व्यवस्था थी। ये गुब्बारे भरे गए। एक मे लोहे और गन्धक के तेजाब के, दूसरे मे जस्त और गन्धक के तेजाब के, तीसरे मे टिन और गन्धक के तेजाब के बुलबुले थे। और बाकी तीन मे उसी प्रकार हाइड्रोक्लोरिक एसिड मे छोडे गए लोहे, जस्त और टिन की प्रतिक्रिया से उत्पन्न गैस के बुलबुले थे।

किन्तु क्या यह सचमुच, फ्लोजिस्टन थी ? कैवेण्डिश ने छहो गैसो के नमूनो को जलाकर देखा। हरेक से वही नीली-पीली लपट निकली। किन्तु इसका निश्चय होना चाहिए। छहो का वही भार ! हलकी—सभी हलकी, और सभी का वही वज़न ! एक बार परीक्षण और किया गया और पता लगा कि इस तरह पैदा हुई 'हवा' का परिमाण प्रयुक्त धातु के परिमाण पर निर्भर करता है, जिसके आधार पर एक गलत निष्कर्ष कैवेण्डिश ने यह निकाल लिया कि यह हवा धातु की उपज है अम्ल की नही। उसका विचार था कि उसने फ्लोजिस्टन को सचमुच उसकी निजी अवस्था मे मिश्रण से पृथक् कर लिया है, और अपने इन अन्वेषणो को उसने रॉयल सोसाइटी के सदस्यो के सन्मुख घोषित भी कर दिया।

आज हमे शायद हैरानी हो कि उस ज़माने के वैज्ञानिको ने इस फ्लोजिस्टन 'तत्त्व' को (अथवा फ्लोजिस्टन की कल्पना को) भी स्वीकार कर कैसे लिया। परीक्षणशाला मे हेनरी कैवेण्डिश की दक्षता अद्भुत थी—वह इस बहुत ही लघु-भार गैस को तोल भी सकता था। उसे मालूम था कि जब कोई चीज़ जलती है उसकी राख का भार 'असल चीज़' से कुछ ज़्यादा होता है, और फिर भी उसे यह स्वीकार करने मे कुछ मुश्किल पेश नही आई कि उसी चीज़ के जलने पर फ्लोजिस्टन उडकर उसमे से बाहर निकल जाती है। कैवेण्डिश ही नही, सभी वैज्ञानिको ने इस ज्वलन-द्रव्य को 'फ्लोजिस्टन' मानने मे तब एक-सी ही उत्सुकता दिखाई थी।

कुछ वक्त बाद लैवायज़िए ने आकर फ्लोजिस्टन के इस सिद्धान्त का उन्मूलन किया और बताया कि कैवेण्डिश की वह 'ज्वलन-वात' हाइड्रोजन थी।

फ्लोजिस्टन कह लो या हाइड्रोजन, इसके आविष्कार ने काफी तहलका मचा दिया। वैज्ञानिक-अवैज्ञानिक हर कोई घर बैठा-बैठा इसे बनाने लगा। परीक्षणो मे कुछ घायल भी अवश्य हुए होगे, कुछ शायद मर भी गए हो—क्योकि एक विशेष अनुपात मे हाइड्रोजन और आक्सीजन अगर गलती से मिल जाएं तो बहुत ही भयावह विस्फोट की सभावना बनी रहती है। और कहानी मे आता भी है कि एक उत्साही फ्रासीसी ने सचमुच अपने फेफड़े हाइड्रोजन से भर लिए और मुह से गैस को बाहर फेंकते हुए उसमे आग लगा-

परीक्षणशाला में हाइड्रोजन का निर्माण
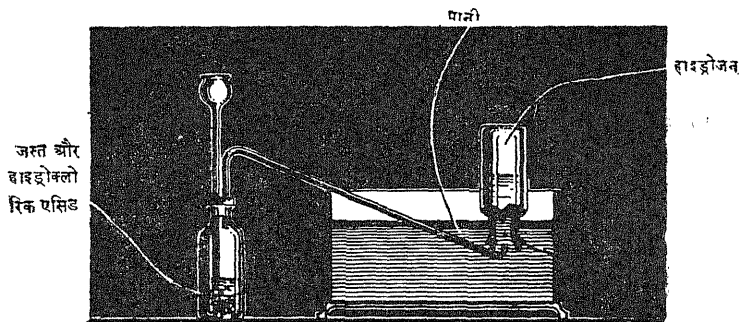
कर सबके सामने एक प्रदर्शन भी किया था।

हाइड्रोजन से भरा पहला-पहला गुब्बारा 1783 में उड़ाया गया। हाइड्रोजन विज्ञान को ज्ञात तत्त्वों में सबसे हलका तत्त्व है। 1781 में इंग्लैंड में रहते हुए एक इटैलियन ने प्रदर्शन किया कि साबुन के बुलबुले में अगर हाइड्रोजन भर दी जाए तो वह ऊपर को उड़ने लगेगा। उससे पहले भी कपड़े में कागज़ की लाइनिंग लगाकर बैलून तैयार किए जा चुके थे जो गरम हवा भरने पर आसमान की ओर उठते लगते थे। एक फ्रांसीसी वैज्ञानिक जैक्वीज़ चार्ली ने हाइड्रोजन से भरा एक गुब्बारा तैयार किया, जो सफलतापूर्वक काफी दूर तक उड़ा भी; इसमें कोई यात्री नहीं था। किन्तु डर के मारे खेतों पर काम में लगे किसानों ने उसे तब नष्ट कर डाला जब वह पेरिस के बाहर कोई 15 मील पर जाकर उतरा। 1785 में एक हाइड्रोजन बैलून धमाके के साथ फटा और उसमें बैठे सारे यात्री मारे गए। प्रायः 150 वर्ष बाद 1937 में जर्मनी का विपुल, महलनुमा, हिण्डेनबर्ग, हवा में उड़ता हुआ न्यूजर्सी के लेकहर्स्ट कस्बे में पहुंचकर एकाएक चूर-चूर हो गया—और 36 यात्री, जो उसमें हवा खा रहे थे, जान से हाथ धो बैठे। उसमें 7,000,000 क्यूबिक हाइड्रोजन भरी थी, और कितनी ही बार वह एटलाण्टिक महासागर पार भी कर चुका था।

हाइड्रोजन से भरे इन गुब्बारों की दुर्घटनाओं के अतिरिक्त, कुछ धमाके ऐसे भी थे जिन्हें परीक्षणशालाओं के अन्दर नियन्त्रण द्वारा भी संभव किया जा सकता था, और जिनके कुछ ब्यौरे रॉयल सोसाइटी के पास पहुंचे भी कि किस प्रकार कुछेक परीक्षण-शालाओं में, कहीं-कहीं हाइड्रोजन के जलने के साथ-साथ कुछ ओस-सी भी पैदा हो आती है। एक ब्रिटिश परीक्षणकर्ता ने बिजली की एक चिनगारी द्वारा एक बन्द बोतल में हाइड्रोजन का विस्फोट सिद्ध कर लिया और देखा कि पानी की कुछ बूंदें कहीं से बोतल की दीवारों पर आ चिपटी हैं। इसी तरह एक फ्रांसीसी वैज्ञानिक ने चीनी की एक तश्तरी हाइड्रोजन की एक लपट पर उलटाकर रखी तो वह तश्तरी भी नीचे से गीली होने लगी। शीशे की एक मोटी बोतल में प्रीस्टले ने भी हाइड्रोजन और हवा के मिलने से पैदा हुए विस्फोट का वर्णन किया। किन्तु उसके पास कितने ही दूसरे काम अधूरे पड़े थे इसलिए

जल्दी में वह इस निश्चय पर पहुंचा कि इन धमाकों से बारूद का काम नहीं लिया जा सकता। सत्य का उसे कुछ संकेत था, किन्तु उसने इसकी छानबीन आगे और की नहीं।

किन्तु बन्द बोतलों में इन्हीं धमाकों और पानी की बूंदों की खबरों ने कैवेण्डिश के मन में एक और नये विचार को जन्म दे दिया। अपनी परीक्षणशाला में लौटकर उसने शीशे की ट्यूबें हवा से और हाइड्रोजन से भरनी शुरू कर दीं। कभी ऑक्सीजन के साथ और कभी हाइड्रोजन के साथ परीक्षण पर परीक्षण किए। मिश्रण में से बिजली की चिनगारी गुज़ारी। 10 साल लगातार परीक्षण होते गए। माप-तोलकर गैसों को
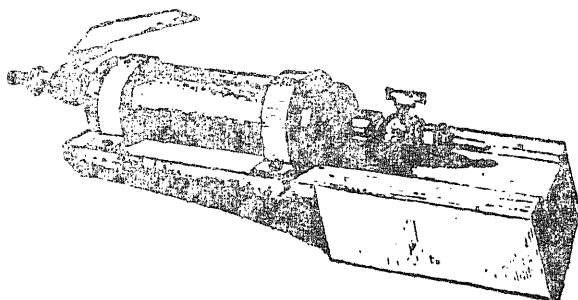
कैवेण्डिश का यूडिओ मीटर—गैसों को मापने और उनका विश्लेषण करने का यन्त्र

ट्यूब में भरा जाता और गैस और पानी दूसरी ओर से बाहर निकल आते। नाप-तोलकर शुद्ध ऑक्सीजन, मामूली हवा और हाइड्रोजन के विस्फोट किए गए, और परिणामों को विधिवत् अंकित किया जाता रहा।

1784 में कैवेण्डिश ने अपने इन वायु-सम्बन्धी परीक्षणों को रॉयल सोसाइटी के सम्मुख प्रकाशित किया। इतने अध्यवसाय के परिणाम बहुत ही आश्चर्यकारी थे—फ्लोजिस्टन—(कैवेण्डिश का हाइड्रोजन को दिया नाम) जब फ्लोजिस्टन-रहित हवा (ऑक्सीजन) के साथ मिलती है तो पानी की उत्पत्ति होती है। और परीक्षणों की गणनाओं से उसे यह सबूत भी मिल चुका था कि हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के 2:1 अनुपात में मिलने पर ही यह पानी पैदा होता है। कितने ही विपुल परिमाण में कैवेण्डिश ने दोनों गैसों को मिलाकर दोनों के मूल परिमाणों के तुल्य परिमाण में ही पानी पैदा करके दिखाया। कैवेण्डिश ने परीक्षणों द्वारा सिद्ध कर दिया कि जल, एक तत्त्व न होकर—साधारण आदमी को विश्वास नहीं आए शायद, दो वर्ण-हीन गैसों का एक मिश्रण है।

इन परीक्षणों में कैवेण्डिश ने यह भी जान लिया कि जो हवा हम सांस में अन्दर ले जाते हैं उसका 20 प्रतिशत ऑक्सीजन है। हाइड्रोजन और हवा के धमाके का सूक्ष्म अध्ययन करके ही वह इस नतीजे पर पहुंचा था। कैवेण्डिश ने देखा कि बिजली के स्फुलिंग के द्वारा हाइड्रोजन से मिली हवा जब फैलती तो कुछ अम्ल भी उससे पैदा हो आता है। विश्लेषण किया गया और पता चला यह वायुमण्डल में विद्यमान नाइट्रोजन के कारण है; विद्युत् का स्फुलिंग नाइट्रोजन और ऑक्सीजन को भी मिला सकता है। प्रकृति में

जो खाद बनती है वह इसी जरिए से ही पैदा होती है। आकाश से जब बिजली गिरती है तो वह वर्षा के साथ नाइट्रोजन ऑक्सीजन के साथ मिलकर, खाद के रूप में पृथ्वी को उपहार-रूप में मिल जाती है। कैवेण्डिश ने परीक्षण कर-करके शायद वायुमण्डल की गैसों को, बूंद-बूंद निचोड़ते हुए, अलग कर लिया था। बिजली की चिनगारियां पर चिनगारियां—और ऑक्सीजन पर ऑक्सीजन छोड़ते चलो कि हवा में नाइट्रोजन बाकी रह ही न जाए। किन्तु 'हवा' का एक बुलबुला-सा अब भी उसमें कहीं रह गया था : यह थी 'आर्गन'—जिसकी गणना 'विरल' गैसों में होती है, और जिसकी मात्रा हमारे वातावरण में 1 प्रतिशत से भी कुछ कम ही है।

कैवेण्डिश की मृत्यु भी उसी तरह हुई जिस तरह कि उसका सारा जीवन चला आता था—अकेले में : कोई देखभाल करनेवाला नहीं। 1810 में, और 79 साल की वायु में। डर्बी में उसकी अंत्येष्टि विधि निष्पन्न हुई—जहां चर्च वालों ने इस सनकी साइन्स-दान के लिए एक स्मारक भी खड़ा किया हालांकि जीवन-भर उसने इन धर्मों से, धार्मिक सम्प्रदायों से, कुछ वास्ता नहीं रखा था।

मात्र रसायनशास्त्र के अध्ययन से ही कैवेण्डिश सन्तुष्ट न था, विद्युत् के क्षेत्र में भी उसके अनुसन्धान बड़े विलक्षण हैं। न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्तों का उपयोग करते हुए उसने पृथ्वी की आपेक्षिक गुरुता भी, और कितनी सही, परिगणित कर ली थी—5·48। सचमुच, पृथ्वी का भार भी उसने नाप-तोलकर रख दिया था।
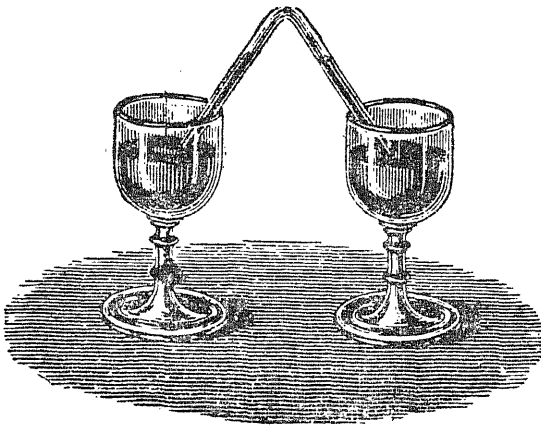
एक बड़े महत्त्वपूर्ण परीक्षण के लिए प्रयुक्त कैवेण्डिश का एक बड़ा सरल उपकरण। कैवेण्डिश ने एक मुड़ी हुई ट्यूब में ऑक्सीजन और हवा के मिश्रण में से बिजली की चिनगारियां तब तक गुजारते हुए जब तक कि उसके अन्दर की सारी ऑक्सीजन और नाइट्रोजन मिल नहीं गई···यह सिद्ध कर दिखाया कि हमारा वायुमण्डल प्रायः इन्हीं दो गैसों का मिश्रण है।

उसकी वसीयत का एक खासा हिस्सा उसके उत्तराधिकारियो ने इग्लैड मे कैवेण्डिश लैबोरेटरीज़ की एक शृखला-सी स्थापित करने मे लगा दिया। इन्हीमे कभी 1897 मे महान वैज्ञानिक जे० जे० टामसन ने इलेक्ट्रॉन की खोज की थी, और इन्ही परीक्षणशालाओ ने रसायन और भौतिकी मे कम से कम छ नोबेल पुरस्कार-विजेता वैज्ञानिको को जन्म दिया।

हाइड्रोजन तथा नाइट्रोजन की खोज, वायुमण्डल का भौतिक विश्लेषण, पानी का तात्त्विक विभेदन, और परीक्षण-विज्ञान मे तथा विश्लेषण-शास्त्र मे अद्भुत प्रणालियो का प्रवर्तन—यह श्रेय-माला है जो हेनरी कैवेण्डिश को विज्ञान के मूर्धन्य दिग्गजो मे ला बिठाती है।
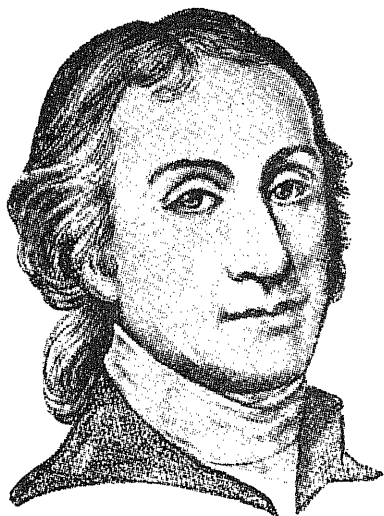
जोजेफ प्रीस्टले

आपको याद है कि हाल ही में सोडा वाटर की बोतल आपने कब पी थी ? क्या आप जानते हैं कि अमरीका के लोग आइसक्रीम सोडा, सोडा पॉप, कोकाकोला, जिंजर एल, और सोडा वाटर पर सालाना 5,00,00,00,000 रुपये खर्च करते हैं ? जोज़ेफ प्रीस्टले को जब पानी में कार्बन डाइक्साइड मिलाकर एक नया पेय आविष्कृत करने के लिए स्वर्ण पदक मिला था तो उसने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि इस प्रकार सोडा वाटर के एक नये कारोबार को ही जन्म दे चला है जिसपर अरबों रुपया सालाना खर्च आ सकता है। किन्तु प्रीस्टले को हम विज्ञान का एक दिग्गज मानते हैं—इसलिए नहीं कि उसने सोडा वाटर का आविष्कार किया, अपितु इसलिए कि वह ऑक्सीजन के रूप में 'प्राण-संजीवनी' (गैस आफ लाइफ) का अन्वेषक है।

जोज़ेफ प्रीस्टले का जन्म 13 मार्च, 1733 को इंग्लैंड के लीड्स शहर के पास एक छोटे से कस्बे में हुआ था। उसका बाप जुलाहा था—एक गरीब आदमी, जो 7 साल के जोज़ेफ को अनाथ करके चल बसा। बच्चे का लालन-पालन उसकी एक चाची ने ही किया। वहां वातावरण ही कुछ ऐसा था कि हर किसीको हर मामले पर अपने विचार प्रकट करने की छुट्टी थी। चाची एक छोटे-से धर्म-सम्प्रदाय की सदस्य थी जिसका नाम था—डिसेण्टर्ज़, परम्परागत ईसाइयत के विरोधी। इसीलिए चाची ने बालक जोज़ेफ को ईसाइयत में दीक्षित होने के लिए एक नई संस्था में भेज दिया। वहां पहुंचकर जोज़ेफ ने पर्याप्त योग्यता दिखाई—विशेषकर भाषा के अध्ययन में। उसने फ्रेंच, इटैलियन, जर्मन, अरबी और एरामाईक सभी भाषाओं में एक-सी निपुणता प्राप्त कर ली। किन्तु उसकी वाणी में कुछ खराबी थी, जिसका नतीजा यह हुआ कि ग्रेजुएट हो जाने के बाद भी उसे एक बहुत ही छोटे चर्च में नौकरी मिली, जहां उसकी तनख्वाह 15 रुपये प्रति सप्ताह

से भी कम थी। किन्तु खर्चा तो किसी न किसी तरह पूरा करना ही था, या फिर बात यह थी कि प्रीस्टले एक बहुत मेहनती आदमी था। वह सारा दिन गाव के स्कूल मे बच्चो को पढाता और वहा से लौटकर भी प्राइवेट ट्यूशनें करता रहता। इस सबके बावजूद उसने इतना समय निकाल लिया कि एक अग्रेज़ी व्याकरण भी वह लिख गया। कुछ ही दिनो बाद उसे डिसेण्टर्ज की एकेडमी मे भाषा-अध्यापक की नौकरी मिल गई। यहा पढाते हुए वह रसायनशास्त्र की क्लास मे भी जाने लगा। उसकी गिनती स्थानीय वैज्ञानिको मे होने लगी।

इन्ही दिनो बेंजामिन फ्रैंकलिन—जो अमरीका के नये उपनिवेशो का भ्रमणशील राजदूत भी था, इग्लैंड मे अमरीकी स्वतन्त्रता का समर्थन प्राप्त करने आया हुआ था। फ्रैंकलिन एक वैज्ञानिक के रूप मे यहा पहुचा था, और सचमुच वह एक वैज्ञानिक था भी। प्रीस्टले दौडा-दौडा अपने युग के इस महान विद्युत्-विशारद के पास आया और उसके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर एक पुस्तक 'विद्युत् की वर्तमान स्थिति का इतिहास' भी उसने लिख डाली, जिसका तात्कालिक परिणाम यह हुआ कि 1766 मे रायल सोसाइटी ने उसे अपना सदस्य चुन लिया। और प्रसगात, प्रीस्टले को अमरीकी क्राति की सत्यता मे भी विश्वास था, जिससे बेंजामिन फ्रैंकलिन से उसकी मित्रता आजीवन बनी रही। और, यह तो हम आसानी से कल्पना कर ही सकते है कि प्रीस्टले के लिखे विद्युत् के 'इतिहास' मे ज्ञात तथ्यो का एक सग्रह ही नही था, अपितु कितने ही मौलिक परीक्षण भी साथ-साथ सकलित थे।

अब भी वह चर्च का एक पादरी ही था। दिन के फालतू समय मे ही वैज्ञानिक परीक्षण किया करता था। लीड्स के एक गिर्जे मे उसे प्रधान पादरी की नियुक्ति मिल गई। यहा उसे तनख्वाह बहुत कम मिलती थी, और अब एक परिवार का पोषण भी उसके जिम्मे था। इसलिए एक वडे शराबखाने की बगल मे एक छोटा-सा घर उसने किराए पर ले लिया और सच तो यह है कि शराबखाने की यह बू ही थी जो उसे रासायनिक परीक्षणो की ओर बरबस खीच ले गई। शराबखाने के मालिको की इजाज़त भी उसने ले ली कि उनके भारी ड्रमो से उठती गैस को वह अपने परीक्षणो के लिए इस्तेमाल कर सकता है। उसने इस गैस का सूक्ष्म अध्ययन किया, और देखा कि एक जलती तीली उसमे जाकर बुझ जाती है। प्रीस्टले ने वैज्ञानिको के ग्रन्थो की छानबीन की और इस 'स्थिर' गैस को वनाने के और ढग भी खोजे। आज सभी इसका नाम जानते हैं—कार्बन डाइक्साइड। किन्तु प्रीस्टले की खुशकिस्मती इसमे यह थी कि उसने कार्बन डाइक्साइड को सफलतापूर्वक पानी मे घोल दिया जिसकी बदौलत, जैसाकि हम ऊपर कह आए है, उसे एक स्वर्ण पदक भी मिला था।

उसकी इस सफलता को फ्रास तक मे सम्मानित किया गया। फ्रेंच एकेडमी ने उसे अपना सदस्य मनोनीत कर लिया। और विज्ञान के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण चीज़ यह हुई कि उसे चर्च के कामो मे अब अपना वक्त बरबाद करने से एकदम मुक्ति मिल गई। और यह सब ठीक वक्त पर ही हुआ—पादरी का उपदेश सुनने जो जनता उसके गिर्जे में आती थी उसे यह बरदाश्त करने के लिए मुश्किल पड रही थी कि उसके धर्मोपदेशक के

इर्द-गिर्द तरह-तरह की बोतलें ही बोतलें पड़ी हों, तरह-तरह की खुशबू-बदबू हमेशा उठ रही हो। और सच तो यह है कि प्रीस्टले के दिन का अच्छा-खासा हिस्सा गुज़रता भी तो शराबखाने में ही था। एक अध्ययनशील राजनीतिज्ञ, लार्ड शेलबर्न ने प्रीस्टले को अपना लाइब्रेरियन बना लिया। पुस्तकालय के साथ एक परीक्षणशाला भी थी। शेलबर्न ने ऐसा इन्तजाम कर दिया कि सर्दियों में तो प्रीस्टले लन्दन रहा करे और गर्मियों में उसके कैलने स्थित निजी महल में। विज्ञान में अनुसन्धान करने के लिए दोनों जगह परीक्षण-शालाएं भी थीं, और इस सबके साथ 250 पौंड सालाना तनख्वाह भी।
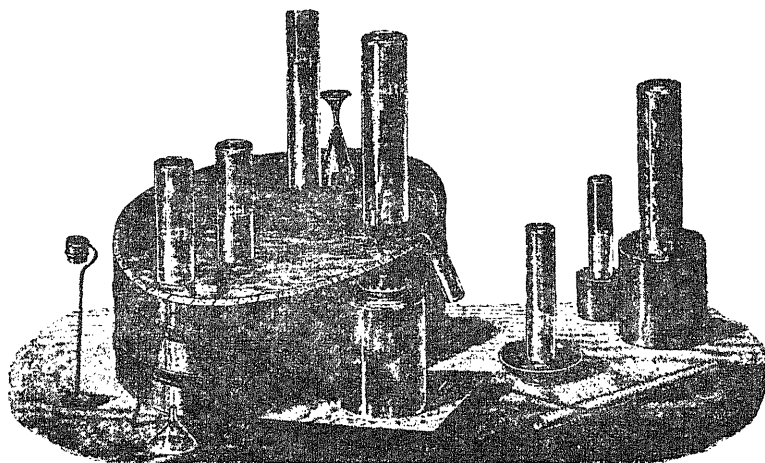
वायु के अवयवों के सम्बन्ध में परीक्षणादि के लिए प्रीस्टले द्वारा प्रयुक्त एक उपकरण

लार्ड शेलबर्न के साथ सम्पर्क में आकर ही प्रीस्टले ने अपने वैज्ञानिक जीवन के मुख्य परीक्षण सिद्ध किए। शेलबर्न के साथ वह फ्रांस गया जहां लेवॉयजिए से उसकी मुलाकात हुई। और इस बात का श्रेय लेवॉयजिए को ही मिलना चाहिए कि प्रीस्टले की 'फ्लोजिस्टन-रहित' गैस एक नया तत्त्व है—यह वह एकदम पहचान गया, और उसने उसका नाम भी रख दिया—ऑक्सीजन।

1780 में ल्यूनर सोसाइटी ने आमन्त्रण द्वारा, उसे अपना सदस्य मनोनीत कर लिया। उस ज़माने के प्रसिद्ध वैज्ञानिक और उद्योगपति इस संस्था के सदस्य थे : पॉटरी शिल्प का मूर्धन्य जोसिया वेजवुड, स्टीम-इंजन का आविष्कर्ता जेम्स वॉट, चार्ल्स डार्विन का दादा वैज्ञानिक इरेज़मस डार्विन। 'ल्यूनैटिक' का अर्थ होता है पागल, और इन पागलों की सभा पूर्णिमा के निकट सोमवार के दिन ही लगा करती थी। इस तिथि का चुनाव ही इसलिए किया गया था कि छ: घण्टे के अधिवेशन, और भोजन के पश्चात् घर लौटते वक्त रास्ते में चांदनी हो। प्रीस्टले को यहां आकर अच्छा खाना मिलता और चिन्तन के लिए कुछ नये विचार मिलते। ल्यूनर सोसाइटी के कुछ धनी सदस्यों ने प्रीस्टले के परीक्षणों के लिए कुछ धन देना भी स्वीकार कर लिया। किन्तु प्रीस्टले एक आदर्शवादी था जिसे "अपने किसी भी परीक्षण द्वारा किसी प्रकार का कुछ धन-लाभ मंजूर न था;

उसने यह परीक्षण जनता की सार्वजनिक सम्पत्ति घोषित कर दिए।" न ही उसे यह मजूर था कि इन 'ल्यूनैटिको' से वह भारी रकमे कबूल करता चले। परीक्षणो पर जितना आवश्यक था, उससे एक कौडी भी अधिक उसने कभी स्वीकार नही की।

किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि जोज़ेफ प्रीस्टले की यह एक वैज्ञानिक की, शान्त ज़िन्दगी ज़्यादा देर नही चल सकती थी। उसकी रग मे ही कुछ पादरीपन था, कुछ आदर्शवाद था—जिसकी बदौलत वह फ्रासीसी क्राति की झपेट मे आ गया। 'स्वतन्त्रता, समानता, भ्रातृता' का प्रचार उसने अपने लेखो मे खुलकर और बडे उत्साह के साथ किया, और इस बात का भी समर्थन किया कि धर्म और राज्य, दोनो, के क्षेत्रो को पृथक् कर देना चाहिए। 1775 मे एडमण्ड बर्क ने कोशिश की थी कि ब्रिटिश सरकार अपने नये उपनिवेशो के साथ किसी तरह का समझौता कर ले, आज वही एडमण्ड बर्क—फ्रास की क्राति का विरोधी था, और उसने हाउस ऑफ कामन्स मे एक वक्तृता मे प्रीस्टले पर आक्षेप भी लगाए, जिनका परिणाम यह हुआ कि 14 जुलाई, 1751 के दिन, जब फ्रासीसी क्राति की दूसरी बरसी मनाई जा रही थी, अधी जनता ने जोश मे आकर प्रीस्टले के घर पर हमला बोल दिया। उस घटना का एक आखो देखा हाल इस प्रकार मिलता है —

"लोग एकदम, जबर्दस्ती, घुस आए, खिडकिया-अलमारिया तक खाली कर दी, फर्नीचर तोड डाला, लाइब्रेरी से किताबें निकालकर फाड डाली, और परीक्षणशाला मे जो भी रासायनिक उपकरण पडे थे सब चूर-चूर कर डाले, और अन्त मे घर को आग लगा दी। 20 साल की मेहनत और खोज जिन हस्तलेखो मे सकलित थी वे चिथडे-चिथडे होकर बिखरे पडे थे।" यह एक ऐसा नुकसान था जिसका अफसोस प्रीस्टले को मरते दम तक ज़रा भी कम नही हो सका।

खुशकिस्मती से डाक्टर प्रीस्टले और उसका परिवार वहा से बच निकले थे। बर्मिघम छोडकर वे लन्दन मे आ गए। फ्रास की क्रान्ति अब ज्यो-ज्यो एक भय के साम्राज्य मे परिणत होती गई, जनता प्रीस्टले के विरुद्ध होती गई। उसे देशद्रोही और नास्तिक करार दिया जाने लगा। रॉयल सोसाइटी के उसके पुराने साथी तक अब उसके हक मे नही थे। 1794 मे प्रीस्टले जहाज़ मे चढकर अमरीका पहुच गया।

डा० प्रीस्टले जब न्यूयार्क शहर मे उतरा तो जनता ने खुले दिल से उसका अभिनन्दन किया। देश के धार्मिक, वैज्ञानिक और राजनीतिक नेताओ ने उसका स्वागत किया। एक बार अमरीका मे आ जाने पर, उसका अपने पुत्रो से भी मेल हो गया—जो दो वर्ष पहले ही पेनसिल्वेनिया मे आकर नार्थम्बरलैण्ड मे बस चुके थे। सभी तरह के पद और सम्मान उसे दिए जाने लगे—यूनिटेरियन चर्च का पादरी, पेनसिल्वेनिया विश्व-विद्यालय मे रसायन का प्रोफेसर। उसे व्याख्यानो के लिए आमन्त्रित किया जाने लगा। बेंजामिन फ्रैंकलिन ने फिलाडेल्फिया के दरवाज़े खोल दिए, और प्रीस्टले ने टामस जेफरसन के साथ मुलाकात की और जार्ज वाशिंगटन के साथ चाय पी।

पर उसकी खुद की पसन्द थी कि नार्थम्बरलैण्ड के ही शान्त वातावरण मे एक परीक्षणशाला मे खुद को खपा दे। आज उसका वह घर एक राष्ट्रीय सग्रहालय बन चुका है,

जहा रासायनिक अनुसन्धानो मे खुद प्रीस्टले के प्रयुक्त वे प्याले, बोतलें, कुडिया, वगैरह सभी कुछ आज तक सुरक्षित है, और हर कोई आकर उन्हे देख सकता है।

वे कौन-सी गवेषणाए है जिनके आधार पर हम प्रीस्टले को विश्व के वैज्ञानिको एव रसायनशास्त्रियो मे इतना ऊचा स्थान देते है ? प्रथम तो, उसने उस अद्भुत तत्त्व, 'ऑक्सीजन' का आविष्कार किया। ऑक्सीजन तैयार करने का उसका ढग बहुत ही सरल, किन्तु सुन्दर और प्रभावास्पद, था। उसने इसके लिए एक बोतल ली और उसमे कुछ पारा भरकर कुछ नमूना पारे के ऑक्साइड का डाल दिया। इस बोतल को अब उसने पारे के एक प्याले पर उल्टा दिया। और अब, एक मैग्निफाइग ग्लास के जरिए सूर्य की किरणो को पारद अक्साइड पर केन्द्रित करते हुए, उसे गरमी पहुचाई गई रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा यदि कुछ गैस मुक्त हो तो उससे पारा स्वभावत कुछ नीचे की ओर गिरेगा, और यदि इस प्रतिक्रिया मे कुछ गैस खप जाए तो उसमे वही पारा कुछ ऊपर की ओर उठ जाएगा, प्रीस्टले ने देखा कि पारद ऑक्साइड से खूब गैस छूट रही है। और प्रसगत उसने यह भी देखा कि एक जलती हुई मोमबत्ती इस गैस मे ले जाई जाकर और भी ज्यादा चमक उठती है। यही नही, इस गैस के उसने कुछ चूहो पर भी परीक्षण किए और पाया कि ऑक्सीजन से भरे एक बर्तन मे चूहे ज्यादा देर तक जिन्दा रहते है बनिस्बत मामूली हवा से भरे एक और बर्तन मे।

प्रीस्टले ने यह भी देखा कि ये फूल-पत्ते और पौधे "पशुओ की प्राण-प्रक्रिया को उल्टा देते हैं, जिससे वातावरण मे एक प्रकार की सतुलित मधुरिमा बनी रहती है।" उसने एक पौधा लिया और उसे एक ऐसी बोतल मे रख दिया जिससे कि ऑक्सीजन बिलकुल निकाली जा चुकी थी। और कुछ दिन बाद नोट किया कि मोमबत्ती को इसमे ले जाकर फिर से जलाया जा सकता है। इस प्रकार प्रकृति की ऑक्सीजन तैयार करने की विधि का भी पता लग गया।

एक और महत्त्वपूर्ण खोज प्रीस्टले ने पेनसिल्वेनिया मे अपनी नई परीक्षणशाला स्थापित करने के बाद की। यहा उसके हाथो एक और उपयोगी, किन्तु ज़हरीली, गैस—कार्बन मोनोक्साइड का आविष्कार सम्भव हुआ। कार्बन मोनोक्साइड तब उत्पन्न होती है जब कोयले, गैसोलीन या जलाने के तेल को या किसी और ऐसे ईंधन को जिसमे कार्बन हो, किसी वस्तु को जलाकर खाक कर डालने के लिए आवश्यक ऑक्सीजन से कम परिमाण मे उसके साथ मिला दिया जाता है। बन्द गैरेज मे यदि मोटर को चालू कर दिया जाए तो अक्सर यह चीज़ अकस्मात् छूटनी शुरू हो जाती है, क्योकि ऑक्सीजन जल्दी ही खत्म हो जाने की वजह से अब (सोडावाटर की) कार्बन डाइक्साइड की जगह कार्बन मोनोक्साइड उत्पन्न होने लगती है जो कि उल्टे ज़हरीली है। कार्बन मोनोक्साइड को हम जब चाहे पैदा कर सकते हैं और हमारे घरो मे कहवा तैयार करने के लिए, या कमरो को गरम रखने के लिए, इसका प्रयोग आम तौर पर होता भी है।

जोज़ेफ़ प्रीस्टले ने एक और गैस भी खोज निकाली थी जिसका अनुभव सर हम्फ्री डेवी को कुछ अजीब ही शक्ल मे हुआ था। गलती से कुछ वाष्प सूघने के पश्चात् डेवी का वर्णन है, "इसने तो मेरी नब्ज़ ही 20 से ज्यादा और बढा दी, और मैं अपनी लैबोरे-

टरी मे पागलो की तरह नाचने लगा।" इस गैस को अक्सर 'हसानेवाली गैस' भी कहते हैं, और दातो के डाक्टर दुखती दाढ को निकालने के लिए इसका इस्तेमाल करते है कि बीमार को तकलीफ कम हो। रसायन मे इसका नाम है— नाइट्रस ऑक्साइड।

अमरीका के लोगो को गर्व हो सकता है कि कितने ही ऐसे व्यक्तियो को उन्होने समय-समय पर आश्रय दिया है जिनपर कि उनके अपने वतन मे विपत्तिया ही, कज़ाए ही आईं। जोज़ेफ प्रीस्टले भी उन्ही सतप्तो मे एक था।

1854 मे, 80 साल की उम्र मे, प्रीस्टले की मृत्यु हो गई।

एन्तॉयने लॉरेन्त लैवॉयज़िए

1796 में फ्रांस की सरकार ने एन्तॉयने लॉरेन्त लैवॉयज़िए के सम्मान में एक विशाल अन्त्येष्टि का आयोजन किया। समारोह में देश-विदेश के वैज्ञानिकों को उस महापुरुष की प्रशंसा में वक्तृताएं देनी थीं। इससे ज्यादा अव वे और कर भी क्या सकते थे : जिला तो उसे वे सकते थे नहीं। अभी दो साल पहले ही, 1794 में, क्रान्ति के आतंकवादियों ने लैवॉयज़िए को गिलोटीन पर लटका दिया था, और उसकी देह को एक अज्ञात कब्र में दफना कर छुट्टी पा ली थी।

लैवॉयज़िए का जन्म पेरिस में 26 अगस्त, 1743 को हुआ था। बाप एक समृद्ध व्यापारी था, और पर्याप्त भूमि का स्वामी भी था। अभी वह एक नन्हा बालक ही था कि मां की मृत्यु हो गई। एन्तॉयने की परवरिश एक निपट स्वार्थहीन और वत्सलहृदय अविवाहित बुआ ने तथा पिता ने की।

बाप का ख्याल था कि लड़का बड़ा होकर एक कानूनदां बने, वकालत करे। एन्तॉयने ने तदनुसार कानून में शिक्षा भी ग्रहण की, और वकालत की इजाज़त भी उसे मिल गई। किन्तु उसकी निजी रुचि विज्ञान के स्वाध्याय की ओर अधिक थी। सो, कालेज में वह साथ ही साथ प्रोफ़ेसर बूरदेलियां के लेक्चर भी सुनता रहा। बूरदेलियां एक समीक्षात्मक रसायनशास्त्री था, और यहां भी उसकी पसन्द की चीज़—इन व्याख्यानों के साथ प्रदर्शित परीक्षण ही अधिक थे (जिनमें व्याख्यान बिलकुल स्पष्ट हो जाते)। इसके अतिरिक्त स्वीडन के प्रकृति-वेत्ता लिनिअस के सम्पर्क ने भी उसके वैज्ञानिक अनुसन्धान को बहुत कुछ विनिश्चित कर दिया।

22 की आयु में पेरिस की गलियों में रोशनी की व्यवस्था सुझाने में लैवॉयज़िए की योजना सबसे अच्छी मानी गई, और इसके लिए फ्रेंच एकेडमी ऑफ साइंसेज़ ने उसे एक स्वर्ण पदक भी प्रदान किया। इसके दो वर्ष पश्चात् फ्रांस के भूगर्भ-सम्बन्धी अध्ययन,

तथा जिप्सम और प्लास्टर आफ पेरिस के विषय मे रासायनिक अनुसन्धान की बदौलत उसे इस एकेडमी का सदस्य भी चुन लिया गया।

गिलोटीन की सजा तो उसके लिए, जैसे उसी बिन मुकर्रर हो चुकी थी जब कि वह फ्रास के राजवश की ओर से 'फेर्मिए जेनरल', उनकी जमीनो का 'प्रमुख टेक्स कलैक्टर', नियुक्त हुआ था। उस समय वह प्रसन्न था कि मुफ्त की नौकरी है—विज्ञान की खोजें करने के लिए वक्त काफी बच रहता है।

टेक्स कलैक्टरी मे ही किसी साथी ने उसका मेल मारिए एन पाल्जे से करा दिया था। एन्तॉयने खुद 28 सास का एक लम्बे कद-बुत का खूबसूरत नौजवान था। मारिया की खूबसूरती और प्रतिभा पर वह मर मिटा, यद्यपि उम्र मे वह उसकी आधी भी नही थी।

एक सुखद और सौभाग्यशाली 'बन्धन' था यह—कितनी ही बौद्धिक सन्ततियो को जन्म देनेवाला एक प्राज्ञ युगल। मारिया अपने पति की सेक्रेटरी और असिस्टेण्ट बन गई। एन्तॉयने मे विदेशी भाषाओ के प्रति कुछ अभिरुचि नही थी, सो मारिया ने अग्रेजी और लैटिन सीख ली। वही उनके लिए प्रीस्टले, कैवेण्डिश, तथा युग के अन्य वैज्ञानिको के विज्ञान-सम्बन्धी निबन्धो का अनुवाद किया करती थी। मारिया कार्यकुशल भी थी और मनोज्ञ भी। उसने लैवॉयजिए के घर को फ्रास के, तथा देश-विदेश के वैज्ञानिको के लिए एक आकर्षक सकेत-स्थान बना दिया। कला मे भी उसकी प्रतिभा थी, रुचि थी—लैवॉयजिए के ग्रन्थो के लिए रेखाचित्र भी प्राय वही बनाया करती थी।

लैवॉयजिए ने अपने महान ग्रन्थ 'चीमिआ के सस्मरण' को गिलोटीन की प्रतीक्षा करते हुए जेल मे पूरा किया था। उसे भी मारिया ने ही पीछे चलकर सम्पादित किया था और मुद्रित कराया था।

कई वर्षों से वैज्ञानिको के सम्मुख एक महान प्रश्न चला आ रहा था—'यह आग क्या चीज है?' प्राचीन विद्वानो का विचार था कि अग्नि एक तत्त्व है, और सभी भौतिक तत्त्वो मे श्रेष्ठतम तत्त्व। प्राचीन सभ्यताओ मे कितनी ही अग्नि की पूजा, एक देवता मानकर, करती भी आई है। चीजें जलती क्यो है—इसका एक सर्वप्रिय-सा समाधान लैवॉयजिए के दिनो मे 'ज्वलन का फ्लोजिस्टन' सिद्धान्त था।

इस स्थापना के अनुसार, वस्तु मे ज्वलन-शक्ति का अर्थ यह समझा जाता था कि उसमे फ्लोजिस्टन की मात्रा ज्यादा है। किसीने भी फ्लोजिस्टन को अलग एक तत्त्व के रूप मे कभी देखा नही था, न ही कोई यह कल्पना भी कर सका था कि यह क्या वस्तु हो सकती है। किन्तु मानता इसे बदस्तूर सभी कोई आ रहा था। प्रीस्टले जैसा महा-मनीषी भी जिसने ऑक्सीजन का सबसे पहले पता किया था, फ्लोजिस्टन की कल्पना को मरते दम तक मानता रहा था। प्रस्तुत स्थापना का सबसे बडा प्रमाण था—जल रही वस्तु मे से उठती ज्वालाए—कि सचमुच कुछ चीज है जो वस्तु से विमुक्त होकर नभोमुख चल देती है। यह चीज, जिसे जलती चीजें इस प्रकार खो देती है, देखनेवालो की बुद्धि मे फ्लोजिस्टन थी!

इन्ही दिनो लैवॉयजिए के परीक्षणात्मक अध्ययनो का विषय था—धातुओ मे जग का लगना, और वस्तुजात मे ज्वलन-प्रक्रिया। इन परीक्षणो मे उसका प्रत्यक्ष इसके

बिलकुल विपरीत था—जलते हुए, वस्तुओं का भार घटने की बजाय कुछ बढ़ता ही है। स्वभावतः, उसकी आस्था 'फ्लोजिस्टन' स्थापना से अब विचलित हो गई (कि जलता चीज़ों से कुछ बाहर निकल जाता है)।

परिणामतः लैवॉयज़िए ने एक ऐसे परीक्षण का आविष्कार किया जो रसायन के क्षेत्र में शायद श्रेष्ठतम परीक्षण माना जाता है। ऐसा परीक्षण रसायन के इतिहास में दूसरा कभी नहीं हुआ। एक रिटॉर्ट में उसने कुछ पारा, बड़ा माप-तोलकर, डाला (देखें चित्र)। इसका सम्पर्क एक उलटे-मुंह बन्द बोतल में पड़ी हवा के साथ कर दिया गया। हवा का परिमाण भी अंकित था। इस बोतल को सील करके, पारे के एक टब में रखकर, वायुमण्डल के सम्पर्क से सर्वथा अस्पृश्य कर दिया गया। अब लैवॉयज़िए ने रिटॉर्ट में पड़े पारे को बड़े धीमे-धीमे गरम करना शुरू किया : कुछ तो जलकर लाल-लाल चूर्ण बन गया : और, उधर, बैल-जार की औंधी बोतल में द्रव ऊपर को उठने लगा जिसका अर्थ यह था कि उसके अन्दर बन्द हवा का परिमाण घटता जा रहा है। बारह दिन तक यह घटौती बाकायदा चलती रही और, उसके बाद फिर, न रिटॉर्ट में लाल पाउडर ही और बने और न बेल-जार में पारा ऊपर को उठे (बन्द हवा में और कमी नहीं आई)। परीक्षण शुरू करने से पूर्व रिटॉर्ट में, ट्यूब में, और बेल-जार में कुल मिलाकर 50 क्यूबिक इंच हवा थी; परीक्षण की समाप्ति पर अब वह केवल 40 क्यबिक इंच रह गई थी।
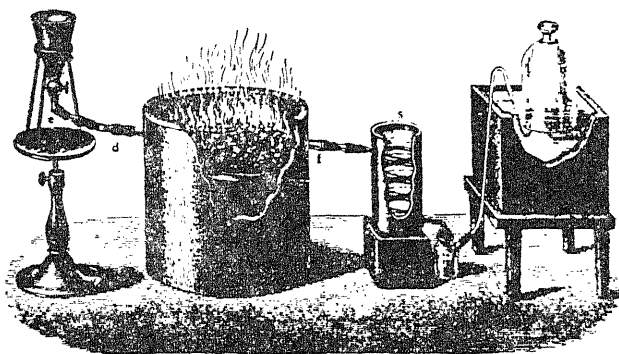
पानी को विघटन के लिए लैवॉयज़िए का उपकरण

परीक्षण के प्रथम अंश की परिसमाप्ति पर लैवॉयज़िए ने रिटॉर्ट में इकट्ठ हुए चूर्ण को बड़ी सावधानी के साथ समेटा और उसे बहुत ही ज़्यादा गरमी देना शुरू कर दिया। जो गैस उससे निकली वह (पिछले परीक्षण में गुमशुदा) 10 क्यूबिक इंच (हवा) ही निकली। उसने इन निष्कर्षों की व्याख्या में भी तनिक गलती नहीं आने दी : मूल 'वायु' का यह दसवां हिस्सा एक गैस थी जो पारे के साथ मिलकर शिंगरफ़ बन गई थी। प्रीस्टले ने इसीको 'आदर्श गैस' कहा था, और लैवॉयज़िए ने इसे नाम दिया—ऑक्सीजन। यह नाम ग्रीक भाषा की दो धातुओं से मिलकर बनता है जिसका अर्थ होता है—अम्ल-

जनक (किन्तु लैवॉयज़िए की, तदनुसार, यह कल्पना गलत थी कि सभी अम्लों में ऑक्सीजन की सत्ता अपरिहेय है।)

परीक्षणों में लैवॉयज़िए एक बहुत ही फूंक-फंककर कदम उठानेवाला वैज्ञानिक था। सही-सही परीक्षण करने के लिए उसने कुछ निहायत ही नाज़ुक तराज़ुएं तैयार की थीं। उसका कहना था :

"रसायनशास्त्र की उपयुक्तता एवं उपयोगिता का आधार ही क्योंकि उपादानों एवं विपरिणामों के सही-सही परिमाणों का विनिश्चय होता है—इसमें ज़रा-सी भी गलती अक्षम्य हो सकती है—इसीलिए हमारे उपकरण निहायत ही सुथरे होने चाहिएं।"

लैवॉयज़िए की गणना आधुनिक रसायनशास्त्र के प्रवर्तकों में की जाती है। और उसकी इस प्रतिष्ठा का आधार, उसके किए परीक्षण ही हैं जिन्होंने 'द्रव्य की अ-नश्वरता' का मूल सिद्धान्त प्रतिपादित कर दिखाया था कि 'हम न किसी वस्तु का नाश कर सकते हैं, न निर्माण।' यह नियम आधुनिक रसायन-सूत्रों में दिशान्तरण का द्योतक है कि हानि और लाभ अन्ततः, दोनों, समतुलित ही हो जाते हैं।

लैवॉयज़िए ने एक और अद्भुत परीक्षण भी किया : शुद्ध ऑक्सीजन में हीरे को जलाकर उसने कार्बन-डाइक्साइड पैदा कर दिखाई। अर्थात्, कोयला और हीरा, रासायनिक दृष्टि से, दोनों एक ही तत्त्व हैं : दोनों कार्बन हैं।

हमारे शरीर में जो निर्माण और विनाश की निरन्तर प्रक्रिया चलती रहती है—रोटी खाते हुए, और अवशिष्ट-वस्तु को बाहर फेंकते वक्त जो रासायनिक, एवं शक्ति-सम्बन्धी, परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं—विज्ञान में उसे 'मेटाबोलिज़्म' (संचय-अपचय) नाम दिया जाता है। हां, अलबत्ता, यह बात सच है कि विश्राम की अवस्था में हमें उतनी शक्ति की आवश्यकता नहीं होती। डाक्टर लोगों की दिलचस्पी शरीर की मूलभूत आवश्यकताओं में, मौलिक चयापचय में, ही अधिक होती है कि जीवित रहने के लिए हमें कितनी खुराक की ज़रूरत है। लैवॉयज़िए ने शरीरतन्त्र में तथा जीव-रसायन में अनुसन्धान किए जिससे कि शरीर की मूलभूत चयापचयन विधियों की यथावत् परीक्षा की जा सके। गिनी-पिग्ज़ पर उसने कुछ परीक्षण किए कि वे सांस में कितनी ऑक्सीजन अन्दर ले जाते हैं और, उसके मुकाबले में, कितनी कार्बन-डाइक्साइड उगलते हैं।

वैज्ञानिकों में लैवॉयज़िए ने ही सर्वप्रथम यह प्रत्यक्ष कर दिखाया था कि हमारे अन्दर 'ज्वलन' की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है, जिसका अर्थ होता है भोज्य द्रव्य में तथा ऑक्सीजन में परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया की संततता। लैवॉयज़िए, शरीर द्वारा व्यक्त अग्राह्य वस्तुजात के सम्बन्ध में ही एक परीक्षण कर रहा था जबकि फ्रांसीसी क्रान्ति के उपरान्त आई आपाधापी में उसे लोग कैद कर ले गए।

इंग्लैंड में अनुसन्धान करते हुए कैवेण्डिश एक 'ज्वलन-प्रकृति' गैस के सम्बन्ध में परीक्षण कर रहा था। और उसने इस गैस का नाम भी 'जलनेवाली गैस' रख छोड़ा था। 1781 में उसने प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिखाया कि इधर यह गैस जलती है और उधर पानी बनना शुरू हो जाता है। लैवॉयज़िए ने कैवेण्डिश के इन परीक्षणों को अपने घर में करके देखा और उसके तात्पर्य को विद्वज्जगत् के सम्मुख रखा : कि पानी, एक तत्त्व नहीं

अपितु, दो तत्त्वों का एक मिश्रण है, एक समास है। ज़माने के कुछ साइंसदां इतना ज़्यादा कैसे बरदाश्त कर सकते थे, उनमें एक बौखला भी उठा : "और अब जादूगरों का यह सरदार हमारी भोली अक्ल को यह कबूल करने के लिए अपना सारा ज़ोर लगा रहा है कि पानी—जो हमें कुदरत का दिया हुआ 'आग को बुझा देनेवाला' शायद सबसे ताकतवर तत्त्व है, वह पानी—दो गैसों का एक व्यामिश्रण है : और इन दोनों तत्त्वों में भी एक वह है जिसको जलाने की ताकत और किसी तत्त्व में है ही नहीं।"

किन्तु आज भी तो प्रकृति का यह आश्चर्य असमाधेय ही है कि पानी में दो अवयव होते हैं : जिनमें एक तो हाइड्रोजन है जो जल जाने में ज़रा देर नहीं लगाता और दूसरा—ऑक्सीजन, जिसके अभाव में कोई चीज़ जल नहीं सकती; और इनका मिला यही पानी है जो जलती आग को तत्क्षण बुझा देता है। लैवॉयज़िए ने ही इस ज्वलनशील तत्त्व को उसका आधुनिक नाम हाइड्रोजन (जल-जनक) दिया था।

सारा जीवन लैवॉयज़िए, बीच-बीच में अपनी गवेषणाओं को बरतरफ करके, लोकसेवा में भी रत होता रहा। अमरीका के बेंजामिन फ्रैंकलिन की तरह वह भी कुछ कम सर्वतोमुख न था : रसायन में, शरीरतन्त्र में, वैज्ञानिक कृषि में, वित्त-व्यवस्था में, अर्थशास्त्र में, राज्यानुशासन में और सार्वजनिक शिक्षा में—सभी क्षेत्रों में वह एक माना हुआ प्रवर्तक था।

अमरीकी क्रांति के दिनों में लैवॉयज़िए ने फ्रांस की एक सेवा की, जिसका कुछ आनुषंगिक लाभ अमरीकी क्रांतिकारी सेना को भी हुआ। फ्रांस में एक प्राइवेट संस्था के पास बारूद बनाने के एकाधिकार थे। किन्तु यह संघ अपने कर्तव्य को ठीक-ठीक निभा नहीं रहा था—एक तो मसाला इष्ट मात्रा में उत्पन्न न करके और दूसरे, घटिया दर्जे का मसाला तैयार करके।
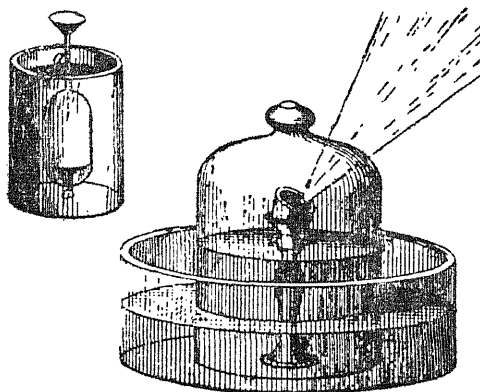
लैवॉयज़िए द्वारा विकसित हाइड्रोमीटर

लैवॉयज़िए ने इस कार्य के लिए एक सरकारी एजेन्सी बना ली जिसने आते ही बारूद की किस्म भी बढ़िया कर दी और उसकी पैदावार को भी दुगने से ज़्यादा कर

दिया। जिसका नतीजा यह हुआ कि फ्रास अब इन नये 'उपनिवेश वालो' के साथ खलकर लडाई लड सकता था। बारूद पर ये परीक्षण करते हुए एन्तॉयने और मारिया की लगभग जान ही जाती रही थी, दोनो बाल-बाल बच गए—जबकि उनके दो साथी परीक्षण करते हुए मर भी गए।

आइरीनी दु पोत लैवॉयजिए की फैक्टरी मे उन दिनो एक शागिर्द था, और यह लैवॉयजिए ही था जिसने आगे चलकर डिलावेयर मे एक स्वतत्र बारूद फैक्टरी चलाने मे दु पोत की सहायता भी की थी। आइरीनी की इच्छा थी कि वह अपने इस कारोबार को 'लैवॉयजिए मिल्स' नाम दे, किन्तु परिवार वालो ने कहा, नही, 'दु पोत मिल्स'। वही बारूद फैक्टरी आज एक विशाल उद्योग-रसायन कम्पनी बन चुकी है जिसे आज भी हम 'ई०आई० दु पोत द नेमूर्स' के नाम से जानते है।

लैवॉयजिए को खेती मे भी बडी ज्यादा और व्यक्तिगत दिलचस्पी थी। ला बूर्जे मे उसकी अपनी मिल्कियत का एक खासा बडा फार्म था जिसे उसने एक प्रकार से विभिन्न किस्मो की खाद, और चरागाह के लिए और खेतीबाडी के लिए, ज़मीन को अलग-अलग बाटकर रख देने की उपयोगिता आदि समझाने के लिए, एक परीक्षणशाला ही बना छोडा था। अपेक्षाकृत बहुत ही थोडे समय मे उसने यहा कृषि-सम्बन्धी वैज्ञानिक नियमो के प्रयोग द्वारा गेहू की पैदावार को दुगुना, और पशुधन को पाच-गुना कर दिखाया।

लैवॉयजिए एक माना हुआ राजनीतिज्ञ भी था। आर्लिएन्स की प्रान्तीय परिषद् मे वह तीसरा एस्टेट (जनता) का प्रतिनिधि था। उसकी अपनी दृष्टि प्रजातन्त्र-परक थी जिसका मूल-सूत्र उसके अपने शब्दो मे यह है कि "सब सुख-सुविधाए, कुछ ही व्यक्तियो तक सीमित न होकर, सार्वजनीन होनी चाहिए।" उसकी धारणा थी कि मनुष्यमात्र व्यक्तिगत स्वतत्रता का अधिकारी है।

1789 मे लैवॉयज़िए को फ्रास के बैक का प्रेजिडेण्ट चुन लिया गया। नेशनल असेम्बली के सम्मुख उसने एक रिपोर्ट पेश की जो वित्त के मामलो मे आकस्मिक वृद्धि के सम्बन्ध मे एक त्रिकाल मौलिक विश्लेषण मानी जाती है। 1791 मे फ्रास ने उसके 'फ्रास का भू-धन' शीर्षक निबन्ध का पुनर्मुद्रण किया। फ्रास के लिए एक प्रकार की राष्ट्रीय शिक्षा-व्यवस्था भी उसने प्रस्तुत की थी जो प्राय अमरीका की आधुनिक शिक्षा-प्रणाली के अनुरूप है।

लैवॉयज़िए की एक बदकिस्मती यह थी कि वह क्रान्ति के अनन्तर उठ खडे हुए 'आतक' के एक नेता, पाल मारात, का कोप-पात्र बन गया—फकत इसलिए कि कभा उसने फ्रेंच एकेडमी ऑफ साइसेज़ मे आए मारात के एक निबन्ध को अस्वीकृत कर दिया था। मारात ने लैवॉयज़िए को जनता की निगाहो मे गिराने मे कोई कसर न छोडी और राजकीय टैक्स कलैक्टरेट के सभी सदस्यो को बन्दी करवाने मे भी वह सफल हो गया कि ये सब चोर हैं, डाकू है, सदा से अवाम को लूटते आए हैं। लैवॉयज़िए औरउसके श्वसुर को एक ठसाठस भरे जेलखाने मे ठूस दिया गया। कितने ही प्रार्थनापत्र रोज़ आते कि

लैवॉयज़िए एक महान वैज्ञानिक है जिसकी सेवाएं राष्ट्र की अन्तर्व्यवस्था में भी कुछ उपेक्ष्य नहीं हैं; किन्तु कौन सुनता था ? 8 मई, 1794 के दिन गिलोटीन ने उसका प्राणान्त कर दिया ।
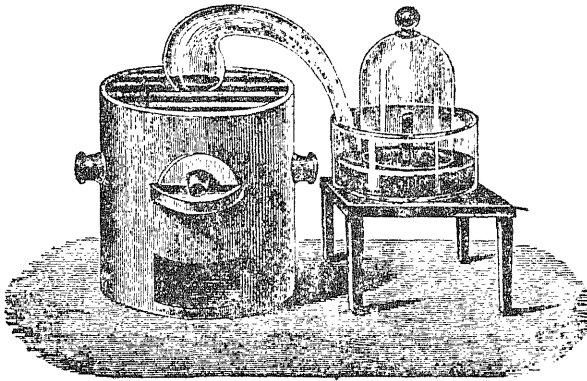
लैवॉयज़िए का 'पारद-ऑक्साइड' उपकरण

ऐलेस्सैण्ड्रो वोल्टा

आपने कभी बिजली 'चखी' है ? "अपनी ज़बान के सिरे को मैंने टिन की एक पतली-सी पतरी से ढक लिया, और चांदी के चमचे के अगले सिरे को ज़बान के पिछले सिरे से छुआकर उसके हत्थे से टिन को छुआ।" इटली के पाविया विश्वविद्यालय में भौतिकी के प्रोफेसर ऐलेस्सैण्ड्रो वोल्टा ने एक परीक्षण का वर्णन इन शब्दों में किया है। वोल्टा का ख्याल था कि ज़बान कुछ सिकुड़ने की कोशिश करेगी (जैसे उसे कुछ काट खाया हो), किन्तु उसकी बजाय उसे कुछ खट्टा-खट्टा स्वाद ही आया, बस।

वोल्टा का जन्म इटली के कोमो शहर में 18 फरवरी, 1745 को हुआ था। कोमा आल्प्स पर्वतश्रृंखला के चरणों में लोटता, कोमो झील पर बसा, सबसे बड़ा शहर है। इस प्रसिद्ध और सुन्दर झील पर अमीर लोग जहां आकर बस गए हैं, वहां यूरोप के साधारण जन मौसम-मौसम में यात्री के रूप में प्रायः आते रहते हैं।

वोल्टा का परिवार कोई बहुत धनी परिवार नहीं था। किन्तु बालक होनहार था। चर्च में कुछ प्रतिष्ठित सम्बन्धियों के प्रभाव से उसकी शिक्षा का कुछ प्रबन्ध हो ही गया। विश्वविद्यालय की पाठ्य-विधि समाप्त करके, और 17 साल की उम्र में ही ग्रेजुएट होकर, वोल्टा को कोमो के हाई स्कूल में पढ़ाने की नौकरी मिल गई। 1779 तक वह एक स्कूल-टीचर ही रहा और तब, 34 वर्ष की आयु में, पाविया विश्वविद्यालय में उसे भौतिकी विभाग की स्थापना के लिए बुलावा आया। विभाग की स्थापना करते हुए, कुछ न कुछ वक्त अनुसन्धान के लिए भी निकल आता था।

कोमो में स्कल-टीचरी करते हुए ही वोल्टा ने 'इलेक्ट्रोफोरस' का आविष्कार कर

लिया था जिसका बयान, इग्लैंड मे, जोजेफ प्रीस्टले को लिखे उसके एक खत मे मिलता है। इलेक्ट्रोफोरस कोई बहुत काम की चीज नही है किन्तु आज भी उसका इस्तेमाल हम कक्षा में स्थिर विद्युत् के प्रदर्शन मे करते है।

किन्तु वोल्टा ने इलेक्ट्रोफोरस का प्रयोग विद्युत्-निर्माण मे कैपेसिटर अथवा कण्डेन्सर के कार्य मे कौन-से नियम काम मे आते हैं, यह जानने के लिए किया था। वोल्टा ने इस उपकरण का नाम 'कण्डेन्सेटर' रखा था किन्तु लन्दन की रॉयल सोसाइटी के 'ट्रान्जेक्शन्ज़' के अनुवादक ने सक्षिप्त करते हुए उसे 'कण्डेन्सर' कर दिया। वोल्टा ने इसके प्रयोग मे एक और कुशलता यह भी दिखाई कि बिजली को नापने के लिए उन दिनो जो स्थूलयन्त्र (इलेक्ट्रोस्कोप तथा इलेक्ट्रोमीटर) इस्तेमाल मे आते थे उन्हे क्रियाशील करने के लिए विद्युत् के आवेश को प्र-गुणित भी किया जा सकता है। इलेक्ट्रोस्कोप को चार्ज करके उसने उसकी प्लेटो को अलग कर दिया, जिससे हुआ यह कि प्लेटो की पोटेन्शल या वोल्टेज बढ गई। इस उपकरण के लिए उसने एक नया नाम भी सुझाया—माइक्रो-इलेक्ट्रो-स्कोप अर्थात् सूक्ष्म-विद्युत्-प्रदर्शक।

1791 मे बोलोना विश्वविद्यालय मे प्राणिशास्त्र तथा शरीरतन्त्र के प्राध्यापक लुइजि गैल्वेनि विश्वविद्यालय की परीक्षणशाला मे कुछ मेढको का चीर-फाडी करके अध्ययन कर रहा था। पीतल के एक नुकीले हुक को जबरदस्ती मेढक की रीढ मे घुसेड दिया गया, और एक सहायक ने लोहे के स्केलपल द्वारा उसकी टाग को छुआ। ज्योही हुक
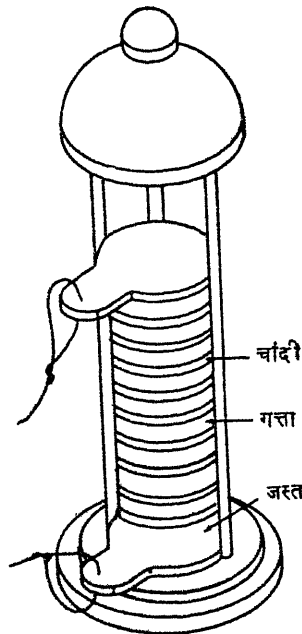
वोल्टा का 'पाइल'

और स्केल्पल, अन्दर पहुचकर, परस्पर स्पर्श मे आए—मेढक की जाघ बडी बुरी तरह से सिकुडने लगी। गैल्वेनि ने फिर करके देखा—फिर वही-कुछ मेढक की जाघ फिर झटक गई।

गैल्वेनि ने अपने इन प्रत्यक्षो को प्रकाशित कर दिया। उसका विचार था कि खुद मेढक मे ही एक किस्म की विलक्षण बिजली पैदा हो जाती है जिससे यह झटका आ जाता है। वोल्टा ने भी परीक्षण के निष्कर्षो को पढा, किन्तु उसे उनपर विश्वास नही आया। लेकिन जब उसने खुद उन्हे दोहरा कर देखा, तो वह भी कहने लगा, "बात ही कुछ ऐसी है कि अजूबे मै भी खुद कम नही करता आया हू और पूर्ण अविश्वास से खिसककर कितनी ही बार मै भी विश्वास के नये उल्लास से पुलकित होता आया हू।"

कुछ हो, वोल्टा को फिर भी यह विश्वास नही आया कि यह विद्युत् पशु की देह से उत्पन्न हुई थी। उसने वस्तुस्थिति का और गहन अध्ययन किया। और 20 मार्च, 1800 को उसने एक प्रसिद्ध पत्र रॉयल सोसाइटी के नाम लिखा जिसमे एक प्रकार की 'वोल्टाइक पाइल' का वर्णन था। कोई भी इस पाइल को बना सकता है वोल्टा ने चादी और जस्त के कुछ सूखे तवे लिए और कुछ गत्ते के कटे हुए तवे खूब नमकघुले पानी मे गीले किन्तु टपकते हुए नही लिए और उन्हे चादी-गत्ता-जस्त-चादी के निरन्तर-क्रम मे रख दिया।

पाइल के सिरो से विद्युत् का अबाध सचार सभव था। वोल्टा ने इस प्रकार पहला इलेक्ट्रिक सेल तैयार कर लिया—जो हमारे रेडियो वगैरह मे प्रयुक्त ड्राई-सेल 'बैटरी' का एक प्रकार से पूर्वाभास है। विज्ञान के इतिहास मे विद्युत् के निरन्तरित प्रवाह का यह प्रथम प्रदर्शन था। और जब वह टिन और चादी के दो चमचो को एक साथ अपने मुह मे ले गया तो उनसे भी बिजली पैदा होने लगी। यहा भी तो वही दो धातुए थी, और विद्युत् के सचरण के किए एक द्रव माध्यम था।

इस अनुसन्धान का फल यह हुआ कि विद्युत् और रसायन मे गवेषणा के कितने ही नये क्षेत्र एकदम खुल आए। एक चीज़ तो यह हुई, शायद सबसे पहली, कि वोल्टाइक पाइलो का प्रयोग करके वैज्ञानिक पानी को हाइड्रोजन और ऑक्सीजन मे फाडने मे सफल हो गए; और इसके अतिरिक्त डेवी ने सोडियम और पोटाशियम की खोज कर ली, और विद्युत् तथा चुम्बकशक्ति-विषयक अध्ययन मे अब कुछ असाधारण प्रगति आ गई।

देश-देश से वोल्टा को सम्मानित किया जाने लगा। नेपोलियन ने उसे पेरिस की इन्स्टीट्यूट मे एक व्याख्यानमाला देने के लिए निमन्त्रण भेजा। एक स्वर्ण-पदक उसके सम्मान मे तैयार किया गया। और जब वोल्टा ने कहा कि अब मेरी उम्र बहुत अधिक हो गई है, मुझे त्यागपत्र दे देना चाहिए, तो उससे प्रार्थना की गई कि, नही, वर्ष मे एक ही लैक्चर देने के लिए सही, वह विश्वविद्यालय मे ही बदस्तूर प्रोफेसर बना रहे, तब भी उसे वही तनख्वाह मिलती रहेगी। यही नही, लम्बार्दी के प्रतिनिधि रूप मे उसे सेनेट का सदस्य भी चुन लिया गया। आस्ट्रिया के बादशाह ने वोल्टा को पेदुआ के दर्शन-विभाग का महा-निदेशक बन जाने के लिए अभ्यर्थना की। 1819 मे 74 साल की उम्र मे क्रियात्मक जीवन से निवृत्त होकर वोल्टा अपनी जन्मभूमि कोमो मे लौट आया जहा

1827 मे उसकी मृत्यु हुई।

कोमो मे वोल्टा की एक भव्य मूर्ति, मानो उसके अनुसन्धान-रत जीवन के स्मारक-रूप मे, आज भी खडी है। किन्तु एक और स्मारक जो दुनिया मे हर-कही 'व्याप' चुका है, वह है विद्युत् के क्षेत्र मे सभी कही वोल्टा के नाम का विश्वजनीन प्रयोग। 1893 मे विद्युत्-विशारदो की काग्रेस ने इलेक्ट्रोमोटिव फोर्स की इकाई का नाम ही 'वोल्ट' निर्धारित कर दिया। वोल्टा की पहली पाइल ही थी जो मानवजाति को विद्युत के युग मे प्रवेश-पत्र दे गई।
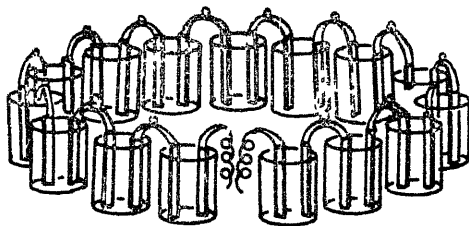
एक पुरानी बैटरी। वोल्टा की पाइल के पश्चात् अब अगला कदम रह गया था—किसी तरह से रासायनिक सेलों की एक परम्परा को क्रमबद्ध कर सकना। इसके मूल में भी वही नियम सक्रिय होते है जो आजकल की मोटर की बैटरियों में काम में लाए जाते हैं। इसमें इलेक्ट्रोलाइट नाम के एक मिश्रण में दो धातुओं में परस्पर एक प्रकार की रासायनिक प्रतिक्रिया होती है।

एडवर्ड जेन्नर

छः करोड़ आदमी, अर्थात्—लन्दन, न्यूयार्क, टोकियो, शंघाई और मास्को की कुल आबादी का दुगुना। अनुमान किया जाता है कि 1700 और 1800 के बीच यूरोप में 6,00,00,000 लोग चेचक से मारे गए थे।

1721 की महामारी में बोस्टन की आधी आबादी चेचक-ग्रस्त थी, और इनमें हर 10 रोगियों में एक की मृत्यु भी हुई। किन्तु आज यह विभीषिका दुनिया से ही प्रायः उठ चुकी है। विभीषिका का उन्मूलन टीके की नई ईजाद द्वारा ही सम्भव हो सका था, और इसका प्रवर्तक था—डाक्टर एडवर्ड जेन्नर।

जेन्नर का जन्म इंग्लैंड के ग्लोस्टरशायर कस्बे में 17 मई, 1749 को हुआ था। पादरी पिता ने प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करने के लिए बालक को स्थानीय पाठशालाओं में भेजा। बचपन से ही जेन्नर की प्रवृत्ति प्राणिशास्त्र में कुछ थी और उसने चिकित्सा-शास्त्र का विधिवत् अध्ययन भी शुरू कर दिया था। डाक्टर बनने का एक तरीका उन दिनों यह था कि किसी और डाक्टर की शागिर्दी कर लो—और जेन्नर भी शल्यविद् डेनिएल लुडलो के यहां एप्रेण्टिस लग गया। 21 साल की उम्र में जेन्नर लन्दन के सेण्ट जॉर्ज हास्पिटल में पहुंचा कि युग के महान सर्जन जान हण्टर की छत्रछाया में आकर वह भी कुछ बन सके।

डाक्टर हण्टर में असीम कुतूहल भरा था, असीम उत्साह भरा था। वह ऐसा चिकित्सक था जिसकी आस्था चीज़ों को खुद करके देखने में अधिक थी। दुर्भाग्य से उसने खुद को ही कितने परीक्षणों की आधारभूमि बनाया, जिसका नतीजा यह हुआ कि एक लाइलाज बीमारी उसे आ लगी और उसकी जिन्दगी छोटी कर गई। खैर,

अपने मे यदि उसने यह बीमारी भर ली, तो विद्यार्थियो मे अपना यह जीवन-दर्शन ही अधिक भरा कि 'हैरान क्यो होते हो, परीक्षण करके खुद देख क्यो नही लेते ?'

जान हण्टर का जेन्नर के साथ पत्र-व्यवहार चलता रहता था, और वह जीवन-भर उसका मित्र एव परामर्शदाता रहा। सेण्ट जॉर्ज के हास्पिटल से स्नातक हो चुकने पर हण्टर ने उसे ग्लोस्टरशायर वापस भेज दिया कि वहा जाकर प्रेक्टिस शुरू कर दे। उसका शायद ख्याल था कि गाव मे पैदा हुआ जेन्नर शहर के तग वातावरण मे प्रसन्न नही रह सकेगा। किन्तु गाव मे जाकर डाक्टरी करने के इस परामर्श के लिए दुनिया आज हण्टर की बहुत ऋणी है।

वैज्ञानिक चिकित्सा तथा आधुनिक चमत्कारी दवाओ के प्रयोग मे आने से पूर्व आम विश्वास देसी 'टोटको' मे हुआ करता था। समझा जाता था कि कुछ पौधो मे रोग को दूर करने की कुछ खास ताकत होती है। डिजिटेलिस का प्रयोग हृद्‌रोग मे बहुत पुराने समय से चला आता था यद्यपि खुद डाक्टरो को भी तब यह मालूम न था कि उसके इस प्रभाव का कारण क्या है। काई अथवा फफूदी का प्रयोग लोग पहले भी करते आए थे कि बीमारी और न फैलने पाए, यद्यपि फ्लैमिंग ने पेनिसिलीन का आविष्कार बहुत बाद मे आकर ही किया। आज भी कितनो ही का विश्वास है कि आवाज़ बैठ जाए तो कच्चा प्याज़ गले के दर्द को ठीक कर सकता है। कुछ हो, कच्चे प्याज़ मे कीटाणुओ को नष्ट करने की ताकत सचमुच है।

वैज्ञानिक विश्लेषण के चिकित्सा-क्षेत्र मे प्रवेश करने से पहले ऐसे ही कुछ और अन्ध-विश्वास लोक-प्रसिद्ध थे जिनमे एक यह भी था कि कुछ बीमारिया इन्सान को ज़िन्दगी मे एक ही बार लगा करती हैं। आज के माता-पिता सन्तुष्ट हो जाते हैं कि उनकी लडकियो को जर्मन मीज़ल्स (खसरा) हो गया है, क्योकि अधेड उम्र की किसी औरत को अगर यह बीमारी पकड बैठे तो उसके लिए यह एक मुसीबत ही बन जाए, किन्तु बच्चो पर इसका कोई खास असर नही होता। जिस लडकी को जर्मन खसरा एक बार हो गया सारी उम्र अब वह इसकी ज़िल्लत से मुक्त रहेगी।

यही चीज़ चेचक के बारे मे भी लोक-विश्रुत थी कि एक बार चेचक से बच निकलने पर मरीज़ को फिर दोबारा चेचक नही लग सकती। पूर्व के लोग इस विचार से फायदा उठाने लगे—अपने जिस्म मे जानबूझकर चेचक के कीडो को प्रवेश दे-देकर। उन्होने तो एक ढग भी निकाल लिया जिससे इन कीडो की ताकत कुछ कम हो जाए और अन्दर पहुचकर ये कुछ ज्यादा नुकसान न पहुचा सकें। चेचक का मामूली-सा एक आक्रमण, कुछ दिन बाद फिर स्वस्थ, और फिर बीमारी का उम्र-भर नाम नही। बदकिस्मती से यह उपाय कुछ ज्यादा ही काम कर जाता, कितने ही शख्स इजेक्शन के बाद फिर भले-चगे कभी न होते।

ग्लोस्टरशायर की भोली जनता जानती थी कि 'काउपॉक्स' या बडी माता के बीमार को चेचक नही लगती। 'माता' के नाम से ही स्पष्ट है कि यह बीमारी आम तौर पर गौओ को लगा करती है, और गौओ से सक्रान्त होकर ही मनुष्यो मे आती है। लेकिन हैरानी तो यह थी कि एक ऐसी बीमारी, गौओ को जाकर क्यो चिपट जाती है

जिसकी पैदाइश ही घोड़ों के सुमों में होती है।

बड़ी माता या शीतला और चेचक की इस अद्भुत स्थिति का अध्ययन डाक्टर जेन्नर ने शुरू किया। वृद्ध आचार्य हण्टर ने उसे प्रोत्साहित किया, "अनुसन्धान करो, किन्तु धैर्य के साथ, और किसी भी पार्श्व की उपेक्षा कभी न करते हुए।"—और, किसी भी वैज्ञानिक अनुसन्धान में, एक निर्देश-सूत्र और क्या हो सकता है? कुल मिलाकर जेन्नर ने 27 मरीज़ों की परीक्षा की। 1796 में उसने अपने निष्कर्षों को प्रकाशित कर दिया।

जेन्नर ने हर बीमार का क्रमिक 'इतिहास' तैयार किया और पाया कि, शुरू-शुरू की परीक्षाओं में, शीतला के रोगियों को चेचक नहीं लगती, हालांकि चेचक के मरीज उनके सम्पर्क में नित्यप्रति आते हैं। यही नहीं, चेचक के कुछ कीटाक्त द्रवों को उसने इन लोगों की बांहों में इंजेक्ट करके भी देखा कि इन्हें चेचक छूता तक नहीं।

डाक्टर जेन्नर अपने पुत्र को टीका लगाते हुए।

और अन्त में—हमें बच्चे के मां-बाप की हिम्मत की दाद देनी चाहिए—डाक्टर जेन्नर ने एक आठ साल के तन्दुरुस्त बच्चे जिम्मी फिप्स को माता का टीका लगाया और उसे तन्दुरुस्त से बीमार कर दिया। इसके बाद उसने चेचक का टीका उसे, और एक ऐसे शख्स को भी लगाया जिसे माता नहीं थी। चेचक निकली—माता की लानत से मुक्त तन्दुरुस्त आदमी में, माता के कीटाणुओं से 'सुभग' फिप्स में नहीं।

जेन्नर ने जब अपने इन निष्कर्षों को प्रकाशित किया, स्वभावतः एक तूफान ही उठ खड़ा होना था। कुछ ने तो यह कहा कि यह प्रकृति के नियमों का 'उल्लंघन' किया जा रहा है, जबकि कुछ और ने दावे पेश किए कि यह खोज उनकी थी, और कुछ ऐसे भी थे जिन्होंने चेचक की इस कहानी को ठीक तरह से समझे बगैर परीक्षण भी शुरू कर दिए और, इसी घपले में, बीमारों को तन्दुरुस्ती तो क्या देनी थी—मौत बख्श दी!

उत्तेजना का यह दौर आया और चला भी गया, और तब जेन्नर ने अपने तरीकों को चिकित्सा-जगत् के सम्मुख सिद्ध कर दिखाया, जिसके श्रेयस्वरूप अब सम्पूर्ण सभ्य विश्व से उसे सम्मान और आदर मिलने लगा। पार्लियामेंट ने उसके लिए नाइटहुड की सिफारिश की और 20,000 पौंड इनाम दिलवाया। ऑक्सफोर्ड ने उसे एक ऑनरेरी डिग्री दी। रूस के ज़ार ने उसे एक सोने की अंगूठी भेजी। फ्रांस के नेपोलियन ने खुले दिल से उसकी प्रशंसा की। और अमेरिका से इण्डियनों का एक प्रतिनिधिमण्डल उसके लिए उपहार और धन्यवाद के संदेशों को लेकर इंग्लैंड पहुंचा।

पोलियो के टीके का आविष्कर्ता डाक्टर जोनास साल्क

इस व्यक्ति ने गंवारों के एक पुराने अन्धविश्वास का अध्ययन किया और सिद्ध कर दिखाया कि उसमें वैज्ञानिक तथ्य था। साथ ही उसमें यह साहस भी था कि एक मामूली बीमारी को, इंजेक्शन के ज़रिये, अन्दर पहुंचाकर इन्सान को एक भारी ज़िल्लत से बचाया जा सकता है। दिल से वह एक देसी हकीम ही था और, यह महान् आदर-सम्मान प्राप्त करके, वह पुनः अपने ही गांव में लौट आया और अपनी ज़िन्दगी के आखिरी साल उसने अपने खेतों पर ही गुज़ारे। जनवरी 1823 में उसकी मृत्यु हुई।

अब कभी बांह पर लगे टीके का निशान जब आपके सामने आए, कुछ उन अज्ञात व्यक्तियों का भी ख्याल कर लिया करें जिन्होंने कभी इन्हीं परीक्षणों के लिए खुद को पेश किया था। और एडवर्ड जेन्नर का भी ख्याल कर लिया करें जिसने टीके का आविष्कार करके हम सबको चेचक से हमेशा के लिए हिफाज़त दिला दी।

और उन सभी किस्म के टीकों का ख्याल भी कर लिया करें जो हमारे स्वास्थ्य के अभिरक्षक हैं, प्रहरी हैं—जिनमें डाक्टर योनास साल्क का निकाला पोलियो से महफूज रखनेवाला एक टीका भी है।

काउण्ट रूमफोर्ड

कुछ लोगों के दिल से शायद नहीं ज़बान से अक्सर यही निकलता सुना जाता है कि ज़िन्दगी की सबसे बड़ी नियामत अगर कोई है, तो वह है कॉफी या कह्वे का बढ़िया ढंग से बना एक कप। इनकी नज़र में तो काउण्ट रूमफोर्ड सचमुच एक महान दिग्गज होना ही चाहिए, क्योंकि कॉफी की बूंद-बूंद को निचोड़ने के लिए जो एक खास तरह की केतली काम में लाई जाती है उसका आविष्कार रूमफोर्ड ने ही किया था। किन्तु जिन्हें विज्ञान का कुछ अधिक गम्भीर अध्ययन इष्ट है, उनकी दृष्टि में रूमफोर्ड का महत्त्व ताप के विषय में उसके किए अनुसन्धानों के कारण है।

काउण्ट रूमफोर्ड का जन्म मैसाचुसेट्स की ब्रिटिश कालोनी के वोबर्न कस्बे में 1753 ई० में हुआ था। उसका असली नाम था—बेंजामिन टाम्पसन। पिता, जो पेशे से एक किसान था, बेंजामिन को कुछ ही महीने का अनाथ छोड़कर चल बसा। बालक की शुरू की शिक्षा-दीक्षा एक प्राइवेट ट्यूटर के हाथों हुई, जो स्थानीय हार्वर्ड विश्वविद्यालय का ही एक ग्रेजुएट था। अन्त में, स्थानीय स्कूलों में जाकर उसका विद्यार्थी-जीवन समाप्त हुआ। बालक में विद्यार्थीकाल से ही होनहार होने के लक्षण थे। गणित में तथा परीक्षणों में उसकी प्रतिभा ने तभी से कुछ कमाल दिखाना शुरू कर दिया था; फिर भी 13 साल की उम्र में उसे स्टोर में क्लर्की करनी पड़ी। उसका अपना जीवन का लक्ष्य था—बड़ा होकर डाक्टरी करने का, किन्तु पैसों की किल्लत के कारण वह कभी पूरा न हो सका। जब 18 साल का हुआ, तो न्यू हैम्पशायर के कॉन्कॉर्ड कस्बे में उसे स्कूल-टीचरी की एक मामूली नौकरी मिल गई। किन्तु यही कॉन्कॉर्ड इस नई बस्ती की राजधानी था, जिसका पुराना नाम था रूमफोर्ड। टाम्पसन एक निहायत ही खूबसूरत और छः फुट का लम्बे कद का नौजवान था : गन्दुमी लहराते बाल, और नीली आंखें, घुड़सवारी उसकी सचमुच

एक देखने की चीज़ होती। पहली ही नज़र जो एक सम्पन्न 30 साल की विधवा रोल्फ पर पडी, वह उसीकी हो गई। इस विधवा का स्थानीय समाज मे अच्छा-खासा प्रभाव भी था। 1772 ई० मे दोनो की शादी हो गई। बेजामिन की उम्र तब 19 थी। मिसेज़ टाम्प-सन ने उपनिवेश की सोसाइटी से जा-जाकर उसका परिचय कराया, और न्यू हैम्पशायर में ब्रिटिश सरकार द्वारा नियुक्त गवर्नर ने बेजामिन को स्थानीय मिलीशिया मे एक मेजर बना दिया।

किसान का वही बच्चा अब इस ओहदे पर पहुचकर अपने-आपको कुछ समझने लग गया, जिसका नतीजा यही हुआ कि बस्ती के क्रान्तिकारी देशभक्तो को उससे चिढ होने लगी और शक रहने लगा कि यह ब्रिटिश सरकार को छुप-छुपकर हमारी खबरे पहुचाता है। बस्ती के लोग अपने को 'स्वतन्त्रता के पुत्र' (सन्स ग्राफ लिबर्टी) मानते थे। कितनी ही बार बेजामिन को एक जासूस समझकर जब कैद मे डाला गया, तो उसने भी निश्चय कर लिया कि इन बस्तियो से अब निकल ही जाना चाहिए। 1750 के अक्तूबर मे वह एक जहाज़ मे इग्लैंड के लिए रवाना हो गया, और अपनी बीवी और नन्ही बच्ची को वही छोडता गया। पति-पत्नी मे, फिर कभी मुलाकात नही हुई। 17 साल बाद यह परित्यक्ता भी चल बसी।

इग्लैड मे पहुचकर टाम्पसन अमरीकी मामलो मे एक विशेषज्ञ माना जाने लगा, और ब्रिटिश कालोनियल आफिस मे उसे नौकरी मिल गई। साथ ही साथ वह बारूद पर कुछ परीक्षण भी कर रहा था, और लडाई के हथियारो मे कुछ बेहतरी और विस्फोट की सशक्तता लाने मे कुछ सफल वह हो भी गया, जिसका परिणाम यह हुआ कि रॉयल सोसाइटी ने उसे अपना एक सदस्य मनोनीत कर लिया और 1784 मे बादशाह ने उसे नाइट का खिताब दे दिया।

ब्रिटिश सरकार के लिए की गई उसकी लम्बी सेवाओ से प्रभावित होकर बावेरिया के शासक ने सर बेंजामिन टाम्पसन को अपना पथ-प्रदर्शक होने के लिए आम-न्त्रित किया। और बावेरिया मे आकर उसकी प्रतिभा और आकर्षक व्यक्तित्व का इतना प्रभुत्व जमा कि उसे महामन्त्री, पुलिस मन्त्री तथा ग्रैण्ड चैम्बरलेन के तीन ओहदे एक साथ सौप दिए गए। इससे अब स्वय बादशाह के बाद सबसे अधिक प्रभाव बावेरिया के सारे राज्य मे यदि किसीका था तो वह अमरीका के इस किसान-छोकरे का ही था। 11 वर्ष लगातार बेजामिन ने बावेरिया मे ही गुज़ारे और सभी तरह के सामयिक सुधारो मे—शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई, गृहनिर्माण, भूमि मे सुधार (उसको उपयोगी बनाना), वस्तुत गरीबो को सहायता देना, आदि सभी क्षेत्रो मे उसने लगकर काम किया। सिपा-हियो के भत्तो मे भी बेहतरी आ गई (जिसके लिए उसे भोज्य एव पोष्य तत्त्वो मे कुछ अनुसन्धान भी करने पडे।) बावेरिया की जो सेवाए उसने की, उनकी बदौलत अब उसे होली रोमन एम्पायर का एक काउण्ट बना दिया गया, और काउण्ट के तौर पर उसने अपना नाम चुना रूमफोर्ड (रूमफोर्ड, जो न्यू हैम्पशायर के कॉन्कॉर्ड कस्बे का पुराना नाम था)। यहा आकर उसे अपनी पुत्री 'सारा' भी मिल गई—बेचारी की मा का देहान्त हो चुका था। अब वह भी काउण्टेस बन गई और एक खासी अच्छी पैन्शन उसके लिए

नियत कर दी गई।

काउण्ट रूमफोर्ड की स्मृति मे म्यूनिख मे एक खासे कद की मूर्ति है। और उसका जीवन-दर्शन, जिसे हम एक तरह का आशावाद कह सकते है, उसके अपने शब्दो मे इस प्रकार है "कुछ लोग इतने गिरे हुए और बहिष्कृत समझे जाते हैं जैसे उन्हे सुखी देखना समाज का कुछ कर्तव्य ही न हो। पहले वे पुण्यात्मा बने—तभी समाज उनके सुख-दुख को अपने हाथ मे ले! किन्तु अपने इस तौर-तरीके को हम क्या थोडा-सा उलटा नही सकते ? उनके जीवन मे कुछ सुख जुटा दे और देखे कि वे खुद-ब-खुद पाप से पुण्य की ओर प्रवृत्त हो जाते हैं।" काउण्ट रूमफोर्ड खुद अपनी लडकी को ही सुखी नही रख सका! वह अमरीका लौट आई, और पीछे चलकर उसने खुलेआम अपने पिता की निन्दा शुरू कर दी कि जब भी कभी मेरी शादी का मौका बनने को हुआ, बुड्ढा टाग अडाने से बाज नही आया।

बेजामिन टाम्पसन—अब वह काउण्ट रूमफोर्ड के रूप मे अधिक प्रसिद्ध था इग्लैड लौट आया और वैज्ञानिक अनुसन्धानो मे खुद को खपाने लगा। 1798 की जनवरी मे रूमफोर्ड ने रॉयल सोसाइटी के आगे एक निबन्ध पढा जिसका विषय था—'गर्मी, जो कि रगड से पैदा होती है, उसके स्रोत के विषय मे एक अनुसन्धान।' इस वैज्ञानिक निबन्ध का आधार थे उसके प्रत्यक्ष अन्वीक्षण जो म्यूनिख मे, गोला-बारूद बनाते हुए, उसने खुद किए थे। वहा उसने देखा था, और कितने ही और जनो ने उससे भी पहले देखा होगा, कि पीतल की तोपे और बन्दूके मशीन से बाहर निकलते ही बडी गर्मी पकड लेती है। ताप के विषय मे प्रचलित सिद्धान्त उन दिनो 'कैलॉरिक' कहलाता था, जिसके अनुसार ताप एक द्रव्य वस्तु है जो चीज़ो के ठडे पडने पर उनके जिस्म से बाहर निकल जाती है। कैलॉरिक स्थापना का अर्थ एक प्रकार से यह समझा जाता था कि रगड से चीज़ो की गर्मी उसी तरह निचुडकर बाहर निकल आती है जैसे हाथ मे आए स्पज या तौलिये से पानी। आज हमारे लिए यह विश्वास करना कितना मुश्किल लगता है कि उन दिनों के वैज्ञानिको की ताप-विषयक प्रिय स्थापना यही अशुद्ध कल्पना थी।

इसके लिए काउण्ट रूमफोर्ड ने तोप के सिलिडर के गिर्द एक ऐसा बाक्स फिट कर दिया जिसमे से पानी की एक बूद भी बाहर न आ सके। कितने ही घोडो को कैनन-बोरिंग मशीन चालू करने पर लगा दिया गया। कितने ही घण्टे लगातार बोरिंग टूल इन तोपो के साथ सटा रहा और, आखिर, बक्स के अन्दर पडा पानी उबलने लग गया।

काउण्ट रूमफोर्ड की युक्ति-शृखला कुछ इस प्रकार थी कि अन्दर के पानी का सम्बन्ध सिलिण्डर की हवा के साथ तो है नही, इसलिए पानी मे आई यह गर्मी (या कैलॉरिक) खुद पानी की अपनी देन नही, क्योकि यह पानी शुरू मे ठण्डा था और अब उबल रहा है। और यह गर्मी पीतल से भी पैदा नही हो सकती क्योकि उससे कैलॉरिक छूटने का अर्थ होना चाहिए था कि पीतल अब ठण्डा और ठण्डा होता जाए, पर, हो इसका उलटा ही रहा था। तोपें घड़ी जाती रही और ज्यादा, और और ज्यादा गर्मी पकड़ती जा रही थी. अर्थात् इस गर्मी अथवा ताप का एक ही स्रोत सम्भव रह गया था, और वह था मशीनरी और तोप की परस्पर रगड।

इस परीक्षण के साथ एक और भी परीक्षण रूमफोर्ड ने किया जिससे कैलॉरिक की स्थापना का प्रत्याख्यान हो जाता है। रूमफोर्ड ने दो बर्तन लिए। दोनो बिलकुल एक दूसरे की नकल। एक मे कुछ पानी भर दिया, और दूसरे मे उतने ही वजन का पारा। बर्तनो का मुह बन्द कर दिया गया। इस प्रकार कि एक बूद भी उससे बाहर न निकल सके। दोनो को एक ठण्डे कमरे मे रख दिया गया जिसका तापमान जल के हिम-बिन्दु से कुछ ही ऊपर था। 24 घण्टे लगातार ये बर्तन इसी कमरे मे पडे रहे। किन्तु अब भी उनका वज़न वही था—ठडी हालत मे भी, और गरम हालत मे भी। उनकी अपनी गर्मी तो जा चुकी थी, पर इससे उनके वज़न मे कोई अन्तर नही आया था। कैलॉरिक नाम की कोई वस्तु थी ही नही। कैलॉरिक की स्थापना का उन्मूलन विज्ञान के इतिहास मे उतने ही महत्त्व का है जितना कि लेवॉयजिए पर लिखे गए लेख मे निर्दिष्ट फ्लोजिस्टन के सिद्धान्त के खण्डन का। दोनो ही प्रत्याख्यान विज्ञान को एक नया मोड दे गए।

काउण्ट रूमफोर्ड ने ताप के सक्रमण के सम्बन्ध मे भी कुछ परीक्षण किये और उनके निष्कर्षों को प्रकाशित किया कि यह सक्रमण किस प्रकार सक्रिय होता है। एक रासायनिक परीक्षण करते हुए उसने एक बोतल को गरम किया, जिसमे रगीन पानी भरा था और साथ ही कुछ धूल के कण भी थे। परीक्षण की समाप्ति पर उसने बोतल केतली के बाहर रख दी कि ठण्डी हो जाए—इसी वक्त सूर्य की किरणें बोतल पर पडने लगी और रूमफोर्ड को साफ दिखाई दे रहा था कि मिट्टी के ये कण बोतल के बीच मे से उठकर ऊपर को जाते है और दीवारो के साथ चलते हुए फिर नीचे आ जाते है। ज्यो-ज्यो वह बोतल ठण्डी होती गई, इस प्रवाह की गति कम होती गई और, जब बोतल और कमरे का तापमान एक हो गया, यह गति भी बिलकुल शान्त हो गई।

उसने कितने ही परीक्षण इस विषय मे किए होगे और कितनी ही बार उनके निष्कर्षो की परस्पर तुलना भी की होगी, किन्तु द्रव और गैस वस्तुओ मे ताप-सचार किस प्रकार होता है, इसका परिज्ञान उसे अकस्मात् ही हुआ। वस्तु का तप्त अश उठकर ऊपर की ओर चल देता है और ठण्डा होते-होते वह फिर बर्तन के तल की ओर चलने लगता है। परीक्षण बिलकुल आकस्मिक था—और बिलकुल साधारण था, किन्तु रूमफोर्ड की महिमा और विज्ञान-बुद्धि का चमत्कार परीक्षण से उद्भावित निष्कर्षो मे है। यह प्रक्रिया किसीने प्रत्यक्ष नही की, जैसे बन्दूको और तोपो को गरम होते भी कितने और लोगो ने देखा होगा किन्तु प्रक्रिया के मूल मे काम कर रहे सारभूत वैज्ञानिक तथ्यो का बोध हरेक को नही हुआ करता।

पाठक यदि एक पतला और पारदर्शक कागज़ लेकर एक रेडियेटर के ऊपरले सिरे पर रखे तो गर्मी के कारण हवा की गतिविधि का प्रत्यक्ष-साक्षात् वह भी कर सकता है। इस गति का विज्ञान मे नाम है—कन्वेक्शन (सवहन)। रूमफोर्ड के अनुसन्धानो के परिणामस्वरूप, इग्लैड मे ही नही, दुनिया-भर मे कमरो को गर्मी पहुचाने के तौर-तरीको मे अब परिवर्तन आ चुका है, जिससे जहा लोक-जीवन मे सुख-सुविधा आ चुकी है, वहा पैसे की बचत भी उसकी बदौलत कुछ कम नही हुई।

ये थीं काउण्ट रूमफोर्ड की विज्ञान मे सफलताए जिनकी बदौलत उसे अन्तर्रा-

ताप-सवहन प्रक्रिया का निदर्शक एक मॉडल। घरों में तापमान नियन्त्रित करने के लिए इसी सिद्धात का प्रयोग होता है।
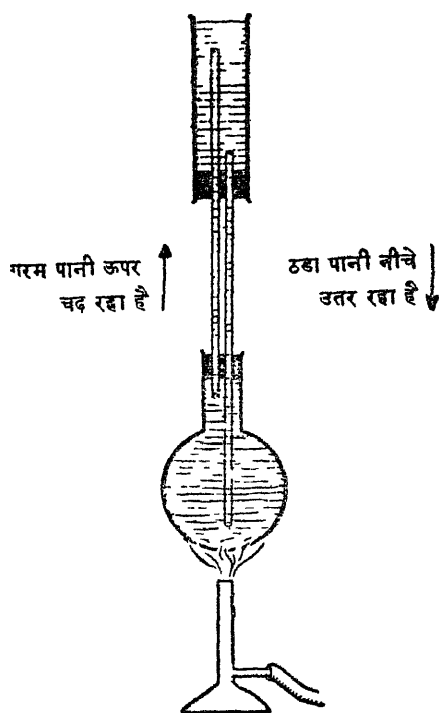
ष्ट्रीय ख्याति भी मिली, और नई-नई अमरीकी सरकार ने उसे अमरीकी तोपखाने का इन्स्पेक्टर जनरल नियुक्त कर दिया। एक जमाना वह था जब अमरीका के क्रान्तिकारियो ने उसपर यही इलजाम लगाया था कि वह ब्रिटेन की तरफदारी करता है—जिसे देखते हुए उसके वर्तमान सम्मान का महत्त्व और भी बढ जाता है। परन्तु, रूमफोर्ड ने ग्रेट ब्रिटेन मे ही रहना पसन्द किया।

अब उसके पास मान के साथ धन भी था। लन्दन मे रायल इन्स्टीट्यूट की प्रसिद्ध सस्था की उसने स्थापना की, जो वस्तुत एक परीक्षणशाला थी, और जिसका उद्देश्य विज्ञान मे समीक्षात्मक अनुसन्धान करना इतना नही था जितना यह कि वैज्ञानिक तथ्यो का जनता मे प्रचार करना और उन्हे यह समझाना कि इन तथ्यो के आधार पर हमारे इस साधारण जीवन मे कितनी ही सुख-सुविधाए वस्तुत लाई जा सकती हैं। वैज्ञानिक परीक्षणो द्वारा इह जीवन को सुखमय बनाया जा सकता है।" उन दिनो के दो विख्यात वैज्ञानिक हम्फ्री डेवी और उसका सहायक तथा उत्तराधिकारी माइकल फैराडे इसी इन्स्टीट्यूशन मे काम किया करते थे। डेवी ने रूमफोर्ड के साथ मिलकर काम किया और

उसके तापविषयक सिद्धान्तो की स्थापना मे सहायता दी। यद्यपि संस्था का मूल ध्येय समीक्षात्मक न होकर क्रियात्मक ही अधिक था, सस्था को जो सफलताए इस कार्य मे मिली उनसे भी अन्तत यही सिद्ध हुआ कि क्रियात्मक परिणामो का आधार भी प्राय समीक्षात्मक अध्ययन ही हुआ करता है।

रूमफोर्ड के अन्तिम जीवन के दिन कुछ सुखी नही कहे जा सकते और इन दिनो उसने कोई नई खोज शायद नही की। फ्रास के प्रख्यात रसायनविद् एन्तॉयने लैवॉयज़िए की विधवा मारिया के साथ उसने शादी कर ली। आम तौर पर यह विवाह एक आदर्श विवाह समझा जाना चाहिए—दोनो सम्पन्न थे, प्रतिभाशाली थे, व्यक्तित्व भी दोनो का कुछ कम आकर्षक नही था, दोनो की अभिरुचि भी एक थी—विज्ञान, किन्तु इस सबके बावजूद किसी भी मामले पर शायद ही दोनो की कभी सहमति हुई हो और चार बरस की लगातार किचकिच के बाद, दोनो अलग हो गए।

बेंजामिन टाम्पसन काउण्ट रूमफोर्ड की मृत्यु 1814 ई० मे हुई। होली रोमन एम्पायर के सम्मानित काउण्ट, ग्रेट ब्रिटेन के नाइट समृद्ध एव सफल इस वैज्ञानिक को अकेलापन कितना सताता होगा और अपनी जन्मभूमि की याद किस तरह रह-रहकर आती होगी—इसका कुछ सकेत उसकी वसीयत मे भी मिलता है क्योकि अपनी सम्पत्ति का एक खासा हिस्सा वह हार्वर्ड विश्वविद्यालय ही के नाम छोड गया।

काउण्ट रूमफोर्ड एक परीक्षणशील वैज्ञानिक था जिसने तापविज्ञान की आधारशिला रखी। यह वह विज्ञान है जिसके द्वारा हमारे घरो मे सुख-सुविधाए सम्भव हो सकी और ऐसे इजनो का निर्माण हुआ जो हमारी रेलगाडियो, मोटरगाडियो और फैक्टरियो को चालू करने मे आवश्यक हैं।
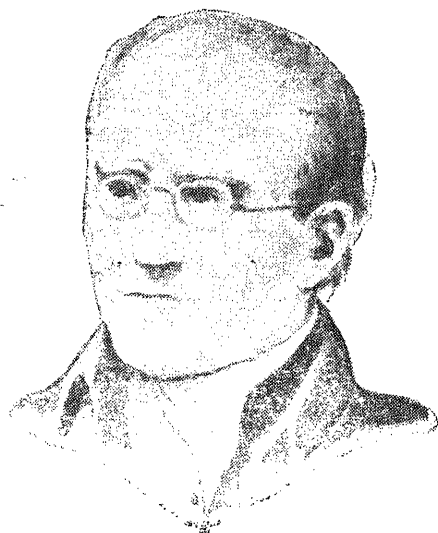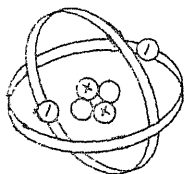
जॉन डाल्टन

विश्व की वैज्ञानिक विभूतियों में गिना जाने से पूर्व, जान डाल्टन एक स्कूल में हेडमास्टर था। एक वैज्ञानिक के स्कूल-टीचर होने में कोई अजूबे की बात नहीं है; किन्तु जान डाल्टन की यह हेडमास्टरी तेरहवें साल में ही शुरू हो चुकी थी।

किसी भी द्रव्य का मूल तत्त्व एक सूक्ष्म कण होता है—यह विचार मनुष्य के मन को सदियों से मथित करता आ रहा था। यूनानियों का विचार था कि चार तत्त्व—पृथ्वी, वायु, अग्नि, और जल मुख्य होते हैं। एरिस्टाटल ने वस्तुमात्र को, द्रव्यमात्र को, इन्हीं चार तत्त्वों—तथा एक दैवी तत्त्व और आकाश—के विकार के रूप में दिखाने की कोशिश भी की। ग्रीस के वैज्ञानिक एवं गणितज्ञ डेमोक्रिटस ने एक स्थापना को कुछ इस प्रकार सूत्ररूप भी दिया था कि द्रव्यों के अवयवों की कणरूप में कुछ निचली सीमा होनी चाहिए। ये कण अन्ततः इतने छोटे हो जाते हैं कि उनका आगे और विभाजन असंभव हो जाता है। कण की इस पराकाष्ठा का नाम डेमोक्रिटस ने रखा था—ए-टम जिसका ग्रीक भाषा में व्युत्पत्यर्थ होता है अ-भेद्य।

अणु का यह सिद्धान्त यदि सचमुच इतना पुराना है, तो हम उसके लिए डाल्टन को इतना सम्मान क्यों देते हैं ? बात यह है कि डाल्टन के समय से लेकर आज तक रसायन ने जो प्रगति की है उसके पड़ाव हैं—तत्त्व, यौगिक परमाणु, और अणु, जिन सबका समन्वय और स्रोत था डाल्टन का यही प्रसिद्ध सिद्धान्त, जिस स्थापना को इस छोटे-से हेडमास्टर ने विश्व के सम्मुख प्रस्तुत करने का साहस किया, वह प्राचीन ऋषियों की कल्पनाओं को कहीं पीछे छोड़ आई थी।

जान डाल्टन का जन्म 6 सितम्बर, 1766 को इंग्लैंड के एक गांव ईगलसफील्ड

मे हुआ था। बाप जुलाहा था। घर मे पाच बच्चे थे। उसका प्रारम्भिक पठन-पाठन 'कूकर्ज' स्कूल मे हुआ जहा उसने धर्मशिक्षा के अतिरिक्त गणित, विज्ञान, तथा अग्रेजी ग्रामर भी पढी। आसपास शोहरत फैल चुकी थी कि हिसाब-किताब के मामलो मे डाल्टन की बुद्धि असाधारण है। अभी वह बारह साल का ही था जब गाव के अधिकारियो ने उसे अपना एक निजी स्कूल चलाने की अनुमति दे दी। कितने ही विद्यार्थी स्कूल के हेडमास्टर से उम्र मे बडे थे।

इसी वक्त से उसे ऋतु-अध्ययन मे एक नया शौक पैदा हो आया जो कि उम्र-भर बना रहा। मौसम के बारे मे खबरें मालूम करने के लिए उसने कुछ अपने ही उपकरण तैयार किए और अपने इन अध्ययनो को प्रतिदिन नोटबुक मे अकित करना शुरू कर दिया। यह अब उसका एक प्रकार से एक नित्यकर्म ही बन गया था। नोटबुक मे अन्तिम अकित गणना उसकी उस दिन की है जिस दिन कि उसकी मृत्यु हुई। ऋतु-चक्र के सम्बन्ध मे डाल्टन के इन प्रत्यक्षो की सख्या कुल मिलाकर 20 लाख तक पहुच गई थी।

स्कूल मे नियमपूर्वक पढाना भी, बाप की खेतीबारी मे हाथ भी बटाना, ऋतु का अध्ययन भी नियमित रूप से करना। डाल्टन के स्वाध्याय मे कभी कही कोई त्रुटि नही आने पाई। इसके अतिरिक्त लेटिन ग्रीक का अध्ययन भी जारी रहता, गणित की गवेपणाए भी, और 'प्रकृति-दर्शनो' (उन दिनो विज्ञान का यही नाम था) भी बाकायदा चलता रहा।

15 बरस की आयु मे डाल्टन ने स्कूल को बन्द कर दिया, क्योकि लडके पढने को मिलते नही थे। और वह केण्डल मे अपने भाई जोनाथन के पास आ गया। 12 साल तक यहा भी विद्यार्थियो को पढाता ही रहा—प्रवचन के साथ, गणित और विज्ञान सम्बन्धी स्वाध्याय भी, और शुगल के तौर पर ऋतु-अध्ययन की पुरानी हवस भी—किसी भी काम मे कुछ अवनति नही आई। केण्डल मे उसने एक 'साइन्स डिस्कशन फोरम' भी चलाने की कोशिश की। किन्तु प्लेटफार्म के लायक उसका व्यक्तित्व था नही, आवाज़ भी आकर्षक नही थी। इस कार्य मे उसे सफलता भला किस प्रकार मिलती ?

1793 मे डाल्टन को मेन्चेस्टर मे एक कालिज मे इन्स्ट्रक्टर की नियुक्ति मिल गई। वहा उसे गणित और विज्ञान पढाना होता था, किन्तु वह सुखी नही था, क्योकि सारा समय उसका इस तरह ही गुज़र जाता। केण्डल मे रहते हुए वह एक प्रसिद्ध विद्वान जान् गफ के सम्पर्क मे आया। यह गफ जन्म से अन्धा था किन्तु कितनी ही भाषाओ मे निष्णात था, और बीस मील के घेरे मे, मैन्चेस्टर के गिर्द जितने भी पौधे-पत्ते थे, स्पर्श-स्वाद-गन्ध द्वारा ही उसे सब ज्ञात थे। इस सबके अतिरिक्त उसे भी मौसम को 'पढने' का शौक था, और यह चीज़ भी डाल्टन और गफ दोनो को एक करनेवाला एक बन्धन बन गई।

गफ ने डाल्टन को प्रेरित किया कि वह अपने ऋतु-सम्बन्धी अध्ययनो को प्रकाशित करा दे जिसके परिणामस्वरूप उसे मेन्चेस्टर की 'साहित्यिको एव दार्शनिको की गोष्ठी' के सदस्य रूप मे आमन्त्रित कर लिया गया। सारा जीवन डाल्टन का सम्बन्ध इस गोष्ठी के साथ बना रहा, और अपने जीवन के 50 सक्रिय वर्षो मे डाल्टन ने 100 से ऊपर वैज्ञानिक निबन्ध गोष्ठी के सदस्यो के सम्मुख पढे।

डाल्टन अपनी सफलता का श्रेय घोर परिश्रम को दिया करता था। सोसाइटी

के सामने वह अक्सर कहा भी करता था "अगर आज मुझे अपने इन उपस्थित मित्रो की अपेक्षा कुछ अधिक सफलता प्राप्त हुई है तो उसका प्रमुख, मैं तो कहूंगा एकमात्र, कारण है अनवरत परिश्रम।" प्राय सौ साल पीछे टामस एडिसन ने भी कुछ ऐसी ही बात कही थी किन्तु उसके शब्द कुछ भिन्न थे "प्रतिभा बस एक प्रतिशत ही दैवी अथवा अपौरुषेय इन्स्पीरेशन हुआ करता है, बाकी निन्यानवे हिस्सा उसका पसीना (पर्स्पिरेशन) हुआ करता है।"

डाल्टन ने मैन्चेस्टर विश्वविद्यालय से इस्तीफा दे दिया कि अब वह एकनिष्ठ होकर वैज्ञानिक अध्ययन एव अनुसन्धान मे लग सके। अमीर वह था नही, कुछ-कुछ प्राइवेट ट्यूटरी वह अब भी करता रहा कि फालतू दिन मे वह सारा वक्त वातावरण का अध्ययन कर सके।

वायुमण्डल का यह व्यापक अध्ययन ही था जो, अन्तत डाल्टन को द्रव्यो के सम्बन्ध मे अणु-सिद्धान्त की ओर क्रमश अभिप्रेरित कर गया। रॉबर्ट बॉयल—जो डाल्टन से प्राय 150 साल पहले गुजरा था—वायु और वायु के दबाव के सम्बन्ध मे बहुत कुछ अध्ययन कर चुका था। बॉयल इस निष्कर्ष पर पहुचा था कि यह वायुमण्डल बहुत-सी गैसो का एक मस्थान है। और उसके बाद हाल ही मे कैवेण्डिश, लैवॉयज़िए और प्रीस्टले ने यह सिद्ध भी कर दिखाया था कि हमारी इस वायु के निर्माता तत्त्व प्राय ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, कार्बन-डाइक्साइड, और जल वाष्प ही होते है।

डाल्टन ने वायु के कितने ही नमूने इग्लैंड की विभिन्न जगहो से—पहाडो की चोटियो से और घाटियो से, गावो से और शहरो से—इकट्ठे किए। इन सभीके विश्लेषण उसने किए। पता लगा कि वायु प्राय इन्ही अवयवो से और प्राय इन्ही अनुपातो मे हर-कही बनती है। डाल्टन के सम्मुख अब एक प्रश्न था "कार्बन-डाइक्साइड भारी होती है, वह नीचे आकर क्यो नही टिक जाती ? ये गैसें परस्पर इतनी अधिक क्यो घुलमिल जाती है ? इनका यह मिश्रण कौन सम्भव करता है—हवाए या ताप की निरन्तर परिवर्तमान धाराए ? डाल्टन कोई बडा परीक्षणकर्ता था नही, फिर भी उसने प्रयोगशाला मे प्रश्नका कुछ समाधान करने का प्रयत्न किया। एक बोतल मे उसने कार्बन डाइक्साइड की भारी गैस भर दी और एक और बोतल मे एक हलकी गैस भर के, उसे उलटा कर, दोनो बोतलो के मुहो को मिला दिया। बोतलो मे भारी और हलकी गैसे अलग-अलग नहीं रही—कुछ ही देर बाद मिलकर एक हो गई !

डाल्टन ने इस निष्कर्ष को इन शब्दो मे अभिव्यक्त किया (जिसे दुनिया आज गैसो का आंशिक दबावो का सिद्धान्त' करके जानती है) "एक गैस के कण, दूसरी गैस के कणो को नही, अपने ही कणो को परे धकेलते है।" जिसके आधार पर डाल्टन ने एक धारणा ही बना ली कि गैसो मे बडे छोटे-छोटे कण होते है और उनके दो कणो मे विभाजक दूरी भी पर्याप्त होती है। और, यह सिद्धान्त विज्ञान-जगत् को आज भी मान्य है।

डाल्टन ने रसायन का और रासायनिक विश्लेपण का, लक्ष्य प्रस्तुत किया। रसायन का काम होता है, बस, इन भौतिक कणो का जोड-तोड। द्रव्य के ये कण मूलत अभेद्य होते हैं, इन्ही के द्वारा द्रव्यमात्र की, वस्तुजात की, रचना सम्भव होनी है। और, रेडियो-एँक्टिविटी तथा एँटम-स्मैशिंग की सम्भावना से पूर्व, परमाणु को हम भी तो सचमुच अछेद्य-

अभेद्य ही मानते आते थे ।

रासायनिक निर्माताओ के लिए यह जान लेना बहुत ही आवश्यक होता है कि एक यौगिक के विनिर्माण मे उसके तत्त्वो की क्या-क्या मात्रा काम मे आती है। उलटे-सीधे परीक्षण करके लोग कुछ ज्ञान इस विषय मे कुछेक प्रक्रियाओ के सम्बन्ध मे तो सचित करते आए थे, किन्तु डाल्टन ने इस सब ज्ञान-सग्रह का विश्लेषण किया कि इन रासायनिक प्रतिक्रियाओ मे अणुओ की आपेक्षिक—भारादि विषयक—स्थिति क्या होती है। आज हम इस आपेक्षिक भार को 'अणु-भार' नाम देते है। डाल्टन ने अनुभव किया कि यौगिक बनाने मे कौन-सी वस्तु किस मात्रा मे चाहिए यह यौगिक अवयवो के अणु-भारो की तुलना द्वारा पहले से ही निर्धारित किया जा सकता है।

डाल्टन ने अब अणुओ की एक भार-क्रमानुसारी 'सारणी' बनाने की कोशिश की। डाल्टन के निष्कर्ष गलत थे, किन्तु उसकी युक्ति-शृखला सही थी। प्रयोगशाला की कमियो की वजह से ही उसकी गणनाओ मे ये गलतिया आ गई थी। उसके इन आपेक्षिक अणु-भारो का आधार था—हाइड्रोजन के आपेक्षिक भार को 'एक' कल्पित कर बैठना। उसने सोचा कि हाइड्रोजन का एक 'विरल' (सिम्पल) ऑक्सीजन के एक 'विरल' के साथ जब मिलता है, तभी पानी की उत्पत्ति होती है। किन्तु ऑक्सीजन की आपेक्षिक गुरुता हाइड्रोजन की अपेक्षा सात-गुना होती है, इसलिए ऑक्सीजन के एक अणु का भार भी हाइड्रोजन के अणु की अपेक्षा सात-गुना होना चाहिए। उसे यह मालूम नही था कि जल-निर्माण मे ऑक्सीजन के अणु के साथ हाइड्रोजन के दो अणु मिला करते हैं। दूसरी गलती वह दोनो गैसो को तोलने मे भी कर गया, क्योकि ऑक्सीजन के अणु का भार हाइड्रोजन से 16 गुना होता है सात-गुना नही।

डाल्टन का सिद्धान्त इतने वक्त से निरन्तर परीक्षित होता आ रहा है। सिद्धान्त के मूल तत्त्व ये हैं वस्तुमात्र के मूल निर्माण तत्त्व, जिनका आगे और विभाजन नही हो सकता, अणु कहाते है, भिन्न-भिन्न वस्तुओ के अणुओ की भिन्न-भिन्न विशेषताए होती है, किन्तु एक ही तत्त्व अथवा द्रव्य के अणु सभी एक-से ही होते है। रासायनिक प्रक्रियाओ मे सारा-का-सारा अणु ही सक्रिय हुआ करता है। रासायनिक यौगिको मे इन अणुओ की आन्तर रचना मे कोई परिवर्तन नही आता। अणुओ का न निर्माण हो सकता है न विनाश।

यह स्पष्ट करने के लिए कि किस प्रकार एक द्रव्य के 'विरल' मिश्रण की प्रक्रियाओ मे अवतरित होते है उसने छोटे-छोटे वृत्त खीचकर उनमे तत्त्व-तत्त्व की अन्त.-सम्पद्, मानो, सकलित कर दी। कुछ तत्त्व एव कुछ यौगिक चित्र मे प्रदर्शित हैं।

डाल्टन के परमाणु सिद्धान्त को उसके सहयोगियो ने स्वीकार करने मे ज़रा देर नही लगाई। मुक्तकण्ठ से उसका स्वागत किया। फ्रास के वैज्ञानिको ने उसे अपनी एकेडमी आफ साइन्सेज़ का सदस्य चुन लिया, और पेरिस मे उसका अद्भुत आतिथ्य भी किया। 1826 मे उसे इग्लैड की रॉयल सोसाइटी का मेडल मिला। इसके लिए जब वह लन्दन गया, उसका ज़िक्र उसने इस प्रकार किया है "एक अद्भुत स्थान है यह लन्दन जिसे ज़िन्दगी मे एक बार हर किसीको आकर देखना ही चाहिए, किन्तु चिन्तनशील प्रकृति वालो के लिए यह स्थान उतना ही घृणित भी है, जहा हमेशा के लिए आकर बस जाना

शायद उन्हे पसन्द न हो। कभी-कभी हो आए तो ठीक, किन्तु वहा जाकर रहने लग जाना उसे पसन्द न था।

एक समस्या उठ खडी हुई डाल्टन को बादशाह के सामने पेश करना था। दरबारी दस्तूर के मुताबिक उसे घुटने तक ब्रीचेज, बकल वाले जूते और तलवार धारण करनी थी। लेकिन क्वेकरो मे इन चीज़ो की मुमानियत है। सौभाग्य से, हाल ही मे डाल्टन को ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से एक आनरेरी डिग्री मिली थी। वह यूनिवर्सिटीकी ही पोशाक मे बादशाह के यहा भी हाजिर हो सकता था। लेकिन कोई क्वेकर एक 'स्कार्लेट' कैसे पहने ? डाल्टन ने पोशाक के कालर को ज़रा गौर से देखा और पाया कि उसका रग तो हरा है। शुरू से ही उसकी आख मे कुछ नुक्स था, जिसकी वजह से रगो मे फर्क कर सकने मे वह असमर्थ था। और आख के इस नुक्स के बारे मे उसने कुछ परीक्षण भी किए थे। वर्णान्धता को आज भी 'डाल्टनिज्म' ही कहा जाता है।

डाल्टन ने कभी विवाह नही किया। यह नही कि उसे औरत क्या बला होती है, इसकी कतई समझ न हो। अपने भाई जोनाथन को जो खत अपनी 1809 की लन्दन-यात्रा के बारे मे उसने लिखा था उसके कुछ शब्द इस प्रकार हैं "यहा मै न्यू बाड स्ट्रीट की सुन्दरियो के रोज़ दर्शन करता हू। मुझे उनके चेहरे जितना आकर्षित करते है उतना उनकी पोशाक नही करती। कुछ के कपडे इतने सटे होते है कि जैसे वे औरते न होकर चलते-फिरते ड्रम हो। और इन्हींके साथ कुछ ऐसी भी है जिनकी पोशाक एक खुले कम्बल की तरह लटक रही होती है। मुझे समझ नही आता कि यह सब ये करती किस तरह है। खैर, वस्त्र कैसे भी हो, सुन्दरता सुन्दरता ही रहती है।"

डाल्टन के अणु सिद्धान्त का एक परिणाम तो यह हुआ कि विज्ञान मे, विशेषत रसायन मे, इमसे गणनाओ मे सही-सही नाप-तोल की प्रवृत्ति आ गई। दूसरे, भौतिकी और रसायन दोनो एक-दूसरे के नजदीक आ गए। इसका एक परिणाम यह हुआ कि द्रव्यमात्र के प्रति हमारी दृष्टि विद्युन्मूलक बन गई हर वस्तु मूल मे विद्युन्मय है, विद्युत् विनिर्मित है। अणु-बम बना तो वह भी इसीको एक क्रियात्मक रूप देकर। और अणु-शक्ति के शान्तिप्रिय प्रयोगो के मूल मे प्रेरिका पृष्ठभूमि भी तो इसीकी है।

जब 1844 मे डाल्टन की मृत्यु हुई तो 40,000 मनुष्य उसकी चिता की परिक्रमा करने आए। उस समय भी उन्हे मालूम था कि डाल्टन विज्ञान-जगत् का एक दिग्गज है।
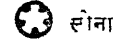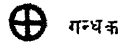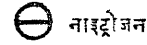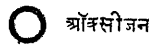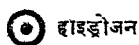
रासायनिक तत्त्वों के डाल्टन द्वारा प्रयुक्त सकेत

आन्द्रे मारिए एम्पियर

इतिहास में कभी-कभी ऐसे वक्त आते हैं जब सहसा यह विश्वास कर सकना असंभव हो जाता है कि मनुष्य की नृशंसता, और वह भी अपने एक ही साथी की जान लेने के लिए, इस हद तक पहुंच सकती है। फ्रांस की राज्यक्रांति के अनन्तर 'आतंक' का जो राज्य आया वह मानव-इतिहास का कुछ ऐसा ही अध्याय है । उन दिनों 'पब्लिक सेफ़्टी' के नाम से जो कमेटी जनता ने खुद बनाई थी उसने क्रान्ति के मूल नारे—स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृता का क्या मज़ाक बना डाला था, हज़ारों आदमी गिलोटीन पर चढ़ा दिए गए, महज़ एक ज़रा से शब्द की बिना पर. कोई मुकदमा नहीं, कोई सुनवाई नहीं !

फांसी की इन सज़ाओं का हाल पढ़ के दिल दहल जाता है, किन्तु एक ऐसी ही सज़ा का गवाह तब 18 साल के कच्चे छोकरे, आन्द्रे मारिए एम्पियर को भी होना पड़ा था : लोग उसे खींचकर बाहर निकाल लाए कि वह अपनी ही आंखों से अपने बाप का कत्ल होता देखे। इस घटना के बाद आन्द्रे निराशा के समुद्र में डूबने-उतरने लगा। उसके हृदय को, बुद्धि को जो प्रत्यक्ष चोट पहुंची, साल-भर वह संभल नहीं सका : ज़िन्दगी में बिलकुल अकेला, कोई सहारा नहीं, कोई आश्वासन नहीं। उसे यही मालूम नहीं कि वह कहां है। अभी ज़िन्दगी शुरू ही नहीं हुई थी कि विश्व अपने इस महान् वैज्ञानिक को प्राय: खो बैठा था।

एम्पियर का जन्म 22 जनवरी, 1775 ई० के दिन, फ्रांस में लिओन्स के एक कस्बे में हुआ था। बाप सन का व्यापारी था। किन्तु व्यापारी होते हुए भी स्वाध्याय की प्रवृत्ति उसमें कुछ कम नहीं थी। लटिन और ग्रीक के क्लासिक साहित्य में स्वयं उसीने

बालक को प्रथम दीक्षा दी। किन्तु शुरू से ही एम्पियर के लक्षण एक गणितज्ञ बनने के ही थे। बडी ही छोटी उम्र मे—अभी उसे लिखने-पढने की समझ बिलकुल नही थी—आन्द्रे गणित की समस्याओ का समाधान ककड-पत्थर जोडकर ही कर लिया करता था। 11 वर्ष का होते-होते वह लैटिन भापा मे प्रवीण हो चुका था, और कैल्क्युलस मे भी उसकी समझ काफी बढ चुकी थी।

बाप के कत्ल का धक्का जब कुछ शान्त होने लगा, तभी उसे समझ आई कि ज़िन्दा रहने के लिए कुछ कमाना भी पडता है। जो जरिया रोटी-पानी का परिवार के पास था, क्रान्ति ने उसे बिलकुल उजाड छोडा था। इसलिए एम्पियर ने अपनी पढाई भी जारी रखी और गुज़र के लिए गणित मे, भाषाओ मे, विज्ञान मे प्राइवेट ट्यूटर के तौर पर दूसरो को पढाता भी रहा। किन्तु इन कामधन्धो मे वह इतना उलझा हुआ भी नही था कि वह ज्यूलिए कैरो की मोहिनी से आकृष्ट न हो सके और उसे अपनी पत्नी न बना सके।

एक वर्ष के बाद 1800 मे इस सुखी युगल के घर जिए जैक्वीस एम्पियर नाम के बालक का जन्म हुआ जो आगे चलकर फ्रेंच एकेडमी का सदस्य, एक प्रसिद्ध इतिहासकार और उच्चकोटि का साहित्यकार भी हुआ। किन्तु व्यक्तिगत जीवन का यह सुख शायद उसके लिए बहुत दिनो का नही था। 1804 मे उसकी प्रिय पत्नी का देहान्त हो गया, जिसके धक्के से बच निकलने के लिए उसने वैज्ञानिक अनुसन्धान मे ही अब अपने को दिन-रात खपा दिया।

विज्ञान और गणित के क्षत्र के विद्वान अब एम्पियर की ओर आकर्षित होने लग गए थे। और उनके इस आकर्षण का आधार एम्पियर का लिखा एक लेख ही था। बडे अर्से से गणितज्ञो के सामने एक समस्या बनी चली आती थी। किसीको समझ नही आ रहा था कि कुछ खेलो मे जो नतीजे नियमानुसार स्पष्ट नजर आ रहे होते वे अन्त तक पहुचते-पहुचते न जाने कैसे गायब हो जाते। और एम्पियर ने इस बात को अपने एक लेख मे गणित के एक सूत्र मे बद्ध कर दिया कि हमारी इन लीलाओ मे भाग्य कैसे और कब घुस आता है।

जिए देलाम्ब्रे और यूसफ ललान्दे फ्रास के माने हुए दो गणितज्ञ और नक्षत्रविज्ञानी थे, जो एम्पियर की प्रस्तुत स्थापना से बहुत ही प्रभावित हुए। दोनो ने उसकी सिफारिश लिओन्स के सैकण्डरी स्कूल मे गणित और नक्षत्रशास्त्र पढाने के लिए कर दी। वह दो साल यहा रहा और उसके बाद 1805 मे पालिटैक्निक स्कूल मे उसकी नियुक्ति हुई। वह इजीनियरिग का प्राध्यापक बनकर चला आया। 1809 मे इसी सस्था मे गणित और मैकेनिक्स विभाग का उसे अध्यक्ष बना दिया गया। जो लेख उसके छपते रहे उनके विषय बहुत ही व्यापक थे—'कैल्क्युलस आफ कैमिस्ट्री', 'नेत्रविज्ञान', 'प्राणिविज्ञान' आदि। और इन्ही प्रकाशित निबन्धो के आधार पर उसे 'इन्स्टीट्यूट आफ आर्ट्स एण्ड साइन्सेज़' का सदस्य भी चुन लिया गया। याद रहे कि इस सस्था के सदस्य प्रतिष्ठित वैज्ञानिक तथा कलाकार ही हो सकते है।

1819 मे एक डेनिश वैज्ञानिक योहान सी० एर्स्टेड ने एक परीक्षण का विवरण

छापा। इसमे बताया गया था कि किस प्रकार एक चुम्बकित सुई विद्युत् के किसी तार के पास पहुचते ही चचल हो उठती है। यह एक बडी महत्त्वपूर्ण खोज थी, क्योकि विद्युत् मे तथा चुम्बकशक्ति मे परस्पर कुछ अज्ञात सम्बन्ध है, यह उसने इस प्रकार साबित कर दिया।

आज हम ऐसा महसूस करते हैं कि एम्पियर के प्रसिद्ध परीक्षण को प्रदर्शित करने के लिए बहुत ही थोडा वक्त लगना चाहिए था। यही नही, खुद एम्पियर को भी महसूस हुआ कि यह काम खुद एर्स्टेड ही कर सकता था। उसने सचमुच कहा भी कि एर्स्टेड ने जब एक बार यह देख लिया कि विद्युत् की एक धारा चुम्बककी सुई पर इस प्रकार प्रभाव डालती है, तो यह सन्देह उसी वक्त किसीको भी उठ सकता था कि हो न हो ये दो सर्किट हैं जिनमे से बिजली गुजर रही है और इसीलिए दोनो मे यह परस्पर सम्बन्ध है। किन्तु एम्पियर ने यह भी स्पष्ट कर दिखाया कि एर्स्टेड इस तथ्य को कैसे नज़र-अन्दाज़ कर गया। बात यह है कि कोमल लोहे का एक टुकडा ही तो एक चुम्बक सुई की ओर आकृष्ट होता है यद्यपि मृदुलोह की दो पतरियो मे कोई परस्पर-क्रिया नही होती।

एम्पियर ने एक परीक्षण का आयोजन किया जिसमे धातु की दो छडो को समानान्तर रख दिया गया। एक छड को तो एक चाकू के सिरो के नीचे लटका दिया गया, इस प्रकार कि उसका भार सभला भी रहे और आसानी से हिल-डुल भी सके। किन्तु दूसरी छड को एक ही स्थान पर स्थिर कर दिया गया। और जब दोनो छडो मे बैटरियो के साथ, सम्पर्क कर दिया गया तब वह छड जो स्वतन्त्र हिल सकती थी स्थिर टिकी छड़ की ओर आती, उससे परे हट जाती, और फिर उसीकी ओर आने लगती। विद्युत् की यह धारा जब एक दिशा मे बह रही होती, तो ये छडें परस्पर आकृष्ट होने लगती और फिर विरुद्ध दिशा मे, जैसे इन्हे कुछ परस्पर वितृष्णा हो।

एम्पियर ने इस प्रकार एक अद्भुत सत्य सिद्ध कर दिखाया। यह चुम्बक-शक्ति लोहे के बिना, चुम्बक के बिना सिर्फ बिजली के ज़रिये भी पैदा की जा सकती है। विद्युत् की धारा के आसपास भी कुछ वैसा ही क्षेत्र बन जाता है जैसाकि एक चुम्बक के गिर्द हम आम तौर पर देखते हैं।

चुम्बक-शक्ति तथा विद्युत् के सम्बन्ध मे एम्पियर का प्रसिद्ध निबन्ध 1823 मे प्रकाशित हुआ, जिसकी स्थापना मे उद्धृत परीक्षण के अतिरिक्त यह भी उल्लिखित था कि स्थायी-चुम्बक मे आकर्षण-विकर्षण की शक्ति का आधार लोहकणो मे प्रवहमान विद्युत् ही हुआ करता है। आधुनिक विज्ञान की स्थापना है कि द्रव्यो के कण ही नही, परमाणु भी, दो अशो से मिलकर बनते है। इनमे एक केन्द्र होता है जिसके इर्द-गिर्द इलेक्ट्रॉन निरन्तर गति कर रहे होते है, और इलेक्ट्रॉनो की यही गति स्वय एक सतत प्रवाह बन जाती है। इस प्रकार एम्पियर मे तथा प्रस्तुत स्थापना मे अन्तर तो बहुत अधिक नही रह जाता। हो सकता है वर्तमान वैज्ञानिक इस समस्या का भी समाधान कुछ निकाल ले कि कुछ द्रव्यो को तो चुम्बकित किया जा सकता है, जबकि कुछ दूसरी किस्म के द्रव्यो पर इस चुम्बकीय क्षेत्र का ज़रा भी असर क्यो नही होता। और इन दोनो के अतिरिक्त एक तीसरी किस्म के द्रव्य भी होते है जो विद्युत् अथवा चुम्बक की इस धारा को निर्बल भी

कर सकते है।

आन्द्रे मारिए एम्पियर की गणना ससार के अमर वैज्ञानिको मे होती है। उसके अनुसन्धानो का महत्त्व, हो सकता है, ज्यो-ज्यो नये अन्वेषण, नये सिद्धान्त निकलते आए, फीका पडता जाए; किन्तु दुनिया उसे भूल नही सकती, क्योकि विद्युत् धारा की इकाई को दिया गया वैज्ञानिको का नाम ही 'एम्पियर' है।
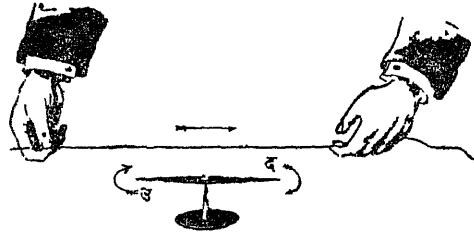
एर्स्टेड का परीक्षण विद्युत वहन करनेवाला तार चुम्बक की सुई को विचलित कर देगा।

अमादेओ ऐवोगेड्रो

वैज्ञानिकों की सबसे बड़ी समस्याओं में एक यह भी हमेशा से रही है कि उन्हें यह कैसे ज्ञात रहे कि उनके साथी वैज्ञानिक क्या कुछ कर रहे हैं। सामान्यतया, वैज्ञानिक अपने अनुसन्धानों को छिपाकर नहीं रखते। उलटे, उन्हें अपने अन्वेषण तथा चिन्तन को सामान्य सम्पत्ति बनाते हुए प्रसन्नता ही होती है। सच तो यह है कि विज्ञान के व्रतियों में यह परस्पर आदान-सम्प्रदान स्वतन्त्रतापूर्वक चलते रहने से ही विज्ञान में आशातीत प्रगति संभव हुआ करती है। एक जमाना था कि वैज्ञानिक अपनी गवेषणाओं का प्रकाशन लैटिन के माध्यम से ही किया करते थे क्योंकि विद्वत्समाज की यही उस युग की सम्मत भाषा थी।

आज भी विज्ञान के विद्यार्थी को एक विदेशी भाषा आवश्यक तौर पर अपने पाठ्यक्रम में पढ़नी पड़ती है। आज तो इलेक्ट्रॉनिक मशीनें भी इस काम के लिए तैयार हो चुकी हैं—कि विदेशी भाषाओं, विशेषतः रूसी, जबानों में उपलब्ध वैज्ञानिक सामग्री को अंग्रेज़ी में अनूदित किया जा सके। और एक दूसरी किस्म की इलेक्ट्रानिक मशीनें भी बन चुकी हैं जो हर देश में हो रही वैज्ञानिक प्रगति की अनगिनत रिपोर्टों को संक्षिप्त कर सकेंगी। वैज्ञानिकों का बहुत-सा समय इन रिपोर्टों के अध्ययन में ही गुज़र जाता है। वैज्ञानिक शायद कोई भी नहीं चाहता कि देश-देशान्तर में हो रही खोजें उससे नजरन्दाज हो जाएं।

किन्तु कभी-कभी गफलत भी हो जाती है। एक लेख नज़र में न आया, या उसका तात्पर्य समझने में कुछ गलतफहमी हो गई। ऐसा एक निबन्ध फ्रांस में कभी प्रकाशित हुआ था। किन्तु 50 साल से ज़्यादा हो गए और किसीकी निगाह उसपर नहीं पड़ी।

उसमे प्रस्तुत विचारो का महत्त्व भौतिकी और रसायन मे प्रगति लाने के लिए बहुत अधिक था। 1811 मे अमादेओ ऐवोगेड्रो ने अणु और कण मे परस्पर अन्तर को स्पष्ट किया था। इस अन्तर की तब तक उपेक्षा ही होती आ रही थी, हालाकि विज्ञान मे यह भेद बहुत ही मौलिक महत्त्व का है।

अमादेओ ऐवोगेड्रो का जन्म इटली के तूरीन शहर मे 9 जून, 1776 को हुआ था। पिता एक वकील था और ख्याल था कि पुत्र भी बडा होकर बाप के ही कदमो पर चलेगा। बचपन से बालक होनहार था और 16 बरस का होते-होते उसने बी० ए० पास कर लिया। और बीस बरस का ऐवोगेड्रो तो 'चर्च ला' मे डाक्टरेट भी हासिल कर चुका था।

तीन साल की प्रेक्टिस करके उसे विश्वास हो गया कि यह 'कानून' उसके बस का रोग नही है। परिणामत अब वह गणित, रसायन, तथा भौतिकी के अध्ययन मे प्रवृत्त हो गया। विद्युत् पर कुछ मौलिक अनुसन्धान की बदौलत स्थानीय वैज्ञानिको मे उसकी पूछ होने लगी। 33 बरस की उम्र मे ऐवोगेड्रो को इटली के उत्तर मे वेर्सेलि के रायल कालिज मे फीजिक्स की प्रोफेसरी मिल गई। दो साल बाद, 1811 मे अणुओ के सम्बन्ध मे उसका वह प्रसिद्ध लेख, जिसपर तब किसीकी भी निगाह नही पड़ी थी, फ्रास के 'जर्नाल दे फिजीक' मे छपा।

ऐवोगेड्रो का शेष जीवन विज्ञान के अध्ययन-अध्यापन मे ही बीता। विश्वविद्यालय मे शान्तिपूर्वक गुज़र रही उसकी इस जिन्दगी मे युद्ध और क्रातिया आ-आकर बीच में दखल डाल जाती। इटली मे आज कोई नेता था तो कल कोई। नतीजा यह होता कि आज यूनिवर्सिटी खुल जाती और कल बन्द हो जाती। 1820 से 1850 तक—बीच-बीच मे जब यूनिवर्सिटिया शाही फरमान से बन्द कर दी गईं, उन दिनो को छोड दें तो—ऐवोगेड्रो तूरीन के विश्वविद्यालय मे ही भौतिकी का प्रोफेसर रहा। 80 साल की उम्र मे जब उसकी मृत्यु हुई, दुनिया को उसकी वैज्ञानिक प्रतिभा के विषय मे अभी कुछ भी ज्ञान न था।

आज हर कोई जानता है पानी हाइड्रोजन और ऑक्सीजन का मिश्रण है, और यह भी कि दो परमाणु उदजन तथा एक परमाणु ओषजन के मिलन से जल का एक अणु $उ_2 ओ_1$ बनता है। ये परमाणु और अणु दोनो ही निहायत छोटे व सूक्ष्म होते हैं। आज तो वैज्ञानिको ने इन अणुओ को परिगणित करने की विधि भी निकाल ली है और उन्हे पता है कि एक क्वार्ट भरी बोतल मे किसी भी गैस के 25,00,00,00,00,00,00,00,00,00,000 अणु विद्यमान होते है। किन्तु वैज्ञानिको द्वारा अणु-गणना प्रणाली के आविष्कृत किए जाने से बहुत पहले ऐवोगेड्रो ने यह विचार विज्ञान-जगत् के सम्मुख उपस्थित कर दिया था कि किन्ही भी दो गैसो के समान परिमाणो मे इन अणुओ की संख्या भी समान ही होती है, बशर्ते कि उनका तापमान और दबाव वही हो। आज रसायन-शास्त्र मे इस सिद्धान्त को ऐवोगेड्रो का नियम कहा जाता है।

अणु-विज्ञान का जनक था डाल्टन, किन्तु वह भी जल को $उ_1 ओ_1$ मान कर ही सन्तुष्ट था। और सामान्यत रसायनविद् इतने से ज्ञान-वर्धन से ही सन्तुष्ट हो भी जाते
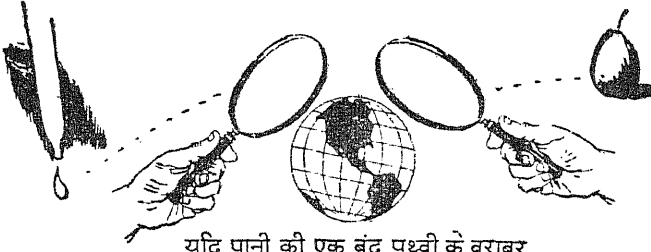
पानी के एक कण का आकार

हैं कि जिस वस्तु को हम इतने अरसे से एक तत्त्व मानते आए थे वह वस्तुतः एक यौगिक है। किन्तु इतना ही ज्ञान हर चीज़ की व्याख्या कर सकने के लिए पर्याप्त नहीं होता: वैज्ञानिकों के लिए अवयवों की निश्चित मात्रा का ज्ञान भी आवश्यक होता है।

1808 में एक फ्रांसीसी रसायनविद् यूसफ गे-ल्यूसैक ने कुछ परीक्षण कर दिखाए जिनमें डाल्टन के सिद्धांत का खण्डन होता प्रतीत होता था। किन्तु अपनी-अपनी जगह डाल्टन और ल्यूसैक, दोनों, सही थे। यह बात ऐवोगेड्रो ने अपने उस प्रसिद्ध निबन्ध में 1811 में अभिव्यक्त भी कर दी थी। किन्तु किसीने वह लेख पढ़ा ही नहीं, वैज्ञानिक पुस्तकालयों की अलमारियों में ही वह सुरक्षित पड़ा रहा, और रसायनविदों के सम्मुख एक समस्या बाकायदा बनी ही रही। 1860 में जर्मनी में कार्ल्सरूहे शहर में एक विज्ञान परिषद् इसी प्रश्न को सुलझाने के लिए बुलाई गई। कितने ही विद्वानों ने अपने विचार इस विषय पर अभिव्यक्त किए। विचार-विमर्श हुआ। एक इटैलियन रसायनविद् स्तालिनस्लाओ कैनिज़ारो ने ऐवोगेड्रो की स्थापना को प्रस्तुत किया। "देखो, कितना आसान है यह सब," उसने परिषद् को बतलाया, "अब हमारे लिए बस एक यही तथ्य स्वीकार करना बाकी रह गया है कि ये अणु आवश्यक नहीं कि एक प्रकार के ही परमाणुओं का समुत्थ हों। ये दो विभिन्न अणुओं के मिलने से भी बन सकते हैं। ऑक्सी-जन के एक अणु में ही दो परमाणु होते हैं।" पहली बार ही वैज्ञानिकों के कान में कुछ पड़ा था, किन्तु किसी भी निश्चय पर पहुंचने से पूर्व ही सभा विसर्जित हो गई।

किन्तु कैनिजारो चुप नहीं बैठा। उसने कक्षाओं में पढ़ाया, लेख लिखे, और ऐवोगेड्रो की स्थापना का जगह-जगह प्रचार किया। परिणाम यह हुआ कि दुनिया ने आखिर उसे सुना भी, और सब मानने लग गए कि जल का रासायनिक सूत्र $उ_2$ ओ है। 1891 में रॉयल सोसाइटी की ओर से कैनिजारो को काप्ले मेडल मिला।

1911 में विश्व के कोने-कोने से सैंकड़ों वैज्ञानिक इटली में आकर तूरीन में एकत्रित हुए। वे ऐवोगेड्रो-नियम के प्रकाशन का शती समारोह मनाने यहां आए थे। आखिर कभी तो दुनिया को अणुओं का रासायनिक विश्लेषण कर दिखानेवाली प्रतिभा को स्वीकार करना था।

जार्ज साइमन ओम

जार्ज साइमन ओम ने कोलोन के जेसुइट कालिज में गणित की प्रोफेसरी से त्यागपत्र दे दिया। यह 1827 की बात है, जब प्रोफेसर ओम की आयु 40 वर्ष थी। हाल ही में उसका एक ग्रन्थ 'विद्युत् धाराओं का गणितीय माप-तोल' प्रकाशित हुआ था। ओम को आशा थी मेरे अनुसन्धान की विद्वज्जगत् में सराहना होगी, किन्तु उसपर शायद किसी-की निगाह भी नहीं पड़ी। कुछ ने उसे पढ़ा भी परन्तु उनकी दृष्टि में उसमें विज्ञान-विषयक कुछ भी नई चीज़ नहीं थी। ओम गणित का प्राध्यापक था, और प्रकृति से भावुक था। उसे उम्मीद थी कि प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन की बदौलत उसे कुछ तरक्की मिलेगी, किन्तु संस्कृति मंत्रालय के साथ उलटे उसकी कुछ झड़प हो गई और नतीजा यह हुआ कि उसके पास अब कोई नौकरी नहीं थी।

जार्ज ओम का जन्म दक्षिण-पूर्वी जर्मनी की बावेरिया रियासत में 16 मार्च, 1787 को हुआ था। ताले और बन्दूकें बनाना परिवार का पुश्तैनी पेशा-सा बन चुका था। दादा और बाप कम से कम यही-कुछ करते आ रहे थे। पीढ़ी दर पीढ़ी यही तिज़ारत थी उनकी, आखिर योहान ओम ने आकर यह परम्परा तोड़ दी। वह अपनी उम्र के चालीसवें साल तक जर्मनी और फ्रांस में घूम-घूमकर अपनी शिल्प-कला से आजीविका अर्जित करता रहा। आखिर अपनी जन्मभूमि एर्लांगेन में आकर उसने विवाह किया और वहीं बसेरा कर लिया—यहीं उसके दो पुत्र जार्ज और मार्टिन हुए। और इसी समय उसका झुकाव विज्ञान तथा गणित के अध्ययन की ओर हुआ। यही स्वाध्याय-वृत्ति वह अपने पुत्रों में भी संक्रान्त कर गया। स्थानीय विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करके दोनों गणित के अध्यापक बन गए।

जार्ज तो 18 साल की ही उम्र में बर्न के स्विस केण्टन में गाटस्टाड्ट शहर में अध्यापक हो गया। जिस सुपरवाइज़र ने उसे प्रार्थनापत्र के आधार पर ही नियुक्ति दे दी थी वह इस नाटे-कद के, दुबले-पतले व्यक्ति को अपने स्कूल के गणित के अध्यापक के रूप में देखकर बड़ा ही निराश हुआ। किन्तु कुछ ही दिनों बाद इस नौजवान युवक की योग्यता प्रकट हो आई। ओम का स्वाध्याय अ-प्रमाद चलता रहा, और 1811 में उसे गणित में डाक्टरेट मिल गई। अब उसे शौक उठा कि नैपोलियन के विरुद्ध सेना में भरती हो जाए। किन्तु पिता ने समझाया और वह अध्यापक-पद पर ही यथापूर्व बना रहा। 30 वर्ष की आयु में कोलोन के जेसुइट कालिज की फैकल्टी में वह गणित विभाग का अध्यक्ष हो गया।

ओम की विद्युत्-विज्ञान को सबसे बड़ी देन 1827 में दुनिया के सामने आई। यही निबन्ध था वह, जिसकी समकालीन विद्वत्समाज ने तो उपेक्षा की किन्तु जिसे विद्युत् सर्किट की गणनाओं में इतिहास में एक नया मोड़ समझा जा सकता है। ओम की स्थापना इतनी सरल प्रतीत होती है कि उसे एक मूल सिद्धान्त समझना मुश्किल लगता है, इतनी सर्वसाधारण और प्रत्यक्ष की वस्तु-सी लगती है वह। किन्तु आज हाईस्कूलों में भौतिकी का हर विद्यार्थी उसे 'ओम का सूत्र' कहकर जानता है। सूत्र में गणित की भाषा
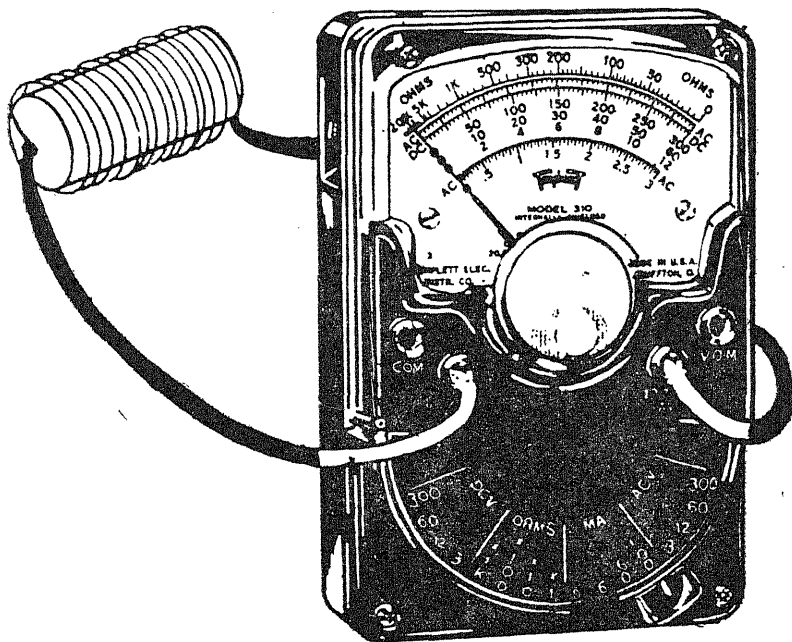
ओम मीटर, विद्युत् अवरोध की गणना के लिए प्रयुक्त एक आधुनिक उपकरण का नाम ओम की स्मृति में रखा गया है।

के सकेत इस प्रकार अभिव्यक्त किए जा सकते है · $ध = \frac{श}{अ}$···, अर्थात् किसी भी सर्किट मे विद्युत् की धारा (धा) उसकी इलेक्ट्रोमोटिव शक्ति (श) मे अभिवृद्धि के अनुरूप तथा अवरोध (अ) मे अभिवृद्धि के प्रतिरूप घटा-बढा करती है । एक प्रकार से यह इस विश्वजनीन प्राकृतिक नियम का ही प्रस्ताव है कि कोई काम जितना ही मुश्किल हुआ करता है उसे पूरा करने के लिए उतनी ही ज्यादा कोशिश हमे उसमे खपानी पडती है ।

अध्यापक-पद से त्यागपत्र देकर ओम के लिए अब ट्यूटरी वगैरह करके रोटी जुटाना भी बडा मुश्किल हो गया । अध्यापन-कार्य मे फिर से आने मे उसे छ साल लग गए । जर्मनी मे तो उसके वैज्ञानिक कार्य की सराहना नही हुई किन्तु ग्रेट ब्रिटेन मे उसके पारखी थे । 1841 मे लन्दन की रायल सोसाइटी ने उसे काप्ले पारितोषिक देकर सम्मानित किया ।

जार्ज ओम की मृत्यु 1854 मे म्यूनिख मे हुई । तब उसकी आयु 67 थी । 1881 मे पेरिस इलेक्ट्रिकल इजीनियर्ज की अन्तर्राष्ट्रीय काग्रेस मे निश्चय हुआ कि विद्युत्-अवरोध की इकाई का नाम आज से 'ओम' होगा । वर्षों की उपेक्षा का कुछ परिहार इस प्रकार इतिहास ने, वैज्ञानिक की मृत्यु के बाद ही सही, कर दिखाया । अद्भुत सयोग है कि विद्युत् की तीनो बडी इकाइयो का नामकरण—एम्पियर, बाल्ट, ओम—एक ऐतिहासिक अन्तर्राष्ट्रीय त्रिमूर्ति की प्रतिष्ठा मे ही सान्त हो गया । इनमे एक फ्रेच था, दूसरा इटेलियन, और तीसरा जर्मन । जर्मनी के ओम ने ही इन तीनो मे वह परस्पर सूत्र-सम्बन्ध स्थापित किया था जिसे इस प्रकार भी तो प्रस्तुत किया जा सकता था—

$$\text{एम्पियरर्स} = \frac{\text{वोल्ट्स}}{\text{ओम्स}}$$
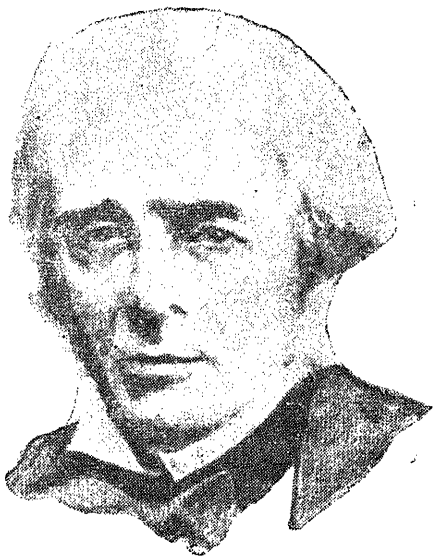
माइकल फैराडे

"चुम्बक को विद्युत् में परिणत करना है।"

यह संक्षिप्त-सा सूत्र फैराडे ने अपनी नोटबुक में 1822 में दर्ज किया था। सूत्र क्या था तार की-सी भाषा में खुद को एक आदेश-सा था, विज्ञान की एक असमहित समस्या की रूपरेखा। कुछ देर के लिए इसे बरतरफ ही कर देना उचित था, क्योंकि कितने ही और 'क्रियात्मक' प्रश्न थे जिनसे वह उन दिनों निरन्तर जूझ रहा था। विश्व-भर में कितने ही वैज्ञानिक और भी थे जो इस विशुद्ध समीक्षात्मक प्रश्न को सुलझाने में लगे हुए थे। परीक्षणशील वैज्ञानिकों में माइकल फैराडे का स्थान कई कारणों से मूर्धन्य है। किन्तु उसके जीवन की प्रमुख गवेषणा शायद दुनिया के सामने यह दिखा देना ही था कि 'चुम्बक को विद्युत् में परिणत' किस प्रकार किया जा सकता है। 1831 में जब उसे कुछ फ़ुरसत मिली, केवल दस ही दिन के अध्यवसाय द्वारा समस्या का ऐतिहासिक उत्तर उसने पा लिया।

माइकल फैराडे का जन्म लन्दन के एक कस्बे में 22 सितम्बर, 1791 को हुआ था। पिता एक लुहार था, और बड़ा ही गरीब। स्कूलों में जाकर पढ़ना उसके लिए मुश्किल था। अक्षर-ज्ञान, लेखन-ज्ञान, और गणित-ज्ञान मामूली-सा घर पर जो सीख लिया वही बहुत था। अभी वह तेरहवां साल भी मुश्किल से पार कर पाया था कि जो थोड़ा-बहुत वह स्कूल आता-जाता था वह भी बन्द हो गया। बेबसी में एक किताबें बेचने-वाले ने उसे घर-घर जाकर अखबार बांटने की नौकरी दे दी। एक पूरा साल यही कुछ चलता रहा और तब कहीं आखिर दुकानदार ने उसे अपने ही यहां जिल्दसाज़ी सिखानी शुरू कर दी।

यही उसकी दुनिया कुछ बदलनी शुरू हो गई। उन दिनो के दस्तूर के मुताबिक, माइकल भी अपने मालिक के पास ही रहने लगा। फालतू वक्त मे उसने कुछ किताबे पढ डाली। मालिक भी फराखदिल था, और समझदार था—उसने माइकल के इस आत्म-शिक्षण को प्रोत्साहित ही किया।

पीछे चलकर फैराडे ने लिखा था कि "दो पुस्तकें थी जिन्होने मेरी बहुत ही सहायता की—एक तो 'एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका' जिससे विद्युत् के सम्बन्ध मे मुझे प्रारम्भिक शिक्षा मिली, और दूसरी मिसेज़ जेन मार्सेट की 'रसायन के विषय मे कुछ सवाद' जिसने कैमिस्ट्री मे मेरी नीव रखी।" सचमुच इन दोनो पुस्तको से फैराडे की आधारशिला बहुत ही मजबूत बनी होगी, क्योकि सारी वायु वह रसायन तथा विद्युत् मे ही अनुसन्धान रत रहा। 1810 मे प्राकृतिक दर्शन के विषय मे एक छोटी-सी व्याख्यान-माला उसने सुनी। इन लैक्चरो के उसने पूरे-पूरे नोट उतारे और जिल्दसाजी के अपने हुनर को इस्तेमाल मे लाते हुए, उन्हे भिन्न-भिन्न खडो मे बाधकर रख लिया। जो कुछ सुना व देखा उसे शब्दो मे नोट भी कर लेने की योग्यता फैराडे मे कुछ असाधारण ही थी जिसके प्रमाण कुछ और भी है।

21 साल तक पहुचते-पहुचते जिल्दसाज़ी मे उसकी यह शागिर्दी पूरी हो गई। मालिक के साये से मुक्त होकर वह एक चलती-फिरती नौकरी की तलाश मे निकल पडा। फैराडे दुखी था। उसका नया मालिक एक सिरदर्द था। काम मे भी कोई परिवर्तन नही हुआ था—दिनरात, महीने, साल वही कुछ करते रहो, और फिर विज्ञान की दुनिया भी तो उसे अपनी ओर आकृष्ट करने लग गई थी।

फैराडे ने एक प्रार्थनापत्र रॉयल इन्स्टीट्यूट मे युग के प्रतिभाशाली वैज्ञानिक सर हम्फ्री डेवी के नाम डाल दिया। पत्र मे लिखा था कि जिल्दसाजी से छुटकारा पाकर प्रार्थी किसी वैज्ञानिक प्रयोगशाला मे कुछ कार्य प्राप्त कर सके तो धन्य होगा। साथ ही एक नोटबुक सुन्दर स्पष्ट अक्षरो मे बन्द थी जिसमे सर हम्फ्री डेवी के लेक्चरो के ही नोट दर्ज थे। प्रार्थना-पत्र मे यह भी स्पष्ट कर दिया गया था कि प्रार्थी खुद रसायन मे तथा रासायनिक-विद्युत् मे कुछ परीक्षण कर चुका है। अपने किए अनुसन्धान के नोट भी डाल दिए। फैराडे तब तक एक वोल्टाइक पाइल भी बना चुका था और विद्युत् के द्वारा बहुत से यौगिको को विघटित भी कर चुका था। डेवी बहुत ही प्रभावित हुआ और उसने रॉयल इस्टीट्यूट को सिफारिश की कि फैराडे को एक लैबॉरेटरी असिस्टेट नियुक्त कर लिया जाए। पीछे चलकर डेवी अक्सर कहा भी करता था कि "मेरे जीवन की सबसे बड़ी खोज है—फैराडे।"

फैराडे ने यही आकर 1813 से काम शुरू कर दिया। अक्तूबर मे 7 महीने बाद सर हम्फ्री और उसकी नव-विवाहिता पत्नी लेडी डेवी अढाई साल के लिए मधुमास और यूरोप की यात्रा पर निकल पडे। फैराडे को भी उन्होने अपने सेक्रेटरी और वैज्ञानिक सहकारी के रूप मे साथ ले लिया। साल के अन्दर ही अन्दर लुहार के बेटे की सारी जीवन-दृष्टि ही बदल चुकी थी। डेवी के लेक्चरो मे परीक्षणो की व्यवस्था करते हुए कल का जिल्दसाज़ युग के महावैज्ञानिको के सम्पर्क में आया। 1815 के अप्रैल मे यह यात्रा समाप्त हुई और

फैराडे इंस्टीट्यूट में अपने काम पर लौट आया। अब बाकी ज़िन्दगी वह यहीं रहा, ज़रा फ़ुरसत नहीं, और अन्त में डेवी का उत्तराधिकारी होकर इंस्टीट्यूट की प्रयोगशालाओं का डायरेक्टर भी नियुक्त हो गया।

कितने ही साल तो फैराडे का भी अनुसन्धान-क्षेत्र प्रायः वही था जो कि सर हम्फ्री डेवी का था: रसायन में, विद्युत्-रसायन में, तथा धातुविज्ञान में परीक्षण ही परीक्षण। प्रसिद्ध 'डेवी सेफ्टी' लैम्पों के आविष्कार में भी फैराडे का हाथ था।

विद्युत् रसायन में परीक्षण करते हुए ही वह विद्युत्-विश्लेषण के, आज 'फैराडे का विद्युत्-विश्लेषण' के नाम से ज्ञात, सिद्धान्तों पर पहुंचा था। इलेक्ट्रालिसिस अथवा
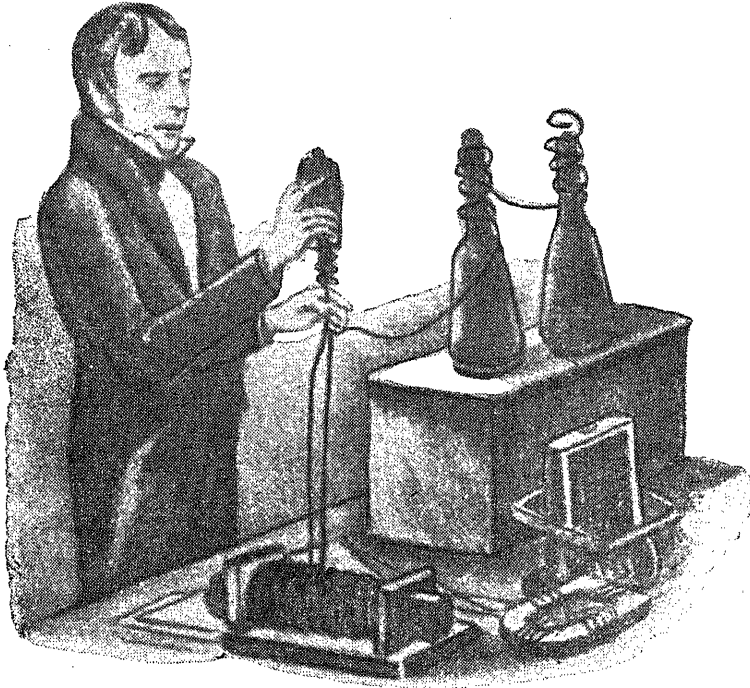
फैराडे बिजली के साथ परीक्षण करते हुए

विद्युत्-विश्लेषण का अर्थ होता है—द्रव में से बिजली के गुज़रने से जो विश्लेषण-क्रिया उत्पन्न होती है वह। वैज्ञानिक प्रत्यक्ष कर चुके थे कि विद्युत् पानी को ऑक्सीजन तथा नाइट्रोजन में फाड़ सकती है। सर हम्फ्री डेवी ने विद्युत् को कॉस्टिक पोटाश के एक तोदे में से गुज़ारकर देखा कि पोटाशियम हाइड्रॉक्साइड विघटित हो गया और पोटाशियम पृथक् हो गया। फैराडे ने निहायत ही सावधानी के साथ कितने ही परीक्षण किए जिनसे उसने यह सिद्ध कर दिखाया कि विद्युत् की एक नियत मात्रा किसी भी वस्तु में से गुज़रने पर उसके अवयवों की एक निश्चित मात्रा को ही विघटित कर सकती है।

इस नियम का एक परिणाम तो यह हुआ कि इलेक्ट्रिक मीटर बनने लगा और उनका घर-घर प्रयोग होने लगा। घरों में जो बिजली इस्तेमाल में आती है वह एक छोटे-से बर्तन में से गुज़रती है, और इस वर्तन में चांदी के इलेक्ट्रोड लगे होते हैं। महीने के आखिर में रीडर आकर पढ़ जाता है कितनी चांदी खप चुकी है—अर्थात् कितनी बिजली गुज़र चुकी है। प्रसंगात्, विद्युत्-विश्लेषण में जितनी भी परिभाषाएं—इंलेक्ट्रोड, एनोड, कैथोड, इलेक्ट्रोलाइट और आयन—प्रयुक्त होती हैं, सब फैराडे की ही गढ़ी हुई हैं। और इस सब में एक और महत्त्वपूर्ण प्रश्न था—विद्युत् की इकाई एम्पियर का एक सही-सही लक्षण दे सकना। एम्पियर, सिल्वर नाइट्रेट को विघटित करके 0·001118 ग्राम चांदी प्राप्त करने के लिए आवश्यक विद्युत् की मात्रा को कहते हैं। पाठक यह जान कर शायद चकित हों कि एम्पियर का यह लक्षण 1894 में अमरीकी कांग्रेस के एक एक्ट द्वारा प्रस्तुत किया गया था।

1821 की सर्दियों में एक दिन सुबह-सुबह फैराडे अपनी पत्नी को घर से बुलाकर अपनी परीक्षणशाला में ले आया। क्रिसमस का दिन था, और छोटी उम्र की बहू के मन में उत्सुकता भरी होगी कि क्या उपहार उसके लिए वहां छिपा पड़ा है। इसी उल्लास और जिज्ञासा से अभिप्रेरित वह यहां पहुंची। सिर्फ उसीके लिए नहीं, विश्व-भर के लिए, एक अद्भुत उपहार : इतिहास में पहली बार विद्युत् की धारा ने एक प्रकार की निरन्त-रित गति साधित कर दी थी। हर बिजली की मोटर को,—चाहे खिलौना हो, चाहे भारी इंजन, सभी को—चालू करके के लिए वही नियम सक्रिय होते हैं जिनकी खोज उस ऐतिहासिक क्रिसमस के दिन फैराडे ने की थी।

श्रीमती फैराडे ने प्रयोगशाला में पहुंचने पर वहां क्या देखा ? एक टेबल पर पारे से लगभग पूरा भरा हुआ एक पात्र रखा था। चुम्बक की एक छड़ का एक सिरा पात्र की पेंदी के साथ सावधानीपूर्वक बांधा गया था और उसका दूसरा सिरा पारे से कुछ ऊपर निकाला हुआ था। तांबे की एक छड़ को चुम्बक के ऊपर टिकाया गया था और उसके एक सिरे को कार्क के एक टुकड़े में धंसा दिया गया था, जो पारे पर तैर रहा था। तांबे की छड़ चुम्बक पर आसानी से जिधर चाहे घूम सकती थी। एक बैटरी का सम्बन्ध छड़ के ऊपरी सिरे के साथ और छड़ के निचले सिरे पर पारे के साथ स्थापित कर दिया गया था। जब सर्किट पूरा होता था तो तांबे की छड़ घूमने लगती थी।

इसका कारण, जो कि अब हमें ज्ञात है, यह था कि तार में गुज़रनेवाली बिजली एक चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न कर देती थी। यह क्षेत्र चुम्बक के चुम्बकीय क्षेत्र पर प्रतिक्रिया करता था और इससे इनके बीच उत्पन्न होनेवाली शक्ति तांबे की छड़ को तेज़ी से चुम्बक के चारों ओर घुमाने लगती थी। इससे सम्बन्धित सिद्धांत के सभी प्रकारों की जांच की गई और उनका प्रदर्शन किया गया। इस पूरे प्रयोग को उलटे रूप में व्यवस्थित किया गया—या तो बैटरी के सम्पर्क को उलटकर या चुम्बक के ध्रुवों को बदलकर। फैराडे ने इस पूरी व्यवस्था को बदलकर इस प्रकार कर दिया कि छड़ स्थिर रहे और चुम्बक घूमने लगे।

उसने सोचा कि हो सकता है कि चुम्बक की आवश्यकता ही न पड़े। पृथ्वी स्वयं

ही एक चुम्बक है। उसने अपनी 'मोटर' के एक भाग के रूप में पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र का उपयोग करने के लिए एक युक्ति तैयार थी। इसमें उसने ऊपरी सिरे में लगे हुए कंडक्टर को पारे में लगभग 40 अंश के कोण पर तैराया। उस समय पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र का लन्दन में लगभग 72 अंश पर चुम्बकीय नमन (डिप) था। जब करेंट जारी की जाती थी तो कंडक्टर पृथ्वी की शक्ति की रेखाओं पर घूमने लगता था।

इस प्रकार विद्युत् मोटर का जन्म हुआ। लेकिन यह एक आश्चर्य की बात है कि आविष्कर्ताओं ने इसके व्यावहारिक उपयोग के लिए कोई उत्सुकता प्रदर्शित नहीं की। यद्यपि कुछ आविष्कर्ताओं ने इस सिद्धांत पर कार्य किया, लेकिन उनकी रुचि के अभाव का कारण शायद यह था कि विद्युत् उस समय बड़ी महंगी थी और विद्युत् बैटरियों का, जिन्हें उस समय 'वोल्टा पाइल' कहा जाता था, रख-रखाव बड़ा झंझटी माना जाता था।
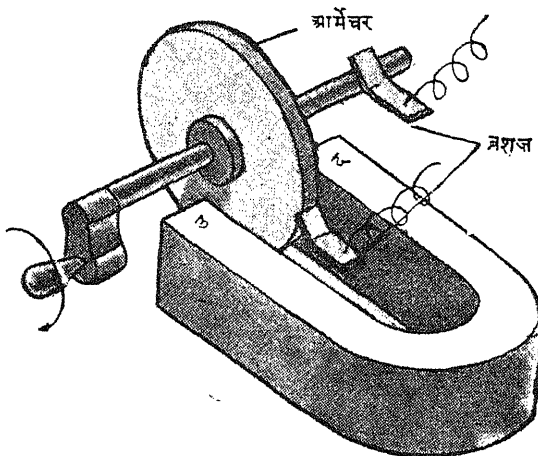
फैराडे का विद्युत् जेनरेटर

और अब फैराडे का मूल्य विज्ञान-जगत् भी कुछ-कुछ समझने लगा। आज तक समझा यही जाता था कि वह, बस, सर हम्फ्री डेवी का एक सहायक मात्र है। किन्तु इलेक्ट्रिक मोटर के सिद्धान्त में उसकी गवेषणाओं एवं सफलताओं ने उसे स्वतंत्र रूप में वैज्ञानिक उद्घोषित कर दिया। किसीने रॉयल सोसाइटी के लिए उसका नाम पेश किया, और उसे विधिवत् उसका सदस्य चुन भी लिया गया। लेकिन हैरानी इस बात पर होती है कि सर हम्फ्री डेवी ने उसका यहां विरोध किया। आज तक नहीं मालूम हो सका कि बात क्या थी—अपने ही सहायक की आशातीत उन्नति देखकर ईर्ष्या, या डेवी का विचार था कि अभी "यह जिल्दसाज छोकरा जो दार्शनिक बनता जा रहा था" इस आदर के योग्य नहीं था।

क्रिसमस के दिन के अपने उस सार्वजनिक परीक्षण के बाद दस साल तक फैराडे रसायन के कुछ परीक्षणों में उलझा रहा, किन्तु उसे अपना वह 'स्मृतिपत्र' भूला न था

जिसपर लिखा था कि :

"चुम्बक को विद्युत् में परिणत करना है।"

1820 के अक्तूबर महीने में डेनमार्क के भौतिकीविद् हैन्स क्रिश्चन एर्स्टेड ने देखा कि एक कण्डक्टर में संचरण कर रही विद्युत् में चुम्बक की सुई को उत्तर-दक्षिण से विचलित करने की शक्ति आ जाती है। एर्स्टेड ने अनुभव किया कि विद्युत् के प्रवाह ने संवाहक के गिर्द एक प्रकार का चुम्बकीय क्षेत्र बना छोड़ा है। विज्ञान-जगत् को जब इस परीक्षण का महत्त्व प्रतीत होने लगा, हर कोई इस कोशिश में लग गया कि अब चुम्बक को विद्युत् में परिवर्तित करने की संभावना भी है।

विद्युत् से चुम्बक-शक्ति पैदा हो सकती है, तो क्या चुम्बक से विद्युत्-शक्ति उत्पन्न नहीं की जा सकती? किन्तु, कैसे?

और जब फैराडे ने सवाल का जवाब निकाल लिया, वह जवाब उसका इतना आसान था कि आज हमारे लिए यह यकीन कर सकना भी असम्भव लगता है कि वैज्ञानिकों को इसका तरीका पता करने में इतने साल क्यों लग गए। कितने ही असफल परीक्षणों के पश्चात् आखिर 17 अक्तूबर, 1831 को समाधान मिल ही गया।

विद्युत् के अभ्युत्पादन (इण्डक्शन) का सिद्धान्त फैराडे के हाथ इस प्रकार लगा। 220 फुट लम्बा तांबे का एकतार, गत्ते के एक सिलिण्डर के गिर्द लपेट दिया गया। तारों के बीच उसने ट्वाइन लपेटी थी और लपेटों की तहों के बीच कैलिको का कपड़ा बिछा दिया था। तार के सिरों को गैल्वेनोमीटर से जोड़ दिया गया कि विद्युत् की सत्ता की खबर मिलती रहे। सिलिण्डर में फैराडे ने एक बार-मैग्नेट घुसेड़ दिया। गैल्वेनोमीटर पर स्पष्ट था कि विद्युत् का संचरण हो रहा है। चुम्बक को बाहर खींच लिया गया। गैल्वेनोमीटर की सुई अब भी हिली किन्तु विपरीत दिशा में। किन्तु विश्राम की दशा में वही मैग्नेट कुछ भी विद्युत् पैदा न कर सकता। फैराडे ने परीक्षण को उलटा दिया—मैग्नेट को स्थिर रख-कर कॉयल को घुमाना-फिराना शुरू किया। फिर वही सफलता। अर्थात् समाधान यह था कि चुम्बक तथा विद्युत् में परस्पर आपेक्षिक गति चुम्बक-शक्ति को विद्युत्-शक्ति में बदल सकती है।

और जल्द ही फैराडे इस आपेक्षिक गति को निरन्तरित कर सकने में सफल हो गया, जिसके द्वारा यह उद्भावित वोल्टेज भी किसी प्रकार क्षणिक न होकर, निरन्तरित ही रह सके। इसके लिए उसने यह किया कि पीतल की एक धुरी पर एक-चौथाई इंच मोटी और एक इंच व्यास की तांबे की थाली-सी चढ़ा दी। इस थाली को रॉयल सोसाइटी के पास मौजूद सबसे ताकतवर चुम्बक पर अवस्थित किया गया था। तांबे का एक टुकड़ा भी साथ लगा दिया गया था कि जब तांबे की यह थाली चक्कर काटने लगे इसके साथ उसका सम्बन्ध बना रहे। तांबे के एक 'ब्रश' का सम्पर्क धुरी के साथ कर दिया गया। और तांबे के दोनों ही ब्रशों को अब एक विद्युन्मापक के साथ संपृक्त कर दिया गया। थाली के घुमाने पर देखा गया कि मीटर की सुइयां विचलित होतीं हैं, अर्थात् बिजली पैदा हो रही है। पाठक उस पहले इलेक्ट्रिक जेनरेटर—आजकल के दैत्य डाइनेमो के पितामह के दर्शन पृष्ठ 155 पर खिंची उसकी रूपरेखा में कर सकता है।

1861 के नवम्बर महीने मे फैराडे ने अपने अन्वेषण को रॉयल सोसायटी के सामने प्रस्तुत किया। विद्युत् अभ्युत्पादन का वर्णन करते हुए उसने चुम्बकीय शक्ति की रेखाओ तथा 'ट्यूब्स ऑफ फोर्स' की परिभाषाओ का प्रयोग किया। उसका यह नियम कि यह अभ्युत्पादित विद्युत्-शक्ति तार द्वारा प्रति सेकण्ड कटती चुम्बकीय शक्ति-रेखाओ की सख्या पर निर्भर करती है, विद्युत्-विषयक हमारी धारणाओ के इतिहास मे एक युगान्तर है।

फैराडे ने कोई कोशिश नही की कि उसकी इस कल्पना का कुछ आर्थिक उपयोग भी हो सके। उसकी रुचि सदा ही विशुद्ध अनुसन्धान मे थी। समस्या के मूल तक एक बार पहुचा नही कि फिर उसकी कोई भी दिलचस्पी उसमें न रह जाती और वह अन्य अनुसन्धानो में प्रवृत्त हो जाता।

1831 से अपने मृत्यु दिवस 26 अगस्त, 1867 तक वह (1841–1845 के एक क्षणिक अवान्तर के अतिरिक्त, जब अपनी ही प्रयोगशाला मे परीक्षा करते हुए शायद पारद के ज़रिये कुछ विष चढ जाने की वजह स वह कुछ बीमार रहने लगा था) निरन्तर वैज्ञानिक अन्वेषणो मे ही लगा रहा। इन व्यतिरिक्त अध्ययनो मे एक भी उसकी वैज्ञानिकी प्रतिभा को प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त है। एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा। उसने ध्रुवित प्रकाश को एक चुम्बक द्वारा पथ-विचलित करके दिखा दिया कि प्रकाश प्रकृत्या विद्युत्-चुम्बकीय ही होता है।

माइकल फैराडे इलेक्ट्रिक मोटर तथा इलेक्ट्रिक जेनरेटर का जनक था। वह विज्ञान का एक स्वार्थहीन पुजारी था। विद्युत्-सम्बन्धी विश्व की सम्पूर्ण उद्योग-शृखला इस एक दिग्गज के कन्धो पर टिकी हुई है। विद्युत्-विज्ञान की परिगणनाओ मे एक महत्त्वपूर्ण इकाई का नाम उसके अपने नाम के अनुकरण पर 'फैरड' रखते हुए विज्ञान ने उसके प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित कर दी है।
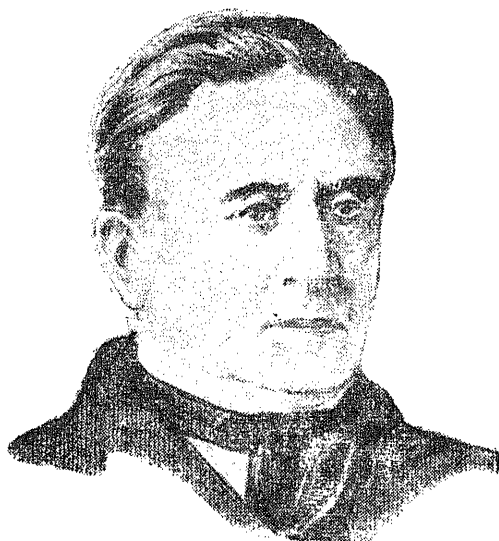
जोज़ेफ हेनरी

परीक्षण करते हुए जोज़ेफ हेनरी ने, साथ-साथ, उनके प्रकाशन की उपेक्षा कर दी, जिसका परिणाम यह हुआ कि विद्युत्-विज्ञान के इतिहास में उचित सम्मान न हेनरी को ही मिल सका और न अमरीका को ही। न्यूयार्क स्टेट की ऍल्बनी एकेडमी का यह प्रोफे-सर चुम्बक-विद्युत् के क्षेत्र में 'इण्डक्शन' के सम्बन्ध में माइकल फैराडे से वर्षों पूर्व अनु-सन्धान कर चुका था। किन्तु कुछ स्वाभाविक लज्जा के कारण और कुछ उपेक्षावृत्ति के कारण, अपनी उन खोजों को समय पर प्रकाशित न कर सका। उन दिनों कुछ ऐसे अति-वादी देशभक्त भी थे जिन्होंने हेनरी को इसलिए देशद्रोही करार दिया कि उसने अपनी वैज्ञानिक गवेषणाओं को कुछ लिखित रूप नहीं दिया।

जोज़ेफ़ हेनरी का जन्म न्यूयार्क में ऍल्बनी के निकट एक छोटे-से फार्म पर 17 दिसम्बर 1797 को हुआ था। परिवार बहुत ही गरीबी से गुज़र रहा था, जिसका परिणाम यह हुआ कि बालक की शिक्षा उपेक्षित हो गई। लगभग सारा दिन ही वह खेतों पर ही अपने बड़ों की मदद में लगा रहता। लेकिन खुद ही अभ्यास करते-करते वह जो भी पुस्तक हाथ में लगती, प्रायः रोमांचकारी उपन्यास, उसे पढ़ गया। 14 की उम्र में उसे ऍल्बनी भेज दिया गया ताकि एक स्टोर में क्लर्की करके अपनी रोटी आप कमाए। किन्तु यहीं उसके सम्मुख रंगमंच का कल्पना-लोक भी प्रसंग से खुद खुल आया। दो साल समय-समय पर अभिनय भी करते हुए, इस क्षेत्र में अब उसका कुछ भविष्य भी बनने को था, वह अब एक और ही, किन्तु यथार्थ के लोक की, विज्ञान की दुनिया की खोज कर गया।

जोज़ेफ हेनरी ने ऍल्बनी एकेडमी में दाखिले के लिए दरख्वास्त दे दी क्योंकि सौभाग्य

से यहा पढाई के लिए सन्ध्याकालीन सत्र की व्यवस्था थी। और सात महीनो मे ही, जिसमे हैडमास्टर की सहानुभूति और प्राइवेट ट्यूशन का भी योग कुछ कम नही था, वह गाव के स्कूल मे टीचरी करने लायक हो गया। रोटी और गुज़ारे के लिए स्कूल मे अध्यापक, और साझ के वक्त एकेडमी मे अपनी पढाई भी जारी रही। बाकी और कुछ करने के लिए अब वक्त बहुत बचता ही न था—सारा दिन पढाने के लिए और पढ़ने के लिए स्कूल और एकेडमी के बीच चलते-फिरते गुज र जाता। एक और खुशकिस्मती कि एकेडमी के रसायन विभाग मे एक प्रयोगशाला सहायक की नई जगह निकली। हेनरी ने मिलजुलकर यह नौकरी हासिल कर ली। यहा अब हेनरी के पास मौका ही मौका था—खुद परीक्षण करते रहने का और विद्यार्थियो को लेक्चर देने के लिए भी प्रदर्शन जुटाते रहने का। उधर स्वाध्याय मे भी अवरोध नही आने पाया। गणित और विज्ञान हेनरी के प्रिय विषय थे।

ऐंल्बनी एकेडमी मे हेनरी ने सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को समाप्त कर लिया। अब ईरी नहर पर एक नौकरी मिलने पर उसे सचमुच बडा दुख हुआ कि उसे प्रयोगशालाओ से विदा होना पड रहा है। उसकी नई नियुक्ति एक सर्वेइग इजीनियर की थी। नहर की सफलता को कुछ भी समय प्रतीक्षा नही करनी पडी। न्यूयार्क सिटी और न्यूयार्क राज्य को इससे बडा ही आर्थिक लाभ हुआ। कितने ही और राज्यो मे पब्लिक वर्क्स मे जैसे एक युगान्तर-सा ही इससे आ गया कि हर कही न्यूयार्क की प्रतिस्पर्द्धा होने लगी। हेनरी की प्रतिभा और योग्यता से सम्पन्न नवयुवको के लिए इजीनियरिंग की कितनी ही बडी-बडी नौकरिया अब खुली थी। किन्तु हेनरी ने,1826 मे अभी वह 29 बरस का नौजवान ही था, इन नई नौकरियो से कुछ भी फायदा न उठाते हुए—ऐंल्बनी एकेडमी मे विज्ञान और गणित के प्रोफेसर-पद को ही स्वीकार किया।

अध्यापन-कार्य उसका सारा दिन ही ले जाता, और उसमे उसे मेहनत भी कुछ कम नही करनी पडती। एक लोकप्रिय अध्यापक को यह सज़ा तो भुगतनी ही पडती है। और उसका व्यक्तित्व भी—अग-अग मे अनुपात, शुभ्र चिबुक, नीली आखे, प्रकृति के खुले वातावरण मे गुज़ारे दिनो की बदौलत चमडी मे भी कुछ-कुछ पीतल का-सा रग—कुछ कम आकर्षक नही। प्रयोगशालाओ मे कभी वह एक सहायक भी तो रहा था, इसलिए परीक्षा-प्रदर्शन मे वह सिद्धहस्त था ही, और छोटी-उम्र मे कुछ अभिनय भी कर चुका था। वही कला अब क्लास रूम्स मे भी कुछ न कुछ नाटकीयता-सी ले आती। सर्दियो मे तो स्कूल का काम ही दम न लेने देता किन्तु जब गर्मियो के लिए विद्यार्थी छुट्टी पर जाना शुरू कर देते, हेनरी को अपने अनुसन्धान-गवेषणा के लिए अवसर मिल जाता।

इग्लैड मे विलियम स्टर्जन ने इलेक्ट्रो-मैग्नेट का आविष्कार कर लिया था। एक कोमल लोह-छड को लेकर उसने घोडे की नाल की शक्ल मे मोड़ दिया। छड को पालिश करके चमका दिया गया और उसपर ताबे का नगा तार, एक ही परत मे लपेट दिया गया। इस तार मे से जब बिजली गुज़ारी गई तो छड में चुम्बक के गुण प्रत्यक्ष होने लगे। कहते हैं स्टर्जन की विद्युत्-चुम्बकित छड मे 5 सेर लोहे को आकर्षण द्वारा थामे रखने

की ताकत थी। जोज़ेफ हेनरी ने भी यही परीक्षण अपने यहा कर देखा और उसमे कुछ बेहतरी भी वह ले आया। तार को रेशम मे लपेटकर अब वह उसके कितने ही चक्कर छड के गिर्द दे सकता था ताकि तार की इन परतो मे शार्ट-सर्किट का अदेशा भी न रहने पाए। हेनरी के चुम्बक मे 1,200 सेर भार उठाने का सामर्थ्य था।

विद्युत्-चुम्बक के निर्माण से अब हेनरी को प्रेरणा मिली कि चुम्बक की शक्ति को किसी तरह विद्युत् मे परिवर्तित किया जाए। रेशम मे लिपटे तार को कोमल लोहे के गिर्द लपेटकर उसके सिरो को उसने गैल्वेनोमीटर से जोड दिया। लोहे की छड को इलेक्ट्रो-मैग्नेट के ध्रुवो पर लम्बा लिटा दिया गया। इधर इशारा हुआ और उधर एक सहायक ने इलेक्ट्रो-मैग्नेट का सम्बन्ध एक बैटरी के साथ कर दिया। हेनरी की आख गैल्वेनोमीटर पर थी उसमे एक क्षण के लिए वोल्टेज का कुछ सकेत हुआ और इस बार सहायक ने कॉयल और गैल्वेनोमीटर को डिस्कनेक्ट कर दिया। इस बार भी दूसरे कॉयल मे वोल्टेज़ पैदा हुई, लेकिन उलटी दिशा मे। विद्युत्-चुम्बकीय 'अभिप्रेरणा' का सिद्धान्त हेनरी ने खोज निकाला था किन्तु प्रकाश मे न लाने के कारण उसका श्रेय माइकल फैराडे को मिल गया, और ऐसा उचित भी था।

किन्तु इस प्रश्न का एक पहलू फैराडे को सूझा ही नही। यह पहलू था—स्वात्म-अभिप्रेरण (सेल्फ-इण्डक्शन) की सभावना का। इसीके (1829 मे) आविष्कार का श्रेय अब भी सौभाग्य से जोजेफ हेनरी को ही दिया जाता है। तार के एक चक्कर मे से यदि बिजली गुजर रही है तो इसके गिर्द भी एक तरह का चुम्बकीय क्षेत्र-सा बन आएगा। किन्तु सर्किट कटा नही कि यह क्षेत्र अदृश्य हुआ नही। जब तक बिजली उसमे रहेगी, उसमे कुछ न कुछ वोल्टेज़ भी बदस्तूर रहेगी। होता यह है कि चुम्बकीय क्षेत्र मे उसकी अपनी ही धारा में, उत्थान-पतन के साथ, जो परिवर्तन आता है वही यह वोल्टेज पैदा कर जाता है। और क्योकि यह वोल्टेज कॉयल की, और खुद कॉयल मे ही, पैदा की हुई होती है—इस स्थिति का यथार्थ नाम 'स्वात्म-अभिप्रेरण' है।

इधर ऐंल्बनी मे हेनरी के परीक्षण चल रहे थे और उसका विचार था कि विज्ञान की दुनिया अभी उसकी बराबरी नही कर सकती, उधर लन्दन मे फैराडे भी अपनी प्रयोगशाला मे व्यस्त था। फैराडे ने अपने निष्कर्षों को 1832 मे प्रकाशित कर दिया और बाज़ी ले गया। जोज़ेफ हेनरी की तो धारणा थी कि इस दौड मे मीलो कोई भी वैज्ञानिक उसके निकट नही है।

खैर, अब कुछ वैज्ञानिक मित्रो ने ही जब प्रेरणा दी, तब कही, हेनरी ने 'अमेरिकन जर्नल आफ साइन्स' मे प्रकाशनार्थ एक लेख-माला तैयार की। इन लेखो की बदौलत, और लेखो के आधारभूत अनुसन्धानो की बदौलत भी कुछ कम नही, हेनरी को प्रिंसटन यूनिवर्सिटी की फैकल्टी मे एक नियुक्ति मिल गई। यहा 1832 से 1846 तक चौदह साल लगातार प्रोफेसर हेनरी ने अध्यापन तथा अनुसन्धान मे व्यतीत किए।

कही भी पूछ बैठिए कि टेलिग्राफ का आविष्कार किसने किया था तो अधिकतर एक ही जवाब मिलेगा—सेमुएल एफ० बी० मोर्स ने। लेकिन सच कुछ और है। मोर्स से बरसों पहले हेनरी के यहां टेलिग्राफ सिस्टम का एक मील तक चालू एक मॉडल तैयार

हो चुका था। यही नहीं, उसने एक बिजली का रिले-सिस्टम भी ईजाद कर लिया था कि सिग्नल को जब तक चाहें, लगातार दोहराया जा सके। आज भी हम रिले के द्वारा ही हर कहीं सन्देश पहुंचाते हैं और यद्यपि अरबों रिले आज ईजाद हो चुके हैं, हेनरी के तरीके को अभी तक मात नहीं किया जा सका। तब भी यही तरीका था, और आज भी वही तरीका। छोटे-मोटे कुछ परिवर्तनों के साथ इस्तेमाल होता है। इलेक्ट्रो मैग्नेट का प्रयोग इसलिए किया जाता है कि वह एक चुम्बकित द्रव्य (आर्मेचर) को अपनी ओर खींचे। यह आर्मेचर आजकल इस तरह रखा जाता है कि उससे बिजली का सर्किट बन्द हो जाए। हेनरी ने अपने टेलिग्राफ सिस्टम का प्रदर्शन मोर्स तथा ब्रिटिश टेलिग्राफ सिस्टम के जनक चार्ल्स व्हीटस्टोन के सम्मुख किया भी था।

और इसमें कुछ भी झूठ नहीं है कि अमेरिका की सारी टेलिग्राफ व्यवस्था मोर्स के ही अथक परिश्रम तथा उद्योग का फल है। हेनरी के विधान में एक घण्टी होती है और एक स्विच होता है। जबकि मोर्स की मूल स्थापना ही यह थी कि सन्देश के संचरण
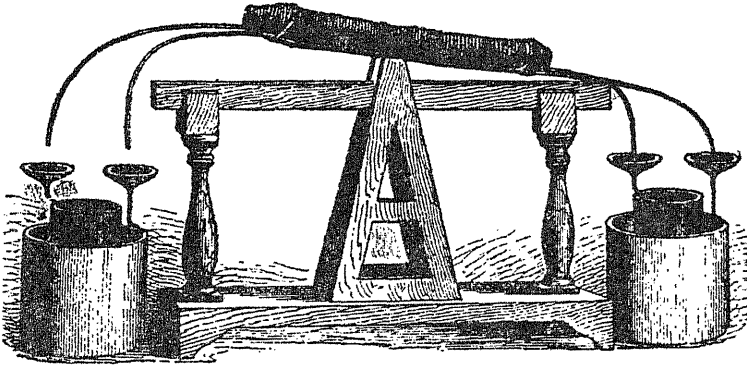
हेनरी के परीक्षणार्थ उपकरणों में से एक

में विशुद्धतार्थ किसी प्रकार के आत्म-चालन की व्यवस्था भी होनी चाहिए और, साथ ही, उन सन्देशों को स्थायी तौर पर ग्रहण कर सकने के लिए भी कुछ होना चाहिए। इस सबके लिए मोर्स ने कुछ व्यवस्था सफल भी कर ली जिससे कि कागज़ के एक टेप पर बिन्दुओं और रेखाओं को अंकित किया जा सके। और इस टेप का ही बाद में अनुवाद करके तार अपने ठिकाने पहुंचा दिया जाए। लेकिन कुछ ही वक्त बाद ऑपरेटरों को इतना अभ्यास हो गया कि वे सीधे ही इन चिह्नों को शब्दवत् पढ़ने लग गए। नतीजा यह हुआ कि मोर्स की पेचीदा मशीनरी व्यर्थ हो गई और टेलिग्राफ व्यवस्था मूलतः वही हेनरी वाला स्विच और घंटी की आवाज़ ही रह गई।

1842 में हाइनरिख हेर्त्स के परीक्षणों से 50 साल पहले प्रोफेसर हेनरी ने रेडियो की तरंगों का आदान-प्रदान प्रत्यक्ष कर दिखाया था। परीक्षणशाला में एक 'स्पार्क गैप' का इन्तज़ाम करके उसने देखा कि 30 फुट परे पड़ा एक और कॉयल एक सुई को चुम्बकित करके एक रिसीवर ही बन चुका है, हालांकि उसका सम्बन्ध किसी

विद्युत्-स्रोत से नही था। कुछ वक्त बाद हेनरी ने अपने इस परीक्षण को प्रकाशित भी किया, किन्तु वक्त से वह इतना आगे था कि कोई वैज्ञानिक उसके लिखे को पढकर कुछ समझ ही नही पाया।

एक ब्रिटिश रसायनशास्त्री एव खनिज-विशेषज्ञ जेम्स स्मिथसन, जो जीवन मे कभी भी अमरीका नही आया था, अमरीकी सरकार के नाम 25 लाख रुपया छोडकर मर गया कि इस रकम से एक वैज्ञानिक सस्था स्थापित की जा सके। 1846 मे इस धन को काग्रेस के एक एक्ट द्वारा स्वीकार करते हुए स्मिथसोनियन इन्स्टीट्यूशन की विधिवत् स्थापना कर दी गई। वाशिगटन डी० सी० मे अवस्थित यह सस्था एक सग्रहालय भी है और एक अनुसन्धानशाला भी। जोजेफ हेनरी ने इसके अध्यक्ष-पद को स्वीकार किया और 1878 मे अपनी मृत्यु तक इसके भार को खूब निभाया। इसका भवन 1852 मे हेनरी के निरीक्षण मे ही बना और आज तक वाशिगटन मे आनेवाले यात्रियो के लिए यह आकर्षण का एक केन्द्र है। हेनरी ने इसमे एक मौसम विभाग की स्थापना भी की जिसका काम था ऋतु-सम्बन्धी समाचारो को देश-भर मे फैले 500 अन्वीक्षको की सहायता से तार द्वारा सकलित करे। यहा से ऋतु-चक्र-सम्बन्धी नक्शे भी प्रकाशित होते और मौसम की भविष्यवाणिया भी की जाती। एक ग्रह-भौतिक वेधशाला भी यहा थी ताकि सूर्य का अध्ययन हो सके। सूर्य के काले धब्बो का तापमान ज्ञात करने का यह श्रेय भी हेनरी को दिया जाता है कि सूर्य के परिधि-स्थित क्षेत्रो से ये अपेक्षया कुछ कम गरम होते हैं।

जोजेफ हेनरी की स्मृति अमर ही रहेगी क्योकि कितने ही वैज्ञानिको ने उसके विचार लिए और नाम वही छोड दिया। विद्युत् मे एक महत्त्वपूर्ण गणना है जिसका प्रयोग चुम्बकीय क्षेत्र के परिमाण-ज्ञान मे तथा इस क्षेत्र को उत्पन्न करने के लिए आवश्यक विद्युत् को जानने मे होता है। गणना का नाम है 'इण्डक्टेन्स' (अभ्युत्पत्ति) और उसकी इकाई है—'हेनरी।'
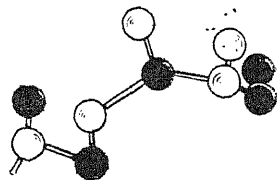
फ्रीड्रिख वायलर

"यूरिआ का निर्माण मैं प्रयोगशाला में ही, और बगैर किसी (इन्सान व कुत्ते) की मदद के, बगैर गुर्दे के, कर सकता हूं।" समीक्षात्मक रसायन में एक महान प्रगति के सम्बन्ध में यह चमत्कारी घोषणा 'वायलर' ने कर दी। यह पहला मौका था जब इन्सान ने एक ऐसे यौगिक की रचना खुद अपनी प्रयोगशाला में कर दिखाई थी जो पहले जीवित प्राणियों के शरीर में ही संभव समझी जाती थी। 1828 में फ्रीड्रिख़ वायलर ने जब कृत्रिम यूरिआ तैयार कर दिखाया तो उसने विज्ञान की एक नई शाखा का ही प्रवर्तन कर दिखाया था जिसे हम आज 'ऑर्गेनिक कैमिस्ट्री' या कार्बन रसायन कहते हैं।

'ऑर्गेनिक' शब्द की व्युत्पत्ति 'ऑर्गेनिज़्म' से होती है—ऑर्गेनिज़्म, अर्थात् कोई 'सजीव वस्तु'। समझा यह जाता था कि चर्बियों, शर्कराओं, विटामिनों, हार्मोनों, तथा पशुओं-पौधों में विद्यमान अन्यान्य व्यामिश्र यौगिकों के निर्माण में एक प्रकार की 'जीवित शक्ति' ही सक्रिय हुआ करती है। महान अंग्रेज़ रसायन-शास्त्री विलियम हेनरी के शब्द थे, "यह संभव नहीं कि इन प्रक्रियाओं में हम कभी भी प्रकृति की अनुकृति प्रस्तुत कर सकेंगे।" और वायलर की सफलता से केवल एक वर्ष पूर्व ही तो यह वक्तव्य हेनरी ने दिया था।

आज ऑर्गेनिक कैमिस्ट्री का अर्थ हो गया है—कार्बन कैमिस्ट्री। अनेक ऑर्गेनिक यौगिकों का निर्माण मूल कार्बन तत्त्व की सहायता से रासायनिक प्रयोगशालाओं एवं उद्योगशालाओं में विश्व-जीवन के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए किया जा चुका है। उदाहरण के तौर पर इसी यूरिआ में फॉर्मेलिडहाइड मिलाकर एक अदत मसाला ही तैयार किया जा चुका है जिसकी बनी तश्तरियां, प्लेटें, कप मुश्किल से ही टूटने में आते हैं।

फ्रीड्रिख वायलर का जन्म जर्मनी में फ्रैंकफोर्त-अम्मेन के निकट एक गांव में 1800

के जुलाई मास मे, हुआ था। बालक की आरम्भिक शिक्षा-दीक्षा खुद पिता ने अपने हाथ मे ले ली। वह स्वय शिक्षित था और बडी ही स्वतन्त्र वृत्ति का एक व्यक्ति था। पिता के प्रभावशील व्यक्तित्व की छाया मे ही पुत्र की अभिरुचि खनिजो मे तथा रसायन मे उत्पन्न हुई। सौभाग्य से घर पर ही एक अच्छा पुस्तकालय भी था और एक निजी रासायनिक प्रयोगशाला भी थी। बालक वायलर यहा वोल्टाइक पाइलें बनाता रहता और तरह-तरह के रासायनिक परीक्षण करता रहता, कुछ भीषण परीक्षण भी, जिनमे जान चली जाने का खतरा भी होता।

20 वर्ष की आयु मे जब वायलर मारबुर्ग विश्वविद्यालय मे प्रविष्ट हुआ, उसका जीवन-ध्येय एक डाक्टर बनना था। कुछ होनहार ही समझिए कि उसने अपने अध्ययन के लिए शुरू से ही पेशाब को चुन लिया, यह कि शरीर मे सचित गन्द किस प्रकार एक 'उपयोगी द्रव्य' बन जाता है। और, साथ ही साथ, वह रसायन का अध्ययन भी करता रहा जिसके लिए उसका अपना आवास स्वभावत एक छोटी-सी प्रयोगशाला बन गया। किन्तु होस्टल के अधिकारियो ने इसे अपनी अवहेलना समझा। एक सख्त झाड पडी, और हमारे इस नवयुवक ने भी निश्चय कर लिया कि अब कही और चला जाए।

चिकित्सा-सम्बन्धी अपनी इस शिक्षा का दीक्षान्त उसने सलग्न अस्पताल मे हाउस-सर्जन या फिजीशन बनने की बजाय स्टाकहोम के प्रसिद्ध रसायनशास्त्री बेर्जेलियस की छत्रछाया मे कुछ अनुसन्धान करके ही किया। स्टाकहोम मे रहते हुए वायलर ने नाइट्रोजन, कार्बन, सिल्वर और ऑक्सीजन के एक नये यौगिक सिल्वर सायनेट के निर्माण मे सफलता प्राप्त की। इस खोज को प्रकाशित किया गया। एक और अन्य जर्मन रसायन-शास्त्री युस्तस लीबिश ने उसे पढकर रसायन मे एक और ही प्रेरणा पाई। उन दिनो वह पेरिस की एक प्रयोगशाला मे विस्फोटको के सम्बन्ध मे अनुसन्धान कर रहा था। उसने भी एक नया यौगिक प्राय वायलर के ही इस यौगिक-सा, अपने यहा तैयार कर लिया था। अवयवो के तत्त्व वही, अनुपात भी वही, किन्तु फिर भी कही कुछ अन्तर रह गया लगता था। दो द्रव्य जिनकी रासायनिक रचना भी वही थी किन्तु प्रतिक्रियाए भिन्न थी !

यह एक बडी ही महत्त्वपूर्ण खोज थी। तब तक रासायनिक लोग किसी भी समास को गणित के सूत्र मे अर्पित करके अपनी इतिकर्तव्यता समाप्त समझ लेते थे किन्तु अब स्पष्ट था कि यह सूत्रार्पण ही पर्याप्त नही है। वायलर ने समस्या पर बेर्जेलियस के साथ मिलकर इसका विमर्श किया, और एक नई परिभाषा उसके परिणामस्वरूप सामने आई— 'आइसोमर'। वे यौगिक जिन के कणो मे अवयव-तत्त्वो के अणु एक ही अनुपात मे, किन्तु भिन्न व्यवस्था-क्रम मे, आते हैं रसायनशास्त्र मे आइसोमर ('समावयवी') कहलाते हैं।

और इस एक आनुषगिक सम्मिलन के फलस्वरूप एक रासायनिक विश्लेषण-सूत्र के प्रसग से दो युवा वैज्ञानिको मे (लीबिश 21 का था, और वायलर 23 का) आजीवन मैत्री हो गई। अब से वे हर काम मे परस्पर सहयोगी ही होते। लीबिश तो पहले से ही ग्नीस्सेन विश्वविद्यालय मे रसायन का प्रोफेसर था। स्वीडन से वापसी पर वायलर को भी बर्लिन के एक ट्रेड स्कूल मे कुछ अध्यापन-कार्य मिल गया।

अब भी सायनेट्स के सम्बन्ध मे वायलर के परीक्षण खत्म नही हुए थे। उसने पोटाशियम सायनेट बना भी लिया। और तभी पोटाशियम सायनेट का अमोनियम सल्फेट के साथ परीक्षण करते हुए उसके जीवन का वह महान् अन्वेषण जैसे अवतरित हो आया। मिश्रण मे से सूचिका-जैसे अमोनियम सायनेट के स्फटिक निकले—अर्थात् यूरिआ, जिसका निर्माण किसी भी प्रयोगशाला मे पहले कभी नही हो सका था। और इन स्फटिको ने मनुष्य जाति के सम्मुख जैसे एक बिलकुल ही नई दुनिया खोलकर रख दी।

वायलर यदि ऑर्गेनिक कैमिस्ट्री अथवा कार्बन रसायन का जनक न भी होता तो भी उसके एक मान्य रसायनशास्त्री होने मे उससे ज़रा भी अन्तर नही आता। 1827 मे वह पहला व्यक्ति था जिसने एल्यूमीनियम को पृथक् कर दिखाया था। और वायलर के ही एक शिष्य ओबेर्लिन के प्रोफेसर फ्रैंक ज्यूएट् ने अपने शिष्य चार्ल्स मार्टिन हॉल को अभिप्रेरित किया था कि एल्यूमीनियम तैयार करने का कुछ और सस्ता उपाय भी निकलना चाहिए। आजकल हॉल का ही वह सस्ता तरीका हम इस्तेमाल मे लाते हैं। वायलर ने 'बेरीलियम' तथा 'ईट्रियम' का आविष्कार भी किया, और 'वैनेडियम' को भी प्राय पृथक् कर ही लिया था।

वायलर के ऋण का मूल्याकन हमारे लिए कर सकना कठिन है। यूरिआ, वह द्रव्य जो उसने अपनी परीक्षणशाला मे तैयार करके दिखा दिया था, आज गोद वगैरह मे, और खेती-बारी मे कृत्रिम द्रव्यो के निर्माण मे और साज-सिंगार की चीजो मे, दवाइयो मे और मिश्रणो मे, प्लास्टिको और टैक्स्टाइलो मे—कहा नही इस्तेमाल होता?

किन्तु यूरिआ तो केवल उपलक्षण मात्र है। हज़ारो यौगिक वस्तुओ का निर्माण 'ऑर्गेनिक' द्रव्यो की कृत्रिम सभावना पर अवलम्बित है। इन द्रव्यो के विषय मे पहले समझा यही जाता था कि कोई जीवित प्राणी ही इनका जनक हो सकता है, और तभी वायलर ने आकर हमे राह दिखा दी।
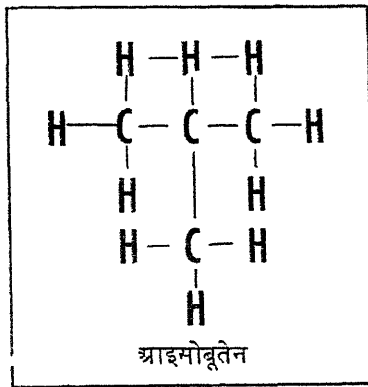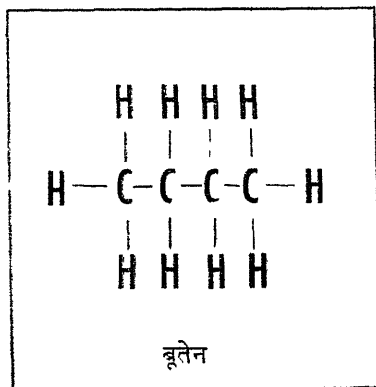
कार्बन और हाइड्रोजन के अणुओं की समान संख्या से भिन्न यौगिक बन जाते है।

चार्ल्स डार्विन

"कुत्ते, शिकार, और चूहे पकड़ना—इन तीन चीज़ों के अलावा किसी चीज़ से कोई वास्ता नहीं ! बड़ा होकर अपने लिए, और अपने घरवालों के लिए, बस, एक लानत ही बनकर रह जाएगा तू।" यह थी भविष्यवाणी जो एक गुस्से में आए और तंग आ चुके एक पिता ने अपने लड़के के बारे में की थी। और यह लड़का भी और कोई नहीं चार्ल्स डार्विन था जो आगे चलकर इतिहास का एक प्रसिद्ध प्रकृतिशास्त्री बना और जिसने 'आरिजिन ऑफ स्पीशीज़ बाई मीन्ज़ आफ नैचुरल सिलेक्शन' नाम की प्रामाणिक पुस्तक लिखी। ग्रन्थ की स्थापना विज्ञान का एक ऐसा सिद्धान्त है जिसके विषय में उन दिनों बहुत ही वाद-विवाद उठ खड़ा हुआ था, किन्तु वनस्पति तथा प्राणि-जगत् में 'नई किस्मों का जन्म किस प्रकार होता है' इस विषय में दिए गए डार्विन के नियम को आज प्रायः माना जा चुका है।

चार्ल्स डार्विन का जन्म इंग्लैंड में, श्रयूज़बेरी में 1809 में हुआ था। यही अब्राहम लिंकन की जन्मतिथि भी है। किन्तु दोनों परिवारों की स्थिति में बहुत ही अन्तर था। पिता रॉवर्ट एक सम्पन्न चिकित्सक था, और जो कुछ भी सुविधादि पैसे से उपलब्ध हो सकती है वह सब अपने बच्चों के लिए उसने जुटा दी। घर में किसी किस्म की कोई कमी नहीं थी, किन्तु ज्योंही चार्ल्स 8 बरस का हुआ बच्चों की मां नहीं रही।

उसका दादा डाक्टर इरैज़्मस डार्विन भी अपने समय का एक प्रसिद्ध डाक्टर, प्रकृतिदर्शी, एवं लेखक था।

इस सुशिक्षित परिवार में चार्ली को प्रायः एक जड़बुद्धि बालक ही समझा जाता था। कभी उसके हेडमास्टर ने उसे यह फतवा दिया भी था कि वह एक निहायत ही सुस्त लड़का है। यह नहीं कि उसमें दिमाग बिलकुल न हो। असल मुश्किल यह थी कि उसकी

कल्पनाशक्ति इतनी सजीव थी कि स्कूल की मामूली पढाई मे उसके लिए कोई स्थान था नही। सभी प्रकार के पशुओऔरकीडे-मकोडो के प्राकृतिक अध्ययन मे उसे शुरू से ही बडी रुचि थी। पिता ने जो भविष्यवाणी उसके सम्बन्ध मे की थी, उसके बावजूद वह जैसे तभी से अपने जीवन के ध्येय की पूर्ति मे लग चुका था, और विज्ञान के प्रमुख साधन आत्म-निरीक्षण को निरन्तर विकसित एव तीव्र करने मे लगा रहता था। पीछे चलकर उसने कभी कहा भी था, किन्तु पाठक भूल से इसे एक गर्वोक्ति न समझ ले, कि मेरा विचार है मैं साधारण जन से आम चीजो को गौर से देखने मे कुछ आगे हू। मेरी आख जहा टिक जाती है लोग आम तौर पर उसे नजरअन्दाज कर रहे होते है।"

प्रत्यक्ष-निरीक्षण की यह शक्ति बालक मे पिता ने अनुभव की थी, और उसकी प्रशसा करते वह कभी कतराया नही था। किन्तु 300 पौड की एक भारी-भरकम देह—अपने मरीजो, खास तौर पर गरीब तबके के मरीजो, को देखने मे इस कारण उसे कुछ मुश्किल पेश आती थी। इन बेचारो के घरो मे फर्श और सीढियो मे इतनी ताकत नही थी कि डाक्टर साहब के वजन को बरदाश्त कर सकें। सो चार्ली को छोटी उम्र से ही अपने पिता के साथ जाना पडता और बीमार की हालत के बारे मे जो रिपोर्ट चार्ली ले आता उसी के आधार पर रॉबर्ट नुस्खा लिख देता। डाक्टरी के कानून उन दिनो काफी ढीले थे।

खैर, बडे खानदान मे पैदा होने की वजह से चार्ली को भी कुछ तो करना ही था। पढे-लिखे आदमी का पेशा भी कुछ इज्जतबख्श होना चाहिए। फैसला हुआ कि वह धर्मप्रचारक बनेगा। कैम्ब्रिज भेज दिया गया। किन्तु वहा वह धर्मशिक्षा ग्रहण करने की बजाय अपना वक्त "खटमलो और कीडो की खोज मे बरबाद करने लगा।" कीडे-मकोडो का उसका यह सग्रहालय वस्तुत एक अद्‌भुत वस्तु थी।

22 साल की उम्र मे उसे धर्मप्रचारक की एक डिग्री तो मिल गई, लेकिन मिशनरी बनने की तबीयत कुछ थी नही। कैम्ब्रिज मे उसका परिचय वनस्पतिशास्त्र के एक युवा अध्यापक जान हेनस्लो से हो गया था। उसने एक परिचय-पत्र चार्ली को एक बडे जहाज एच० एम० एस० 'बीगल' के कप्तान फिट्‌जरॉय के नाम लिख दिया। इस तरह उसे मिशनरी होकर कही जम जाने की इस नौबत से छूट निकलने का एक मौका मिल गया।

'बीगल' के साथ एक और बडी किश्ती भी जुडी हुई थी। और अब दक्षिणी अमरीका की तटरेखा का निरीक्षण करने वह निकल रहा था। क्या चार्ली को यह पसन्द न आएगा कि वह भी इसमे एक प्रकृति-वीक्षक के तौर पर निकल चले? हा, खर्चा सब अपना ही उठाना पडेगा, और दो साल से पहले शायद यह यात्रा समाप्त न हो। क्या चार्ली साथ हो लेना पसन्द करेगा?

पैसो की जरूरत थी। चार्ली अपने पिता के पास पहुचा। उसके पिता ने कहा, "नही, सारी स्कीम ही बेसिर-पैर की है।" मिन्नतें, और मिन्नतें, परिवार के सभी सदस्यो ने विचार-विमर्श किया और अन्त मे अनुमति मिल ही गई 'बीगल' डेवनपोर्ट की बन्दरगाह से समुद्र की ओर चलना शुरू हुआ और, उधर, चार्ली ने जगले पर आकर तट की ओर निगाह डाली। उसे तब पता नही था यह घर से विदाई उसकी पाच साल

तक रहेगी। किन्तु वह प्रकृति-दर्शन के इतिहास में विश्व के महानतम अभियान का साक्षी होने चला था।

डार्विन में सूक्ष्म-अन्वीक्षण बुद्धि थी, प्रत्यक्ष को सही-सही अंकित करने की योग्यता थी, और वह वस्तुओं के संग्रह में कभी थकता न था। अद्भुत धैर्य और उत्सुकता के साथ वह तरह-तरह के पौधे, कीड़े-मकोड़े, पशु, चट्टानों के नमूने, और जीवाश्म इकट्ठे करता गया। ट्रंकों पर ट्रंक भरते गए, जहाज़ के डेक पर खाली जगह सब भरती गई। और बन्दरगाह पर जहां भी जहाज़ को रुकना होता, वहां से ये संग्रह घर को रवाना कर दिए जाते।

यात्रा भी कोई मुसीबतों और साहसिकता से कम भरी न थी। ज़मीन पर कदम रखो तो आदिवासी असभ्य लोगों से और चोर-डाकुओं से डर। बुखार हो जाए या वीराने में कहीं जा फंसे तो—? उसपर सर्दी का मौसम और वक्त-बेवक्त तूफानों की ज़िल्लत अलग। और दक्षिण अमरीका के शहरों में कहीं-कहीं तो उनका स्वागत भी इन असभ्य देशों में इतना हुआ कि उन्हें अपनी ही आंखों पर विश्वास नहीं आया—सुन्दर युवतियां "खूबसूरत और गोल-मटोल परियां-सी" (डार्विन के शब्दों में) और निहायत ही तहज़ीब-याफ्ता उनके मर्द! वही तटरेखा—किन्तु सभ्यता और असभ्यता के दो परस्पर विरोधी और पड़ोसी छोर-से।

यात्रा के दौरान में ही कैप्टेन फिट्जरॉय ने उन तीन जंगलियों को एक बिलकुल वीरान द्वीप में उनके अपने ही घर वापस छोड़ दिया जिन्हें पिछली बार वह बतौर एक बन्धक के कैद कर लाया था। उनके इस द्वीप का नाम था—टीर्रा डेलफ्यूएगो। और डार्विन ने देखा कि सभ्यता के सम्पर्क ने इन जंगलियों को, उनकी प्राकृतिक कठोरता से कुछ मुक्त-सा करा कर, इस थोड़े से अरसे में ही कुछ मृदु कर दिया है।

डार्विन की स्थापनाओं का आधार प्रकृति के आंगन में किया गया व्यापक क्षेत्र-कार्य है।

कितने ही ऐसे तटो का पर्यवेक्षण करके, जिनके बारे म कि भूगोल-शास्त्रियो को पहले कुछ खबर नही थी, और वनस्पति एव प्राणिजीवन के कितने ही अद्भुत रूपो का अध्ययन करके, 'बीगल' ने आखिर दक्षिण अमरीका के प्राय 500 मील पश्चिम की ओर गैलापेगोस द्वीप-समूह में लगर डाल दिए। यहा प्रकृति की अपनी ही एक प्रयोगशाला थी जहा चार्ल्स डार्विन को अपनी 'वस्तुजात मे परिवर्तन का उद्भव' नामक स्थापना के लिए पहले-पहल कुछ राह-सी मिली थी। कितनी ही किस्मो के प्राणी उमे यहा मिले और सब असाधारण और किसी बहुत ही पुराने गुजरे-जमाने के अर्थात् जीवित प्राणियो मे भी परिवर्तन आते जाना अपरिहेय है। यह था उसकी वैज्ञानिक स्थापना का प्रथम सकेत। ये यह देखकर किसीके भी मन मे आ सकता है कि जहा इस द्वीपसमूह मे शुरू-शुरू मे पक्षियो की सख्या प्राय न के बराबर ही होती है, प्राणियो के एक वर्ग को प्रकृति ने जैसे एक विशेप ध्येय की पूर्ति के लिए अलग विकसित करना शुरू कर दिया था। उसने लिखा भी, "जमीन पर रेगने वाले सापो मे, पक्षियो मे, पशुओ मे हर द्वीप हर दूसरे द्वीप से जैसे भिन्न हो, किन्तु कुछ समानताए है जो अदलती-बदलती नही।" यह सृष्टि का उद्भव एक ही स्थान पर और एक ही समय मे हुआ हो, तो उनके अगाग मे यह इतना अधिक और सूक्ष्म भेद क्यो ? उनके जीवाश्मो का भी अध्ययन किया गया जिनकी समानता जीवित प्राणियो के कुछ कम न थी—डार्विन इस निर्णय पर पहुचा कि कुछ नमूनो की जगह आज उनसे बहुत मिलते-जुलते कुछ और नमूने जिन्दा है।

इन द्वीपो के एक उपशासक ने डार्विन को बताया कि वह कछुओ की शक्ल देखकर ही बता सकता है कि उनकी फला किस्म किस द्वीप से आई है। डार्विन को लगा कि इन समानताओ तथा असमानताओ को समझ सकना कुछ भी मुश्किल नही है यदि हम यह मान लें कि इन द्वीपो मे रहनेवालो के 'पूर्वपुरुष' एक थे जिनमे विकसित होते-होते, धीरे-धीरे परिवर्तन आने लग गए। यह थी कहानी कि विकासवाद के सिद्धान्त का बीज किस तरह डार्विन के मन मे पडा था। वस्तु के मूल रूप मे परिवर्तन आना चलता है, यह तो स्पष्ट ही था। किन्तु क्यो ? इस परिवर्तन का कारण क्या था ? प्रक्रिया क्या थी ? कैसे यह सब सम्भव हुआ ?

1838 मे जाकर कही डार्विन को इस प्रश्न का कुछ समाधान मिला जब टॉमस माल्थुस का 'आबादी के बारे मे एक निबन्ध' पढते हुए उसे सूझा कि जीवित प्राणियो मे पीढी-दर-पीढी ये अन्तर क्यो और किस प्रकार आते है। माल्थुस की स्थापना थी कि इन्सान की आबादी इतनी तेजी के साथ बढती है कि जो रोटी उसके पास थी वह अब उसे पूरी नही पडती। रोटी के लिए, परिणामत एक सघर्ष चल पडता है, और जीवन-सघर्ष भी रोटी के लिए इस आपाधापी के अलावा और क्या होता है ?

डार्विन को यह भी मालूम था कि पशु-पालक लोग किस तरह उन पशुओ की सन्तान मे विशेष-विशेष गुणो का आधान किया करते है। घरेलू पशुओ को उत्पन्न करते हुए हम इन गुणो का नियन्त्रण कुछ करते भी हैं—वाञ्छित गुणो से विहीन पशुओ की उत्पत्ति पर अवरोध लगाकर और गुणो से युक्त पशुओ की उत्पत्ति को प्रोत्साहन देकर। किन्तु, डार्विन की साक्षी थी कि यह परिवर्तन वन्य पशुओ मे भी उतना ही सामान्य है;

क्योकि यहा तो मनुष्य का हाथ नही होता, फिर ऐसा क्यो ?

माल्थुस मे इसका सकेत था कि मनुष्य को अपनी रोटी जुटाने के लिए, और अपनी परिस्थिति के साथ अनुकूलतापूर्वक चलते रहने के लिए, सघर्ष करना पडता है। यही समस्या वन्य पशुओ के सामने भी तो उसी तरह आती है। उनके आसपास भी यदि भोजन उचित मात्रा मे न हो तो वही पशु उनमे जीवित रह सकेंगे जिनमे एक भोजन सग्रह के लिए समुचित सामर्थ्य होगा। "जिन्दा रहने के लिए योग्यता सामर्थ्य"—यह है वस्तुओ तथा प्राणियो की प्रकृति मे निरन्तर परिवर्तन की कुजी।

और इस जीवन-सघर्ष मे, डार्विन का कहना है, शरीर मे वही परिवर्तन कुछ स्थायी रह सकेंगे जो जीवन के लिए कुछ उपयोगी हो, अनुपयोगी तत्त्व स्वय नष्ट होते जाएगे। और परिणाम यह होगा कि प्राणी की एक नई किस्म ही, जैसे, अब पैदा हो जाएगी।"

'बीगल' पर विश्वयात्रा के दौरान मे प्रकृति का अध्ययन करते हुए जो स्थापनाए डार्विन के मन मे उठी, उनके समर्थन मे साक्षी सग्रह करने मे अब उसे 20 साल और लग गए। 1855 मे एक प्रकृतिविज्ञानी, ऐल्फ्रेड वैलेस का एक लेख छपा—'प्राणियो मे नई पौध के आगमन को नियन्त्रित करनेवाला प्राकृतिक नियम क्या है ?' इस लेख मे कितने ही ऐसे विचार प्रकट किए गए थे जो डार्विन की अप्रकाशित स्थापनाओ से मेल खाते थे। डार्विन को लोगो ने कितनी ही बार परामर्श भी दिया था कि वह अपने सिद्धान्तो का कम से कम एक सक्षिप्त रूप ही प्रकाशित कर दे, किन्तु वह सुस्ती ही करता रहा। 1858 मे वैलेस ने डार्विन को एक लेख की पाण्डुलिपि भेजी। शीर्षक था 'कुछ विशेषताए नई पौध के आते ही कुछ अनिश्चित अवधि के लिए विदा क्यो हो जाती हैं, इस प्रवृत्ति के विषय मे कुछ विचार।' अब डार्विन को अनुभव हुआ कि इस लेख मे प्राय उसका अपना सिद्धान्त सूत्ररूप मे आ चुका था। इसलिए उसने निश्चय कर लिया कि मैं अपने निष्कर्षों को अब दुनिया के सामने पेश कर ही दू। 1 जुलाई, 1858 को वैलेस का यह निबन्ध और डार्विन के सिद्धान्त की रूपरेखा—लन्दन की लिन्नियन सोसाइटी मे अलग-अलग पहुचे, और पढे गए।

'नई पौधो का उद्भव' अगले वर्ष प्रकाशित हो गया। इसीमे डार्विन का सिद्धान्त प्रस्तुत था भूगर्भ विद्या की साक्षी और पशुओ-पौधो का भौगोलिक वितरण। सम्पूर्ण ग्रन्थ एक प्रकार से "विकासवाद के समर्थन मे एक लम्बी युक्तिमाला है", जैसी,कि डार्विन की निजी समझ मे वह आई थी। डार्विन के इस सिद्धान्त के सम्बन्ध मे उसके उस प्रथम प्रकाशन के समय से ही वाद-विवाद चला आता है।

1860 मे दो लेख डार्विन पर आक्रमण करते हुए 'ब्रिटिश ऐसोसिएशन फार द ऐड्वान्समेण्ट ऑफ साइन्स' के सम्मुख पढे गए। ऑक्सफोर्ड के बिशप ने विवाद शुरू करते हुए डार्विन और उसके समर्थक टी० एच० हक्सले पर दुष्टतापूर्वक कीचड़ उछालना आरम्भ किया। पादरी ने अपना प्रसिद्ध प्रश्न प्रस्तुत किया "हक्सले का जो यह कहना है कि उसके पुरखा बन्दर थे, मैं पूछना चाहूगा कि दादा की ओर से या दादी की ओर से ?" किन्तु हक्सले ने जवाब दिया अगर मुझे खुद चुनाव करना हो तो मैं एक बन्दर को

ही अपना दादा चुनूगा, ऑक्सफोर्ड के बिशप को नही। और वह गडबड हुई कि मीटिंग बरखास्त हो गई।

1925 मे एक स्कूल टीचर, जान टी० स्कोप्स, पर टेनिसी-राज्य मे विकासवाद का सिद्धान्त पढाने के जुर्म मे मुकदमा चला। अमरीका के प्रसिद्ध वकील क्लेरेन्स डैरो ने उसकी ओर से मुकदमा लडा। सरकारी वकील भी अपने जमाने का कुछ कम मशहूर वकील नही था—विलयम जेनिग्ज ब्रायन। स्कोप्स कसूरवार ठहरा, किन्तु फैसले को पीछे रद्द कर दिया गया। कहने का मतलब यह कि डार्विन की मृत्यु के ४० साल से ऊपर गुजर जाने पर भी, हमारे इस आधुनिक युग मे भी डार्विन का सिद्धान्त पर्याप्त विवाद का विषय रहा है।

डार्विन स्वय, जिसकी एक पुस्तक ने एक इतने भीषण वाद-विवाद को जन्म दिया वही डार्विन खुद, एक नम्र और सीधा-साधा आदमी था। 'बीगल' पर विश्व-यात्रा करके जब वह वापस घर पहुचा, वह एक मरीज़ था—सिरदर्द और मचली के दौरो का निरन्तर शिकार। 70 साल से ऊपर वह ज़िन्दा रहा किन्तु समुद्र-यात्रा उसने फिर नही की।

अपने ही मामा की लडकी एम्मा वैजवुड से उसने शादी कर ली और अपने परिवार के साथ कैण्ट मे एक गाव मे सुख से रहने लग गया। काफी आमदनी उसे हो जाती थी, इसलिए किसी प्रकार की आर्थिक चिन्ता अब उसे नही थी। अपने समय का उपयोग वह प्राय सगृहीत साक्षी की छानबीन मे ही करता रहता—जिसका परिणाम निकला उसका प्रसिद्ध 'विकासवाद का सिद्धान्त'। मधुर और लोकप्रिय व्यक्तित्व, किन्तु सदा बीमार, फालतू समय वह अपने बगीचे मे फूलो-पौधो की देखभाल करते हुए ही अक्सर देखा जाता। वनस्पति-क्षेत्र मे भी उसने कुछ परीक्षण अपने सिद्धान्त की परीक्षा के लिए किए।

'ऑरिजिन ऑफ स्पीशीज़' के अतिरिक्त और ग्रन्थ भी डार्विन ने रचे। उसकी 'कीट-पतगो की करतूतो से वनस्पतियो मे फुमदी की पैदाइश' से स्पष्ट प्रमाणित है कि विश्व के इतिहास मे इन क्षुद्र जन्तुओ का भी कितना महत्त्व है। किन्तु 'ऑरिजिन ऑफ स्पीशीज' जैसा विप्लव कोई और किताब उसकी नही लाई।
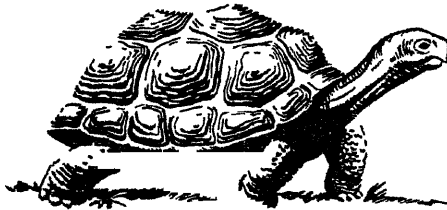
ऍरिस्टाटल की तरह ही डार्विन भी चकित था कि किस अद्भुत शक्ति द्वारा प्रकृति इन प्राणियो मे विशेष-विशेष कार्य करने का सामर्थ्य भर जाती है। डार्विन के शब्द है ' "जितना ही अधिक मैं प्रकृति का अध्ययन करता हू, उतना ही और अधिक मैं

प्रभावित होता चलता हू कि वस्तुओ के अग-अग मे क्रम-क्रम से स्थिर होती चलती ये विशिष्टताए (प्रकृति के अनुकूल अपने को ढालने के लिए ही मानो प्रस्तुत उनके स्वयमुद्भूत उपाय)—अन्तर भी थोडा-बहुत उनमे कही-कही दृष्टिगोचर होता है—सूक्ष्मातिसूक्ष्म मानव-बुद्धि की ऊची से ऊची कल्पनाओ की पहुच से सदा कितनी परे ही रहती हैं।"

चार्ल्स डार्विन की मृत्यु 1882 मे हुई। आज यदि उसे एक बार फिर विश्व-यात्रा करनी होती, तो वह उसके लिए गैलापैगोस द्वीपसमूह का चुनाव न करता। 'प्रकृति के स्वयवर' के अध्ययन के लिए उपयुक्त सामग्री अब वहा नही है। वे विशाल कछुए और लगूर वहा अब नही रहे। वे अद्भुत पौधे और कुतूहली पछी भी खत्म होते जा रहे है। द्वीपसमूह मे आज हवाई जहाजो के अड्डे खडे किए जा चुके है और जेट जहाजो की गडगडाहट पशु-पक्षियो की उस ची-ची को उठने ही नही देती जिसे सुनने का शौक कभी डार्विन को था।

डार्विन का वह 'उद्युक्त मनोनय' था जो इतिहास मे ठीक समय पर आकर अनुसधान-रत हुआ कि विकासवाद के सिद्धान्त को प्रस्तुत किया जा सके। लगता है उसे यह भी पता था कि ये 'परिवर्तन' स्वय वैज्ञानिक स्थापनाओ मे भी उसी प्रकार से अवश्यभावी होते है जैसे कि प्राणियो के जीवन मे "मुझे बिलकुल स्पष्ट है कि 'ऑरिजिन' का अधिकाश अन्तत कूडे-करकट की टोकरी के लायक ही सिद्ध होगा, किन्तु फिर भी मुझे आशा है कि मेरी इन स्थापनाओ का 'ढाचा' इतनी जल्दी खत्म नही हो जाएगा।"
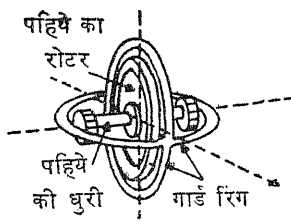
जाइरोस्कोप

जि एं बर्नार्ड फोकॉल्ट

न्यूयार्क में राष्ट्रसंघ के भवन में एक छोटा-सा गोला, एक लम्बी लोहे की छड़ से लटकता हुआ, पेण्डुलम की तरह इधर से उधर डोलता रहता है; लेकिन ज्यों-ज्यों घंटे गुज़रते हैं, लगता है—उसकी भी दिशा बदल रही है। सोने का यह नन्हा-सा गोला, मन्दगति से झूलता हुआ और देखने में बड़ा ही सादा-सा—इस वृत्ति का सबूत है कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घमती है। इसका नाम भी इसे ईजाद करनेवाले के नाम पर ही रखा गया है—फोकॉल्ट पेण्डुलम।

जिएं बर्नार्ड फोकॉल्ट का जन्म 1819 में, पेरिस में, हुआ था। शुरू की शिक्षा-दीक्षा उसकी घर ही में हुई, माता-पिता समृद्ध थे, बालक के लिए ट्यूटर लगा दिए गए। छोटी उम्र में जिएं की हर हरकत से साबित होता था कि उसमें हर तरह की चीज़ें जोड़-तोड़कर बनाने की प्रतिभा कुछ अधिक है। कितनी ही चीज़ें उसने उन दिनों बनाईं—एक किश्ती, एक मेकैनिकल टेलिग्राफ सिस्टम, और एक सफल स्टीम इंजन भी।

पेरिस में, यूनिवर्सिटी में दाखिल होकर, फोकॉल्ट ने चिकित्साशास्त्र का अध्ययन शुरू किया, लेकिन खून को देखते ही उसकी तबियत खराब होने लगती। उसने डाक्टर बनने का इरादा छोड़ दिया। मेडिकल स्कूल में उसे माइक्रोस्कोप के लिए स्लाइडें तैयार करने की एक टैक्निकल नौकरी मिल गई।

फोटोग्राफी में क्या प्रक्रिया काम करती है, इसकी विकास-कथा को, अर्थात् लुई जैक्वीज़ देगुएरें के अनुसन्धान की कहानी को, 1839 में पढ़ने के बाद फोकॉल्ट की अभिरुचि प्रकाश तथा नेत्र-विज्ञान में जाग उठी। और तभी उसे अनुभव हुआ कि जोड़-तोड़ की इस मैकेनिकल दक्षता में कुछ नहीं धरा : गणित और विज्ञान के मूलसिद्धान्तों के ज्ञान की आवश्यकता उससे कहीं अधिक है।

फोकॉल्ट ने प्रकाश की गति को मापने के लिए कुछ चमत्कारी उपाय भी निकाले, किन्तु एक तो फासला छोटा, और उस ज़माने के उपकरणो मे भी अपेक्षित पूर्णता थी नही इसलिए उसके निष्कर्षों मे वह पूर्णता अथवा शुद्धि नही आ सकी। किन्तु यह नही कि उसके परीक्षणो से कुछ भी लाभ न हुआ हो। फोकॉल्ट ने, अलबत्ता, यह सिद्ध कर दिखाया कि प्रकाश की गति पानी मे, वायु की अपेक्षा, कुछ मन्द पड जाती है। इससे प्रकाश के विषय मे एक नया सिद्धान्त आविष्कृत करने मे सहायता मिली कि प्रकाश तरग-प्रकृति है, और कि वैज्ञानिको की यह पुरानी स्थापना कि प्रकाश ज्योतिकणो की एक अविच्छिन्न धारा है, गलत है। कुछ बाद मे, ऍलबर्ट ए० मिचेलसन, एक अमरीकन वैज्ञानिक ने फोकॉल्ट के ही घूमते दर्पण की विधि के द्वारा प्रकाश की गति को बहुत ही सही-सही रूप मे निकाला भी था।

फोकॉल्ट की प्रतिभा बहुत ही उर्वर थी, उसकी रुचि प्रकाश के अध्ययन तक ही सीमित न थी। प्रतिभा भी थी, कुतूहल भी कम नही था इसलिए वह इलेक्ट्रिसिटी और मेकैनिक्स के क्षेत्र मे प्रविष्ट हो गया। इन्ही दिनो बिजली के आर्क लैम्प—अर्थात् कार्बन की दो छडो के बीच एक बृहद् विद्युत्-स्फुलिंग का आवागमन—प्रयोग मे आना शुरू हो चुका था। धीमे-धीमे कार्बन की इन छडो के बीच मे अन्तर बढता ही जाता है (ज्यो-ज्यो उनका कार्बन जलता जाता है), और अन्त मे, इतना बढ जाता है कि अब रोशनी, पैदा नही हो पाती, बुझ जाती है। फोकॉल्ट ने एक उपाय निकाला जिससे जलने से कार्बन की छडो मे यह जो कमी आती-जाती है वह साथ ही साथ पूरी भी होती जाए।

विद्युत् के क्षेत्र मे, इस आविष्कार के अतिरिक्त, फोकॉल्ट ने ताप मे तथा यन्त्र-शक्ति मे, यन्त्र-शक्ति मे तथा चुम्बक-शक्ति मे परस्पर सम्बन्धो पर भी अनुसन्धान किया। विद्युत् मे भ्रमरी-धाराओ का आविष्कार भी उसीने किया था और इसीलिए आज उन्हे फोकॉल्ट करेण्ट्स कहते भी है। इण्डक्शन द्वारा इन धाराओ को ताबे की एक थाली मे, थाली को एक सशक्त चुम्बकीय क्षेत्र मे रखकर, पैदा किया जाता है। आज भी इसकी मूल कल्पना का प्रयोग हम घर-घर मे अपने इलेक्ट्रिक मीटरो मे करते हैं।

फोकॉल्ट पेण्डुलम न्यूटन के नियम का एक अद्भुत प्रमाण है कि "कोई भी वस्तु उसी मार्ग पर निरन्तर गतिशील ही रहेगी जब तक कि उसे कोई बाह्य शक्ति आकर रोक नही देती।" साथ ही, यह इस बात का सबूत भी है कि धरती अपनी धुरी पर घूमती है। पेण्डुलम को लटकाने के लिए एक प्राय सघर्ष-विहीन गेंद और एक सॉकिट-बेयरिंग को इस्तेमाल मे लाया जाता है। इधर यह गोला दाए से बाए बाए से दाए गति करता है और, उधर, उसके नीचे पृथ्वी चक्कर काट रही होती है। देखनेवाले को लगता है—पेण्डुलम की दिशा बदल रही है। किन्तु यह भी हमारी दृष्टि की ही एक भ्राति है—वैसी ही जो हमे बताती है कि सूर्य पूर्व से पश्चिम की ओर जा रहा है, जबकि यह पृथ्वी होती है जो पश्चिम से पूर्व की ओर गतिशील होती है।

फोकॉल्ट के सभी आविष्कारो एव अनुसन्धानो ने मानव-ज्ञान को समृद्ध किया है किन्तु उसका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण आविष्कार एक खिलौना है यह खिलौना शक्ल मे धातु का बना एक पहिया है जिसके सिरे बहुत ही भारी है। लट्टू की तरह इसे घुमाए
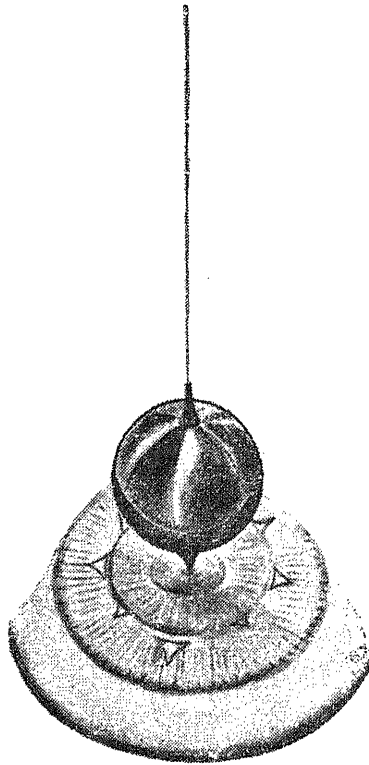
स्मिथसोनियन इन्स्टीट्यूशन में फोकॉल्ट पेण्डुलम

तो पहिये की अक्षरेखा में बिलकुल फर्क नहीं आता।

सदियों से समुद्रयात्री चुम्बक की सुई के द्वारा ही जान पाते थे कि उत्तर किस ओर है। कम्पास की सुई पृथ्वी के चुम्बकक्षेत्र की दिशा में ही उलटी पड़ जाती है। किन्तु जहाज़ों में लोहा इस्तेमाल होता है, अब कम्पास उत्तर की ओर सही दिशा-संकेत न देकर स्वभावत: जहाज़ के स्टील की ओर आकृष्ट हो जाता, मानो विद्युत् की कोई धारा उसे घेरे हो। समस्या थी—कुछ ऐसा उपाय किया जाए कि उत्तर का संकेत भी मिलता रहे और 'सुई' जहाज़ के लोहे से प्रभावित भी न होने पाए।

एक अमरीकी आविष्कर्ता ऍलमर ऍम्ब्रोस स्पेरी ने फोकॉल्ट के जाइरोस्कोप में प्रश्न का समाधान पा लिया। कुछ परिवर्तन लाकर उसने जाइरो-कम्पास ईजाद कर लिया। जाइरो-कम्पास को अगर चक्कर में इस तरह घुमा दिया जाए कि उसकी अक्ष-रेखा दक्षिण-उत्तर की ओर रहे, उसकी इस दिशा में कुछ भी परिवर्तन नहीं आएगा—जहाज़ को चाहो जिधर भी घुमा दो। ब्रुकलिन नेवी यार्ड में 1911 में दुनिया का पहला जाइरो-कम्पास लड़ाके जहाज़ 'डिलावेयर' में प्रयुक्त हुआ था। वह परीक्षण उसी क्षण

अपनी सफलता सिद्ध कर गया था।

जाइरोस्कोप के सिद्धान्त का प्रयोग कितने ही क्षेत्रो मे कुछ हेराफेरी के साथ हो चुका है। यह आज एक ऑटोमैटिक पाइलट का काम भी देता है। हवाई या समुद्री जहाज मे तूफान और मौसम के धुधलेपन का इसपर कुछ भी असर नही पडता। टॉर्पीडो का सही-सही नियन्त्रण भी इसके द्वारा सम्भव है। कुछेक जाइरोस्कोपो और कुछ इलेक्ट्रिक कम्प्यूटरो के सयोग द्वारा समुद्री यात्रा मे एक प्रकार के 'अगति सचार की व्यवस्था' (इनर्शियल नैविगेशन सिस्टम) भी की जा सकती है—और कुछ ऐसा ही एक पेचीदा उपकरण था जिसकी बदौलत अणुचालित पनडुब्बी 'नॉटिलस' उत्तरी ध्रुव के नीचे-नीचे तिर आई थी।

स्पेरी के ही जाइरोस्कोपो मे कुछ हेराफेरी लाकर आजकल उन्हे ग्रह-यात्राओ मे पूर्व निर्दिष्ट मिसाइलो मे और स्वय मानव-निर्मित उपग्रहो का यात्रा-पथ पर डालने के लिए प्रयोग मे लाया जा रहा है। किन्तु दरअसल यह फोकॉल्ट का वह खिलौना ही था जो यह सब स्पेरी के दिमाग मे मुमकिन कर गया।

लुई पास्चर

कुत्ता काट ले तो गांवों में लुहार ही तब डाक्टर का काम कर देता। और अगर यह कुत्ता पागल हो तो उसका इलाज था—घाव में से एक लाल गरमागरम सींख गुज़ार दो। कोई ही खुशकिस्मत मरीज़ होता जो इलाज से भी और मर्ज़ से भी, दोनों से, इस तरह निजात पा सकता। लुई पास्चर ने एक ऐसा केस अपनी आंखों देखा भी था, तब वह नौ साल का था। और पचास साल बाद उसने पागल कुत्ते के काटने का एक खतरे से खाली और आसान इलाज निकालकर उसे कसौटी पर उतार दिखाया।

लुई पास्चर का जन्म फ्रांस के पूर्वी हिस्से में एक गांव में 1822 की सर्दियों में हुआ था। पिता फ्रांस की फौज में एक सिपाही रह चुका था और, नेपोलियन के पतन के पश्चात्, उसने दोल में चमड़ा साफ करने की एक दूकान खोल ली थी। लुई के जन्म के कुछ ही दिन बाद परिवार दोल छोड़कर कुछ दूर अंगूरों की एक बस्ती के बीच आर्बोइ में आ बसा। फौज का पुराना सार्जेण्ट जिएं जोज़ेफ पास्चर टैनरी में भी मशगूल रहता, और, बच्चों की परवरिश में भी। किसी स्कूल में उसने शिक्षा नहीं पाई थी, जो कुछ सीखा था वह अपने ही पैरों पर—किन्तु पढ़ाई-लिखाई और बुद्धि के कामों के लिए उसके दिल में इज़्ज़त थी। गांव में भी उसके साथियों में एक गांव का डाक्टर था, और एक ऐतिहासिक बूस्सों डि मोरे था। जोज़ेफ पास्चर के मन में अपने पुत्र के लिए बड़ी महत्त्वाकांक्षाएं थीं। उसकी इच्छा थी कि उसका पुत्र बड़ा होकर प्रान्त के हायर सेकेण्डरी स्कूल में एक टीचर लग जाए।

पिता से और डि मोरे से लुई ने देशभक्ति की भावना ग्रहण की और फ्रांस के प्रति प्रेम, और फ्रांस की महान आत्माओं के प्रति आदर-भाव जिसका प्रभाव उसके हृदय में,

आजीवन, स्थायी रूप से बना रहा।

लुई के बचपन मे कोई ऐसे आसार नही थे जिनसे पता चल सकता कि वह बडा होकर विज्ञान के अनुसन्धान मे प्रवृत्त होगा। पन्द्रह साल की उम्र मे उसकी रुचि पोर्ट्रेट बनाने मे थी। पेण्टिग मे उसकी सफलता अद्भुत थी, और वह सचमुच एक विख्यात चित्र-कार होता भी यदि उसकी रुचि विज्ञान की ओर न हो गई होती। उसके कलाकार-जीवन की ऐसी कुछ स्मृतिया बच भी आई है और आज पेरिस मे पास्चर इन्स्टीट्यूट मे लटक रही है।

स्थानीय सेकेण्डरी स्कूल के हेडमास्टर ने देखा कि इस कल्पनाशील, उत्साही किन्तु विचारशील, विद्यार्थी मे एक अच्छा अध्यापक बनने के लक्षण है। 'ऐंकोल-नॉर्मलि-सुपूरियो' के विज्ञान-विभाग मे यद्यपि लुई को दाखिला मिल चुका था। पेरिस मे अध्यापको के प्रशिक्षणार्थ एक सस्था थी यह। एक साल तक वह खुद ही यहा दाखिल नही हुआ क्योकि उसका विचार था कि वह अभी पूरी तरह से इसके लिए तैयार नही है। तब तक उसकी रुचि भी परिष्कृत हो चुकी थी। गणित, भौतिकी और रसायन मे उसे विशेष रुचि थी।

पास्चर एक प्रतिष्ठित अध्यापक बनना चाहता था। उसके पत्रो मे स्पष्ट अकित है कि भौतिकी तथा रसायन अध्यापन की क्रियात्मक परीक्षाओ मे सफलता मिलने पर कितना गर्व एव उल्लास अनुभव हुआ था उसे। किन्तु प्रमाणपत्र मिलते ही वह अध्यापन की ओर न जाकर अनुसन्धान की ओर मुड गया।

ऐंकोल मे विद्यार्थी रहते हुए ही पास्चर ने स्फटिको के सम्बन्ध मे कुछ अनुसन्धान शुरू कर दिया था। उन्ही दिनो उसने ब्रोमीन के आविष्कर्ता ऐन्तॉयने येरोम बलार के रसायन पर कुछ व्याख्यान सुने भी थे।

बेंजामिन फ्रैकलिन की तरह बलार का भी विश्वास था कि वैज्ञानिक अनुसन्धान का कार्य घर मे ही एक छोटी-मोटी प्रयोगशाला खडी करके भी चलाया जा सकता है। सो, स्कूल मे ही इसी तरह की एक झोपडी-सी उसने बना भी रखी थी। बलार पास्चर की मौलिक गवेषणाओ से और अन्तर्दृष्टि से पहले ही बहुत प्रभावित हो चुका था। उसने उसे अपने असिस्टेट के तौर पर बुला लिया। इस अवसर से पास्चर को तुरत लाभ यह हुआ कि टार्टरिक ऐसिड के स्फटिको की सूक्ष्म परीक्षा उसकी वैसी ही बदस्तूर चलती रही। बलार ने उसके निष्कर्षों को फ्रास के प्रसिद्ध भौतिकी विशारद जिए बैप्टिस्टे बिओ के पास भेज दिया और बिओ ने इन अनुसन्धानो की ओर फ्रेंच ऐंकेडमी ऑफ साइन्स का ध्यान आकर्षित किया।

1848 मे, प्रोफेसर बलार तथा प्रोफेसर बिओ की उठाई आपत्तियो एव आक्षेपो के बावजूद, और ऐंकेडमी के अन्य सदस्यो का विचार भी कुछ भिन्न न था, शिक्षा मन्त्रालय ने पास्चर को दिजो के एक सेकेण्डरी स्कूल मे प्रारभिक भौतिकी पढाने पर नियुक्त कर दिया। पास्चर के मित्रो तथा अभिभावको की कोशिशें अब भी जारी रही। वे अब भी मन्त्रालय पर दबाव डालते रहे जिसका नतीजा यह हुआ कि एक ही साल बाद लुई को स्ट्रासबर्ग विश्वविद्यालय मे रसायन की प्रोफेसरी मिल गई।

यहां आने के कुछ ही सप्ताह पश्चात् इस गम्भीर प्रकृति, चिन्तनशील वैज्ञानिक

ने विश्वविद्यालय के रैक्टर से कहा कि वह उसे अपनी लडकी का हाथ शादी मे दे दे। पत्र इस प्रकार था

"मेरे पास कुछ भी सम्पत्ति नही है। मेरे पास जो थोडे-बहुत साधन है, वे है—अच्छा स्वास्थ्य, कुछ साहस भी, और विश्वविद्यालय मे मेरी यह नौकरी। भविष्य के बारे मे मैं यही कह सकता हू कि, जब तक मेरी रुचियो मे कुछ मौलिक परिवर्तन ही नही आ जाता, मेरा ध्येय जीवन को रसायन-सम्बन्धी अनुसन्धान मे खपा देने का ही है। विज्ञान के क्षेत्र मे अनुसन्धान की बदौलत जब कुछ प्रतिष्ठा मुझे मिल जाएगी, मेरा विचार पेरिस लौट जाने का है।· ·

"मेरे पिता खुद स्ट्रासबर्ग आकर विवाह का यह प्रस्ताव आपके सम्मुख रखेंगे। "

लुई पास्चर और मेरी लौरेत 29 मई, 1849 को विवाह मे बध गए। पास्चर 26 वर्ष का था और मेरी 22 की। मेरी एक आदर्श पत्नी थी। एमिल रूक्स, जो 1876 मे पास्चर का असिस्टेट था और 1904 मे पास्चर इन्स्टीटयूट का डायरेक्टर मेरी के बारे मे लिखता है

"विवाहित जीवन के पहले दिन से मेरी को पता था कि उसकीशादी किसके साथ हुई है। जीवन की कठोरताओ से पति को बचाए रखने के लिए उसने सब कुछ किया—घर की चिन्ताए अपने ऊपर लेते हुए कि अनुसन्धान-कार्य मे पास्चर के मन को पूर्ण स्वतन्त्रता मिली रहे। शाम को उसका यह एक दैनिक कर्तव्य ही हो गया था कि जो कुछ पास्चर बोलता चले वह लिखती जाए। स्फटिको की रचनाओ मे और विषाणुओ के तनूकरण मे भी वह सच्ची दिलचस्पी दिखाती। उसमे यह बुद्धि ही जागरित हो चुकी थी कि विचारो को किसी और के सम्मुख अभिव्यक्त करके उनमे स्पष्टता आ जाती है, और यह कि पुराने परीक्षणो के उपवर्णन मे जो प्रेरणा नये परीक्षणो को सयोजित करने की मिलती है वह किसी भी और प्रकार से असम्भव है। परीक्षणो मे प्राय एक शृखला-सम्बन्ध हुआ करता है। मेरी पास्चर की एक अनुपम साथिन ही नही, एक अनुपम सहयोगिनी थी।"

और फिर पास्चर और मेरी के जावन मे व्यक्तिगत दुख भी कुछ कम नही आए। उनकी पहली सन्तान, जिएने, एक लडकी थी जो नौ बरस की होकर गुजर गई। 1865 मे दो साल की नन्ही कैमिली भी गुजर गई। और 1866 मे 12 साल के सीसिल को टाइफॉयड ले गया। 1871 मे जर्मनो के हाथो फ्रासीसी फौज की हार के दौरान मे, खबर आई पास्चर का बीस साल का जवान बेटा बैप्टिस्टे लापता है। लुई ने सब काम-काज छोड दिए और लौट रहे थके-हारे सिपाहियो की लम्बी कतारो को ही सारा दिन देखते गुज़ार देता।

और फिर दिल तोड़ देनेवाली एक खबर यह आई कि सार्जेण्ट पास्चर की बैटेलियन के 1200 आदमियो मे अब केवल 300 ही बच रहे है। लुई और मेरी के लिए यह एक खुशकिस्मती ही थी कि उनका इकलौता बेटा—घायल लेकिन जिन्दा—घर लौट आया और तीमारपुरसी करके उन्होने उसे भला-चगा भी कर लिया। लुई पास्चर जर्मनो का यह अपराध जीवन-भर कभी क्षमा नही कर सका। सालो बाद जब जर्मनी की सरकार ने

एक मेडल उसे उसके वैज्ञानिक अनुसन्धानो के सम्मान मे देना चाहा तो उसने लेने से इन्कार कर दिया।

अब हम ज़रा देखे कि पास्चर ने क्या कुछ सम्भव कर दिखाया। पास्चर के पहले पहल परीक्षण स्फटिको के सम्बन्ध मे थे। भौतिकी के प्रसिद्ध प्रोफेसर बिओ ने देखा था कि क्वार्ट्ज़ के स्फटिक मे से जब 'ध्रुवित' प्रकाश को गुज़ारा जाता है उसका 'तल' घूम जाता है—अर्थात् प्रकाश की दिशा परिवर्तित हो जाती है। अन्य वैज्ञानिको की भी साक्षी थी कि ध्रुवित प्रकाश को चक्कर देने के लिए पहले कुछ स्फटिको को विलीन कर देना ज़रूरी है।

उदाहरण के तौर पर यदि इस ध्रुवित प्रकाश को पानी मे कुछ शक्कर घोलकर उसमे से गुज़ारा जाए, ध्रुवीकरण के तल मे शक्कर के शरबत मे से गुजरते हुए कुछ चक्कर आने लगेंगे। उधर, एक जर्मन वैज्ञानिक आइलहार्ड्ट मितशेरलिख टार्टरिक एसिड से सम्बद्ध किसी प्रश्न से जूझा हुआ था। (शराब के कारोबार मे टार्टरिक की उत्पत्ति होती है।) उसकी सूचना थी कि टार्टरिक एसिड दो तरह के होते है—एक तो सच्चा टार्टरिक एसिड और दूसरा पैराटार्टरिक एसिड। सच्चे एसिड से तो ध्रुवित प्रकाश मे यह चक्कर आता है, किन्तु पैराटार्टरिक का उसपर कुछ भी असर नही होता। और सब मामलो में दोनो मे कुछ भी भेद नही है।

पास्चर अभी उम्र मे बहुत छोटा था, किन्तु यह अजीब-सी स्थिति उसके दिमाग को काबू कर गई। विश्वास ही न आता उसे। कुछ न कुछ स्पष्ट भेद होना ही चाहिए। और अब वह इसीपर लग गया कि वह भेद है क्या। इतने साल स्फटिको पर काम किया था, आज उसीकी परीक्षा का दिन जैसे आ गया था। टार्टरिक एसिड के स्फटिको की सूक्ष्म रूप-रेखाए गौर से देखी। मितशेरलिख की किस्म का पैराटार्टरिक एसिड भी तैयार किया, और उसके स्फटिको की छानबीन भी उसने की।

पैराटार्टरिक मे उसने देखा कि उसके स्फटिको की आकृति दो प्रकार की है—कुछ वाममुखी है, तो कुछ दक्षिणमुखी। उसका चेहरा खिल उठा। पैराटार्टरिक एसिड वस्तुत दो किस्म के टार्ट्रेट है—वाममुखी तथा दक्षिणमुखी दो किस्मो का एक सम-मिश्रण सा! यह एक बिलकुल ही अद्भुत और सर्वथा नूतन खोज थी।

पास्चर की स्फटिक-सम्बन्धी खोजो का यह, अन्त नही, आरम्भ था। स्फटिको के अध्ययन को समाप्त करने से पूर्व उसने 'पार्थिव जीवन' के सम्बन्ध मे एक स्थापना भी प्रस्तुत कर दी। उसका विचार था कि ये दक्षिणमुखी और वाममुखी स्फटिक सदा सजीव वस्तुओ की अन्त क्रिया द्वारा ही उत्पन्न हुआ करते है। दोनो को एक नाम 'अ-समरूप' (ए-सिमिट्रिकल) दे सकते हैं। पास्चर को विश्वास था कि रासायनिक प्रक्रियाओ मे ये अ-समरूप शक्तिया प्रवेश पा सकें तो प्रयोगशाला मे स्वय जीवन का निर्माण भी किया जा सकता है। प्रयोगशाला मे जीवन को सिद्ध कर दिखाने के इस स्वप्न मे तो पास्चर को सफलता नही मिली, किन्तु एक और नई समस्या—खमीर लगना—के समाधान के लिए, अलबत्ता, उसे कुछ प्रशिक्षण इस प्रकार आप से आप मिल गया।

'फॅर्मेण्टेशन' अथवा 'खमीर लग जाना' एक वैज्ञानिक परिभाषा है जिसका प्रयोग

कुछ द्रव्यों में प्रत्यक्षीकृत परिवर्तनों के वर्णन में किया जाता है। कभी तो हम चाहते हैं कि चीज़ को खमीर लग जाए, और कभी नहीं चाहते। अंगूर सड़ते हैं, उन्हें खमीरी लग जाती है, और तब जाकर शराब बनती है; और यह शराब ही अब सिरका भी बन सकती है यदि यह और सड़कर एसेटिक एसिड बन जाए। दूध खट्टा पड़ जाता है जब उसकी शक्कर खमीरी होकर दुग्धाम्ल में परिणत हो जाती है। मांस और अण्डों के लिए खमीर हानिप्रद है।

शराब फ्रान्स में एक बड़ा ही भारी उद्योग थी; और अब, जब अंगूर मुफ्त में ही सड़ने लग गए, स्वभावत: कारोबार के लिए एक समस्या उठ ही खड़ी होनी थी। किन्तु अभी तक किसीको यह मालूम नहीं था कि चीज़ों में यह खमीर आखिर लगता किस तरह

पास्चर अपनी परीक्षणशाला में

है। और प्रकृति को ही यदि स्वतन्त्र छोड़ दिया जाए तो उसका नतीजा यह भी हो सकता है कि शराब या तो खट्टी हो जाए या फिर बने ही नहीं। पास्चर ने शराब के कारोबार का सूक्ष्म अध्ययन किया जिसका परिणाम हुआ खमीर के कीटोत्पादन-सिद्धान्त का आविष्कार, जिसे पास्चर ने लिली की 'सोसाइटी डि साइन्सेज़' के सम्मुख रखा। उसने अपनी यह धारणा सूत्रबद्ध कर दी कि सूक्ष्म तथा व्यापक परीक्षणों द्वारा यह स्पष्ट है कि प्रकृति में द्रव्यमात्र में कोई भी परिवर्तन बिना इन छोटे-छोटे जीवाणुओं के असंभव है, भले ही हम इन्हें सूक्ष्मदर्शी यन्त्र की सहायता के बिना देख भी न सकें। पास्चर ने यह भी प्रत्यक्ष दिखा दिया कि ताप के द्वारा इन क्षुद्रजन्तुओं को नियन्त्रित भी किया जा सकता है। पास्चर के परीक्षणों और अनुसंधानों ने फ्रांस के शराब-उद्योग को एक वैज्ञानिक आधार दे दिया। और इसी अध्ययन का एक और परिणाम भी विश्व-व्यापक सिद्ध हुआ। पास्चराइज़ेशन की विधि द्वारा दूध वगैरह की सुरक्षा, ताकि न तो वह फटने पाए और न ही उसमें बीमारी के कोई कीटाणु ही रह सकें या जा सकें।

कुछ साल बाद, अब फ्रास का रेशम-उद्योग बरबाद होने की नौबत पर आ गया क्योकि रेशम के कीडो को कुछ बीमारी लग गई थी। मुश्किल का पता करने के लिए पास्चर को बुलाया गया। यहा भी समस्या के हर पहलू का उसने अध्ययन किया। रेशम के कीडो को पैदा करने मे वह सिद्धहस्त हो गया कि किस प्रकार रेशम के स्वस्थ कीटाणुओ को पृथक् करके कारोबार को सुरक्षित किया जा सकता है।

लुई पास्चर की सफलताओ मे चिन्तन से उद्भूत कुछ निरन्तरितता-सी, कुछ क्रम-सा, कुछ अपरिहेयता-सी है। एक अनुसधान का अर्थ था—एक और अनुसन्धान की अवश्यम्भाविता। स्फटिक के अध्ययन ने उसे जीवन के निगूढ रहस्यो की खोज के लिए प्रेरित किया। और जीवन के अध्ययन द्वारा वह 'खमीर लगने' की समस्या के समाधान की ओर मुडा। यहा वह इस निष्कर्ष पर पहुचा कि फॅर्मेण्टेशन का मूल होते है छोटे-छोटे जीवाणु (माइक्रोब्ज)। इस अनुसधान का परिणाम यह हुआ कि परम्परावादियो से उसकी झडप हो गई। ये लोग अभी तक यही मानते आ रहे थे कि निर्जीव मिट्टी से भी जीवन की उत्पत्ति स्वत हो सकती है। यह सच है कि ग्रब, मैगट, और टेपवर्म और चूहे की उत्पत्ति के विषय मे तो इसान, इटैलियन वैज्ञानिक फ्रासिस्को रेडि के बाद, अब यह मानने लग गया था कि ये स्वयभू नही हैं, किन्तु यह विश्वास अब भी प्रचलित था कि माइक्रोब्स की उत्पत्ति किन्ही जीव-रहित ऑर्गेनिक द्रव्यो से ही होती है।

इन क्षुद्राणुओ की उत्पत्ति भी स्वयभुवी नही होती—पास्चर ने आखिर यह भी सिद्ध कर दिखाया। उसके कीटाणु-सिद्धान्तो का ही यह प्रसाद था कि फ्रास का रेशम का कारोबार नष्ट होते-होते बच गया। उसने एक जलील बीमारी 'एन्थ्रैक्स' (गिल्टी बनना) के विषय मे भी अध्ययन किया और यूरोप-भर के पशुओ को इसके जबडे मे जाने से बचा लिया। उसने गैंग्रीन (चमडी बगैरह का गलने लग जाना,) और खून मे जहर फैलने का, और प्रसव-ज्वर का भी व्यापक अध्ययन किया और क्योकि इन सब बीमारियो का कारण भी कीटाणु ही थे, इन्हे नियत्रित करने की विधि भी परिणामत वह चिकित्सक-जगत् को दे गया।

और फिर पागल कुत्ते के काटने से पैदा होनेवाली हलकेपन की वह लानत भी पास्चर की प्रयोगशाला मे पहुची। इसका भी कुछ समाधान करना होगा, और पास्चर ने अद्भुत कुशलता के साथ एक नौ साल के बच्चे की ज़िन्दगी को एक ही टीके से बचाकर चगा कर दिखाया। बेचारे को कुत्ते ने इस बुरी तरह काटा था कि गरम सीख को तो बरदाश्त कर सकना भी उसके लिए कभी मुमकिन न होता।

पास्चर की मृत्यु 28 सितम्बर, 1891 को हुई। उसका जीवन-दर्शन खुद उसीके शब्दो मे सूत्रित है

"मुझे पूर्ण विश्वास है कि अविद्या तथा युद्ध की प्रवृत्ति पर, अन्त मे विजय विज्ञान और शान्ति की ही होगी, और ये राष्ट्र भी आखिर एक होकर परस्पर विनाश मे नही, मनुष्य की उन्नति मे ही प्रवृत्त होगे। भविष्य उन्हीका होगा जिन्होने दुखी मानव-जाति के लिए अधिक से अधिक कष्ट उठाए हैं।"

योहान ग्रेगोर मेण्डेल

"सचाई तुम्हें बड़ी मामूली चीज़ों से ही मिल जाएगी।"

सालों-साल योहान ग्रेगोर मेण्डेल अपनी नन्ही-सी बगीची में बड़े ही धैर्य के साथ, और बड़ी सावधानी के साथ, मटर की फलियां उगाता रहा। आठ साल गुज़र गए और, तब आकर कहीं 1866 में, उसने अपने अनुसन्धान को प्रकाशित किया। खेती, देखभाल, और सारी चीज़ का अन्त में विश्लेषण—सभी कुछ वैज्ञानिक ढंग से किया गया था। किन्तु इस प्रकाशन का कोई असर नहीं हुआ। विश्व-भर में कोई भी वैज्ञानिक यह नहीं समझ पाया कि इन गवेषणाओं का कुछ स्थायी वैज्ञानिक महत्त्व है।

फिर भी 'वंशानुगम' (हेरिडिटी) के अध्ययन का प्रवर्तन वह कर गया। 31 साल बाद 1900 में, और उसकी मृत्यु के भी 16 वर्ष पश्चात् तीन देशों में तीन वैज्ञानिकों ने, अलग-अलग काम करते हुए मेण्डेल के भूले काम को हाथ में लिया और उसके महत्त्व को कुछ समझा। और विश्व के सम्मुख तब विज्ञान का एक और दिग्गज आया, जो अपने युग से वर्षों आगे था।

योहान मेण्डेल का जन्म खेतिहरों और मालियों के एक परिवार में जुलाई 1822 में हुआ था। उसकी जन्मभूमि मोराविया थी जो उन दिनों आस्ट्रिया का एक अंग थी किन्तु आजकल चेकोस्लोवाकिया का एक भाग है।

बालक का काम था खेतों पर पिता की सहायता करते रहना, किन्तु इसीसे उसमें सम्पूर्ण प्रकृति के प्रति और उसकी गतिविधि के प्रति एक प्रेम-सा जग उठा। कृषिमय यह उसका जीवन, संभवतः यह उसकी आनुवंशिक परम्परा उसमें ध्येय के प्रति एक अविचल निष्ठा-सी—कहने को उसे एक ज़िद भी कहा जा सकता है—प्रेरित कर गई

जो आगे चलकर उसके जीवन-भर मे कभी सहायक, तो कभी बाधक बनकर भी, सदा उपस्थित होती रही।

प्रारभिक शिक्षा के लिए योहान हाइन्त्सेनदोर्फ गाव के स्थानीय स्कूल मे दाखिल हुआ। हाइन्त्सेनदोर्फ की 'लेडी' के आग्रह पर ही स्कूल मे कुछ विशेष शिक्षा का भी समावेश था—स्कूल इन्स्पेक्टर देखकर तग आ गया कि यहा तो प्रकृति के अध्ययन की व्यवस्था भी है। निहायत 'बेशरमी' की बात है, उसका कहना था। किन्तु इस दुर्व्यवस्था का ही यह एक परिणाम था कि योहान को अनुभव हुआ कि प्रकृति भी अध्ययन और विश्लेषण का विषय बन सकती है।

हाइन्त्सेनदोर्फ मे शिक्षा समाप्त करके योहान पडोस के त्रोपाव कस्बे मे जिम्नेज़ियम (सेकेण्डरी स्कूल) मे दाखिल हो गया। परिवार को गरीब तो नही कहा जा सकता था, किन्तु आगे शिक्षा देने के लिए उनके पास पैसा नही था। स्कूल की पढाई योहान ने समाप्त कर ली। किन्तु सात साल के एक बालक की जिज्ञासा वहा पूरी नही हो सकी। खाना भी ठीक नही मिलता था। परिणाम यह हुआ कि बीमारी—योहान की पढाई-लिखाई एकदम से बन्द।

और इन्ही विकट परिस्थितियो मे पिता ऍण्टन मेण्डेल भी एक दुर्घटना का शिकार हो गया और फार्म बेचने के लिए तैयार हो गया। वसूली की कुछ रसीदें ऍण्टन ने योहान और उसकी बहिन थेरीसिया मे बाट दी। बहिन ने अपना हिस्सा भी भाई को दे दिया कि उसकी पढाई-लिखाई और अन्य काम चल सके। चार साल जैसे-तैसे भूखे रहकर, ओल्यूत्स मे, योहान ने गुज़ारे। बहिन के प्रति यह ऋण योहान ने, उसके बच्चो की शिक्षा का प्रबन्ध करते हुए, पीछे चलकर कुछ उतार दिया।

अब योहान नौकरी के लायक हो चुका था। जीवन मे इस आर्थिक सघर्ष ने उसके सम्पूर्ण चिन्तन को पर्याप्त प्रभावित किया। एक अध्यापक के परामर्श से आल्तब्रुएन की आगस्टीनियन मॉनेस्टरी मे प्रविष्ट हो गया कि उसकी 'यह आजीविका की समस्या कही स्थायी ही न बन जाए'। 21 वे वर्ष मे पहुचकर योहान सचमुच इस धार्मिक जीवन को अपना सब कुछ अर्पित कर बैठा और अब उसका दीक्षा-नाम था—ग्रेगोर।

अगले ही दिन से ग्रेगोर मेण्डेल के जीवन मे शान्ति आ गई। उसके भोजन की अब उचित व्यवस्था हो चुकी थी और—जो कुछ कम महत्त्वपूर्ण नहीं है—एक भरा-पुरा बगीचा भी वनस्पति-सम्बन्धी अध्यापनो के लिए मॉनेस्टरी के पास अपना था। एक वृद्ध पादरी मरने से पहले भूमि का यह टुकडा, वैज्ञानिक ढग से उसमे फूल-पौधे उगाकर विकसित कर गया था। ग्रेगोर को इस प्रकार अपनी ही प्रकृति के कुछ व्यक्ति मिल गए जिन्हें धर्मशास्त्र, दर्शन, विज्ञान तथा साहित्य मे रुचि थी। और वैज्ञानिक ढग से उपवन को विकसित करने का शौक भी था। इसी बीच मे पादरियो की उचित शिक्षा-दीक्षा की भी उसने उपेक्षा नही की। 1847 मे उसका नियमानुसार दीक्षान्त हो गया।

कुछ समय ग्रेगोर को मॉनेस्टरी छोडकर गाव के एक गिरजे मे नौकरी पर जाना पड़ा। किन्तु दुःख के स्वागीकरण की प्रवृत्ति उसमे इतनी पनप चुकी थी कि किसी मरीज़ को देखकर, या किसी ऐसे परिवार को सान्त्वना देते हुए जहा कि कोई मृत्यु हो गई हो, उसकी

अपनी तबियत ही बड़ी खराब हो जाया करती थी। परिणाम हुआ कि अधिकारियों ने उसे इस कार्य से मुक्त कराकर फिर मॉनेस्टरी में और बगीची में वापस बुला लिया।

स्थानीय सेकेण्डरी स्कूल में पढ़ाने के लिए उसने दरख्वास्त दी। बोर्ड के परीक्षकों ने निश्चय किया कि नियमित रूप से क्लासें लेने की योग्यता इसमें है नहीं, सो एक स्थानापन्न अध्यापक के तौर पर कुछ कम तनख्वाह पाकर वह चाहे तो पढ़ाने आ सकता है। मेण्डेल ने बोर्ड के सम्मुख फिर इम्तिहान दिया, लेकिन इस दफा फतवा यह दिया गया कि वह तो एलिमेण्टरी कक्षाओं को पढ़ाने के लायक भी नहीं है। वह अपने विषय में सिद्धहस्त था, किन्तु उसके दिए उत्तरों को स्वयं स्कूल बोर्ड के लोग समझ सकने में असमर्थ थे। मेण्डेल का भी आग्रह था अपनी ही परिभाषाओं पर: उसे ज़िद थी कि प्रचलित परिभाषाएं अशुद्ध हैं और अवैज्ञानिक हैं।

एक स्थानापन्न अध्यापक की हैसियत से ही वह सारी उम्र पढ़ाता रहा। स्थायी पद उसे कभी मिला नहीं। क्लासरूम एक सुखद स्थान था—विद्यार्थी उसकी मौजी प्रकृति की ओर आकृष्ट हो गए थे (यहां उसे खाना भी अच्छा मिल रहा था)। क्लास के वातावरण में वैसे भी कुछ शुष्कता और कठोरता आम तौर से आ जाया करती है।
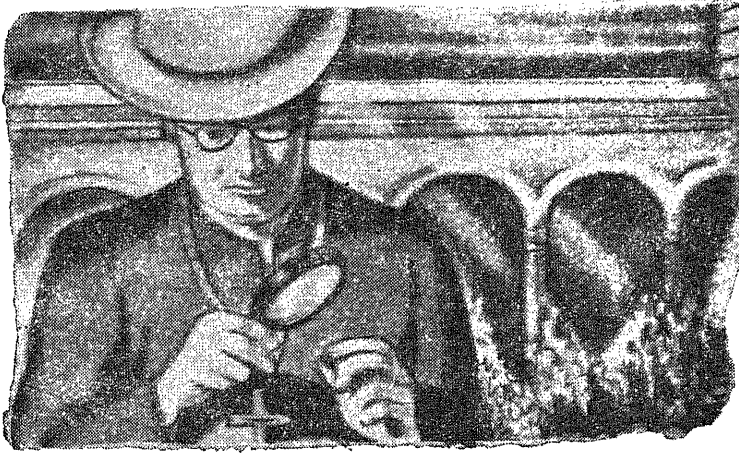
मेण्डेल अपने मठ के उद्यान में

मेण्डेल आसपास के पशुओं और अरण्यों के निजी पर्यवेक्षणों की कथाएं सुना-सुना कर इसमें कुछ मृदुता लाने की कोशिश करता। अपने विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करते रहना भी उसके धर्म का एक अंग था, और विद्यार्थी भी गुरु की नम्रता पर बलि जाते। उसे किसीको भी फेल करना नामंजूर था। कमज़ोर लड़कों को वह अलग वक्त देकर भी कभी पढ़ाने से न कतराता। किन्तु यह सब होते हुए भी मॉनेस्टरी के बगीचे में पौधों के सम्बन्ध में उसके परीक्षणों में विघ्न नहीं पड़ना चाहिए, और व्यक्तिगत स्वाध्याय में भी नहीं। इसी बीच में उसका वह प्रसिद्ध निबन्ध भी छप चुका था, किन्तु ज़रा भी उथल-पुथल उससे

तब पैदा नही हुई थी।

बाहर की दुनिया उसके बारे मे बिलकुल अज्ञ, किन्तु अपने ही साथी पादरियो मे सर्वप्रिय, मेण्डेल को आखिर 47 वर्ष की आयु मे मॉनेस्टरी का प्रधान नियुक्त कर दिया गया। महोपदेशक की इस स्थिति मे उसका समय बहुत इधर उधर व्यतीत होने लगा, इसलिए उसने अपनी अध्यापन की नौकरी अनिच्छापूर्वक त्याग दी।

विहार का यह नया महन्त बडा ही लोकप्रिय था। खाने-पीने को उसे बहुत अच्छा सामान मुफ्त मे मिलता था, जिसका प्रयोग वह मित्रो के स्वागत मे ही कर देता। उत्सव के दिनो मे घर के दरवाज़े खोल दिए जाते और सारे के सारे गाव को ही न्यौता दे दिया जाता। क्रिसमस की तो बात ही बिलकुल दूसरी थी खूब खाओ और खूब पिओ। मेण्डेल बडा ही दानशील व्यक्ति था, किन्तु गाव की दु खी जनता ने कभी भी उसके मुह से इसके बारे मे एक भी शब्द नही सुना।

इतना विनम्र होते हुए भी उसके जीवन का अन्तिम भाग प्राय सरकार के साथ एक झगडा मोल लेने मे ही नष्ट हो गया। विधान-सभा ने एक विधेयक पास कर दिया था कि चर्च की सम्पत्ति पर टैक्स लगाकर गाव के पादरियो की तनख्वाह बढानी चाहिए। मेण्डेल ने भी माना कि सरकार को इसके लिए पैसे की जरूरत है, और उसने स्वेच्छा से ही कुछ सहायता देना स्वीकार कर लिया, किन्तु उसका विचार था कि कानून मे कुछ अनुचित दबाव-सा आ गया है। उसने सरकार के इस कर थोपने के अधिकार का बडे ज़ोर के साथ विरोध किया। सरकार ने भी स्वेच्छादान को अस्वीकृत करते हुए अपने आग्रह को दुहराया। मेण्डेल के इस सघर्ष का कुछ नतीजा नही निकल सका। कुछ कटुता अवश्य इससे मेण्डेल के जीवन मे आ गई, क्योकि जो भी कोई आकर उसे यह बताने की कोशिश करता कि कानून का पालन तो हर किसीको करना ही चाहिए, उसीपर वह बरस पडता।

वह परीक्षण, जिसकी बदौलत मेण्डेल की गणना आज इतिहास के प्रमुख वैज्ञानिको में होती है—उसकी योजना बडे ही मनोयोगपूर्वक की गई थी। हम कभी हैरान नही होते यह देखकर, कि मा-बाप मे एक के भी सिर के बाल अगर लाल रग के हैं तो बच्चे के भी बाल उसी रग के है। सम्बन्धी लोग बच्चे को घेरकर खडे हो जाते है और कहते भी है कि "देखो, बिलकुल अपने बाप पर गया है।" इतिहास में मेण्डेल ही पहला व्यक्ति था जिसने बताया कि बच्चे मे बाप की विशेषताए किस तरह आ जाती है, पितृ-परम्परा के अनुगमन के नियम क्या है। कभी ध्यानपूर्वक आपने अपने माता-पिता को और भाई-बहिनो को देखा हो तो नोट किया होगा कि सबका रग-रूप कुछ-कुछ अलग होते हुए भी सबमे कुछ समानताए भी हैं। सभी कुछ न कुछ एक-से भी लगते है। सदियो से यह एक प्रश्न था जो कि प्राणि-वैज्ञानिको के लिए एक सिरदर्द बना चला आ रहा था। उन्हे समझ ही नही आया कि विभिन्न प्रवृत्तियो का विभाजन वे किस प्रकार करें। मेण्डेल ने चिन्तन करके इसकी कुछ विधि निकाली और जो अब कितनी सरल प्रतीत होती है कि एक समय मे केवल एक ही प्रवृत्ति की परीक्षा करके देखो।

मेण्डेल ने अपना सारा ध्यान बगीची मे और मटर की फलियो मे प्रवृत्ति-अनुगम के इस प्रश्न पर केन्द्रित कर दिया। उसने देखा कि कुछ पौधे लम्बे कद के है, कुछ छोटे

कद के कुछ फलिया जहा फूटने को थी, वहा कुछ दूसरी फलिया जैसे बढने से इन्कार कर रही हो—बिलकुल पेट के साथ चिपटी हुई। कुछ फीकी पीली तो कुछ चमकदार, और कुछ हरी भी। कुल मिलाकर सात भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियो को स्पष्ट पृथक् किया जा सकता था और कुछ नाम भी दिया जा सकता था। मटरो का चुनाव उसने इसलिए किया था कि इस किस्म की फलियो मे उसी फूल की धूल ही उसके रज को गर्भित करती है। अर्थात्, नये पौधे की माता और पिता भी वस्तुत एक ही है।

मेण्डेल को मालूम था कि अगर पौधे के माता-पिता एक ही हो, दो नही, तो नया पौधा बिलकुल खालिस (नस्ल का) पैदा किया जा सकता है। उदाहरणतया एक ऊचे कद
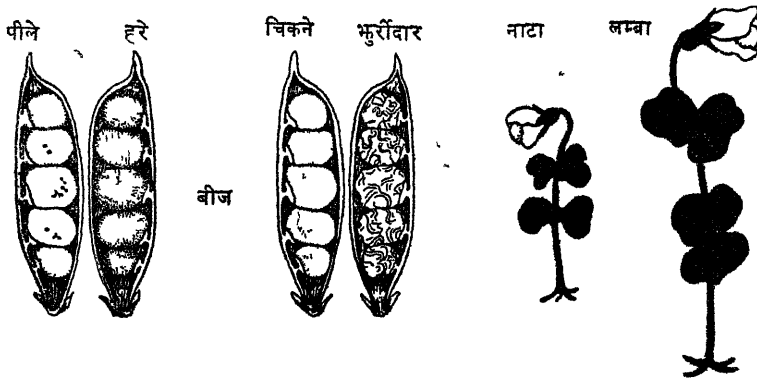
मेण्डेल के पौधों में मेण्डेल द्वारा प्रत्यक्षित कुछ प्रवृत्तियां। मेण्डेल इस निष्कर्ष पर पहुचा कि किन्हीं भी दो परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों में एक प्रभावी होनी है और दूसरी अप्रभावी।

का पौधा जब पीढी दर पीढी ऊचे कद के पौधे ही पैदा करता चलता है, तो उसका मतलब होता है उसके लम्बे कद मे 'वह खून की पवित्रता' बाकायदा कायम है। उसी प्रकार एक नाटे कद का पौधा भी एक 'शुद्ध' नस्ल को सालो कायम रख सकता है। मेण्डेल ने इन सातो प्रवृत्तियो मे हरेक मे 'पवित्रता' मे दोष न आने देने के सफलतापूर्वक परीक्षण किए। और यही कुछ उसकी परीक्षा का ध्येय भी था।

परीक्षण मे अगला कदम था—अब एक पौधे का गर्भाधान दूसरे पौधे की पुष्प-धूलि से करके देखा जाए. पौधो की 'शुद्धता' दूषित न करते हुए, मसलन, एक लम्बे कद वाले बाप का एक छोटे कद की मा के साथ सम्पर्क। सैकडो पौधे इस प्रकार उगाकर देखा गया कि सभी पौधें ऊचे कद के ही है। यह एक गोरख-धन्धा ही बन गया. वह छोटे कद की मा क्या हुई ? सन्तान पर उसका कुछ भी असर नही पडा ?

और गवेषणा—इस बार अनेको पौधो मे फिर विवाह किए गए ऊचे कद के बाप, और छोटे कद की माए। फिर वही—सबका कद लम्बा। अब इस नई नस्ल के लम्बे कद के पौधो को सयुक्त किया गया, तो तीन पौधे लम्बे, एक छोटा। छोटे कद का असर, एक पीढी प्रसुप्तावस्था मे जाकर, फिर उठ खड़ा हुआ। बच्चे की शक्ल कई बार बाप से न मिलकर, दादा से अधिक मिलती देखी जाती भी है।

मेण्डेल की युक्ति अब इस प्रकार थी कि शुद्ध ऊंचा कद और शुद्ध नाटा कद जब मिलते हैं तो सन्तान ऊंचे कद की पैदा होती है, क्योंकि ऊंचे कद की (संभोग) में आभिमुख्यता आ जाती है। नाटा कद नष्ट नहीं हो जाता, दब जाता है। मेण्डेल ने इस नियम को नाम दिया, 'आभिमुख्यता का नियम।' परीक्षणों द्वारा उसने यह भी सिद्ध कर दिखाया कि 'अ-शुद्ध' खून की कुछ औलाद भी शुद्ध दो सकती है। मटर की फलियों में ही देखिए, शुद्ध ऊंचाई और शुद्ध लघुता का परिणाम होता तो एक मिश्रण ही है। अब इन मिश्र-उत्पत्तियों को यदि इकट्ठा कर दिया जाए तो उनकी आधी सन्तति व्यामिश्र होगी, और शेष आधी, और फिर एक-चौथाई, शुद्ध-प्रांशुओं में और शुद्ध-वामनों में बंट जाएगी। यह नियम था मेण्डेल के शब्दों में, 'विभाजन का नियम'।

वंशानुगम के प्रश्न का पूर्ण समाधान मेण्डेल नहीं कर गया। आज भी वैज्ञानिक उसपर लगे हुए हैं। किन्तु सभ्य जगत् के लिए मेण्डेल के नियमों की उपयोगिता कुछ कम सिद्ध नहीं हुई। इस सदी के शुरू-शुरू में स्वीडन में गेहूं की पैदाइश लगभग चौपट ही हो चली थी। स्वीडन की जलवायु में गेहूं की कुछ किस्में तो खूब फलती-फूलती हैं, किन्तु कुछ ऐसी भी हैं जो वहां सर्दी को बरदाश्त नहीं कर सकतीं। और कुछ और किस्में ऐसी भी थीं जो सर्दी में ठिठुरती तो नहीं किन्तु बड़ी ही थोड़ी मात्रा में उनकी उपज हो पाती। मेण्डेल की गवेषणाओं के एक स्वीडिश अनुरागी निस्सोन-एले ने ऐसी किस्में उसी गेहूं से पैदा करके दिखा दीं जो हमेशा जल्दी ही पकने वाला भी हो और खूब फलने वाला भी हो—जल्दी और खूब, दोनों तरह से, फलने में 'शुद्ध'। एले के एक परीक्षण ने ही सभी ठंडे देशों की गेहूं की समस्या को रातों-रात सुलझा दिया।

प्रवृत्तियों के वंशानुगम के नियम मनुष्यों पर भी उसी तरह लागू होते हैं, जिनकी एक सफलता यह भी हो सकती है कि कुछेक बीमारियों के संक्रमण को हम रोकने में कृतार्थ हो जाएं। 1884 में जब मेण्डेल की मृत्यु हुई, किसी ने भी तब अनुभव नहीं किया था कि विज्ञान का एक दिग्गज उठ गया है।
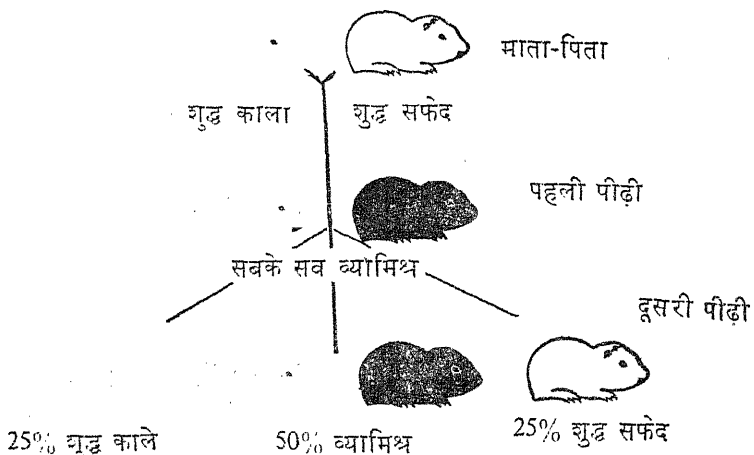
गिनी पिगों के प्रसंग में मेण्डेल का 'पृथक्करण नियम'
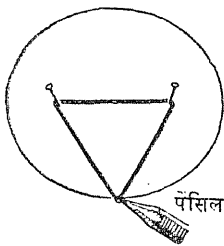
जेम्स क्लार्क मैक्सवेल

दो पिन लीजिए और उन्हें एक कागज़ पर दो इंच की दूरी पर गाड़ दीजिए। अब एक धागा लेकर दोनों पिनों के गिर्द एक घेरा-सा डाल दीजिए; यह घेरा ढीला हो। इस घेरे में किसी बिन्दु पर एक पेन्सिल की नोक टिकाकर धागे को कस लीजिए और धागे को तानते हुए कागज़ पर चारों ओर एक रेखा खींच दीजिए।

अभी वह 14 बरस का ही था जब मैक्सवेल ने इस चतुरता का परिचय दिया था और एक पूर्ण 'इलिप्स' या दीर्घवृत्त की रचना कर दिखाई थी। एडिनबरा की रॉयल सोसाइटी के एक अधिवेशन में उसका पिता भी उसके साथ गया था जहां विश्व-विद्यालय के एक प्रोफेसर को गणित के इस नूतन आविष्कार पर एक निवन्ध पढ़ना था।

किन्तु इतिहास में यदि हम मैक्सवेल का स्मरण करते हैं तो फकत इलिप्स बनने की उसकी इस सुन्दर विधि के कारण नहीं अपितु विज्ञान एवं गणित में कुछ नियम, कुछ सूत्र, प्रस्तुत कर सकने के कारण। 1865 में उसके ग्रन्थ—'ए डाइनैमिक थीअरी ऑफ इलेक्ट्रो-मैग्नेटिक फील्ड' का प्रकाशन हुआ था। यही ग्रन्थ वह कुंजी है जिसने अन्ततः रेडियो, टेलीविज़न, रेडार तथा विद्युत्-चुम्बकीय तरंगों के उत्पादन एवं नियंत्रण पर निर्भर करनेवाले अन्यान्य अद्भुत उपकरणों को सम्भव कर दिखाया। मैक्सवेल की प्रतिष्ठा, न्यूटन तथा आइन्स्टाइन के साथ, एक गणितज्ञ एवं भौतिकी-विशारद के रूप में स्थायी हो चुकी है।

विज्ञान की इस विभूति का जन्म 13 नवम्बर, 1831 को, स्काटलैण्ड के एडिनबरा शहर में हुआ था। परिवार समृद्ध और प्रतिष्ठित था, जिसके कितने ही सदस्य, अपनी प्रतिभा एवं सफलता द्वारा ही नहीं, कुछ व्यक्तित्व की विलक्षणताओं द्वारा भी ख्याति प्राप्त कर चुके थे। स्वयं जेम्स के पिता ने कानून पढ़ा किन्तु वकालत कभी नहीं की—

उसकी निजी अभिरुचि अपनी छोटी-सी जायदाद को सभालने मे और अपने बेटे को पढाने-लिखाने मे ज्यादा थी। खुद उसने भी मैक्सवेल की यन्त्र-निर्माणादि की प्रवृत्ति को कम प्रोत्साहित नही किया। जेम्स की कुतूहलता को तृप्त करना मुश्किल था. क्यो ये भौतिक यन्त्र, और किस प्रकार, इसी तरह कार्य करते है। लडके जैसे आज भी छोटे-छोटे मॉडल बनाया करते हैं, जेम्स को भी शुरू से यह शौक था। लेकिन उन दिनो कोई हॉबी-शॉप नही हुआ करती थी कि इन चीजो के हिस्से खरीदे जा सके हर हिस्सा, हर पुर्जा, जेम्स को खुद बनाना पडता।

मा बालक को नौ बरस का अनाथ छोडकर चल दी। इस क्षति को पूरा करने के लिए पिता उसके और निकट खिच आया और उसने बालक की एक अविवाहित बुआ को साथ बुला लिया। 10 वर्ष की आयु से जेम्स को एडिनबरा एकेडमी मे दाखिल कर दिया गया। उसकी सारी पोशाक, यहा तक कि चौडे पजे वाले उसके जूते भी, खुद बाप के अपने हाथ के बनाए हुए थे। हम अन्दाजा लगा सकते है कि इससे मैक्सवेल को स्कूल मे कितनी मुश्किल पडती होगी। साथियो की हमेशा निगाह रहती कि जेम्स को छेडे, किन्तु उसकी अद्भुत बुद्धि, प्रत्युत्पन्नमति, उसे कभी मात न होने देती। लड़को ने उसका नाम रख दिया था—"डैफ्टी" घुन्ना।

16 वर्ष की आयु मे जेम्स एडिनबरा विश्वविद्यालय मे दाखिल हुआ। गणित मे उसकी प्रतिभा को हर कोई जान चुका था। अब उसने विज्ञान मे हर किस्म के परीक्षण भी करने शुरू कर दिए। कविता करने का शौक भी उसे था—कोई पाए की शायरी नही—किन्तु यह शौक जिन्दगी-भर उसे कभी छूटा नही।

1850 मे मैक्सवेल स्काटलैड छोड कैम्ब्रिज मे पढने आ गया। उन दिनो गणित के श्रेष्ठ विद्यार्थियो मे एक तरह का मुकाबला हर साल हुआ करता था—मैक्सवेल को उस परीक्षा के लिए विलियम हापकिन्स ने खास तैयारी कराई। मैक्सवेल के बारे मे हापकिन्स के प्रसिद्ध शब्द हैं "भौतिकी-सम्बन्धी प्रश्नो मे उसके लिए गलत चिन्तन कर सकना ही असम्भव प्रतीत होता है।" किन्तु परीक्षा मे मैक्सवेल दूसरे नम्बर पर था, पहले पर नही। एकदम 'एपॉसल्ज़' ने मैक्सवेल को अपने कैम्ब्रिज के श्रेष्ठ गणितज्ञो मे चुन लिया।

खैर, छात्रावास मे अपने साथियो के लिए मैक्सवेल एक मुसीबत ही अधिक रहता होगा क्योकि नीद के बारे मे उसके अपने ही ख्याल थे—दिन के चौबीस घण्टो को दो हिस्सो मे बाट दिया, एक सोने का और दूसरा जागने का हिस्सा और उसमे भी—दो से अढाई तक होस्टल के बरामदे मे दौड लगाना कि जिस्म मे कुछ फुर्ती आ जाए।

1854 मे स्नातक हो चुकने पर भी मैक्सवेल ने निश्चय किया कि अभी पढाई चलनी चाहिए। ट्रिनिटी कालिज मे आगे पढाई करते हुए उसने एक रगीन लट्टू ईजाद किया जिसका मकसद यह साबित करना था कि तीन मूल वर्णो के मेल से किसी भी किस्म का रग तैयार किया जा सकता है। ये तीन मूल वर्ण थे—लाल, हरा और नीला। इस आविष्कार को प्रस्तुत करते हुए जो वैज्ञानिक निबन्ध मैक्सवेल ने तब पढ़ा था वही टैलीविज़न मे 'रग' ला सका है. टेलीविज़न का हर रग लाल, हरे और नीले के मेल

द्वारा ही मुमकिन हो सका है । इन अध्ययनो की बदौलत उसे रॉयल सोसाइटी का रूमफोर्ड मेडल भी मिला था।

उधर उसका पिता बीमार रहने लगा, सो सेवा-शुश्रूषा के लिए जेम्स की इच्छा हुई एकदम घर पहुच जाए। किन्तु एबरडीन मे मेरीशल कालिज मे प्रोफेसरी अभी मिली ही थी कि उधर पिता का देहान्त हो गया। अभी पुत्र ने यह नया पद सभाला भी नही था।

सामान्य विद्यार्थी को मैक्सवेल के व्याख्यानो से कुछ बहुत लाभ नही होता था। उसे समझने के लिए भी कुछ प्रतिभा अपेक्षित होती थी। किन्तु, हा, मैक्सवेल को इससे अवश्य कुछ लाभ हुआ। मेरीशल कालिज मे पढाते हुए ही कालिज के प्रिंसिपल की पुत्री का, उसकी भावी पत्नी के रूप मे, उससे मेल हुआ। मैक्सवेल ने बुआ को लिखा, "गणित मे उसकी रुचि नही है किन्तु, गणित के अतिरिक्त भी तो कितनी ही चीजे और होती हैं, यह निश्चित है कि मेरी गणित मे वह दखल नही दिया करेगी।" महान् प्रतिभा मे परिहास-बुद्धि भी, और स्वाभाविक मानव-प्रेम भी कुछ कम नही हुआ करते।

शनिग्रह के वलयो के सम्बन्ध मे, तथा गैसो की गति के विषय मे, मैक्सवेल ने कुछ मौलिक एव महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। दोनो प्रश्नो का गणित के अनुसार सूक्ष्म विश्लेषण भी, और गैसो के भौतिक कणो की गति एव परस्पर सघर्षमयता को चित्रित कर दिखानेवाला उसका मॉडल आधुनिक विज्ञान की चमत्कारी प्रगति के बावजूद विज्ञान को आज भी मान्य है। किन्तु विद्युत् तथा चुम्बक के क्षेत्र मे मैक्सवेल के अनुसधानो की छाया मे उसका शेष सब कार्य फीका पड जाता है।

फैराडे के विद्युत्-चुम्बकीय अभ्युत्पादन की स्थापना ने मैक्सवेल को चकित कर दिया—चुम्बक द्वारा विद्युत् की उत्पत्ति। परिस्थिति का वर्णन करते हुए फैराडे का कहना था कि चुम्बक के गिर्द 'शक्ति-रेखाओ' अथवा 'शक्ति-धाराओ' द्वारा परिसीमित एक क्षेत्र-सा कुछ बन जाता है। मैक्सवेल ने इस स्थापना को अपने मन मे चित्रित करना शुरू किया छोटे-छोटे गोलो द्वारा पृथक्-अवस्थापित से कुछ अक्षो पर चक्कर काटते सिलिण्डर से कि एक सिलिण्डर चक्कर काटना शुरू करे नही कि गोलो द्वारा वही गति दूसरे-तीसरे-चौथे सिलिण्डर मे सक्रान्त होकर सारे क्षेत्र को ही गतिमय कर दें। इन 'आदर्श' कल्पनाओ के आधार पर वह इन चार मौलिक नियमो पर पहुचा, जो आज कितने सरल प्रतीत होते हैं

चुम्बकीय शक्ति की रेखा सदा एक बन्द-सी रेखा हुआ करती है—एक खुले चक्कर-से मे।

विद्युत की शक्ति-रेखा भी एक बन्द रेखा ही हुआ करती है, किन्तु—

घूम-फिरकर अपने मे ही परिसमाप्त एक वलय-सी।

एक परिवर्तनमान चुम्बक-क्षेत्र, स्वत एक विद्युत्-क्षेत्र का जनक बन जाता है।

एक परिवर्तमान विद्युत्-क्षेत्र भी, उसी प्रकार, एक चुम्बक-क्षेत्र का जनक बन जाता है।

फैराडे की स्थापना थी कि एक निरन्तर परिवर्तित हो रहा चुम्बकीय क्षेत्र किसी

कण्डक्टर मे बिजली पैदा कर देगा, जब कि मैक्सवेल का निष्कर्ष यह था कि चुम्बकीय क्षेत्र मे यह परिवर्तन एक विद्युत्-क्षेत्र मे—और उसी प्रकार किसी विद्युत्-क्षेत्र मे ज़रा-सा भी परिवर्तन परिणामत एक चुम्बक-क्षेत्र मे परिवर्तन ले आएगा। मैक्सवेल इसके भी एक कदम आगे गया और उसने सिद्ध कर दिखाया कि चुम्बक तथा विद्युत् के इन प्रभावो के लिए एक स्थान से चलकर दूसरे स्थान तक पहुचने के लिए कुछ समय अपेक्षित होता है। मैक्सवेल की गणनाओ का निष्कर्ष था कि इन दोनो की गति भा साथ ही, और प्रकाश की गति के समान, होती है।

मैक्सवेल की मृत्यु के 10 साल बाद हाइनरिख हेर्त्स ने विश्व मे प्रथम रेडियो ट्रान्समिटर तथा रिसीवर आविष्कृत करके मैक्सवेल की विद्युत्-चुम्बकीय स्थापना को मूर्त प्रमाणित कर दिया। मैक्सवेल की मृत्यु के 75 वर्ष पश्चात् आज भी इलेक्ट्रॉनिक इजीनियर तथा परीक्षणकर्ता मैक्सवेल के सूत्रो का ही अध्ययन करते है कि रेडार और
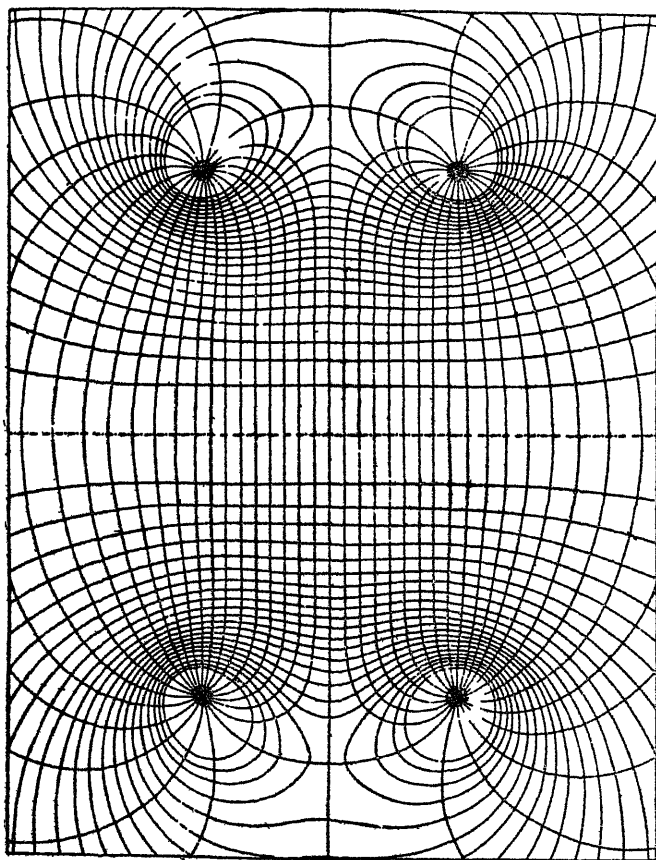
मैक्सवेल की 'शक्ति-रेखाए'

माइक्रोवेव्ज़ की प्रकृति कुछ समझ में आ सके। आज हमें पता है कि मैक्सवेल की स्थापना का अर्थ क्या था—ताप अथवा प्रकाश की तरंगें हों या रेडियो, एक्स-रे, गामा-रे की तरंगें हों—हर विद्युत्-चुम्बकीय तरंग के मूल-नियम एक ही होते हैं।

कुछ वक्त के लिए मैक्सवेल ने विद्युत्-चुम्बक सम्बन्धी अपनी स्थापना को पूर्ण करने के लिए नौकरी छोड़ दी और वह ग्लिनेयर में अपनी ज़मीनों पर आकर रहने लगा। ताप और गणित के विषय पर, भौतिकी पर तथा वर्ण-विभ्रम पर, उसने प्रामाणिक निबन्धों की रचना की। पड़ोसियों से भी मिल-जुल चुका था, उनके बच्चों के साथ मिलने का उसे शौक था, बीच-बीच में एक परीक्षक के तौर पर कैम्ब्रिज जाना भी होता, और कभी-कभी कुछ कविता रचना भी···।

1871 में जनता की पुकार थी कि कैम्ब्रिज के अधिकारियों को चाहिए वे युग की नई दिशाओं—ताप, विद्युत् तथा चुम्बक का समावेश विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में समुचित रूप से प्रचलित करने के लिए परीक्षणात्मक विज्ञान की एक चेयर स्थापित करें। विश्वविद्यालय के चांसलर, तथा हेनरी केवेण्डिश के एक वंशज, डेवनशायर के ड्यूक ने कैवेण्डिश प्रयोगशाला की स्थापना तथा सज्जा के लिए पैसा जुटाया, और मैक्सवेल से अनुरोध किया गया कि वह इस नये विभाग का अध्यक्ष-पद आकर संभाले। प्रयोगशाला का निर्माण, तथा उसमें परीक्षणादि के साधन-उपकरण की व्यवस्था का भार भी, अध्यक्ष के जिम्मे ही था।
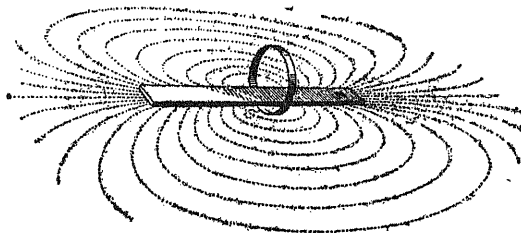
मैक्सवेल ने प्रत्यक्ष कर दिखाया कि किस प्रकार विद्युत् चुम्बक-शक्ति को जन्म दे सकती है। छल्ले में विद्यमान धारा पतरी के गिर्द एक चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न कर देती है।

अब भी मैक्सवेल तरह-तरह के विषयों पर लेख लिखता रहता। हेनेरी कैवेण्डिश के निबन्धों का सम्पादन भी जिससे कि विद्युत् के सम्बन्ध में जो महत्त्वपूर्ण कार्य वह कर गया था उसका कुछ श्रेय तो, मृत्यु के बाद ही सही, उसे मिल सके।

जीवन के अन्तिम दो वर्ष, मैक्सवेल के, उसकी पत्नी की परिचर्या में गुज़रे हालांकि उसकी अपनी सेहत भी उन दिनों लगातार गिर ही रही थी। उसे मालूम था कि एक नामुराद बीमारी (कैन्सर) उसे लग चुकी है; न डाक्टरों का कुछ मशवरा ही लिया, न अपने साथी दोस्तों को ही बड़ा अरसा अपनी हालत की कुछ खबर दी। एक धैर्यशाली, उदार एवं निःस्वार्थ वैज्ञानिक—मैक्सवेल की प्रकृति, वह विनोदप्रियता भी

इस तकलीफ में जल्द ही उसे छोड़ गई। 5 नवम्बर, 1879 को उसका देहान्त हुआ, अभी वह 48 वर्ष भी पूरे नहीं कर पाया था।

आज तक भी हम पूर्णरूपेण मैक्सवेल की कल्पना तथा गणितबुद्धि द्वारा आविष्कृत निधि का प्रयोग शायद नहीं कर पाए। कितने ही आविष्कार अभी भविष्य के गर्भ में हैं जिनकी उत्थापना जेम्स क्लार्क मैक्सवेल की प्रतिभा से ही संभव होगी। रेडियो स्पेक्ट्रम की, एक्स-रे तथा गामा-रे की संभावना उसके लघु-सूत्रों में कितनी पहले ही निबद्ध हो चुकी थी और उनके द्वारा अणु के अन्तःकरण से भी मानवबुद्धि को परिचित करा गई।
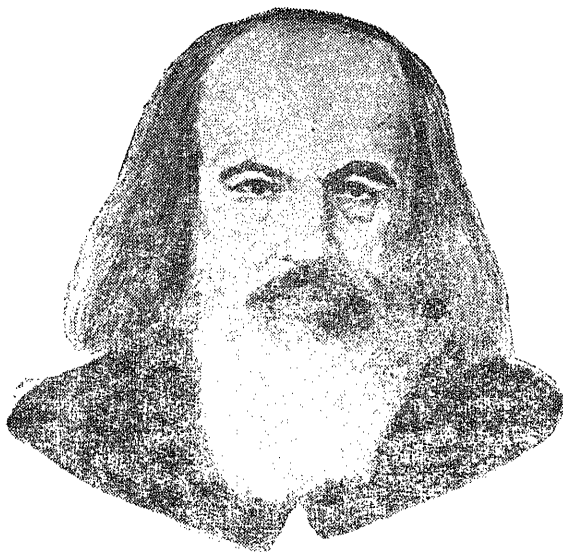
दिमित्रि मैण्डेलीव

आपने कभी 'जोड़-तोड़' (जिग-सॉ) का खेल देखा है, और उसके टुकड़ों को जोड़कर कुछ सही बनाने की कोशिश की है ? शुरू-शुरू में सभी-कुछ बेसिर-पैर नज़र आता है—सैकड़ों टुकड़े, मुख्तलिफ शक्लों-रंगों-मापों के टुकड़े ! लेकिन कुछ गौर के साथ चीज़ को कुछ पढ़ने की करें तो मसला आप से आप हल होने लग जाता है—वही टुकड़े एक-एक करके अपनी-अपनी जगह भरने लग जाते हैं और चित्र, स्पष्ट होते-होते, पूरा बन जाता है ! 'जिग-सॉ' पज़ल शुरू करने से पहले ही हमें मालूम होता है कि टुकड़ों का कुछ सिर-पैर है कि उन्हें फिट करते-करते हम तस्वीर को पूरा कर ही लेंगे।

1869 तक इसी तरह की कुछ 'जोड़-तोड़' की चीज़ें रसायन में इकट्ठी हो चुकी थीं : 63 तत्त्वों की खोज हो चुकी थी। रासायनिकों को अब इन तत्त्वों में कहीं-कहीं कुछ समानताएं नज़र आने लगी थीं। उदाहरणतः सोडियम और पोटाशियम, दोनों, मुलायम होते हैं; क्लोरीन, ब्रोमीन, और आयोडीन—तीनों रंगीन भी होते हैं, और धातुओं को खा जानेवाले द्रव्य होते हैं। जिग-सॉ के चित्र में तो कुछ पूर्व-विनिश्चितता होती है, किन्तु वैज्ञानिकों को अभी यह निश्चय नहीं था कि इन तत्त्वों में कुछ परस्पर-क्रमिकता है—उन्हें यह भी मालूम नहीं था कि इस सम्बन्ध में परीक्षा के लिए किन अंगों की छानबीन होनी चाहिए; और, अभी तो 'चित्र' के सभी अंश भी उपलब्ध नहीं थे।

फिर भी समस्या को सुलझाना निहायत ज़रूरी था—हज़ारों टुकड़ों में बिखरा पड़ा यह रसायन-सम्बन्धी ज्ञान-विज्ञान संकलित होकर किसी क्रम-बन्ध में प्रस्तुत होना चाहिए।

अनेकों रसायनशास्त्री प्रश्न से जूझ चुके थे; किन्तु, जहां सभी असफल रहे, एक

रूसी वैज्ञानिक ने वही कुछ व्यवस्था सिद्ध कर दिखाई। दिमित्रि मैण्डेलीव ने इन रासायनिक तत्त्वो को उनके अणु-भारो के क्रम मे रखकर विश्व को एक तत्त्वानुक्रमणी—'पीरियाडिक टेबल ऑफ एलिमेण्ट्स'—प्रस्तुत कर दी।

दिमित्रि मैण्डेलीव की गणना सोवियत यूनियन के गण्यमान्य वैज्ञानिको मे होती है यद्यपि उसका अनुसन्धान-काल ज़ार-युग के रूस मे पडता है। मैण्डेलीव का जन्म, 1 फरवरी, 1834 को, पूर्वी साइबेरिया के एक वीरान इलाके तोबोल्स्क मे हुआ था। एक स्थानीय हाईस्कूल के डायरेक्टर की सत्रहवी तथा कनिष्ठ सन्तान था वह। तोबोल्स्क मे पहले-पहल आकर बसे परिवारो मे एक परिवार। दादा ने यहा आकर सबसे पहला प्रिंटिंग प्रेस चालू किया था और, उसके बाद, साइबेरिया-भर मे सबसे पहला अखबार चलाया था। मा अपने युग की एक मानी हुई सुन्दरी थी और उसका तार्तार-परिवार भी तोबोल्स्क के पहले बाशिन्दो मे ही एक था। इस तार्तार-परिवार ने ही साइबेरिया मे पहली-पहली शीशे की फैक्टरी चालू की थी।

किन्तु दिमित्रि के पैदा होने के कुछ ही दिन बाद बाप अधा हो गया और उसकी नौकरी जाती रही। मा ने अपने मायके की वह बन्द चली आ रही फैक्टरी फिर से खोल दी कि घर का गुजर कुछ तो चल सके। तोबोल्स्क एक ऐसा केन्द्र था जहा पर रूस के राजनीतिक बन्दियो को लाया जाता था और दिमित्रि की एक बहिन ने, कभी, दिसम्बर 1925 की क्राति के किसी ऐसे ही कैदी से शादी की थी। यह देश-निर्वासित पढा-लिखा बन्दी ही था जिसने दिमित्रि को 'प्रकृति-विज्ञान' मे प्रथम दीक्षा दी थी। गिलास फैक्टरी मे आग लग गई और दिमित्रि की मा ने फैसला कर लिया कि बेटे के पढाई के शौक को पूरा करने के लिए अब परिवार को मास्को चल देना चाहिए।

उस वक्त दिमित्रि की आयु 17 वर्ष थी। उसे सिर्फ साइबेरिया की भाषा ही आती थी। विश्वविद्यालय मे दाखिला नही मिल सका। किन्तु वह एक पक्के इरादे की औरत थी। पीटर्सबर्ग चल दी, जहा रूसी भाषा सीख कर बच्चा एक ऐसे स्कूल मे दाखिल हो गया जहा हाईस्कूल के लिए टीचर्स तैयार किए जाते थे। यहा उसके विशेष विषय थे—गणित, भौतिकी, तथा रसायन। साहित्य और विदेशी भाषाओ मे मैण्डेलीव की तनिक भी रुचि नही थी। फिर भी, स्नातक परीक्षा मे वह अपनी श्रेणी मे प्रथम ही रहा था।

उसने सेहत कोई बहुत अच्छी नही पाई थी—फेफडो मे हमेशा कुछ न कुछ तकलीफ, और मा की मौत ने उसके हौसले को बिलकुल पस्त कर दिया। डाक्टरो ने फतवा दे दिया कि छह महीने से ज्यादा नही जी सकता, सो, वह उठकर क्रीमिआ के कुछ गरम मौसम मे आ गया और, वहा भी, एक स्कूल मे विज्ञान पढाने के लिए उसे एक नौकरी मिल गई। तभी क्रीमिआ की लडाई छिड गई और वह वहा से उठकर, पहले ओडेस्सा, और फिर सेण्ट पीटर्सबर्ग आ गया। विश्वविद्यालय ने ही खुद उसे अनुमति दे दी कि एक प्राइवेट-डोसेण्ट की तरह घर मे विद्यार्थियो को पढा सकता है और उनकी आई फीस का कुछ मुकर्रर हिस्सा अपने लिए रख सकता है।

रूस मे उन दिनो विज्ञान मे उच्चतर अध्ययन के लिए उपयुक्त व्यवस्था कोई थी नहीं, उसने सरकार से इजाजत ले ली कि वह फ्रास और जर्मनी मे जाकर अनुसधानादि

कर सकता है। पेरिस में वह एक रसायन-परीक्षणकर्ता हेनरी रैनो का सहकारी था, तो हाइडलबर्ग में आकर उसने अपनी ही एक छोटी-सी परीक्षणशाला खोल ली। वहां उसे प्रसिद्ध 'बर्नर' के आविष्कर्ता बुन्सेन के सम्पर्क में आने तथा उसके साथ मिलकर काम करने का अवसर मिला, और गुस्ताफ किर्चहाफ के साथ भी...। तीनों मिलकर स्पेक्ट्रोस्कोप ईजाद करने में लगे हुए थे।

स्पेक्ट्रोस्कोप—प्रकाश की किरण की आन्तर रचना जानने के लिए एक उपकरण है, जिसकी उपयोगिता रासायनिक विश्लेषणों में भी कुछ कम नहीं होती। जर्मनी में पढ़ाई करते हुए मैण्डेलीव कार्ल्सरूहे की कांग्रेस में भी शामिल हुआ था जहां कैनीज़ारों ने ऐवोगेड्रो के कण-सिद्धान्त के हक में अपनी ऐतिहासिक अपील की। कैनीज़ारों की ऐटॉमिक टेबल का उपयोग भी, पीछे चलकर, मैण्डेलीव ने अपनी 'पीरियॉडिक टेबल ऑफ एलिमेंट्स' तैयार करते हुए किया था।

मैण्डेलीव पीटर्सबर्ग लौट आया, और शादी करके बस गया। उसने 60 दिन में ऑर्गेनिक कैमिस्ट्री की एक पाठ्यपुस्तक भी लिख डाली। रसायन में उसने डाक्टरेट भी प्राप्त कर ली, उसका विषय था—'ऑलकोहल तथा जल का परस्पर-मिश्रण'। 1865 में, जब मैण्डेलीव अभी 31 वर्ष का ही था, उसकी वैज्ञानिक प्रतिभा तथा अध्ययन-कार्य के सम्मान में पीटर्सबर्ग के अधिकारियों ने उसे प्रोफेसरशिप के पूर्ण अधिकार दे दिए। क्लासरूम हमेशा भरे होते। भारी प्रभावशाली देह, और नीली-नीली अन्तर प्रवेश करती-सी आंखें, बिखरे बाल—कुछ अजीब-सा किन्तु आकर्षक व्यक्तित्व।
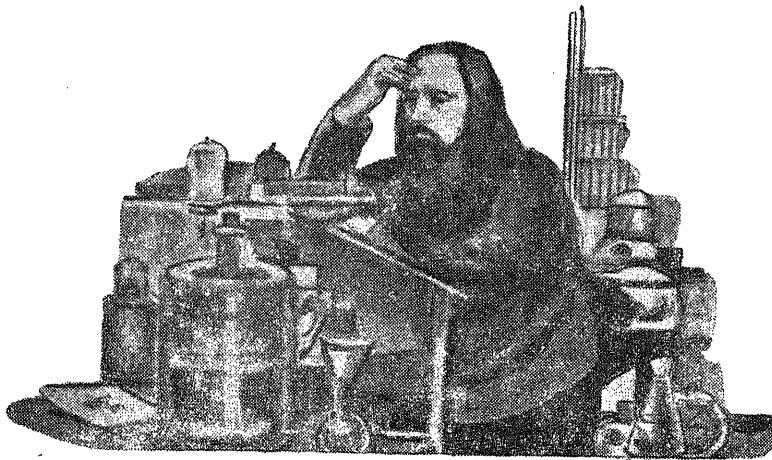
मैण्डेलीव अपनी प्रयोगशाला में

1869 में, रासायनिक आधार के संग्रह तथा अन्वेषण के अनन्तर, अब मैण्डेलीव इस स्थिति में था कि तत्त्वों में कुछ क्रम वह विनिश्चित कर सके। तब 63 तत्त्व मिल चुके थे जिनकी विविध भौतिक प्रवृत्तियां थीं—कुछ हलकी किस्म की धातुएं तो कुछ भारी,

कुछ सामान्य अवस्था मे द्रव-सी तो कभी स्थूल भी, कुछ हलकी गैसे तो कुछ भारी । कुछ इतनी अधिक क्रियाशील थी कि बिना किसी प्रकार की सुरक्षा का प्रबन्ध किए उन्हे प्रयोग मे लाना खतरे से खाली नही, और दूसरी कुछ ऐसी कि सालो-साल पडी रहे और उनमे कोई भी फर्क न आए।

मैण्डेलीव को मालूम था कि उसके सामने प्रश्न—इस तत्त्वो मे कुछ परस्पर क्रम, सगति, बिठाने का था। मूल मे ही कुछ परस्पर-सम्बन्ध होना चाहिए। बढते अणु-भार के अनुसार उन्हे क्रम मे बिठाकर देखा गया कि दोनो सिरो पर, क्रमश , हाइड्रोजन और यूरेनियम ही फिट बैठते है।

अब मैण्डेलीव ने देखा कि यदि इन्ही 63 तत्त्वो को, उनके इस अणु-भार क्रम में, रखने पर यदि अब उनके 7 वर्ग बना दिए जाए तो उनकी भौतिक एव रासायनिक वृत्तियो मे कुछ अद्‌भुत सगति-सी आ जाती है। हर सात तत्त्व-क के पश्चात् फिर वही विशेषताए आवृत्त होकर आ जाती है। चित्र पर एक निगाह डाली नही कि वैज्ञानिक किसी भी तत्त्व के बारे मे प्रस्तुत क्रम मे उसके स्थान को देख कर बतला सकता है कि अमुक तत्त्व की रासायनिक प्रवृत्ति कैसी होनी चाहिए।

इस प्रकार, मैण्डेलीव ने रसायन की 'जोड-तोड' की समस्या को सुलझा लिया था हालाकि पूर्ण-चित्र के तब सिर्फ दो-तिहाई अश ही वैज्ञानिको के हाथ मे थे। और अब, एक और प्रश्न कि क्या इस 'तत्त्व-चित्र' के आधार अनुपलब्ध तत्त्वो के बारे मे भी कुछ आभास नही दिया जा सकता ? अनेको अनुपलब्ध तत्त्वो के अणुभार तथा रासायनिक गुण भी मैण्डेलीव ने पहले से गिनकर रख दिए। कुछ दिनो बाद इनमे—सिलिकन, गैलियम, जर्मेनियम, तथा स्कैण्डियम की खोज हो गई, और उनके गुण भी वस्तुत वही थे जैसा कि मैण्डेलीव भविष्यवाणी कर गया था। मैण्डेलीव की 'टेबल' की समय-समय पर पुन परीक्षा हो चुकी है। आज हम इन अणुओ का क्रम उनके 'नम्बर' के अनुसार बिठाते है जो क्रमाक ऍटॉमिक अणु मे विद्यमान प्रोटनो की सख्या का द्योतक होता है। कुछेक अपवादो को छोड दें तो तत्त्व का ऍटॉमिक नम्बर प्राय उसके अणु-भार का ही सम-संख्य होता है।

21वे साल मे जिसके बारे मे चेतावनी दी गई थी कि वह अब छ महीने से ज्यादा और नही निकाल सकता, वही दिमित्रि 73 साल जी गया। आखिर 1907 मे, निमोनिया से उसकी मृत्यु हुई। उसके मरने तक रसायन को 86 तत्त्व मिल चुके थे—और वे भी मैण्डेलीव की ही चित्र-पूर्ति की बदौलत कि 'बीच-बीच मे ये फला तत्त्व होने चाहिए।' आज 'पीरियाडिक टेबल' पूरी की जा चुकी है—92 के 92 प्राकृतिक तत्त्व अब मिल चुके है। इसान अणुओ के विस्फोट द्वारा नये तत्त्वो का निर्माण करना भी सीख गया है और तत्त्व-सख्या 101 को नाम दिया गया हे 'मैण्डेलीवियम'।

मेंडेलीव द्वारा बनाई गई तत्वों की सारणी

काल	समूह								
	0	1 ए बी	2 ए बी	3 बी ए	4 बी ए	5 बी ए	6 बी ए	7 बी ए	8
I		हाइड्रोजन 1							
II	हीलियम 2	लिथियम 3	बेरिलियम 4	बोरन 5	कार्बन 6	नाइट्रोजन 7	ऑक्सीजन 8	फ्लोरिन 9	
III	निग्न 10	सोडियम 11	मेगनेशियम 12	एल्युमिनियम 13	सिलिकॉन 14	फॉस्फोरस 15	गंधक 16	क्लोरिन 17	
IV श्रेणी 1 श्रेणी 2	आर्गन 18	पोटाशियम 19 ताबा 29	केल्सियम 20 जस्ता 30	स्केडियम 21 गेलियम 31	टाइटेनियम 22 जर्मेनियम 32	वैनेडियम 23 आर्सेनिक 33	क्रोमियम 24 सेलेनियम 34	मेगेनीज़ 25 ब्रोमाइन 35	लोहा 26 कोबाल्ट 28 निकल* 27
V श्रेणी 1 श्रेणी 2	क्रिप्टन 36	रुबिडियम 37 चादी 47	स्ट्रोंटियम 38 केडमियम 48	यीट्रियम 39 इंडियम 49	जिरकोनियम 40 टिन 50	कोलवियम 41 एंटीमनी 51	मोलिब्डेनम 42 टेलूरियम 52	हेक्नेटियम 43 आयोडीन 53	रूथेनियम 44 रोडियम 46 पेलेडियम 45
VI श्रेणी 1 श्रेणी 2	जेनन 54	सेसियम 55 सोना 79	बेरियम 56 पारा 80	लेथेनम* 57–71 थेलियम 81	हेफनियम 72 सीसा 82	टेंटेलियम 73 बिस्मथ 83	टंगस्टन 74 पोलोनियम 84	रेनियम 75 एस्टेटाइन 85	ओस्मियम 76 इरिडियम 78 प्लैटीनम 77
VII	रेडन 86	फ्रेसियम 87	रेडियम 88	एक्टिनियम 89–98					

*लेथेनम के बाद के 14 तत्त्व पृथ्वी के दुर्लभ तत्त्व कहलाते हैं।

विल्हेम कोनराड रोन्तजेन

विज्ञान में और चिकित्साशास्त्र तथा तन्त्रविज्ञान में विशेषत: एक दूरव्यापी क्रान्ति का प्रवर्तन 1895 के दिसम्बर की एक शरद सांझ को हुआ था। 50 वर्ष के एक जर्मन भौतिकी-उपाध्याय ने 'वुत्सबुर्ग मेडिकल एण्ड फिज़िकल सोसाइटी' के एक शान्त अधिवेशन के सम्मुख अपने अनुसन्धान का प्रदर्शन किया। विल्हेम कोनराड रोन्तजेन को 'छाया'-चित्र अंकित करने की विधि का पता लग गया था। और हम अन्दाज़ा कर ही सकते हैं कि ये एक खास किस्म के ही छायाचित्र थे।

रोन्तजेन का जन्म 27 मार्च, 1845 को प्रशिया रियासत के लेन्नेप शहर में हुआ था। पिता एक जर्मन किसान था, और मां एक डच थी। शुरू की पढ़ाई-लिखाई हालैंड में हुई और फिर ज्यूरिख विश्वविद्यालय में स्विट्जरलैंड में विख्यात आचार्य रूडोफ क्लॉसियस के चरणों में उच्चतर अध्ययन। रोन्तजेन के प्रिय विषय थे—विद्युत्, प्रकाश, ताप तथा इलेस्टिसिटी या लचकीलापन।

भौतिकी में डॉक्टरेट हासिल करके वह जर्मनी में एक सहायक प्रोफेसर की हैसियत से वुत्सबुर्ग लौट आया। जर्मनी में एक से अधिक विश्वविद्यालय में—स्ट्रॉसबर्ग, होएनहाइम, ग्नाइस्सेन—फैकल्टी में अध्यापन-कार्य करके 1885 में आखिर फिर वह वुत्सबुर्ग में ही प्रोफेसर बनकर लौट आया।

एक अंग्रेज़ वैज्ञानिक सर विलियम क्रुक्स की अभिलाषा माइकेल फैराडे के कार्य को कुछ आगे ले चलने की थी। फैराडे ने—जो चीज़ भी उसके हाथ आ सकी—द्रव, स्थूल, गैस, कुछ हो—हर चीज़ में से बिजली गुज़ारने की कोशिश की थी। यही नहीं—'शून्य' में से भी विद्युत् संचार का प्रयत्न उसने कर देखा था। किन्तु, उन दिनों के वेकुअम-पम्प

कोई बहुत सफल उपकरण नही थे , सो, उन परीक्षणो को बहुत आगे नही ले जाया जा सका ।

क्रुक्स के पास अलबत्ता, आज अधिक विकसित साधन मौजूद थे—'शून्य' को वह बहुत हद तक सफलतापूर्वक 'सिद्ध' भी कर सकता था । उसका सहायक भी एक सिद्धहस्त प्रयोगविद् था जो शीशे की ट्यूब को फुला-फुलाकर उनमे तरह-तरह के उपकरण बैठा सकने मे भी उतना ही माहिर था ।

क्रुक्स ने जो ट्यूब ईजाद की वह दरअसल शीशे का एक बर्तन ही थी जिसमे दो इलैक्ट्रोड सील करके उसमे से सारी हवा निकाल दी गई थी । इलैक्ट्रोड्स से एक सशक्त वोल्टेज को सम्पृक्त करके ट्यूब के अन्दर एक 'किरण' पैदा की गई । यह किरण ऋणात्मक-बिन्दु पर प्रत्यक्ष की गई । ट्यूब मे पडा हुआ एक पैडल-ह्वील घूमने लग गया (जब ये किरणें उससे जाकर टकराई) । अर्थात् किरण मे सचमुच कुछ भौतिक तत्त्व भी था , और बाकी चीज़ो के साये इधर-उधर पडने लगे ! यही नही—एक चुम्बक पास मे ले जाए, या एक विद्युताविष्ट प्लेट हो, तो यह किरण पथभ्रष्ट भी हो जाती ! शीशे से टकराने पर किरण एक तरह की हरी चमक-सी फेंकती । इस तरह की चमक का वैज्ञानिक नाम है—'फ्लोरेस्सेन्स' (पुष्पद्युति) ।

अब पाठक भी समझ गया होगा कि क्रुक्स ने इस प्रकार हमारे टेलीविज़न के एक-दो पीढी पहले के पुरखा का आविष्कार ही कर लिया था, यद्यपि स्वय टेलीविज़न को मूर्त होने मे अभी 50 साल और लगने थे । अगली पीढी के वैज्ञानिको ने विश्लेपण द्वारा जाना कि क्रुक्स की 'कैथोड रे' वस्तुत. इलैक्ट्रन्स की एक अविरत धारा ही थी । उसकी ट्यूब भी एक प्रकार का विद्युत्-उपकरण ही थी जिसके द्वारा आगे चलकर इलैक्ट्रन का 'प्रत्यक्ष' सम्भव हो सका ।

विश्वविद्यालय की अपनी परीक्षणशालाओ मे प्रोफेसर रोन्तजेन भी एक प्रकार की क्रुक्स ट्यूब लेकर ही कुछ परीक्षण कर रहा था । उसने ट्यूब को एक गत्ते के नीचे ढक दिया और कमरे को भी बन्द कर दिया कि बाहर की रोशनी अन्दर न आने पाए । और तब ट्यूब को डिस्चार्ज कर दिया (अर्थात् उसमे से बिजली गुजारी) । बेरियम-प्लाटिनम की परत से आवृत एक कागज़ का टुकडा, ट्यूब के अन्दर चमकने लगा—विद्युत् से 'खिल' उठा । एक नई खोज सामने आ गई—एक नये किस्म की किरण जो कि कैथोड-किरण नही थी, क्योकि कैथोड-रे शीशे मे से नही गुजर सकती , और यह नई किस्म की किरण शीशे मे से भी, और कागज़ मे से भी साफ-साफ गुजर गई थी । और न कोई चुम्बक अथवा विद्युत्-क्षेत्र इसे पथभ्रष्ट भी कर सकता था । अगले परीक्षणो मे इन किरणो को एल्यूमीनियम, टिन-फॉयल की पतली चादरो मे से रबर और अन्य द्रव्यो मे से भी गुज़ार कर देखा गया ।

फोटो लेने की एक फिल्म को एक अच्छे तगड़े काले कागज़ मे लपेटकर रखा हुआ था । पता चला उसपर भी, जैसे, रोशनी पड चुकी हो ! इन नई किरणो मे इतनी ताकत थी कि अच्छी तरह सभालकर रखी हुई फिल्मो को भी बड़ी एहतियात के बावजूद चौपट कर दे । रोन्तजेन ने इन अज्ञात किरणो को एक्स-रे नाम दे दिया क्योकि उसे मालूम

नही था ये है क्या बला।

'एक्स-रे' किरणो की उत्पत्ति तब होती है जबकि नैगेटिव इलैक्ट्रोड से उद्भूत इलैक्ट्रन्स, वैसे ही जैसे क्रुक्स ट्यूब मे, जाकर पाज़िटिव इलैक्ट्रोड से टकराते है। एक्स-रे पैदा करनेवाली मशीन मे इस योगात्मक बिन्दु का नाम होता है—लक्ष्य (टार्गेट)। होता यह है कि लक्ष्य पर स्थित अणुओ के इलैक्ट्रन अपने गृह से एक बार उन्मूलित होकर फिर अपनी जगह लौट आते है। उनके इस निर्गमन तथा प्रत्यागमन की गति इतनी अधिक होती है कि अविश्वसनीय प्राय 10,00,00,00,00,000 साइकल प्रति सेकण्ड की एक विद्युत-चुम्बकीय तरग को प्रस्रवित करते हुए।

रोन्तजेन को यह जानकर बडी प्रसन्नता हुई कि इन 'एक्स-रे' अथवा रोन्तजेन (जैसाकि उसके साथी उन्हे पुकारते थे) किरणो मे प्राणिमास मे से भी आरपार निकल जाने की ताकत है। काले कागज़ मे एक फोटोग्राफिक प्लेट पर उसने अपना हाथ रखकर देखा। एक्स-रे मशीन चला देने पर फिलम पर उसके हाथ की हड्डियो की एक छाया-सी ("जिसका अपना ही सौन्दर्य था", उसके शब्द है) उतर आई।

1896 मे इस महत्त्वपूर्ण खोज के लिए रोन्तजेन को रॉयल सोसाइटी का रूम-फोर्ड मेडल पुरस्कार मे मिला, और 1900 मे म्युनिख विश्वविद्यालय मे भौतिकी का प्रोफेसर—जिस पद पर वह अपनी मृत्यु (1923) से तीन वर्ष पूर्व तक बना रहा, और फिर—1901 मे नोबल पुरस्कार।
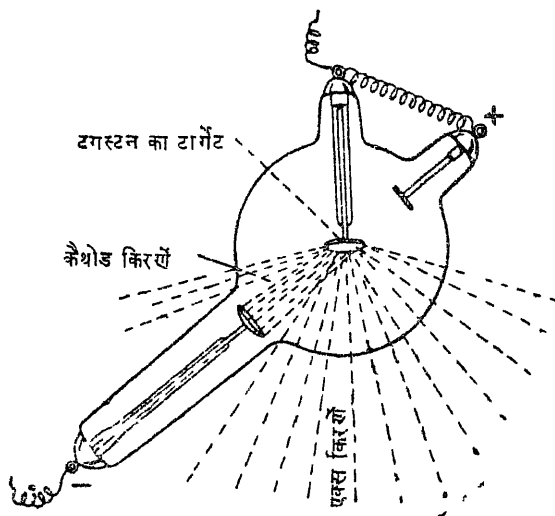
एक एक्स-रे ट्यूब। इलैक्ट्रानों की प्रवाहिनी जाकर जब 'लक्ष्य' (धातु की प्लेट) पर टकराती है तो एक्स-किरणें फूट निकलती हैं।

रेडियो-ऐक्टिविटी के क्षेत्र मे जितने भी आविष्कार हो चुके हैं—बेकेरेल, क्यूरी-द पती, रदरफोर्ड, प्लैक, टामसन, आइन्स्टाइन, फर्मि के—उन सबका प्रवर्तन रोन्तजेन

के इस प्रथम आविष्कार द्वारा ही हुआ था। अपने जीवनकाल में ही रोन्तजेन इन किरणों को चिकित्सा में—टूटी हड्डियों पर, क्षयरोग में, अन्यान्य शल्य-सम्बन्धी निदानों में—प्रयुक्त होता देख चुका था। आगे चलकर भौतिकी में इनका प्रयोग तरह-तरह के स्फटिकों की आन्तर रचना ज्ञात करने में भी किया गया। शिल्पोद्योग में धात्वंशों के आन्तर अभिज्ञान के लिए इनका उपयोग आजकल किया जाता है, क्योंकि युद्ध में भी, शान्ति में भी, यह ज्ञान नितान्त अपेक्षित होता है।

और जब आपका दांतों का डाक्टर आपके मुंह में एक कागज़ में लिपटी फ़िल्म-सी डालता है और, उधर से, एक्स-रे मशीन चला देता है—आपको रोन्तजेन का ऋण स्वीकार करना चाहिए कि वह ये अद्भुत किरणें आविष्कृत कर गया, जैसे उसीकी आत्मा शायद स्वयं उपस्थित होकर आपको एक नामुराद दर्द से बचा रही है।

रोन्तजेन द्वारा एक्स-रे का आविष्कार
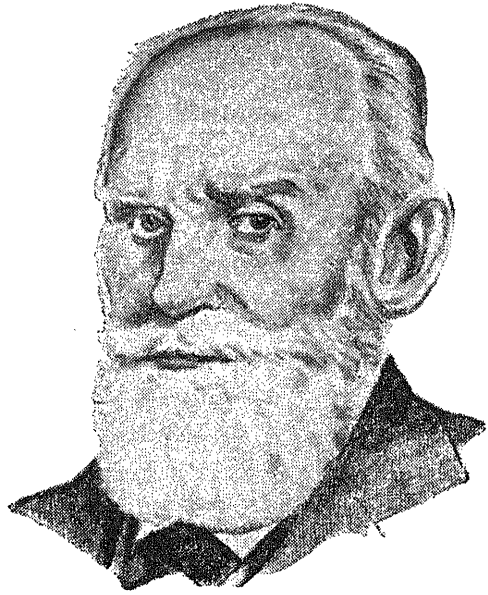
ईवान पैवलोव

भड़ाम ! कुछ नहीं; बस, कोई ट्रक था जो बैक-फायर कर रहा था। आप कूद क्यों पड़े ? यह तो आपने सोचा ही नहीं था कि कोई खतरा है, सोचने की नौबत ही नहीं आई। सोचने को वक्त ही कहां था, बस, आप एकदम से कूद पड़े। धूल का एक कण जब आंख के पास पहुंचने को होता है, हमारी आंख खुद-ब-खुद बन्द हो जाती है। ज़रा-सी भी मिट्टी नाक में घुसी कि हम छींक देते हैं। खाते हुए कोई भी चीज़ श्वास-नली में गलती से चली गई कि खांसना शुरू हो जाता है और वह टुकड़ा वहां से निकल बाहर आ जाता है।

ये सभी क्रियाएं 'रिफ्लेक्स ऐक्शन' अथवा 'रिफ्लेक्स' स्वतः प्रतिक्रियाएं कहलाती हैं। ये हमें सीखनी नहीं पड़तीं। नवजात शिशु में भी वे उसी स्वाभाविकता के साथ विद्यमान होती हैं जैसे एक अधेड़-उम्र के आदमी में। ये स्वाभाविक प्रतिक्रियाएं हमारे में जन्म के साथ ही आ जाती हैं, और इसे हमारी खुशकिस्मती ही समझना चाहिए क्योंकि यही प्रतिक्रिया हैं वस्तुतः जो हमें ज़िन्दा रखे रखती हैं।

इन रिफ्लेक्स क्रियाओं में हमें कुछ सोच-विचार नहीं करना पड़ता, किन्तु, स्वयं इनके विषय में काफी सोच-विचार, चिन्तन-मनन, वैज्ञानिकों ने किया है। इस क्षेत्र में शायद सबसे अधिक अध्यवसाय रूस के एक अपूर्व मनीषी पैवलोव ने किया है। पैवलोव का जन्म, 14 सितम्बर, 1849 को, मध्य-रूस के एक छोटे-से कस्बे रियाजान में हुआ था। पिता गांव का एक पादरी था। मां-बाप ने बच्चे को उच्च शिक्षा के लिए प्रोत्साहित ही नहीं किया, अपितु विषय के चुनाव में भी उसे पूर्ण स्वतंत्रता दी। पैवलोव की शिक्षा का आरम्भ एक धार्मिक पाठशाला में हुआ जहां एक पादरी शिक्षक की छत्रछाया में बालक में

विज्ञान के प्रति अभिरुचि जागरित हुई।

पाठशाला के बाद पैवलोव सेण्ट पीटर्सबर्ग विश्वविद्यालय के स्कूल ऑफ नैचुरल साइन्सेज मे दाखिल हुआ। यहा एक पुस्तक 'मस्तिष्क की स्वाभाविक प्रतिक्रियाए' उसके हाथ लगी, जिसने उसका भविष्य निर्धारित कर दिया। पुस्तक का विषय था—मनुष्य की शारीरिक तथा मानसिक क्रियाओ मे परस्पर सम्बन्ध। पैवलोव ने निश्चय किया कि बडा होकर वह एक डाक्टर बनेगा—शरीरविज्ञान का प्रोफेसर। 1879 मे उसकी चिकित्सक बनने की शिक्षा-दीक्षा समाप्त हो गई। सैनिक चिकित्सा एकेडमी से स्नातक होकर, बचपन मे लिए अपने व्रत के अनुसार, पैवलोव ने सेण्ट पीटर्सबर्ग मे एक प्रयोगशाला स्थापित की ताकि वह शरीर-तन्त्र सम्बन्धी अनुसन्धान को अनवरत रख सके।

प्रयोगशाला बहुत ही साधन-विहीन थी। कोई नियमित सहायक नही, और जो थोडे-बहुत साधन उपकरण आवश्यक होते वे भी पैवलोक को खुद अपनी थोडी-सी तनख्वाह के अन्दर ही जुटाने पडते। किन्तु वह घबराया नही, अपने ध्येय की पूर्ति मे लगा ही रहा। धीरे-धीरे, आसपास उसका कुछ नाम भी होने लग गया। 41 वर्ष की आयु मे उसकी नियुक्ति मेडिकल ऐंकेडमी मे फॉर्मेकॉलोजी के प्राध्यापक के रूप मे हो गई। एक वर्ष पश्चात्, उसे सेण्ट पीटर्सबर्ग के प्रयोगात्मक विधि सस्थान मे खुली नई प्रयोगशाला का अध्यक्ष भी बना दिया गया।

पैवलोव को पहले-पहल अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान उसके पाचन-सस्थान सम्बन्धी अनुसन्धानो पर मिला था। 1904 मे उसे नोबल पुरस्कार दिया गया। शरीर के नाडी-तन्त्र मे तथा पाचनतत्र मे परस्पर सम्बन्ध क्या होता है यह उसने सिद्ध कर दिखाया। वैसे, पैवलोव का विश्वास था कि शरीर की सभी क्रियाए-प्रतिक्रियाए हमारे नाड़ीतन्त्र द्वारा ही चालित होती है। तब तक वैज्ञानिको को यह मालूम नही था कि पाचन-क्रिया मे कुछ महत्त्वपूर्ण योग हार्मोन्स का भी हुआ करता है।

पैवलोव का धैर्य असीम था, और उत्साह और आत्मविश्वास का भी कोई अन्त नही। पाचन-क्रिया पर परीक्षण करते वक्त उसने कुत्ते ही हमेशा लिए। उसे ख्याल रहता कि बेचारे पशु की स्वाभाविक क्रियाओ मे कुछ भी अन्तर इन परीक्षणो से नही आना चाहिए। इसके लिए उसने एक ऑपरेशन का आविष्कार किया कि कुत्ते के मेदे मे जो कुछ हो रहा है उसे साफ-साफ प्रतिक्षण दिखाई देता रहे। पहले 30 परीक्षणो मे उसे असफलता ही मिली। किन्तु वह कहा माननेवाला था। अगले परीक्षण मे जब उसे सफलता मिली, पैवलोव—यही उसकी आदत थी—खुशी मे खुलकर नाच उठा।

नोबल पुरस्कार तो पैवलोव को पाचन-सस्थान सम्बन्धी इन परीक्षणो की बदौलत ही मिला था, लेकिन जो चीज़ उसे विश्व-भर मे प्रसिद्ध कर गई, वह थी उसका 'कण्डीशन्ड रिफ्लैक्सेज़' परक कार्य। कुत्तो के पाचन-तन्त्र पर अनुसन्धान करते हुए, उसका ध्यान इस बात की ओर खिचने लगा कि खाना सामने आने पर कुत्ते मे क्या-क्या प्रतिक्रियाए शुरू हो जाती है। उसने देखा कि कुत्ते के मुह मे पानी आना शुरू हो जाता है—खाना मिलने पर ही नही, सामने आने पर ही। वैज्ञानिको को यह तो पता था ही कि खाने को पचाने के लिए, जैसे हमे भी ज़रूरत पड़ती है, जानवर के मुह मे भी लार का निकल आना

जरूरी होता है। लेकिन वैज्ञानिको का ख्याल यही था कि लार निकलने की यह हालत एक विशुद्ध शारीरिक प्रतिक्रिया है। किन्तु खाना आखो के सामने आते ही यह लार क्यो टपकने लग गई ?

तभी पैवलोव ने अपना वह क्रातिकारी 'वैज्ञानिक अनुमान' प्रस्तुत किया कि यह सब पिछले सचित अनुभवो के कारण होता है, अर्थात् ऐसी प्रतिक्रियाए केवलमात्र शारीरिक ही हो यह जरूरी नही, वे मानसिक भी हो सकती है।

और अब इस अनुमान की परीक्षा के लिए उसने एक परीक्षण का आविष्कार किया। एक कमरे को खाली करके उसमे एक कुत्ते को लाया गया। घण्टी बजी, और रोटी सामने आ गई—और कुत्ते के मुह से लार टपकनी शुरू हो गई। कितनी ही बार यही कुछ किया गया, और होता यह गया कि घण्टी बजते ही लार टपकना शुरू हो जाता, रोटी साथ आए या न आए। अर्थात् वह स्वाभाविक जन्मजात प्रतिक्रिया भी पैवलोव ने बदल डाली थी। कुत्ते मे वही प्रतिक्रिया घण्टी की आवाज के सामने भी सिद्ध कर दिखाई जो आम तौर पर उसमे रोटी सामने आने पर ही प्रत्याशित थी।

एक और अजीब परीक्षण पैवलोव ने अब यह किया कि रोटी के साथ एक वृत्ताकार प्रकाश-रेखा भी दीवार पर पडती। अण्डाकार प्रकाश के साथ रोटी न आती। इस प्रकार जानवर यह जान गया कि रोटी की उम्मीद प्रकाश दिखाई देने पर करना बेवकूफी है। अब यह किया गया कि प्रकाश की इस अण्डाकृति को धीमे-धीमे वृत्ताकार किया जाने लगा कि आखिर दोनो आकृतियो मे विवेक करना मुश्किल हो गया। बेचारे को मालूम न हो कि उसे रोटी मिलेगी या नही। नतीजा यह हुआ कि कुत्ते का दिमाग फिर गया और वह बेचैनी मे कमरे मे चक्कर काटने लगा और भौकने लगा। सौभाग्य से, पैवलोव ने यह भी कर देखा था कि इस प्रकार की 'सीखी' कृत्रिम प्रतिक्रियाओ को विस्मृत करा कर पशु को, और मनुष्य को भी, पुन उसकी स्वाभाविक स्थिति मे वापस भी लाया जा सकता है। यही इस बेचैनी का इलाज है।

आज के शरीरविज्ञानविदो ने पैवलोव के परीक्षणो से बहुत कुछ सीखा है। पैवलोव की स्थापनाओ का कुछ उपयोग मनुष्यो पर भी किया जा चुका है। पिल्ले मे जिस प्रकार कुछ प्रतिक्रिया कृत्रिम रूप मे स्थिर की जा सकती हैं, इन्सान के बच्चे मे भी उसी आसानी के साथ कुछ कृत्रिमता आहित की जा सकती है। मा अगर बच्चे के मन मे कुत्ते का, बिजली का, समुद्र का डर डालना चाहे, तो बच्चा इन चीजो से डरने लग भी जाएगा। किन्तु मा के अपने मन पर इन भयो का कुछ प्रभाव यदि नही पडता, बच्चे पर भी नही पडेगा। यही चाल उलटे बच्चा खुद भी अपने मा-बाप के साथ खेल सकता है। एक बार उसे पता चल जाए सही कि चिड़चिडापन दिखाने से उसका मतलब सिद्ध हो जाता है, वह अब जब चाहे चिडचिडा होकर दिखा देगा और मा-बाप का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर लिया करेगा। पैवलोव ने तो यह भी कर दिखाया कि एक 'स्थिर' प्रवृत्ति को 'अस्थिर' करके उसे 'पुन. स्थिर' भी किया जा सकता है, पशुओ मे भी, और मनुष्यो मे भी।

लेनिन की अध्यक्षता मे सोवियत सरकार ने पैवलोव को पर्याप्त आर्थिक सहायता

दी। शायद उसे इन परीक्षणो की उपयोगिता यह नजर आई हो कि मनुष्यो मे भी वाछित 'शिक्षा' भरी जा सकती है।

87 वर्ष की आयु मे, 1936 मे, पैवलोव की मृत्यु हुई। कुत्तो के साथ परीक्षण करते हुए जब उसने घण्टी बजाने की विधि निकाली थी, मनोवैज्ञानिको के हाथ वह एक नया उपकरण मनुष्य के दैनिक व्यवहार को समझने के लिए दे चला था।

एल्बर्ट अब्राहम मिचेलसन

1869 में एक जर्मन प्रवासी का लड़का एक लम्बी यात्रा पर अमरीका के निवादा राज्य से निकला। यात्रा का ध्येय था—अमरीका के राष्ट्रपति यूलीस्सिस एस० ग्राण्ट से मुलाकात, क्योंकि एन्नापोलिस की अमरीकी नौसेना एकेडमी में दस नियुक्तियां खुद राष्ट्रपति को नामजद करनी थीं। यात्रा लम्बी भी थी और असुविधाओं से भरपूर भी।

एकेडमी में नियुक्ति के लिए जो परीक्षा कांग्रेस वालों ने नियत की थी उसमें प्रथम स्थान प्राप्त करने के बावजूद भी एल्बर्ट अब्राहम मिचेलसन को वह पुरस्कार नहीं मिल सका क्योंकि एक और विद्यार्थी की पहुंच अधिक थी। और अब तो वक्त निकल चुका था, राष्ट्रपति ग्राण्ट से मिलकर भी काम बनने की कुछ उम्मीद नहीं थी। नामजदियां भी पूरी हो चुकी थीं। लेकिन राष्ट्रपति ने उसे एकेडमी के कमाण्डेण्ट से जाकर मिलने को कहा। एक अनुचित अर्थात् 'गैर-कानूनी' नियुक्ति जैसे-तैसे कर दी गई।

अमरीका उसकी मातृभूमि नहीं थी। किन्तु मिचेलसन ने देश के प्रति यह ऋण—उसे शिक्षित करने का—बड़े होकर बखूबी उतार दिया। प्रकाश के विषय में जो अनुसन्धान उसने अपने 50 वर्षों में किए उनसे उसे भी अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति मिली। साथ ही, अमरीका का नाम भी विज्ञान-जगत् में आने लगा। विज्ञान के अनुसन्धान के लिए व्यवस्था हो गई और इस सबका एक प्रासंगिक परिणाम और भी—एक अमरीकी को पहला-पहला नोबेल पुरस्कार।

एल्बर्ट मिचेलसन का जन्म प्रशिया के स्ट्रेनलो शहर में 19 दिसम्बर, 1852 को हुआ था : माता-पिता जर्मन यहूदी थे। 1848 में जर्मनी के लिबरल लोगों को—उन

लोगो को, जिनकी धारणा थी कि टैक्स सभी किसी पर एक ही तरह से लागू होने चाहिए और कि वाणी की स्वतन्त्रता भी सभी को समान रूप से प्राप्त होनी चाहिए—ख्याल आया कि सरकार अब हमारे हाथ मे आ सकती है। दुर्भाग्य से इस काम मे उन्हे सफलता मिली नही। अगले कुछेक सालो मे ये उदार विचारधारा के लोग प्राय जर्मनी छोड अमरीका मे आ बसे। मिचेलसन-परिवार जब न्यूयार्क सिटी मे पहुचा, एल्बर्ट सिर्फ दो साल का था।

कुछ देर पूर्वी प्रदेश मे रहकर, इस नये प्रवासी परिवार ने 49 को 'सोने की भगदौड' मे कैलिफोर्निया जा बसे एक सम्बन्धी के पास पहुचने का निश्चय कर लिया। पानामा की ओर रवाना एक जहाज मे सवार होकर वे पहले इस्थमस पहुचे और, उसके बाद, प्रशान्त महासागर की यात्रा करते हुए पश्चिमी किनारे पर आ लगे।

इधर पहुचकर एल्बर्ट के पिता, सेमुअल मिचेलसन, ने कैलिफोर्निया की कैलेबेरास काउण्टी मे सिएर्रा निवादा पर्वतश्रृखला के बीच बसे मर्फीज नाम के कस्बे मे सूखे फलों की एक दूकान खोली। एक स्थानीय स्कूल मे एल्बर्ट की शिक्षा आरम्भ हुई किन्तु हाईस्कूल की स्थिति आने तक उसे सैन फ्रासिसको भेज दिया गया। यहा उसकी प्रतिभा गणित और विज्ञान मे चमक उठी। हाथो के हुनर मे भी वह कुछ कम न था। और 15 रुपये महीने मे स्कूल के वैज्ञानिक उपकरणो की देखभाल की नौकरी भी उसे मिल गई।

एल्बर्ट जब 16 साल का हुआ, परिवार उठकर वर्जीनिया सिटी (निवादा) आ गया। उन दिनो यहा चादी की खुदाई खूब चल रही थी। एक साल के बाद घर मे उसके एक भाई चार्ली, ने जन्म लिया और अगले साल एक बहन मिरियम जन्मी। चार्ली मिचेलसन ने भी आगे चलकर राष्ट्रपति फ्रेकलिन डी० रूजवेल्ट के शासन काल मे डेमॉक्रेटिक पार्टी के पब्लिसिटी डायरेक्टर के तौर पर काफी नाम कमाया।

1873 मे मिचेलसन नेवल एकेडमी से ग्रेजुएट हुआ। तब तक वह अमरीका की नेवी मे दो साल एक 'एँन्साइन' के तौर पर काम कर भी चुका था। अब उसे भौतिकी तथा रसायन पढाने के लिए एकेडमी मे ही वापस बुला लिया गया। यहा अध्यापन-कार्य करते हुए उसका शौक, जो प्रकाश की गति जानने मे पैदा हुआ, जीवन-भर बना ही रहा। फोकॉल्ट के घूर्णक दर्पण की विधि को प्रयोग मे लाते हुए उसने 50 रुपये मे ही एक परीक्षण की आयोजना कर डाली। हा, प्रयोगशाला मे उपलब्ध कुछ लेंस उसे मुफ्त मे भी जरूर मिल गए थे। आश्चर्य तो यह है कि इस उपकरण द्वारा भी उसे प्रकाश-गति की गणना मे सफलता मिल गई। 500 फुट की जरा-सी दूरी, और कितनी सही गणना थी वह। 1878 के 'अमरीकन जर्नल ऑफ साइन्स' मे उसका पहला प्रकाशित निबन्ध था—'प्रकाश की गति को मापने का एक तरीका।'

साबुन के बुलबुलो को उडाना एक अच्छा खेल है। इन बुलबुलो को हवा मे उडता देखकर बच्चो को तो आनन्द आता ही है, बडे भी कम खुश नही होते। लेकिन इनमे ये खूबसूरत मन-लुभावने रग कहा से आते है? इसकी वैज्ञानिक व्याख्या मे जो सिद्धान्त प्रयुक्त होता है उसे आज हम 'अवरोध' (इण्टरफियरेन्स) कहते है। बुलबुले की

पतली बाहरी परत—हम साफ देख सकते है कि प्रकाश का एक स्रोत नही है वह—प्रकाश को, बस वापस फेक सकती है परत के दोनो ही पार्श्व—भीतरी और बाहरी दोनो—रोशनी को वापस ही लौटा सकते है। किन्तु यह परत इतनी पतली होती है कि प्रकाश की कुछ तरगें इस प्रकार भी प्रत्यावृत हो आती है कि इस प्रतिक्रिया मे वे नष्ट ही हो जाती है। किसी भी रग की तरगे इस प्रत्यावर्तन मे स्वय शीर्ण हो जाएगी यदि बुल-बुले की परत की मोटाई उस रग की तरगिमा की आधी हो। दो तरगे परस्पर टकराई नही कि खत्म हुई नही · इसी नियम को विज्ञान मे तरगावरोध, अथवा सक्षिप्त रूप मे केवल 'अवरोध', कहते है। किन्तु सफेद रोशनी मे तो कितने ही रग होते है—कुछ तरगे अवरुद्ध हो जाने पर फिर भी कुछ बच रहता है (कुछ रग फिर भी हमारे देखने को बच रहते हैं)। बुलबुलो मे इन रगो के बारे मे न्यूटन को भी पता था, किन्तु उसे समझ नही आ सका कि इसका कारण क्या है, क्योकि प्रकाश के तरगिमा-सिद्धान्त मे उसकी आस्था नही थी।

प्रकाश की तरगिमाओ की गणना कर सकना कुछ मुश्किल नही है यदि साबुन के इन बुलबुलो की मोटाई हमे मालूम हो। किन्तु अब प्रश्न उठता है कि—बुलबुलो की मोटाई को किस तरह मापा जाए ? मिचेलसन ने एक उपकरण इसके लिए ईजाद किया—इण्टरफैरोमीटर, 'अवरोध-मापक' जिसमे डॉयरेक्ट (तत्सम) तथा इण्डॉयरेक्ट (तद्भव) तरगो के सिद्धान्त का प्रयोग होता है, और, इस तरह, वह प्रकाश की तरगिमा को मापने मे सफल भी हो गया। उपकरण का कुछ रेखा-चित्र-सा तथा उसकी प्रयोग-विधि चित्र मे अकित है।

इस उपकरण का आविष्कार मिचेलसन ने 1887 मे किया था, और उसके द्वारा विश्वव्यापी यश भी उसे मिला था। किन्तु यह उपकरण एक समय मे केवल एक ही तरग की लम्बाई को माप सकता है उदाहरणार्थ—कैडमियम के वाष्प मे से बिजली गुज़रे—जैसे कि एक 'निओन साइम' मे से गुजरा करती है—तो उससे लाल रग की फ्रीक्वेन्सी की कुछ रोशनी पैदा हो जाएगी। मिचेलसन ने इस तरग को मापा— 000064384696 सेण्टीमीटर लम्बी, जिसे वैज्ञानिक गणना मे आजकल हम 6438 4696 एंगस्ट्रम कहेगे।

समुद्र के निम्नतलो मे तैरती एक पनडुब्बी किसी पराए जहाज़ के इजनो की आवाज़ को सुन सकती है क्योकि ध्वनि की तरगे पानी मे से गुजर सकती है। शीशे के एक बर्तन मे यदि एक बिजली की घटी रख दी जाए तो उसकी आवाज़ हमे सुनाई देती रहेगी क्योकि ध्वनि हवा मे भी गुज़र सकती है। परन्तु उसी बर्तन से हवा निकाल दीजिए और फिर देखिए आवाज़ तुरन्त बन्द हो जाएगी क्योकि शून्य मे यह आवाज़ गति नही करती परन्तु घटी को हम देख अब भी सकते है क्योकि प्रकाश के तरगित स्पन्दन शून्य मे भी निष्क्रिय नही होते।

वैज्ञानिको के सम्मुख प्रश्न यह था कि क्या प्रकाश की किरण के लिए किसी प्रकार के कुछ माध्यम की आवश्यकता नही है ? सूर्य से और अरबो मील परे चमकते सितारो से प्रकाश पृथ्वी की ओर शून्य आकाश को तय करता हुआ हमारे पास पहुचता है। किन्तु कुछ-न-कुछ माध्यम तो चाहिए ही, सो, एक द्रव्य की कल्पना की गई और उसे
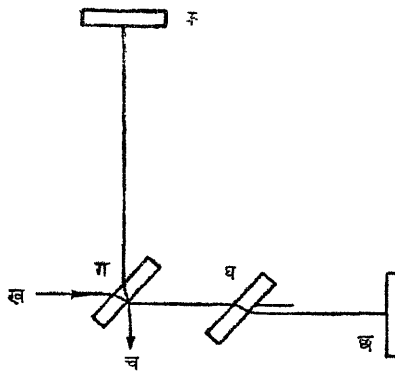
मिचेलसन के 'अवरोध-मापक' का एक सरल चित्र। अवरोधक द्वारा दो धाराओं में विभाजित एक किरण भिन्न दिशाओ मे कीर्ण होकर एक ही बिन्दु पर लौट आती है। भिन्न दिशाओं से आ रही तरगें परस्पर अवरोध उत्पन्न कर देती हैं और एक प्रत्यक्ष परिधि-सी बन जाती है, जिससे तरगिमाओं को मापा जाता है। स्रोत ख से प्रक्षिप्त प्रकाश शीशे की पालिश हुई ग पर जाकर टकराता है। कुछ रोशनी तो प्रत्यावर्त होकर दर्पण क पर पहुच जाती है और वहा से वैसी की वैसी ही लौट आती है जबकि कुछ रोशनी ग के आर-पार होकर दर्पण छ तक पहुचकर फिर लौटती आती है। और ये दोनों ही विभक्त धाराए द्रष्टा च की आंख में इकट्ठी ही पहुचती हैं। अब यदि एक और शीशे की प्लेट घ बीच में खडी कर दी जाए तो छ से और छ की ओर आने-जाने वाली किरण शीशे की प्लेट में से तीन बार गुजरेगी वैसे ही जैसे ख से और ख की ओर जाने वाली किरण।

कुछ नाम भी दे दिया गया—'ईथर'। और अरसे तक वैज्ञानिक ईथर को भी उसी तरह स्वीकार करते रहे जैसे उससे पहले वे 'फ्लोजिस्टन' और 'कैलॉरिक' को मानते आए थे ईथर के बारे मे बातचीत करते हुए भी उनके मन मे सन्देह बना ही रहता कि क्या सच-मुच यह 'ईथर' कोई वस्तु है भी ? कल्पना की परीक्षा बहुत ही सरल है—यदि ईथर सचमुच कुछ है, तो पृथ्वी भी उसीमे से गुजरती होगी, वैसे ही जैसे हवा मे से जहाज़ गुजरता है। और, इसके साथ ही, ईथर की कुछ उलटी हवा भी होनी चाहिए जैसे कि हवाई जहाज़ के उडने के वक्त हम प्रत्यक्ष करते है।

मिचेलसन ने एक परीक्षण का आविष्कार यही जानने के लिए किया कि—क्या सचमुच ऐसी कोई 'ईथरी हवा' होती भी है ? उसने प्रकाश का एक ऐसा स्रोत लिया जो केवल एक ही तरगिमा विकीर्ण कर सके और, तब, इस किरण को उसने दो धाराओ मे

विभक्त कर दिया—एक धारा को उत्तर की ओर, दूसरी को पश्चिम की ओर। प्रतिक्षिप्त होकर ये तरगे पुन एकरूप हो जाती। किन्तु कोई आगे नही, कोई पीछे नही—एक ही क्षण दोनो का पुनर्मिलन होता। ईथर-वात की ही दिशा मे जाए—तब भी, ईथर की धारा के विरुद्ध—तब भी, और इस दिशा के लम्ब-दिक् का अनुसरण करे तब भी—इन्हे वापस लौटने मे समय हमेशा वही लगता। प्रस्तुत रेखाचित्र शायद परीक्षण की गतिविधि को समझाने मे कुछ सहायक सिद्ध हो।
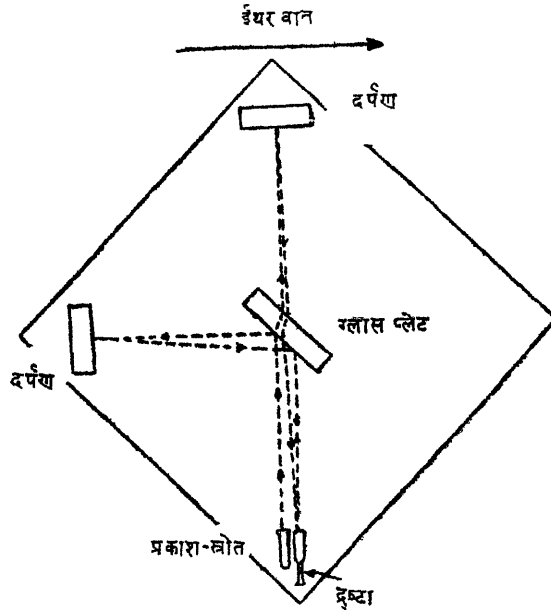
मिचेलसन के जिस परीक्षण द्वारा ईथर-वात का प्रत्याख्यान हुआ था उसे इस सरल रेखाचित्र में दिखाया गया है। स्रोत से फूटी किरण को दो विरोधी दिशाओं में विभक्त कर दिया जाता है और फिर उन विभक्तियों को द्रष्टा के पास वापस ले जाते है।

मिचेलसन तथा उसके सहायक, ई० डब्ल्यू मॉर्ले ने कितने ही परीक्षण कर देखे—दिन-रात, सर्दियो मे गर्मियो मे—किन्तु कुछ भी नही मिल सका उन्हे। परीक्षण ईथर की सत्ता को सिद्ध करने मे असफल रहा। प्रतीत कुछ ऐसा ही हो शायद कि परीक्षण से कुछ भी साबित नही हो सका, किन्तु मिचेलसन जिस परिणाम पर इससे पहुचा, वही कुछ—यही असफलता आइन्स्टाइन के सापेक्षवाद का प्रस्थान-बिन्दु थी।

मिचेलसन ने ईथर-वात सम्बन्धी ये अपने परीक्षण तब किए थे जब वह क्लीवलैण्ड मे एप्लाइड साइन्स के केस स्कूल मे भौतिकी का प्रोफेसर था। वहा से वह क्लार्क विश्वविद्यालय आ गया और 1892 मे उसे शिकागो विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग का अध्यक्ष बना दिया गया। यहा पढाने का काम न के बराबर ही था, अत वह दिन-रात अनुसन्धान

मे ही लगा रहता।

विद्यार्थियो को उसके सामने पहुचने का साहस कम ही होता—काले-काले बाल और काली-काली ही आखे, और फिर चाल-ढाल भी मिलिटरी वालो जैसा। उसे अपने उप-स्नातक शिष्यो से बहुत आशाए थी, किन्तु अनुसन्धान-कार्य उन्हे सौप देने का भरोसा न था। हर कार्य मे पूर्णता चाहिए, लेकिन सबकुछ अकेले ही निभाएगा। आइन्स्टाइन या फ्लैमिंग का 'मानव स्पर्श' उसके हाव-भाव मे नही था। अलबत्ता हा, इन दोनो महापुरुषो की कलाप्रियता उसमे भी कुछ थी वॉयलिन बजाने का शौक उसे भी था और अपने दो पुत्रो को, (दो शादियो से उसके छ सन्ताने हुई) वॉयलिन बजाना उसने खुद ही, सिखाया भी। चित्रकार भी वह पाए का था किन्तु उसकी आन्तर अनुभूति यही थी कि "कला की अपनी 'पराकाष्ठा' अभिव्यक्त होकर विज्ञान मे ही अवतरित हुआ करती है।"

मारे ही पश्चिमी जगत् से मिचेलसन पर अब सम्मान की वर्षा होने लगी 11 ऑनरेरी डिग्रिया, रॉयल सोसाइटी का रूमफोर्ड मेडल, पेरिस का और रोम के एक्सपोजीशन का ग्राण्ड प्राइज। 1892 मे उसे पेरिस के 'इण्टरनेशनल ब्यूरो ऑफ वेट्स एण्ड मेजर्स' का सदस्य भी मनोनीत कर लिया गया।

अपने 'अवरोध-मापक' की उपयोगिता उसने—कैडमियम के वाष्पीय प्रकाश की तरगिमा के रूप मे—'स्टैण्डर्ड मीटर' के लक्षण मे सिद्ध कर दिखाई। तब तक स्टैडर्ड मीटर का लक्षण—पेरिस मे एक वोल्ट मे सुरक्षित एक अमूल्य धातु के टुकडे पर पडे दो
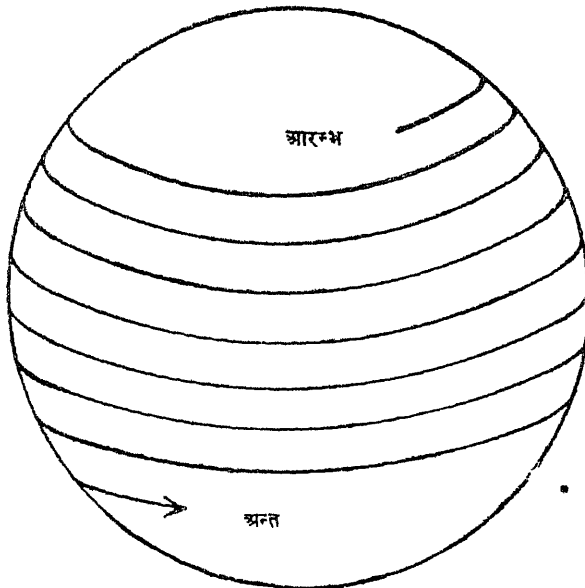
यदि प्रकाश एक वृत्त में गति कर सके तो एक सेकण्ड में वह पृथ्वी की $7\frac{1}{2}$ परिक्रमाएं कर लेगा।

झरीटो के बीच की दूरी—किया जाता था। 1907 मे मिचेलसन भौतिकी मे नोबल पुरस्कार प्राप्त करनेवाला पहला अमरीकी घोषित हुआ।

1926 मे मिचेलसन ने प्रकाश की गति की गणना के सम्बन्ध मे अपना सर्व-प्रसिद्ध परीक्षण किया। उसकी गणना का आधार यहा भी, फोकॉल्ट के घूर्णक दर्पण का सिद्धान्त ही था। कैलिफोर्निया मे माउण्ट विल्सन की चोटी पर एक प्रयोगशाला स्थापित की गई। 22 मील दूर माउण्ट सान एन्तोनियो पर एक दर्पण की प्रतिष्ठा हुई। इन दो बिन्दुओ के अन्तर को 'यूनाइटेड स्टेट्स कोस्ट एण्ड जिओडेटिक सर्वे' ने अद्भुत कुशलता के साथ नापा। दो इच से ज्यादा गलती होने की सम्भावना नही थी। माउण्ट विल्सन से अब प्रकाश की तरगे चलना शुरू हुई और घूर्णक दर्पण द्वारा स्पन्दनो मे परिवर्तित होती हुई, माउण्ट सान एन्तोनियो पर रखे दर्पण की ओर मोड दी गई। स्पन्दन-रूप ये तरगे वहा से प्रतिक्षिप्त होकर द्रष्टा के यहा पहुचती—किन्तु तभी जबकि घूमते हुए दर्पण को अपनी अगली स्थिति तक पहुचने का वक्त होता। अर्थात्, दर्पण की इस 'नियत्रित गति' मे ही परीक्षण का सारा रहस्य था सान एन्तोनियो तक पहुचकर लौट आने मे प्रकाश को जो समय लगता उतने मे दर्पण अपने चक्कर का एक छठा हिस्सा ही पूरा कर सकता था।

इन परीक्षणो के दौरान मिचेलसन अस्वस्थ था, किन्तु धैर्यपूर्वक उसने अन्त तक सब निभाया। दिमाग की एक नस फट जाने से जब 9 मई, 1931 को उसकी मृत्यु हुई, तब उसकी आयु 79 वर्ष थी।

उसके अन्तिम प्रकाशित निबन्ध का विषय भी वही था जो कि उसके प्रथम मुद्रित अनुसन्धान का था : 'प्रकाश की गति को मापने का एक उपाय'।
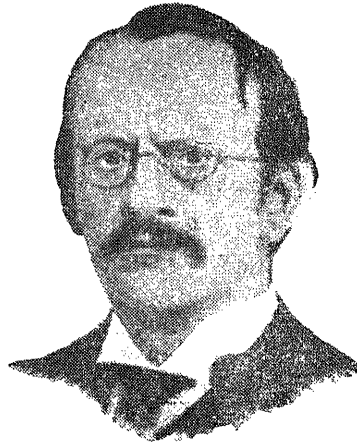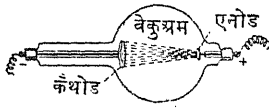
जोज़ेफ जॉन टॉमसन

योग्यता की एक कसौटी नोबल प्राइज़ भी है। टॉमसन को यह पुरस्कार 1906 में मिला था। किन्तु अपने-आप में वह एक महान वैज्ञानिक न भी होता, तब भी एक अद्वितीय अध्यापक होने के नाते भी वह किसी पुरस्कार का अधिकारी होता ही। विश्व-भर में अनगिनत वैज्ञानिकों को उससे प्रेरणा मिली, निर्देशन मिला; कम से कम आठ विद्यार्थी भी उसके बाद में नोबल-विजेता हुए।

जे० जे० टॉमसन का जन्म 18 दिसम्बर, 1856 को इंग्लैंड में मैंचेस्टर के नज़दीक हुआ था। पिता का पुरानी दुर्लभ पुस्तकों का व्यापार था, जो कितनी ही पीढ़ियों से परिवार में एक पेशे के तौर पर चलता आता था। वंश में विज्ञान की भी कुछ न कुछ परम्परा थी। जोज़ेफ के एक चाचा को ऋतुओं के अध्ययन में तथा वनस्पतिशास्त्र में भी रुचि थी, किन्तु इतने ही को हम परिवार में एक विशेष प्रवृत्ति के रूप में ग्रहण नहीं कर सकते।

जोज़ेफ किताबों का कीड़ा था—उसकी भूख मिटती ही न थी। सो परिवार ने यह निश्चय किया कि इंजीनियरिंग उसके लिए उपयुक्त क्षेत्र रहेगा। 14वें वर्ष में उसे ओवेन्स कालिज, आजकल मैंचेस्टर विश्वविद्यालय भेज दिया गया। दो साल बाद जब बाप की मृत्यु हो गई, उसकी शिक्षा-दीक्षा का भार मित्रों ने अपने ऊपर ले लिया। जॉन डाल्टन के नाम से एक छात्रवृत्ति का प्रबन्ध कुछ चला आता था, उसीकी कृपा से जोज़ेफ की पढ़ाई वहीं नहीं रुक गई।

19 का होते-होते टॉमसन ने इंजीनियरिंग की यह पाठ्यविधि समाप्त कर ली और उसके बाद अब वह एक छात्रवृत्ति लेकर कैम्ब्रिज के ट्रिनिटी कालिज में प्रविष्ट हो गया। गणित तथा विज्ञान के विद्यार्थियों के लिए एक बड़ी चीज़ जो इस विश्वविद्यालय में थी वह थी—'मैथमैटिकल ट्राइपॉस' के नाम से प्रसिद्ध (योग्य विद्यार्थियों के लिए

खुली) परीक्षा। टॉमसन इस परीक्षा मे प्रतिष्ठापूर्वक सफल रहा—मैक्सवेल की भाति परिणाम मे उसका स्थान द्वितीय था।

और मैक्सवेल की ही भाति टॉमसन ने अपनी गणित की प्रतिभा को समीक्षात्मक भौतिकी की ओर प्रवर्तित कर दिया। टॉमसन की परीक्षण-बुद्धि कुछ विशेष न थी, उसके हाथो मे भी कोई विशेष कुशलता न थी। शुरू-शुरू मे, रसायन की प्रयोग-शालाओ मे वह लगभग अपनी आखो से ही हाथ धोने पर आ गया था। किन्तु अनुभव ने उसे यही बताया कि समीक्षात्मक भौतिकी अपने आप मे बिना परीक्षणात्मक समर्थन के, एक निरर्थक वस्तु ही रह जाती है।

1881 मे टॉमसन ने एक निबन्ध लिखा जिसमे आइन्स्टाइन के प्रसिद्ध सिद्धान्त का पूर्वाभास मिलता है। निबन्ध का सार यह है कि द्रव्यमान या सहति (मॉस) तथा 'शक्ति' परस्पर समान ही होते है। तब उसकी आयु केवल 24 वर्ष थी।

स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण करते ही टॉमसन को ट्रिनिटी कालिज का एक फेलो बना दिया गया जिससे कैवेण्डिश लेबोरेटरीज मे अनुसन्धान करने के लिए उसे सब प्रकार की सुविधाए मिल गई। 1884 मे प्रयोगशाला के अध्यक्ष लॉर्ड रैले ने अपने पद से त्याग-पत्र देने का निश्चय कर लिया और वह, अपना उत्तराधिकारी 28 साल के छोकरे टॉमसन को नियुक्त करता गया। काफी खप मची—यह नही कि टॉमसन की योग्यता मे किसी को कुछ शक था, किन्तु छोटी उम्र खुद उसके रास्ते मे पर्याप्त बाधा थी। किन्तु लॉर्ड रैले का चुनाव भी अच्छा ही सिद्ध हुआ। टॉमसन इस पद पर 34 वर्ष जमा रहा और उसके निर्देशन मे यह सस्था विज्ञान के क्षेत्र मे विश्व की श्रेष्ठतम सस्था मानी जाने लगी।

इन्ही प्रयोगशालाओ मे टॉमसन को अपना जीवन-कार्य भी मिल गया, और जीवन-साथी भी। उसे कुछ बहुत आस्था नही थी कि औरतो मे विज्ञान की प्रतिभा होती है। 'परान्त विज्ञान' पर उसके व्याख्यानो को सुनने जब पहले-पहल एक लडकी भी आई, तब उसने लिखा था, "मुझे डर है इन व्याख्यानो का एक शब्द भी उसके पल्ले नही पड रहा वह अभी तक यही समझ रही है कि मेरा विषय 'परमेश्वर' है, धर्म-विज्ञान है, और अभी तक वह अपनी इस भूल को शायद पहचान नही पाई।" खैर, 1890 में उसने मिस रोज़ पेजेट के साथ शादी कर ली—उसके 'एडवान्स्ड लैक्चर्स' को वह भी सुनने आया करती थी।

1897 मे जे० के० टॉमसन 'इलेक्ट्रॉन का जनक' बन गया। इस नन्हे-से कण का अनुसन्धान करके उसने यह स्थापित कर दिया कि द्रव्य, प्रकृत्या, वैद्युत होता है—विद्युन्मय होता है। उन दिनो वैज्ञानिको के सम्मुख 'कैथोड रे' की आन्तर-रचना का प्रश्न आ चुका था। यही वह किरण थी जिसे क्रुक्स ने एक शीशे की नली मे से, पहले उसकी सारी हवा खाली कर, एक प्रबल वोल्टेज-डिस्चार्ज के द्वारा सर्वप्रथम प्रत्यक्ष किया था। इसी टयूब का प्रयोग करते हुए, उसके बाद, रोन्तजेन ने एक्स-रे उपलब्ध की थी।

उन दिनो दो स्थापनाए प्रचलित थी, और दोनो को ही प्रबल समर्थन प्राप्त था। टॉमसन का विचार था कि ये कैथोड-किरणें 'विद्युताविष्ट कणो का एक समूह' होती हैं, जबकि इस स्थापना का विरोधी पक्ष यह कहता था कि यह किरण और विद्युत्कण

दोनो नितान्त भिन्न वस्तुए है। यह सच है कि जब कोई कैथोड-रे जाकर शीशे से टकराती है, उससे एक अद्‌भुत चमक पैदा हो जाती है, किन्तु इलेक्ट्रॉनो को, इसके विपरीत आखो से देखा नही जा सकता।

टॉमसन ने चित्र मे दिए यन्त्र जैसा कुछ उपकरण प्रयुक्त किया। कैथोड किरणें कैथोड-बिन्दु 'क' पर जन्म लेती है। एक छोटे-से छिद्र मे से गुज़रकर वे—और इस छिद्र का सम्बन्ध 'अ' के साथ पहले से किया होता है—शीशे की नली मे एक सकीर्ण ज्योति-वलय-सा निर्धारित कर देती है। टॉमसन एक चुम्बक-छड ट्यूब के नज़दीक लाया। यह ज्योतिर्बिन्दु उसके साथ चलता आया, अर्थात् किरणे झुकती हैं। अब चुम्बक को इस तरह चलाया गया कि ये किरणें ट्यूब के अन्दर पडे परदे पर अकित एक रन्ध्र पर केन्द्रित हो जाए। इस रन्ध्र मे से गुजरने पर रिसीवर-इलेक्ट्रोड के साथ सम्बद्ध इलेक्ट्रोस्कोप की सुइया हिलने लगी। टॉमसन का निष्कर्ष था कि यह कैथोड-रे ऋणात्मक विद्युत् है।

किन्तु विरोधी-मण्डल इससे सन्तुष्ट न हुआ। उसका कहना था कि यह तो माना कि चुम्बक के द्वारा कैथोड-रे विचलित हो सकती है, किन्तु इससे यह सिद्ध नही होता कि स्थिर-विद्युत् के क्षेत्र मे भी यही अवस्था होगी। स्थिर-विद्युत् का क्षेत्र—अथवा इलेक्ट्रो-स्टिकफील्ड—कुछ उसी प्रकार का एक क्षेत्र होता है जिसमे सख्त रबर की एक छड, जैसे कोई कघी या फाउण्टेन पेन की बैरल आदि किसी कपडे पर रगडी जाने पर कागज के पुर्ज़ो को अपनी ओर बरबस खीचने लगती है। कोशिश हाइनरिख हेर्त्स ने भी की थी, किन्तु स्थिर-

कैथोड किरणें किस प्रकार विद्युत् कणों-सा आचरण करने लगती है इसका एक रेखाचित्र।
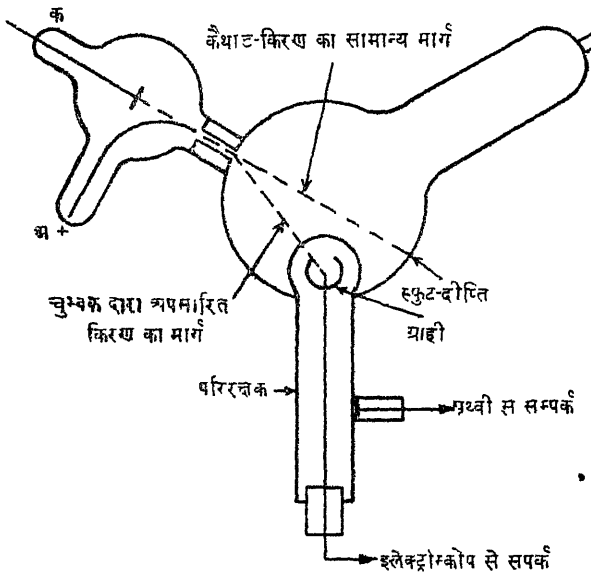
विद्युत् की इस प्रक्रिया द्वारा वह किरण को विचलित करने मे असमर्थ रहा था। एक ही सम्भव उत्तर रह गया था, और वह कि—शायद अभी 'शून्य' स्थान मे कुछ तत्त्व बाकी है—कुछ गैस अभी रह गई जो दोनो प्लेटो के बीच करेण्ट को आने-जाने दे रही है, और इसी वजह से इसका इलेक्ट्रोस्टेटिक फील्ड शायद विकृत हो चुका है। इसलिए ट्यूब को अभी और खाली करो, और फिर परीक्षण करके देखो।

यही किया गया। इस बार कैथोड-रे विचलित हो गई। टॉमसन पहले ही साबित कर चुका था कि कैथोड-रे को कोई चुम्बकीय क्षेत्र भी विचलित कर सकता है, वैद्युत क्षेत्र भी। जिसका एक ही अर्थ हो सकता था कि कैथोड किरण प्रकृत्या, कोई 'किरण' न होकर, विद्युताविष्ट कुछ कणो की 'एक अविरत धारा' है।

यही नही, टॉमसन ने इस ऋणाविष्ट कण (इलेक्ट्रॉन) को तोला भी कि हाइड्रोजन के अणु का यह $\frac{1}{2000}$ होता है। इलेक्ट्रॉन की गति भी उसने हिसाब लगाकर रख दी 160,000 मील प्रति सेकण्ड।

आज हम सब इलेक्ट्रॉनो से परिचित हैं, टॉमसन का वह भगीरथ-कृत्य आज एक अद्भुत इलेक्ट्रॉनिक खिलौने टेलीविजन मे अमर हो चुका है। टेलीविज़न की चित्र नलिका वस्तुत एक कैथोड-रे ट्यूब ही है जिसमे विद्युन्मय कणो को बडी गति के साथ विचलित किया जाता है कि चित्र की किंचित् 'भ्रान्ति' उत्पन्न हो सके। यह विचलन अब भी टॉमसन के उस पुराने तरीके से ही सिद्ध किया जाता है—'स्थिर-विद्युत्' क्षेत्रो द्वारा तथा चुम्बकीय क्षेत्रो द्वारा।

किन्तु 1897 मे तब इन विद्युत्-कणो की सत्ता स्वीकृत करने मे वैज्ञानिको को कुछ हिचक थी। टॉमसन ने कहा, क्यो न इनकी फोटो उतार ली जाए ? किन्तु, कैसे ? एक ऐसे कण का चित्र हम भला उतार ही किस तरह सकते है जो कि हाइड्रोजन का दो हज़ारवा हिस्सा है और 160,000 मील प्रति सेकण्ड की रफ्तार से निरन्तर गतिशील है।

यह था प्रश्न जो टॉमसन ने अपने एक शिष्य चार्ल्स टी० आर० विल्सन के सम्मुख रखा। इससे पहले विल्सन कुछ अनुसन्धान कुहरे के कारणो पर कर चुका था। सभी जानते है कि गरम हवा मे नमी थामने की ताकत ठण्डी हवा की निस्बत कुछ ज्यादा होती है। और जल-वाष्पो से लदी गरम हवा को अकस्मात् ठण्डा कर दिया जाए, तो छोटी-छोटी पानी की बूदें बन आएगी। लेकिन हर पानी की बूद मे एक मिट्टी का ज़र्रा होता है। अर्थात् यदि इन बूदो मे धूल ज़रा भी न हो, तो पानी जम ही न सके, कुहरा बन ही न सके।

विल्सन ने इस तथ्य का प्रयोग उस 'अणु' को खोजने मे किया, जो टॉमसन को स्वीकार न था। एक उपकरण तैयार किया गया जिसमे एक क्षण मे नमी पैदा की जा सके और साथ ही अणु के ये क्षुद्रांश भी पैदा किए जा सके। कितने ही साल वह इस समस्या पर लगा रहा और 1911 मे एक 'विल्सन क्लाउड चैम्बर' बनाने मे सफल हो गया। होता यह है कि जब इन अणुतर कणो को चैम्बर मे से शूट किया जाता है—करोडो

वायु-कण विद्युत्-वाहक बन जाते है और पानी की बूदें इन विद्युत्-वाही कणो पर इकट्ठी होने लग जाती है। इन कणो को विज्ञान मे 'आयन' कहा जाता है—जो सूक्ष्म-अणु भी हो सकता है, स्थूल-कण भी'''किन्तु अपना एक इलेक्ट्रॉन जब वह खो चुका हो तब ही। 'मेघ-गृह' के ये यात्रा-मार्ग, जेट-प्लेनो के वाष्प-मार्गो की भाति, फोटो पर उतारे जा सकते हैं। और इस प्रकार इन मार्गांकनो के द्वारा इलेक्ट्रॉन की प्रकृति को कुछ अवगत किया जा सकता है। अणु के सूक्ष्म कणो को पहचानने के लिए आज भी विल्सन-चेम्बर का प्रयोग होता है। इस अनुसन्धान की बदौलत विल्सन को 16 साल बाद नोबल पुरस्कार भी मिला।
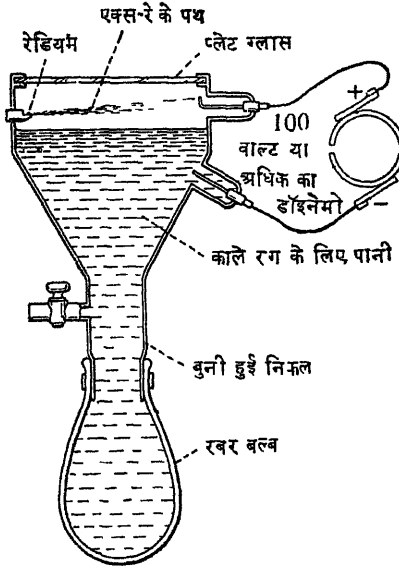
विल्सन का 'मेघ सौध' (क्लाउड चैम्बर)

अब कार्य पूरा हो चुका था टॉमसन का खोजा 'ऋण अशु' तुल भी चुका था, उसकी गति भी जानी जा चुकी थी और, एक तरह से, उसकी तसवीर भी उतारी जा चुकी थी, और—साइन्सदान इसे 'इलेक्ट्रॉन' कहने भी लग चुके थे। वर्तमान 'इलेट्रॉनिक्स के आपूर्ण विज्ञान की आधार-भूमि यही 'इलेक्ट्रॉन' है।

प्रथम महायुद्ध की समाप्ति पर सर जे० जे० टॉमसन कैवेंडिश लेबोरेटरीज़ से मुक्त होकर ट्रिनिटी कालिज का अध्यक्ष मुकर्रर हो गया। टॉमसन के ही एक पुराने शागिर्द गर्नेस्ट रदरफोर्ड की, जो रेडियो-एक्टिव वस्तुओ की रासायनिकता के विषय में अपनी अन्वेषणाओ के लिए नोबल-पुरस्कार प्राप्त कर चुका था, सिफारिश की गई कि इन प्रयोग-शालाओ को अब वह सभाले। इस आनन्द मे सुखातिरेक की धारा टॉमसन के लिए एक और यह आ मिली कि 1937 मे भौतिकी के नोबल पुरस्कार का अधिकारी उसके पुत्र जॉर्ज पेजेट टॉमसन को—स्फटिको द्वारा इलेक्ट्रॉनो के दिशान्तरण (डिफ्रेक्शन) विषयक

कार्य पर—घोषित किया गया।

1940 में टॉमसन की मृत्यु हुई। तब उसकी आयु 84 वर्ष थी। यही वह प्रतिभा थी जिसने वस्तुमात्र को विद्युन्मय सिद्ध करके अणु की अविनश्वरता की पुरानी कल्पना को उन्मूलित कर दिया था। इन्सान भी वह कुछ कम ऊंचे पाये का न था, जिसके प्रेम से कितने ही जन अद्‌भुत साहसिक कार्य कर गए। वह एक महान् अध्यापक था जो विरासत में विश्व को भौतिकी, गणित तथा रसायन में कितनी ही प्रामाणिक पाठ्य-पुस्तकें दे गया है।
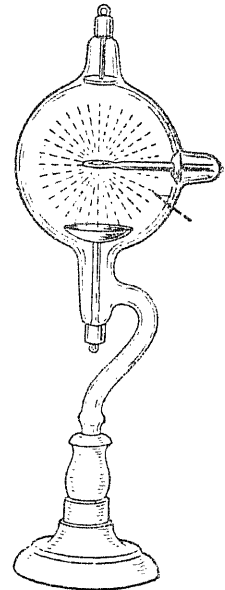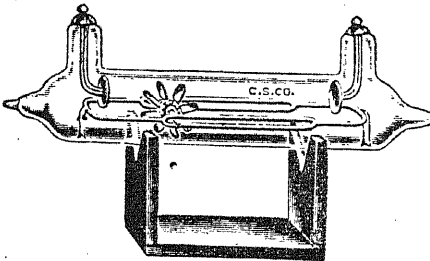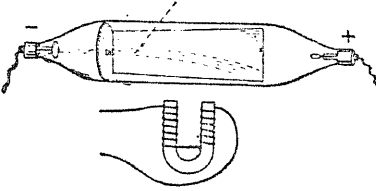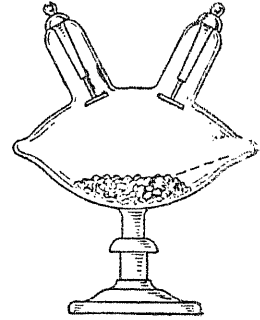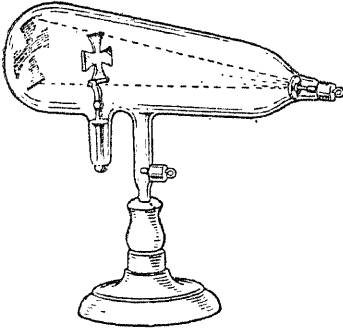
कैथोड-रे ट्यूब

हाइनरिख हेर्त्ज़

रेडार और सर्चलाइट लगभग एक ही ढंग से काम करते हैं। दोनों में फर्क केवल इतना ही होता है कि जहां सर्चलाइट प्रकाश-शक्ति की एक किरण को बाहर फेंकता है, वहां रेडार हाई-फ्रीक्वेंसी रेडियो-एनर्जी को प्रयोग में लाता है। सार्चलाइट की रोशनी जब किसी चीज़ से जाकर टकराती है, तब उस रोशनी का कुछ हिस्सा टकराने के बाद वापस लौट आता है, और उसीके ज़रिये देखनेवाला उस वस्तु को देख पाता है। यही कुछ रेडार के साथ होता है : रेडार किरण जब किसी वस्तु से टकराती है, तो उस किरण का कुछ हिस्सा लौटकर वापस रेडार-रिसीवर को ही आ जाता है, जिसके द्वारा रिसीवर अब उस वस्तु को 'देख' सकता है।

रेडार का प्रयोग नज़दीक आते हवाई जहाज़ को पहचानने के लिए, तूफानों-झंझाओं की गतिविधि का अनुसरण करने के लिए और समुद्रयात्रा तथा आकाश-यात्रा में जहाज़ों के दिशा-निर्देश के लिए भी किया जाता है। किसी वस्तु की दूरी पृथ्वी से कितनी है, यह भी अब रेडार-आल्टीमीटरों के द्वारा सही-सही जाना जा सकता है—इसके लिए अब पुराने बैरोमीटरों की आवश्यकता नहीं रही, ना ही यह जानने की कि जिस पहाड़ के ऊपर हवाई जहाज़ उड़ रहा है, वह भूमि से कितने हज़ार फुट दूर है।

दूसरे विश्व-युद्ध में शत्रु के जहाज़ की गतिविधि समय पर बतलाकर, और अपनी रक्षा के लिए अपने हवाई जहाज़ों का समय पर यथास्थान पहुंचाकर, रेडार ने मित्र-राष्ट्रों की पर्याप्त सहायता की थी।

1940 तक रेडार की खोज को बहुत ही सुरक्षित रखने का प्रबन्ध था, यद्यपि इसके मूल सिद्धान्तों का आविष्कार तब से प्रायः 50 वर्ष पूर्व, 1888 में, हाइनरिख हेर्त्ज़

नेकर लिया था। यही नही, उसके पहले भी इस प्रकार के किसी उपकरण की आवश्यकता वैज्ञानिक बहुत देर से अनुभव कर रहे थे। और हेर्त्श ने सचमुच एक प्रकार का एण्टिना जो टेलीविज़न-ट्रासमिशन और रिसेप्शन मे प्रयुक्त होता है, बहुत पहले बना भी लिया था। आज कृतज्ञतापूर्वक हम उस एण्टिना को हेर्त्श-डाइपोल कहते भी है।

हेर्त्श का जन्म जर्मनी के उत्तर-समुद्री बन्दरगाह हेम्बुर्ग मे 22 फरवरी, 1857 को हुआ था। परिवार समृद्ध एव प्रतिष्ठित था। हाइनरिख के लिए वास्तु-शिल्प तथा इजीनियरिंग पढाने की व्यवस्था की गई, किन्तु बहुत जल्दी ही घरवालो को पता चल गया कि बालक की अपनी अभिरुचि शुद्ध विज्ञान तथा अनुसधान की ओर है। उन दिनो हर्मान वान हैल्महोल्त्श बर्लिन विश्वविद्यालय मे भौतिकी का प्रोफेसर था। यही विज्ञान के अध्ययन के लिए हेर्त्श पहुचा। भौतिकी के अतिरिक्त हैल्महोल्त्श शरीरक्रिया विज्ञान, शरीर-रचना विज्ञान तथा गणित का प्रोफेसर भी समय-समय पर रह चुका था। उसकी बहुमुखी प्रतिभा का प्रमाण विभिन्न क्षेत्रो मे उसके किए गए प्रामाणिक अनुसधान है—शिराओ के स्पन्दन की गति को उसने मापकर रख दिया, ध्वनि के अभ्याघातो का तथा तरगिमा का विश्लेषण, सगीत मे स्वर-सगति का एक नया सिद्धान्त, जिसका आधार उसके निजी भौतिक पर्यवेक्षण थे। इसी प्रकार उसने शक्ति की अनश्वरता के नियम का एक नूतन प्रतिपादन किया,दृष्टि मे वर्ण-विभ्रम का कारण खोजा और ऑप्थेल्मोस्कोप का आविष्कार किया जिसका प्रयोग नेत्र-विशेषज्ञ नेत्र-दोषो की परीक्षा मे आज तक वैसे ही करते आ रहे है।

हेर्त्श को जहा आचार्य हैल्महोल्त्श के सम्पर्क से पर्याप्त लाभ हुआ, वहा हैल्महोल्त्श ने भी अनुभव किया कि एक असाधारण विद्यार्थी उसके सपर्क मे आ गया है।1880 मे स्नातक होते ही हेर्त्श, हैल्महोल्त्श के यहा ही, भौतिकी मे एक सहायक रूप मे नियुक्त हो गया।

1883 मे हेर्त्श की नियुक्ति भौतिकी के प्राध्यापक के रूप मे कील मे हो गई, और वही पहुचकर मैक्सवेल की विद्युत्-चुम्बकीय स्थापना के सम्बन्ध मे उसने अपनी गवेषणाए आरम्भ की। आधुनिक समीक्षाओ मे युगान्तर ला देनेवाले इस निबन्ध का प्रकाशन 1865 मे हुआ था, जिसके परिणामस्वरूप हेर्त्श को प्रतिष्ठा तो मिली ही, साथ ही उसके जीवन का ध्येय भी विनिश्चित हो गया मैक्सवेल की सूत्र-रूप कल्पना का कुछ परीक्षणात्मक सबूत क्या नही दिया जा सकता कि—विद्युत् तथा चुम्बक-शक्ति की प्रकृति भी प्रकाश की तरगो की तरह ही होती है और कि उसे भी, प्रकाश ही की तरह, सचारित किया जा सकता है। हेर्त्श अपनी इन परीक्षण-मालाओ मे जुट गया। तब तक वह कार्ल्सरूहे पॉलि-टेक्निक मे भौतिकी का प्रोफेसर लग चुका था। युगान्तर का आरम्भ एक रेडियो-ट्रासमीटर और एक रेडियो रिसीवर के आविष्कार के साथ हुआ। इससे पहले ये उपकरण कही सुनने मे भी न आए थे। किन्तु यही हमारे आधुनिक रेडियो, टेलीविज़न, और रेडार के निर्माण की आधारशिला है।

पहले-पहल जो समस्याए हेर्त्श ने समाधान के लिए अपने हाथ मे ली, उनमे एक यह थी कि विद्युत् और चुम्बकशक्ति की तरगो को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुचने के लिए कुछ समय लगता है (और सचमुच लगता भी है), किन्तु उसकी गणना की कैसे जाए ? आज हम जानते हैं कि ये तरगें 30,0 0,00,000 मीटर प्रति सेकण्ड की अविश्व-

सनीय तीव्रता के साथ चलती है। परीक्षणकर्ताओ ने इस प्रकार की एक तरग के विकिरण एव आदान के बीच के अन्तराल को मापने की कोशिश की भी, किन्तु यदि वह कमरा, जिसमे यह परीक्षण हो रहा हो, केवल 10 मीटर या लगभग 33 फुट लम्बा ही हो, तो उसकी लम्बाई को तय करने मे हमारी तरग को सेकण्ड का केवल तीस-करोडवा हिस्सा ही लगेगा बस। क्या इतनी सूक्ष्म गणना कभी सभव हो सकती है ? मनुष्य की बुद्धि तो यह सोचकर ही चकरा जाएगी।

हेर्त्श को सूझा कि लीडन जार मे विद्युत् के डिस्चार्ज को प्रस्तुत प्रश्न के समाधान के लिए प्रयोग मे लाया जा सकता है। लीडन जार मे जो डिस्चार्ज होता है वह एक पेण्डुलम की गतागति की तरह ही बडी तेज़ी के साथ दो बिन्दुओ के बीच चलता रहता है—धीरे-धीरे ही उसकी यह गति विरत हुआ करती है किन्तु डिस्चार्ज की गतागति मे भी पेण्डुलम की गतागति की भाति सदा वही समय लगता है। "क्यो न लीडन जार के अन्दर हो रहे (एक ही) वैद्युत उत्थान-पतन को एक काल-गणक उपकरण की तरह उपयोग मे लाया जाए ?" लेकिन इस एक उत्थान-पतन मे भी कितना ज्यादा वक्त लग जाता था—सेकण्ड का दस-लाखवा हिस्सा ! और इतने समय मे तो 'तरग' 1,000 फ़ुट तय कर जाएगी। अब इन तरगो को इतनी दूर भेजने की भी तो कुछ व्यवस्था होनी चाहिए। आजकल एक सशक्त सिग्नल को उत्पन्न करने के लिए एम्प्लिफाइग ट्यूब्स इस्तेमाल मे लाई जाती है, किन्तु हेर्त्श के पास वे तब नही थी।

हेर्त्श ने पता किया कि कोई भी कण्डक्टर एक डिस्चार्ज पैदा कर सकता है, लीडन जार का होना जरूरी नही है। किसी कण्डक्टर से उत्पन्न डिस्चार्ज मे एक करोड और दस करोड़ साइकल प्रति सेकण्ड के उत्थान-पतन सभव हो आते हैं। (आधुनिक इलेक्ट्रॉनिक्स मे यही गति 100 मेगासाइकल तथा एक किलो-मेगासाइकल प्रति सेकण्ड की गति कहलाएगी। अर्थात् विद्युत्-तरग के एक ही उत्थान-पतन मे माइक्रो-सेकण्ड के एक-सौवें और एक-हज़ारवें हिस्से के बीच समय लगता है। (एक माइक्रो-सेकण्ड सेकण्ड का एक-लाखवा हिस्सा हुआ करता है।) हेर्त्श आधुनिक रेडार तथा सूक्ष्म-तरग सचरण मे प्रयुक्त हाई-फ्रीक्वेन्सियो के क्षेत्र मे खोज कर रहा था।

हेर्त्श ने इसके लिए एक इण्डिकेटर का आविष्कार किया कि सिग्नलो का आदान तो पहले कुछ सभव हो। और उसे स्पष्ट था कि यह तो बडी आसानी के साथ किया जा सकता है। जिस जगह हमे विद्युत् अथवा चुम्बक-शक्ति की परीक्षा अभीष्ट हो, एक सीधे तार को बीच मे रखकर एक स्पार्क-गैप द्वारा उसे 'व्यवच्छिन्न' कर दिया जाए। तीव्रता के साथ अदल बदल रही कण्डक्टर की विद्युत् 'अन्तराल' मे एक चिनगारी पैदा कर देगी। हेर्त्श के परीक्षण मे यह स्फुलिंग-अन्तराल बहुत ही छोटा था—इस पृष्ठ की मोटाई से कुछ अधिक नही। किन्तु हैरानी तो यही है कि हेर्त्श ने इस नन्ही चिनगारी को भी प्रत्यक्ष देखने मे सफलता प्राप्त की कमरे को बिलकुल अधेरा करके और देखनेवाले को उसी अधेरे का आदी बनाकर।

हेर्त्श ने यह तो कर दिखाया कि तरगो का विकिरण भी सभव है, आदान भी, किन्तु—यह किस तरह सिद्ध किया जाए कि उनके सचरण मे समय भी लगता है ? इसके

लिए उसने ध्वनि के सिद्धान्त का तथा हेल्महोल्त्श की गवेषणाओ का सूक्ष्म अध्ययन किया तरगो मे परस्पर अवरोध की स्थापना के अनुसार एक ही स्रोत से दो भिन्न मार्गो द्वारा एक ही लक्ष्य पर पहुचती हुई दो तरगे या तो दुर्बल पड जाएगी, या पहले से भी अधिक प्रबल हो जाएगी। ज्यो-ज्यो रिसीवर को एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर ले जाया जाता है, तरग के आदान की स्थितियो मे 'शान्त-अवस्थाओ' का प्रत्यक्ष भी होता है, और दो शान्त-बिन्दुओ के बीच का अन्तर एक तरग की लम्बाई के आधे के समान होता है।

इस प्रकार हेर्त्श ने अपने माइक्रो-वेव ट्रान्समिटर तथा रिसीवर को, और एक और रिफ्लैक्टर को यथावस्थित करके अब रिसीवर को परे हटाना शुरू किया। कुछ ऐसे सचमुच क्षेत्रो की परम्परा-सी स्थापित हो गई जहा एक भी सिगनल ग्रहण नही हो सकता था। इस प्रकार उसने तरग की लबाई को माप लिया। तरग के उत्थान-पतन की फ्रीक्वेसी उसे पहले ही मालूम थी, अत अब किसी और सामग्री की आवश्यकता नही रह गई थी। फ्रीक्वेसी, अथवा आवृत्ति को तरग के आयाम से गुणा करे तो गुणनफल तरग की गति को द्योतित करेगा। और इन विद्युत्-चुम्बकीय तरगो की गति इन परीक्षणो से वही निकली, जोकि प्रकाश की गति हुआ करती है 30,00,00,000 मीटर प्रति सेकण्ड।

यह परीक्षण समाप्त करके हेर्त्श चुप नही बैठ गया। अभी तक इन तरगो की
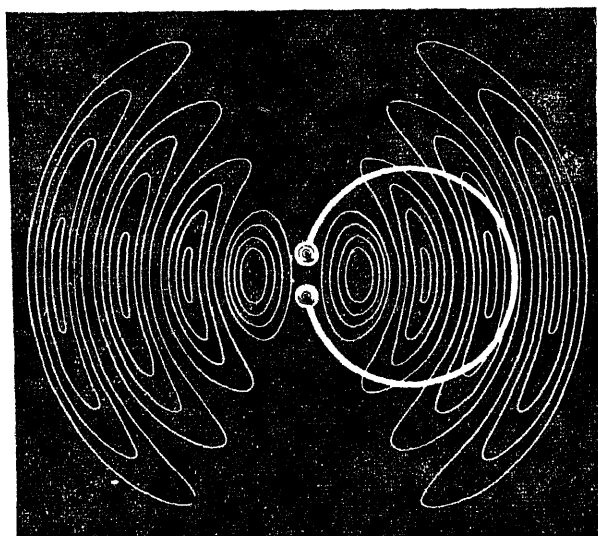
विद्युत्-चुम्बकीय तरगें। हेर्त्श ने प्रत्यक्ष किया कि कुछ इस प्रकार की तरगें एक विद्युत् स्फुलिग के गिर्द उत्पन्न हो जाती है। स्फुलिग अथवा चिनगारी का उद्भव रेजोनेटर नाम के छल्ले में दीख रहे अन्तराल में होता है।

प्रकृति के विषय मे बहुत कुछ जानना बाकी था। उसने अपने ट्रासमीटर और रिसीवर मे रिफ्लेक्टर या नतोदर दर्पण जोड दिए और देखा कि विद्युत् तथा चुम्बक की इन तरगो को भी, प्रकाश की तरगो की भाति ही, कही भी केन्द्रित किया जा सकता है। इन्ही रिफ्लेक्टरो को जब एक ओर सेट कर दिया गया, और उनपर तरगो को फेंककर देखा गया, तो पता लगा कि लेन्सो के द्वारा भी इन्हे फोकस किया जा सकता है। हेर्त्श ने देखा कि तरगे ध्रुवित हो गई हैं। आप ध्यान से देखें कि टेलीविजन का एण्टिना दिगन्त-सम दिशा मे अवलम्बित है, शीर्ष-दिशा मे वह उतना सही काम नही करेगा। अर्थात् विद्युत् तथा चुम्बक की तरगे भी सभी कुछ वही कर सकती है जो कि प्रकाश की तरग करती है। मैक्सवेल की स्थापना का बहुत-कुछ, इस प्रकार मूर्तरूप प्रमाणित हो गया।

हेर्त्स के परीक्षणो मे अद्भुत निपुणता अपेक्षित थी, और उनका महत्त्व भी कितना था। किन्तु इन्ही गवेषणाओ के सम्बन्ध मे हेर्त्श के अपने शब्द है कि "मैक्सवेल की स्थापना की ही विजय इनसे सिद्ध होती है।" अपनी ही सफलताओ को किस नम्रता के साथ तिरोहित कर दिया।

1889 मे इन परीक्षणो तथा गवेषणाओ पर हाइडेलबर्ग मे जर्मन 'एसोसिएशन फॉर द एड्वान्समेट ऑफ नेचरल साइन्स' की मीटिंग मे खुलकर विचारो का आदान-सम्प्रदान हुआ, और हेर्त्श को बॉन विश्वविद्यालय मे भौतिकी का प्रोफेसर नियुक्त कर दिया गया। अभी वह 32 वर्ष का ही कच्ची उम्र का एक छोकरा था।

विज्ञान ने उसके नाम को अमर करने की कोशिश की 'साइकल प्रति सेकण्ड' को 'हेर्त्श' का नाम देते हुए। जर्मनी मे तो आज भी इसीको प्रयोग मे लाया जाता है किन्तु अन्यत्र यह इतना लोकप्रिय नही हो सका। खैर, अगली बार जब भी पाठक की नज़र अपने टेलीविजन सेट पर पडे तो उसे स्मरण हो आएगा कि उसके एण्टिना को दिगन्त-सम दिशा सर्वप्रथम हेर्त्श ने दी थी। टी—वी के परदे पर जब नाचता-कूदता 'भूत' उतरता है तो यह भ्रान्ति भी एक प्रत्यावर्तित तरग के परदे पर देरी से पहुचने के परिणामस्वरूप ही उत्पन्न होती है—और यह भी हेर्त्श ने सर्वप्रथम सिद्ध कर दिखाया था कि विद्युत्-चुम्बकीय तरग को रास्ता तय करने मे कुछ समय लगा करता है।

1894 मे हेर्त्श की मृत्यु हुई। तब उसकी आयु केवल 37 थी। अगर वह ज़िन्दा रहता, क्या-कुछ और कर जाता—इसकी तो अब केवल कल्पना ही की जा सकती है। किन्तु विज्ञान मे उसका स्थान स्थायी है। हमारे घरो मे रेडियो उसीका प्रसाद है।

मैक्स प्लैंक

पाठक ने सचमुच 'जादू से' खुलने वाले दरवाज़े कहीं न कहीं देखे होंगे। ज़रा ध्यान से देखिए दरवाज़े की सिल पर वह प्रकाश की एक किरण फैली हुई है। इस किरण के रास्ते में कोई रुकावट आ पड़े तो एक 'मोटर' चालू हो जाती है और दरवाज़ा खुल जाता है। 'इलेक्ट्रिक आई', अथवा विद्युत्-नेत्र के अन्यान्य प्रयोगों में एक यह भी है। विद्युत्-नेत्र में तथा टेलीविज़न कैमरे में एक बहुत ही अद्भुत तथा महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त का प्रयोग होता है, जिसका नाम है फोटो-इलेक्ट्रिसिटी। प्रकाश जब धातु के किसी टुकड़े पर पड़ता है तो इलेक्ट्रॉन फूट निकलते हैं, अर्थात् प्रकाश द्वारा विद्युत् की उत्पत्ति : फोटो-इलेक्ट्रिसिटी, प्रकाशीय-विद्युत्।

फोटो-इलेक्ट्रिसिटी के आविष्कार से वैज्ञानिक-जगत् में कुछ-न-कुछ विप्लव आना ही था, क्योंकि इससे एक पुराना प्रश्न फिर से नया हो आया जिसका समाधान, अब तक प्रतीत होता था, मैक्सवेल और हेर्त्ज़ कभी का कर जा चुके हैं। इन दोनों वैज्ञानिकों का विचार था कि प्रकाश भी प्रकृत्या विद्युत्-चुम्बकीय तरंगों के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता, क्योंकि प्रकाश के सभी नियम प्रायः वही थे जो कि इन तरंगों में प्रत्यक्षित होते हैं। 1879 में हाइनरिख हेर्त्ज़ ने घोषणा भी यही की थी कि प्रकाश का यह तरंग सिद्धान्त, "जहां तक हम मनुष्यों का इससे सम्बन्ध है अब एक अप्रत्याख्येय सत्य के रूप में ही मान लिया जाना चाहिए।" और, यह सत्य सर्वविदित था भी, किन्तु क्या यह सचमुच एक 'सत्य' था ?

अभी 11 वर्ष ही बीते होंगे कि मैक्स प्लैंक ने एक नया विचार प्रकाश की प्रकृति के सम्बन्ध में यह रखा कि वह शक्ति के कणों का एक झुरमुट है। दो सौ वर्ष पहले न्यूटन ने भी कहा था कि प्रकाश एक कण-पुंज के अतिरिक्त और कुछ नहीं। विज्ञान न्यूटन के

सिद्धान्त को प्राय भुला चुका था। अब प्रोफेसर प्लैंक ने आकर कुछ गणनाए की जिनसे स्पष्ट था कि शक्ति सचमुच 'अणुओ' मे अवतरित होती है। यह ठीक है कि ये अणु, बहुत छोटे-छोटे होते हैं, किन्तु इससे उनकी अणुता तो नही जा सकती। विज्ञान मे उनकी परिभाषा है—फोटोन, 'प्रकाशिका'। प्लैंक का इसको दिया हुआ नाम है—क्वाटा (पुज)। क्वाण्टम सिद्धान्त का प्रतिपादन प्लैंक ने अकेले ही किया था, और उसके सिद्धान्त का भौतिकी की वर्तमान गतिविधि मे महत्त्व भी बहुत अधिक है।

मैक्स प्लैंक का जन्म बाल्टिक समुद्र तट पर स्थित कील बन्दरगाह मे 23 अप्रैल, 1858 को हुआ था। माता-पिता दोनो जर्मन थे, और कील पर उन दिनो डेनमार्क का कब्जा था। 1947 मे जर्मनी मे ही उसकी मृत्यु हुई और उसके जीवन के अन्तिम वर्षों मे व्यक्तिगत कटुता एव व्यथा बहुत अधिक भर आई थी। प्लैंक का पिता एक विश्वविद्यालय का प्रोफेसर था, और 'न्याय-विधान' का विशेषज्ञ था। परिवार सुशिक्षित था और सभी सदस्यो ने अपने-अपने क्षेत्र मे प्रतिष्ठा अर्जित की हुई थी—इनमे हाईकोर्ट के जज भी थे, सार्वजनिक कार्यों के अधिकारी भी थे, और धर्मोपदेशक भी। प्लैंक अभी नौ वर्ष का ही था कि विश्वविद्यालय मे उसके पिता को प्रोफेसरी करने मे सुविधा हो, सारे का सारा परिवार उठकर म्यूनिख आ गया। म्यूनिख मे मैक्स की शिक्षा एक हाईस्कूल, मेक्स-मिलियन जिम्नेजियम मे आरम्भ हुई। यही पर एक विचारशील तथा वैज्ञानिक प्रकृति के भौतिकी-प्राध्यापक के सम्पर्क मे वह आया। और इस सम्पर्क ने उसके जीवन की दिशा भी निर्धारित कर दी। परिवार वालो ने उसे सगीत के अध्ययन के लिए प्रोत्साहित किया। वह पियानो अच्छा बजाता था। जीवन मे काम-धाम से थककर आराम करते समय वह कुछ क्षण सुख के अनुभव करने के लिए पियानो बजा लिया करता था।

म्यूनिख तथा बर्लिन मे स्वाध्याय करते हुए वह प्रसिद्ध भौतिकी-विशारद हेल्म-होल्त्श तथा किर्चहॉफ के सम्पर्क मे आया। पैलेडियम मे से गुजरती हुई हाइड्रोजन किस प्रकार अभिव्याप्त हो जाती है, इस सम्बन्ध मे एक परीक्षण के आधार पर जो एक निबन्ध उसने लिखा, उसीकी बदौलत उसे डॉक्टरेट मिल गई। कहा जाता है कि यही एकमात्र परीक्षण था, जो उसने अपनी लम्बी जिन्दगी मे किया। उसकी वैज्ञानिक रुचि, परीक्षणो मे न होकर, प्रश्नो की समीक्षा मे ही अधिक थी।

प्लैंक को पहचानने मे लोगो को बहुत देर नही लगी। वह बहुत जल्दी ही म्यूनिख मे एक असिस्टेण्ट प्रोफेसर के तौर पर लगकर अब कील विश्वविद्यालय मे भौतिकी का प्रोफेसर बन गया। 1889 मे 31 वर्ष की छोटी उम्र मे ही प्लैंक की नियुक्ति बर्लिन विश्वविद्यालय मे भौतिकी के प्रोफेसर के तौर पर हो गई।

प्लैंक का विषय था थर्मो-डाइनेमिक्स या ताप-विज्ञान। प्रकाश और ताप का परस्पर सम्बन्ध है। यह हम मे कोई भी एक जलते बल्ब को छूकर ही बता सकता है, और ऐसे उच्च तापो को—जिन्हे कि सामान्य थर्मामीटर दर्ज नही कर सकते—मापने का प्रसिद्ध वैज्ञानिक ढग प्रकाश के रगो की तुलना करने का है। एक दहकती भट्टी में आग किस रग से चमकती है, इसकी तुलना किसी ज्ञात मापदण्ड के साथ करके हम बता सकते है कि भट्टी के अन्दर ताप कितना है। इस कार्य मे जो उपकरण उपयोग मे लाया जाता

है, उसका नाम है, ऑप्टिकल पाईरोमीटर। गर्मी का रग सफेद रोशनी के जितना निकट होगा, उसका तापमान उतना ही अधिक होगा। निम्न तापमानो पर ताप का विकिरण इन्फ्रारेड नाम की अदृश्य किरणो मे होता है। 1000° फारनहाइट तापमान पहुचने पर लाल रग दिखाई देने लगता है। 2,500° फारनहाइट पर उसमे अच्छी-खासी चमक आ जाएगी। 5,000° पर विद्युत् के प्रकाश-तन्तु चमक उठते है। अर्थात् प्रकाश तथा ताप, दोनो परस्पर सम्बद्ध है, और दोनो अलग-अलग प्रकार की शक्तिया है। इस प्रकार प्लैक ने अपने ताप-सम्बन्धी अध्ययनो को प्रकाश के क्षेत्र मे भी अवतरित होते देखा।

प्रकाश का विकिरण किस प्रकार से होता है—इस समस्या का समाधान करते हुए प्लैक के सम्मुख एक सैद्धान्तिक मुश्किल उठ खडी हुई। सभी ज्ञात सिद्धान्तो के आधार पर उसने यह गणना करने की कोशिश की कि कितने प्रकाश से कितनी गर्मी पैदा होती है, या कितनी गर्मी से कितना प्रकाश पैदा होता है। और यह तो साफ ही था कि ज़रा-सी गर्मी ही कितनी ज्यादा चमक पैदा कर जाती है। और, यह गर्मी किस चीज़ मे नही होती? प्लैक की गणनाओ के अनुसार हम सबको इस गर्मी से चमक उठना चाहिए, किन्तु होता ऐसा नही है। गणनाओ मे कही गलती नही थी, अर्थात् प्रकाश-विपयक ये पुराने सिद्धान्त कही न कही गलत थे, और प्लैक मे ऐसा कहने का साहस था।

साथ ही उसमे इतनी प्रतिभा भी थी कि एक नई स्थापना भी प्रस्तुत कर सके। उसे सूझा कि यह प्रकाश एक शक्ति-पुज है, क्वाण्टम है। भिन्न-भिन्न पुजो मे यह शक्ति भिन्न-भिन्न अवसरो पर फूट निकलती है। प्रकाश की हाई फ्रीक्वेंसी के शक्ति-स्तर को बढाने के लिए एक बडे परिमाण का शक्ति-पुज अपेक्षित होता है, तो छोटी-छोटी फ्रीक्वे-सियो के स्तर को उठाने के लिए एक छोटा पुज ही पर्याप्त होता है। प्लैक ने क्वाण्टम का यह नया सिद्धान्त 'जर्मन एकेडमी ऑफ साइस' के सम्मुख उपस्थित कर दिया। पाठक को यदि प्रस्तुत स्थापना के समझने मे कुछ मुश्किल पेश आ रही हो, तो उससे उसे हतोत्साह नही होना चाहिए। उन दिनो, 1900 के दिसम्बर महीने मे, कुछ ऐसी ही मुश्किल, प्रति-ष्ठित वैज्ञानिको के सामने भी आई थी। एक काम इस क्वाण्टम सिद्धान्त ने और भी किया और वह यह कि प्रकाश सम्बन्धी पुराने 'कार्पस्कुलर सिद्धान्त को पुन प्रतिष्ठित कर दिया। लेकिन वैज्ञानिक लोग इस बात के लिए तैयार नही थे। तरग-सिद्धान्त से प्राय सभी काम बखूबी चल ही रहे थे।

स्विट्जरलैड मे अपने आपेक्षिकता-वाद सिद्धान्त पर कार्य करते हुए आइन्स्टाइन ने अनुभव किया कि प्रकाश सम्बन्धी प्लैक की इस नई स्थापना द्वारा प्रकाशीय विद्युत् के कुछ रहस्यो का उद्घाटन बडे सुन्दर ढग से हो सकता है। प्रकाश के ये शक्ति-पुज, जब किसी धातु के एक टुकडे पर जाकर टकराते है तो उस धातु से कुछ इलेक्ट्रॉन उछल-उछल-कर बाहर आने लगते है। जितना ही ज्यादा प्रकाश धातु से टकराता है, उतने ही ज्यादा इलेक्ट्रॉन उसमे से निकलकर बाहर आ जाते है। यदि तरग-सिद्धान्त सही हो, तो प्रकाश के बढने से इन इलेक्ट्रॉनो की गति मे ही वृद्धि आनी चाहिए, उनकी सख्या मे नही।

धीरे-धीरे वैज्ञानिको का ध्यान प्लैक की इस नई स्थापना की ओर आकृष्ट होने लगा। मूल गवेषणा के 18 वर्ष पश्चात् विश्व ने भी नोबल पुरस्कार देकर एक प्रकार से

उसके सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया है।

1913 मे आइन्स्टाइन बर्लिन पहुचा। क्वाण्टम के सिद्धान्त की पुष्टि मे आइन्स्टाइन का योग भी कुछ कम नही था। दोनो वैज्ञानिक मिले और मिलते ही परम मित्र बन गए। दोनो की रुचिया भी एक थी—गणित, भौतिकी तथा सगीत। इस प्रकार प्लैक तथा आइन्स्टाइन के सयोग से बर्लिन भौतिकी के अध्ययन के लिए एक विश्व-केन्द्र ही बन गया।

1909 मे, पहली पत्नी के देहान्त पर प्लैक ने फिर से शादी कर ली, और इससे उसके तीन सतान हुई। चार बच्चे उसकी पहली शादी से थे। किन्तु सभी पिता से पहले ही चल बसे। बडे बेटे कार्ल की प्रथम महायुद्ध मे, 1916 मे, मृत्यु हुई थी। उसकी दो यमज पुत्रिया एक ही साल के अन्दर-अन्दर मर गई और दोनो ही प्रसव-पीडा मे मरी।

उन दिनो जर्मनी मे सभी कही नात्सियो का आतक था। प्लैक के मित्र आइन्स्टाइन और श्रोडिंगर को जर्मनी छोडने के लिए मजबूर कर दिया गया। प्लैक स्वय हिटलर की पराजयो मे एक है कितनी ही बार नात्सी पार्टी ने उसके सम्मुख अपना घोषणापत्र रखा, किन्तु प्लैक ने हर बार उसकी शपथ पर हस्ताक्षर करने से इकार कर दिया। रगो मे प्रशियन खून, और प्राकृतिक स्वाभिमान—वह हिटलर, गोबेल्स और उनके साथियो की पशुता को भला कैसे स्वीकार कर सकता था। 1944 मे ये ही नात्सी 86 वर्ष के इस बूढे वैज्ञानिक के पास पहुचे—इस बार एक बन्धक साथ मे लिए हुए कि यदि प्लैक उनके प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर कर दे, तो हिटलर के प्रति किए गए उसके पुत्र के देशद्रोह को क्षमा किया जा सकता है। प्लैक ने साफ मना कर दिया और उसकी उस एकमात्र जीवित सतान, एर्विन प्लैक, को गोली से उडा दिया गया। इस धक्के के पश्चात् अब उसका घर और उसका पुस्तकालय भी जर्मनी की बमबारी मे बच रहता है या नही बच रहता, इस सबसे उसे क्या फर्क पडता था ?

युद्ध के पश्चात् नये जर्मनी ने मैक्स प्लैक के जन्म की 'नवति' मानने के लिए एक विशाल समारोह की आयोजना की, किन्तु विधि को यह स्वीकार न था। नब्बे वर्ष का होने से कुछ ही मास पूर्व, 4 अक्तूबर 1947 को, प्लैक की मृत्यु हो गई। किन्तु महान वैज्ञानिक की स्मृति मे कैसर विल्हेम एकेडमी का नया नामकरण 'मैक्स प्लैक एकेडमी' कर दिया गया, और जर्मनी मे विज्ञान-सम्बन्धी श्रेष्ठ पुरस्कार भी 'मैक्स प्लैक मेडल' ही निश्चित कर दिया गया।

प्लैक की विज्ञान को देन क्या है ? प्रसिद्ध डच वैज्ञानिक हेण्ड्रिक ए० लॉरेन्त्स ने कभी कहा था "आज हम इतना आगे बढ आए है कि प्लैक के 'कान्स्टेण्ट' मे हमारे लिए न केवल तापादि के विकिरण-बाहुल्य की व्यवस्था का भौतिक आधार ही सनिविष्ट है अपितु शक्ति-तरगिमा की 'पराकाष्ठा' की व्याख्या भी तो अन्यथा असभव है और, इस सबके अतिरिक्त—स्थूल तत्त्वो के आपेक्षिक ताप, प्रकाश के फोटो-कैमिकल प्रभाव, अणु के अन्दर इलेक्ट्रॉनो के वृत्त, स्पेक्ट्रम की व्याहृतियो की तरगिमाए, किसी ज्ञात गति के इलेक्ट्रॉनो के अभ्याक्रम द्वारा उत्पन्न रोन्तजेन किरणो की फ्रीक्वेन्सी, गैस के कणो की सभव परिक्रमा-गति, स्फटिक-निर्माण मे दो कणो के बीच के अन्तराल 'इत्यादि क्षेत्रो

मे सक्रिय विशिष्ट सम्बन्धो की व्याख्या के लिए भी तो हमारे पास और आधार ही क्या है ?"

अर्थात् प्लैक का एक नियम अणु-सम्बन्धी आधुनिक सारी 'कण-भौतिकी' की—पार्टिकल फीजिक्स की—आधारभूमि है।
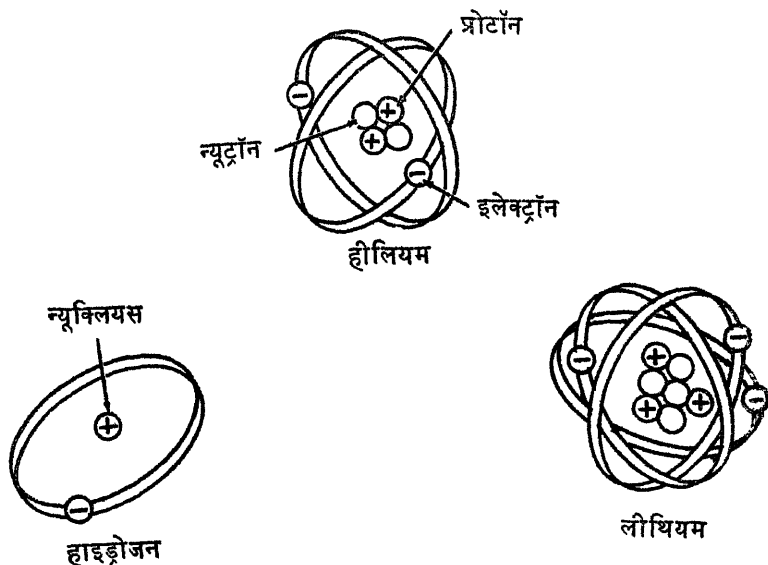
तीन सरलतम अणुओं के रेखाचित्र। न्यूक्लिअस में पडे प्रोटॉन संख्या में उतने ही होते है जितने इलेक्ट्रॉन उसके गिर्द परिक्रमा कर रहे होते है। न्यूट्रॉन अणु का भार तो बढाते है, किन्तु विद्युत् की दृष्टि से सर्वथा आवेशशून्य होते है।

मेरी क्यूरी

"मैंने निश्चय कर लिया है कि इस घृणित दुनिया से अब विदा ले लूं। मेरे यहां से उठ जाने से किसीको भी कुछ बड़ा नुकसान नहीं होगा।"—प्रेम में ताज़ा-ताज़ा धोखा खाई हुई एक सत्रह साल की लड़की ने अपनी चचेरी बहिन को पत्र में लिखा। किन्तु, विज्ञान के सौभाग्य से, नवयुवती अपनी उस प्रेमव्यथा को भूल गई और इतिहास के महान वैज्ञानिकों में अपना नाम अमर कर गई।

मानिया स्क्लोडोव्स्का का जन्म पोलैण्ड के वारसा शहर में 7 नवम्बर, 1867 को हुआ था। माता-पिता पोलैण्ड के एक कृषक परिवार से थे किन्तु खेतीबारी छोड़, अब शिक्षा के क्षेत्र में आ गए थे। पिता वारसा के हाई स्कूल में भौतिकी तथा गणित का एक अध्यापक था, और मां एक पियानो की मानी हुई वादिका थी। छोटी उम्र में ही मानिया को दुर्भाग्य और दु:ख ने आ घेरा था : दस साल की उम्र में मां का साया सर से उठ गया, उसे तपेदिक हो गया था।

पोलैण्ड उन दिनों रूस के ज़ार के अधीन था। पेट्रोग्राड की सरकार ने पोलैण्ड के लोगों पर कुछ प्रतिबन्ध लगा रखे थे, क्योंकि उन्होंने क्रान्ति की कोशिशें की थीं। मानिया के पिता ने पोलैण्ड की स्वतन्त्रता का खुलकर समर्थन किया था। परिणाम यह हुआ कि स्कूल से उसकी नौकरी जाती रही। किन्तु अब भी चार बच्चे उसके ज़िन्दा थे, एक टाइफस का शिकार होकर मर चुका था। उनके पालन-पोषण के लिए उसने एक बोर्डिंग स्कूल खोल लिया। इस प्रयास में उसे बहुत सफलता तो नहीं मिली, किन्तु परिवार का गुज़र जैसे-तैसे अब चलने लग गया।

1883 में स्कूल की पढ़ाई खत्म करने पर मानिया को एक स्वर्ण पदक मिला।

स्क्लोडोव्स्का परिवार में पारितोषिक-विजय की यह एक आदत-सी ही पड़ चुकी थी। यह तीसरा मेडल घर में आया था। आर्थिक दृष्टि से तो प्रोफेसर स्क्लोडोव्स्का एक असफल व्यक्ति था, किन्तु अपने पुत्रों-पुत्रियों की बौद्धिक सफलताओं पर उसे अभिमान था। हाईस्कूल से फारिग होने पर मानिया को कुछ वक्त के लिए गांव भेज दिया गया। बाप को डर था कहीं शहर में रहते-रहते इसे भी दिक न लग जाए। संभवतः इन छुट्टियों ने मानिया के स्वास्थ्य को बेहतर किया भी क्योंकि पोलैण्ड के गांवों में जो लोकनृत्य प्रचलित हैं उनके लिए कुछ दम जरूरी होता है—स्टैमिना ज़रूरी होता है। सूर्यास्त पर नाच शुरू होता है और सारी रात, सारा दिन, और अगली रात भी चलता रहता है—और मानिया को नाचना पसन्द था।

छुट्टियां खत्म होने पर मानिया वारसा लौट आई। उसके भविष्य के बारे में मन्त्रणा हुई। किन्तु, बगैर पैसों के पेरिस में सोर्बोन में पढ़ने कैसे जाया जाए? दोनों बहनों में सलाह-मशवरा हुआ और आखिर बड़ी बहिन ने ही राह निकाली कि अभी मानिया कुछ नौकरी कर ले और विश्वविद्यालय की पढ़ाई में ब्रोनिया की सहायता करे, उसके बाद ब्रोनिया नौकरी करेगी और मानिया की मदद करेगी। और इस तरह गुज़ारा चल जाएगा।

मानिया ने एक रूसी जागीरदार के घर में एक गवर्नेस तथा अध्यापिका की नौकरी कर ली। लेकिन यह भी बहुत देर नहीं चल सका क्योंकि मानिया की मालकिन एक फूहड़ और असहनशील औरत थी। खैर, सौभाग्य से मानिया को एक और जगह काम मिल गया जहां कुछ सभ्यता और बुद्धिमत्ता थी। घर का बड़ा लड़का वारसा विश्व-विद्यालय में पढ़ रहा था। छुट्टियों में जब वह घर पहुंचा, घर की इस नौजवान गवर्नेस पर मुग्ध हो गया—परियों की तरह नाचनेवाली और पढ़े-लिखों की तरह बातचीत करने-वाली एक स्वप्नबाला! मानिया की ज़िन्दगी में भी अकेलापन आ चुका था, वह भी उससे प्रेम करने लगी। लेकिन लड़के की मां ने शादी नहीं होने दी: "मेरे लड़के, और गवर्नेसों के साथ शादी करने लगें।" उन्हीं दिनों मानिया ने अपनी निराशा को अभिव्यक्त करते हुए वह खत लिखा था जिसके ज़िक्र के साथ हम उसकी जीवनी में उतरे थे।

अस्तु, मानिया पढ़ाने का काम भी करती रही और सोर्बोन में अपनी बहिन को बाकायदा पैसे भी भेजती रही। अब मानिया की बारी थी। बड़ी बहिन अब एक डाक्टर बन चुकी थी और पेरिस में ही एक सहपाठी डाक्टर के साथ शादी भी कर चुकी थी।

23 बरस की होते-होते अब उसके पुराने स्वप्न के साकार होने का समय आ गया था। मेरी—अपने नाम का अक्षरविन्यास भी फ्रेंच के अनुसार करते हुए—सोर्बोन के विज्ञान-विभाग में प्रविष्ट हो गई। चार साल अविश्रान्त अध्ययन, अविश्रान्त अध्यवसाय। समझ नहीं आता यहां उसे कोई बीमारी लग कैसे नहीं गई?—एक बरसाती में रहना, जहां कमरे को गरम करने का कुछ प्रबन्ध नहीं, और खाने के लिए भी रकम इतनी कम कि उससे खरीदा भी क्या-क्या जाए? बस—डबलरोटी, मक्खन और चाय पर गुज़ारा करो। एक बार तो उसे सारा दिन कुछ-एक चेरी और गाजरों पर ही गुज़ारा करना पड़ा। मांस और अण्डे तो शायद ही कभी उसके भोजन में शामिल हुए हों।

लेकिन वह बच ही निकली—और गणित और कविता, रसायन और संगीत,

भौतिकी और गृह-विज्ञान सभी कुछ पढ गई। बीच-बीच मे उसे रसायन-प्रयोगशाला मे बोतले भी धोनी पडती। परीक्षा-परिणाम मे वह भौतिकी मे एम० ए० मे प्रथम रही और अगले साल गणित की एम० ए० मे द्वितीय। अब मेरी 27 वर्ष की हो चुकी थी, और वह पहले घर की दुखद स्मृति अभी उसके दिल से गई नही थी, किन्तु सुन्दरता, शुभ्रवर्ण तथा शरीर के हलके-फुलकेपन के बावजूद वह एकान्तप्रिय ही चली आई थी।

22 वर्ष के पियर क्यूरी ने कभी लिखा था "औरतो मे प्रतिभा पहले तो होती नही, और, खास तौर पर एक विज्ञानप्रेमी के लिए तो ये, बस, एक अडचन ही बन सकती हैं।" और अब वही पियर 35 का हो चला था, और जीवन के अनुभव ने उसके इस विचार को समर्थित ही किया था, क्षीण नही। इन दिनो वह विद्युत् तथा चुम्बक के क्षेत्र मे कुछ परीक्षण कर रहा था। ये अनुसन्धान उसके, अपने भाई जैक्वीज के साथ, प्रोफेसर पाल शुत्सेनबेर्गेर की परीक्षणशाला मे, चल रहे थे। 16 साल की उम्र मे बी० एस-सी० करके, पियर ने 18 साल की उम्र मे फीजिक्स मे एम० एस-सी० भी कर ली थी। विज्ञान के अग्रणियो मे उसकी गिनती होने लगी थी—पीजो-इलेक्ट्रिसिटी का आविष्कार भी वह कर चुका था। रिकार्ड बजाने मे जो पिक-अप इस्तेमाल होता है उसमे पीजो-इलेक्ट्रिसिटी का प्रसग उठता है। यह पिक-अप एक स्फटिक का बना होता है और, जब स्फटिक का निपीडन होता है, उसमे से कुछ बिजली निकलने लगती है।

पियर और मेरी का प्रथम मिलन प्रोफेसर कोवाल्स्की के घर मे हुआ था। कोवाल्स्की एक पोलिश वैज्ञानिक था और उन दिनो पेरिस आया हुआ था। बातचीत चली भी विज्ञान पर, और पियर ने मेरी से फिर मिलने को कहा। क्या फिर वही—विज्ञान पर ही—बाते होगी? मेरी ने शुत्सेनबेर्गेर के यहा काम करने की इजाजत ले ली—और पियर के साथ की ही टेबल पर। एक साल बाद मानिया स्क्लोडोव्स्का—मेरी क्यूरी थी।

पियर ने लिखा था "औरतो मे प्रतिभा नही होती।" किन्तु अब उसे वह असाधारण औरत मिल गई थी—उसकी पत्नी एक 'जीनियस' थी। और मेरी अपने पति के साथ ही, अगली मेज पर, बिजली और चुम्बक-शक्ति के सम्बन्ध मे उठी समस्याओ पर अनुसन्धान करती रही।

जर्मनी में विल्हेम रोन्तजेन ने एक अद्भुत किरण का आविष्कार कर लिया जिसमे 'अन्त प्रवेश' की अद्भुत क्षमता थी। 1896 में रोन्तजेन ने यह खोज, अपनी, विज्ञान-जगत् के सम्मुख रख दी। वह इन्हे एक्स-रे कहा करता था, और उसने प्रत्यक्ष कर दिखाया कि स्थूल वस्तुओ मे वे कितनी अन्दर तक जा सकती है। फ्रास मे हेनरी बैकेरेल उन्ही दिनो फॉस्फोरेस्सेन्स के प्रश्न पर खोज कर रहा था कि किस प्रकार कुछ वस्तुए सूर्य के प्रकाश मे पडी रहने के बाद अधेरे में रखी जाने पर खुद-ब-खुद चमकने लगती हैं। कुछ परीक्षण करके वह इस परिणाम पर पहुचा कि यूरेनियम की कच्ची धात पिचब्लैंड में यूरेनियम के अतिरिक्त कुछ और तत्त्व भी होना चाहिए।

प्रोफेसर बैकेरेल पर पहले ही मेरी क्यूरी के प्रयोग-विज्ञान का बहुत प्रभाव था। अब वह अपनी समस्या को सर्वप्रथम लाया भी मेरी के सामने ही। मेरी और पियर ने प्रश्न

पर मिलकर विचार किया। "यह तत्त्व रसायन के ज्ञात तत्त्वो में तो नही है," कुछ और ही होना चाहिए। क्यूरी-दम्पती ने अपना सारा और काम ठप कर दिया "आखिर यह हो क्या चीज सकती है ?"

पिचब्लैंड—एक तो महगा, और फिर ऑस्ट्रिया के सिवाय कही और मिले भी नही। कैसे हथियाया जाए कुछ, और बगैर पैसो के ? उनकी दलील थी कि अगर पिचब्लैंड मे यह नया अज्ञात तत्त्व है तो यूरेनियम उसमे से छन चुकने के बाद भी तो, वह उसमे बचा रहना चाहिए। और ऑस्ट्रिया की सरकार इस वैज्ञानिक दम्पती को पिचब्लैण्ड की यह बचीखुची गन्द देने को तैयार हो गई अगर वे उसे उठाने का खर्च खुद बरदाश्त कर सके।

पिचब्लैण्ड की टनो गन्द जहाजो मे भर-भरकर एक लकडी के शैड मे पहुचने लगी। शैड क्या था—चूती छते, लेकिन यही अब उनकी प्रयोगशाला होगी। और यहा अव विज्ञान के इतिहास मे वह परीक्षण शुरू हुआ जिसका वर्णन सुनकर ही कितने वैज्ञानिको का हौमला टूट जाए। कमरतोड मेहनत। पियर और क्यूरी ने पिचब्लैण्ड का सशोधन शुरू कर दिया—लोहे की एक बडी भट्टी पर बडे-बडे कडाहो मे उबाल-उबालकर। धुए को बरदाश्त करना जब मुश्किल हो जाता, परीक्षण शैड के पिछवाड़े मे परीक्षण जारी रहते। 1896 की सर्दियो मे यही कुछ दोनो नवविवाहितो की गृहस्थी थी। मेरी को निमोनिया हो गया। पियर अब अकेला ही गन्द को दिन-रात उबालता रहा। मेरी तीन महीने बाद ही इन केतलियो और पतीलो की ओर फिर आ सकी।

1897 के सितम्बर मे मेरी को बिस्तर ने फिर धर दबाया। वह—आइरीन की—मा होने चली थी। एक सप्ताह बाद वह लौट आई—बिस्तर मे लेटे-लेटे उसे कुछ सूझा था, उसीकी परीक्षा करने वह इतनी जल्दी प्रयोगशाला वापस आ गई थी। अब लगता बच्ची की परवरिश के लिए शायद कुछ वक्त के लिए मेरी को अपना यह काम ठप कर देना पडेगा। किन्तु पियर का पिता अभी-अभी विधुर हुआ था—वह भी मेरी और पियर के साथ रहने आ गया उनकी बच्ची मे अपना मन परचाने।

मेरी फिर पिचब्लैण्ड को शुद्ध करने चल दी। दो साल की सख्त मेहनत, और नतीजा—जरा-सा बिस्मथ कम्पाउण्ड ! किन्तु इस यौगिक मे यूरेनियम से 300 गुना अधिक सक्रियता थी। फोटो तैयार करने की फिलम पर इसका प्रभाव अद्भुत था। अर्थात्—इस यौगिक मे भी ज्ञात तत्त्वो के अतिरिक्त वह 'नया तत्त्व' होना चाहिए। मेरी फिर प्रयोगशाला मे आ डटी कि वह अज्ञात तत्त्व कही उड न जाए !

1898 की जुलाई मे उसने एक नये तत्त्व की खोज दुनिया के सामने उद्घोषित कर दी पोलोनियम (नामकरण अपनी मातृभूमि की स्मृति मे)। किन्तु स्वय क्यूरी दम्पती सन्तुष्ट नही थे 'अवशेष,' पोलोनियम निकल जाने के बाद, और भी 'सशक्त' हो गया था।

अर्थात्—'कुछ चीज है जो अब भी हाथ नही आ सकी।' सशोधन, स्फटिकीकरण जारी रहा—और तब कही वह 'अज्ञात' तत्त्व भी निकल ही आया सारे यौगिक मे बहुत ही थोडे स्फटिक थे उसके। और नये-तत्त्व का नाम रखा गया —रेडियम।
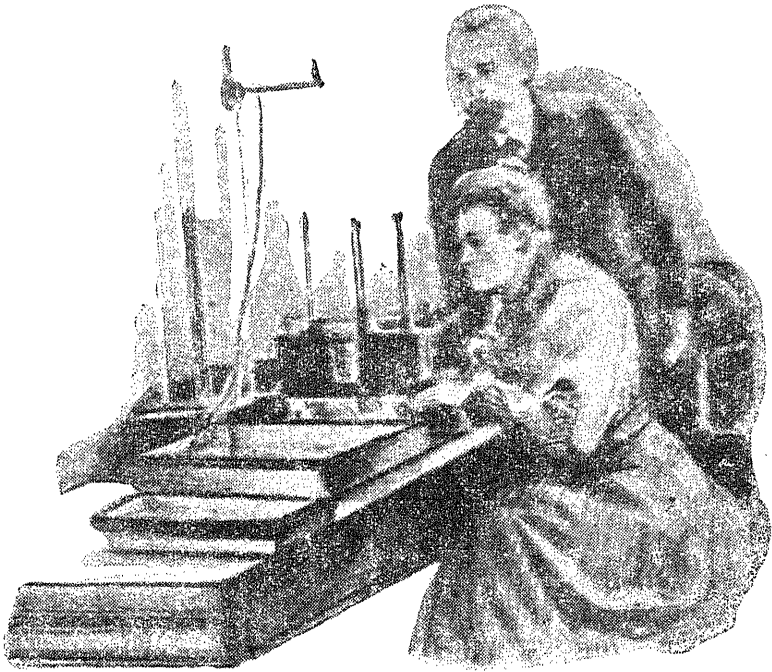
पियर और मेरी क्यूरी अपनी प्रयोगशाला में ।

रेडियम एक अद्‌भुत तत्त्व था : यूरेनियम से कोई दस-लाख गुणा बढ़कर रेडियो-सक्रिय (और यह सारी खोज चलाई भी तो यूरेनियम ने ही थी !) लाइट-प्रूफ कागज़ में सुरक्षित फोटोग्राफिक फिल्म की भी रेडियम के आगे खैर नहीं—वह एक्सपोज़ हो जाएगी। हवा में गैसों के कणों को तोड़ देना इसके बायें हाथ का काम है—गैसें इसके सम्पर्क में आते ही विद्युत्-वाहिनी बन जाती हैं। रेडियम के यौगिकों को अन्य समासों में मिला दें तो फ्लोरेस्सेन्स संभव हो आए। घरों में घड़ी की अंधेरे में चमकती सुइयों में कुछ मात्रा इसकी प्रायः हुआ करती है। रेडियम के विकिरणों में बीज बढ़ना बन्द कर दे, बैक्टीरिया नष्ट हो जाएं, और छोटे-मोटे जानवर भी शायद मरने लग जाएं !

विकिरण स्नायु को नष्ट कर देता है और, इसीलिए, कैन्सर के और कुछ अन्य चर्म रोगों के उपचारों में प्रयुक्त भी हो चुका है। प्रतिक्षण यह कुछ न कुछ ताप छोड़ रहा होता है—एक घण्टे में विकीर्ण इसका ताप अपने ही दुगुने भार की बरफ को पिघला दे। यह गरमी इधर से निकलती है और उधर रेडियम का इस प्रकार आत्म-नाश होता चलता है—छोटे और अधिक छोटे तत्त्वों में निरन्तर विघटन। रेडियम वस्तुतः एक अद्‌भुत द्रव्य है।

विश्व-भर से तरह-तरह के प्रलोभन उन्हें दिए गए, किन्तु क्यूरी-दम्पती ने रेडियम को कमाई का ज़रिया बनाने से इन्कार कर दिया। अस्तु; इसी सफलता के लिए

बैकेरेल के साथ उन्हें नोबल पुरस्कार मिला। इतना अरसा पिचब्लैण्ड की सफाई करते हुए जो उधार सिर चढ़ गया था, उतर गया।

पियर क्यूरी को सोर्बोन विश्वविद्यालय में प्रोफेसर नियुक्त कर दिया गया। एक अच्छी प्रयोगशाला भी संलग्न थी।

1904 में एक और पुत्री ईव ने उनके यहां जन्म लिया। अब उनके घर में सुख था, सुविधाएं थीं, जितनी कभी भी नहीं रही थी—जब एक आकस्मिक घटना ने यह सब स्वप्न नष्ट कर दिया: 19 अप्रैल, 1906 को एक मीटिंग से घर लौटते हुए घोड़ा-बग्घी ने पियर क्यूरी को गिरा दिया और उसी वक्त दूसरी ओर से आ रहा एक ट्रक उस पर से गुज़र गया। तत्क्षण मृत्यु हो गई।

विधवा मेरी की तो ज़बान ही बन्द हो गई। वह अब प्रयोगशाला में ही दिन-रात रहकर कुछ शान्ति प्राप्त करने लगी। रात, लौटने पर, वह अपने मृत पति को पत्र लिखती कि दिन-भर मैंने क्या कुछ किया है। फ्रांसवादियों ने सब परम्पराएं ताक में रख दीं और पति के रिक्त स्थान में पत्नी को ही ला बिठाया।

कुछ वैज्ञानिक इस बात को बरदाश्त नहीं कर सके—एक औरत, और प्रोफेसर! उनका कहना था, "सारा काम पियर का था, मेरी ने तो असिस्टेण्ट की तरह कुछ मदद ही की थी, बस!"

किन्तु अब परित्यक्ता मेरी ने सिद्ध कर दिखाया कि अकेली भी वह, और नहीं तो कम से कम अपने पति के बराबर वैज्ञानिक तो है ही। 1910 में रेडियम को वह शुद्ध तत्त्वावस्था में निकालने में सफल हो गई। पिघले हुए रेडियम क्लोराइड (रेडियम के
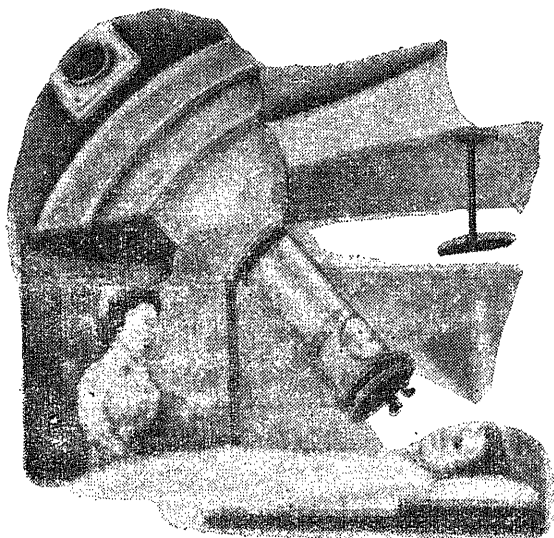
रेडियम के विकिरण द्वारा कैन्सर का इलाज।

एक लवण) मे से विद्युत् सचरित करते हुए उसने नैगेटिव इलेक्ट्रोड पर एक परत-सी देखी। पारे को उबाला और शुद्ध रेडियम बाकी छूट आया—जिस पर मेरी को एक नोबल पुरस्कार और मिला।

4 जुलाई, 1934 को इस अद्भुत नारी की मृत्यु हो गई। विकिरण के वातावरण मे सालो काम करते रहने की वजह से उसका प्राणतन्त्र शीर्ण हो चुका था। जिस रेडियम की उसने खोज की थी वही आखिर उसे ले बैठा।

हम्फ्री डेवी

"15 लाख रुपया खर्च करके यदि कोई राष्ट्र एक ऐसे विद्यार्थी की शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध कर सकता है जो कल वॉट डेवी या फैराडे जैसा वैज्ञानिक हो सकता है तो ऐसा सौदा एक मिट्टी के मोल का सौदा ही होगा !" इन शब्दों में टामस हक्सले ने, जो स्वयं भी एक माना हुआ ब्रिटिश वैज्ञानिक था, 1900 में सरकार से अपील की थी कि वह वैज्ञानिकों के प्रशिक्षणार्थ कुछ वार्षिक अनुदान निश्चित कर दे। हम्फ्री डेवी विद्युत्-रसायन में अपनी खोजों के लिए प्रसिद्ध है, और कितने ही उद्योग आज उसीके कारण स्थापित भी हैं जिनपर अरबों रुपया वार्षिक खर्च आता है। सचमुच—15 लाख में एक डेवी : बहुत ही सस्ता सौदा है।

यह एक अद्‌भुत संयोग ही है कि हम्फ्री डेवी और उसका प्रिय शिष्य फैराडे, दोनों, एक ही साथ इंग्लैंड में काउण्ट रूमफोर्ड द्वारा स्थापित रॉयल इन्स्टीट्यूशन में काम करते थे। रॉयल इन्स्टीट्यूशन के उद्देश्यों में एक यह भी था कि युवक वैज्ञानिकों के शिक्षण-प्रशिक्षण का कुछ प्रबन्ध होना चाहिए। आज भी रॉयल इन्स्टीट्यूशन वैज्ञानिकों के लिए अवसर जुटाता है, और क्रिसमस की छुट्टियों में हर साल बच्चों में विज्ञान के प्रति रुचि उत्पन्न करने के लिए व्याख्यानमालाएं आयोजित करता है।

हम्फ्री डेवी का जन्म 1778 के दिसम्बर महीने में एक गरीब नक्काश के घर ब्रिटेन के एक समुद्र तटीय नगर में हुआ। डेवी की प्रारंभिक शिक्षा-दीक्षा पेन्ज़ान्स के तथा पड़ोस में ट्रूरो के स्कूलों में ही हुई। बालक की विज्ञान में कोई अभिरुचि नहीं थी। प्राथमिक शिक्षा समाप्त करके हम्फ्री एक औषध-निर्माता के यहां एप्रेण्टिस लग गया। किन्तु इस पनसारी के एक खासा निजी पुस्तकालय था, और डेवी फालतू समय में इसका

खूब इस्तेमाल करने लगा।

हर विषय पर डेवी ने खूब पढा। विलियम निकलसन के परीक्षणो के बारे मे भी, कि किस प्रकार बिजली के ज़रिये उसने पानी को हाइड्रोजन और ऑक्सीजन मे विभक्त कर दिखाया था, और प्रसिद्ध फ्रासीसी रसायनशास्त्री लैवॉयज़िए के बारे मे भी। और इस अध्ययन के परिणामस्वरूप रसायन विज्ञान को डेवी ने अपने जीवन का ध्येय निश्चित कर लिया।

परीक्षण करते-करते वह प्रसिद्ध इजीनियर वाट के पुत्र वाट-जूनियर के सम्पर्क में आया, और वाट ने उसका परिचय रॉयल सोसाइटी के अध्यक्ष डाक्टर गिल्बर्ट से करा दिया। गिल्बर्ट ने डेवी की प्रतिभा से प्रभावित होकर हाल ही में स्थापित मेडिकल न्यू-मेटिक इन्स्टीट्यूशन के सस्थापक से उसकी सिफारिश की। इस वैज्ञानिक सस्था की स्थापना विविध गैसो की चिकित्साशास्त्रीय उपयोगिताओ के अनुसन्धान के लिए हुई थी। बीस बरस का होते-होते डेवी इस सस्था का अध्यक्ष बन चुका था।

1799 के अप्रैल मे इसी फूहड, बदसूरत, नौजवान ने—जिसने विज्ञान मे कोई नियमित शिक्षा कही नही पाई थी—एक ऐसी खोज कर दिखाई कि वह रातो-रात इग्लैड-भर मे मशहूर हो गया। कुछ नाइट्रस आक्साइड बनाकर उसे, सूघ ही नही, पी गया और एक अजीब ही दुनिया मे पहुच गया। खुशी का ठिकाना नही, पी के मस्त! किन्तु इन दोनो चीजो से भी बढकर यह कि उसे अब जिस्म में कही कुछ दर्द महसूस न हो। लेकिन 1844 से पहले नाइट्रस आक्साइड का प्रयोग चिकित्सको ने नही किया। एक अमरीकी दातो के डाक्टर ने ही पहली बार अपना एक दात निकलवाते हुए इसका इस्तेमाल किया था। डेवी पर जो असर इसका हुआ—हिस्टीरिया के मरीज़ की भाति अकारण ही हसने लग जाना, और अकारण ही रोने लग जाना—उससे नाइट्रस आक्साइड का नाम ही जन-साधारण में 'हसाने वाली गैस' पड गया।

काउण्ट रूमफोर्ड खुद अमरीकी था, और वह उन दिनो लन्दन मे रॉयल इन्स्टीट्यूशन की स्थापना मे लगा हुआ था। उसने डेवी को रसायनशास्त्र के सम्बन्ध मे कुछ व्याख्यान देने को कहा। इतना लोकप्रिय व्याख्याता तब तक इन्स्टीट्यूशन को सुनने को नही मिला था। किन्तु नियमित रूप से विज्ञान मे कुछ भी शिक्षा-दीक्षा उसने पाई न थी, कोई बात नही—फिर भी उसे पूरे मान और अधिकारो सहित ही प्रोफेसर नियुक्त कर दिया गया। चमडा कमाने के आधारभूत रासायनिक सिद्धान्तो पर उसकी व्याख्यानमाला इतनी सफल सिद्ध हुई कि रॉयल इन्स्टीट्यूशन के बोर्ड ऑफ एग्रिकल्चर ने उससे प्रार्थना की कि वह कृषि की समस्याओ पर ही अपनी बुद्धि एकबारगी लगा दे।

परिणामत अगले दस साल उसके व्याख्यानो का एकमात्र विषय 'कृषि-सम्बन्धी रसायन' ही रहा जिसका नतीजा यह हुआ कि रासायनिक खादो मे कितनी ही तरक्की खेतीबारी मे इस तरह अनायास ही सिद्ध हो गई। 'क्रिसमस सप्ताह' मे बच्चो के लिए सालाना विज्ञान-परक व्याख्यानो की प्रसिद्ध योजना का प्रवर्तन भी डेवी ने ही किया था।

विद्युत् द्वारा पानी का द्वि-भाजन तो निकलसन और उसके साथी कर चुके थे, किन्तु विद्युत्-रसायन का एक नियमित वैज्ञानिक प्रक्रिया के रूप मे प्रयोग डेवी की

बदौलत ही क्रियात्मक विज्ञान का अग बन सका है। थोडे से ही सालो मे उसने जो परीक्षण किए वही उसका स्थान महान वैज्ञानिको मे मूर्धन्य स्थिर कर देने के लिए पर्याप्त है।

डेवी ने गीले सोडियम हाइड्रॉक्साइड (आम बोलचाल मे इसका नाम है कास्टिक सोडा अथवा 'लाई') के एक टुकडे को प्लाटिनम कप मे रखा। अब उसने एक बडे विद्युत् सेल के एक सिरे को तो कप के साथ लगा दिया और दूसरे को सोडियम हाइड्रॉक्साइड से स्पर्श कर रहे प्लाटिनम तार के साथ। सोडियम हाइड्रॉक्साइड पिघल गया। डेवी स्पष्ट देख सकता था कि किस प्रकार पिघलती धातु के बुलबुले उठ-उठकर ऊपर की ओर आ रहे हैं और वहा पहुचकर एकदम उड जाते है।

आज भी सोडियम का निर्माण एक विद्युत्-विधि के द्वारा ही किया जाता है, किन्तु अब उसे सोडियम क्लोराइड से अलग करके निकाला जाता है। सोडियम मे चादी की-सी सफेद चमक होती है किन्तु एक-दो मिनट ही हवा मे खुला पडा रहने पर वह काला पडने लगता है। और यह इतना मुलायम होता है और इतना हलका कि उठकर पानी पर तैरने लगेगा। सोडियम को तल मे दबाकर सुरक्षित करना पडता है, वरना हवा की नमी मे मिल जाने से इससे कुछ भयकर रासायनिक प्रतिक्रिया उत्पन्न होने की सभावना रहती है। हाई टेस्ट गैसोलीन के लिए इथाइल द्रव के निर्माण मे भी यह उपयोगी होता है। कुछ राजमार्गों पर प्रकाश की व्यवस्था पीले रग के लैम्पो द्वारा की जाती है, इन लैम्पो मे भी सोडियम के वाष्प ही भरे होते हैं।

डेवी ने विद्युत्-रसायन की वही प्रक्रिया पोटाशियम को तत्त्ववत् पृथक् करने मे प्रयुक्त की। सच तो यह है कि किसी भी रसायनविद् ने इतने अधिक भौतिक तत्त्व मूर्तरूप मे पृथक् निर्धारित नही किए जितने डेवी ने। उसी विद्युत्-रसायन विधि का प्रयोग उसने सोडियम, पोटाशियम, मैग्नीशियम, स्ट्रोनियम, कैल्सियम, क्लोरियम, और वेरियम को पृथक् करने मे भी किया। लेकिन एल्यूमीनियम को रसायनशाला मे उत्पन्न कर सकने मे उसे सफलता नही मिली। डेवी की ही प्रवर्तित विधि का प्रयोग करते हुए चार्ल्स मार्टिन हाल ने, कही 1886 मे, एल्यूमीनियम को एल्यमीनियम ऑक्साइड से विद्युत् विश्लेषण द्वारा पृथक् किया था।

सोडियम तथा पोटाशियम की खोज के लिए सम्राट नेपोलियन ने डेवी को फ्रेंच इन्स्टीट्यूट का मेडल उपहार मे दिया, हालाकि उन दिनो फ्रास और इग्लैड मे लडाई ठनी हुई थी। यह पदक वैज्ञानिक शिरोमणि को पेरिस मे पूर्ण समारोह के साथ ही प्रदान किया गया। डेवी की उम्र उस वक्त केवल 30 वर्ष की थी।

विद्युत्-रसायन मे अपने इन्ही परीक्षणो के परतर परिणामस्वरूप डेवी ने 'आर्क लाइट' का आविष्कार किया जिसका मूर्त प्रदर्शन उसने रॉयल इन्स्टीट्यूशन के सम्मुख 1809 मे कर दिखाया। कोयले के दो टुकडो को उसने अपनी भारी बैटरी के सिरो से जोड़ दिया। और दोनो को अब उसने मिला दिया, और मिलाए रखा कि वे एक अगार-बिन्दु बनकर चमकने लगे। और तब उसने दोनो को अलग करना शुरू किया और, लो, दोनो के बीच मे एक चमकती हुई 'चाप-दीप' सी उठ आई। तब तक मनुष्य-निर्मित इतनी भास्वर ज्योति किसीने न देखी थी। किन्तु अभी विज्ञान और उद्योग की

दुनिया इस तरह की रोशनी को घर-घर पहुंचाने, आम कर सकने, की स्थिति में नहीं थी। आर्क लैम्पों को जब तक चाहें प्रज्वलित देदीप्यमान रखने के लिए इलेक्ट्रिक जेनरेटर भी तो अभी तक ईजाद नहीं हुए थे। बरसों बाद भी तो कार्ब की इस आर्क-लाइट का प्रयोग, प्रकाश के लिए, कुछ विशेष अवसरों पर ही—मिलिटरी सर्च-लाइटों में, चल-चित्रों के प्रोजेक्टरों में, और सड़कों की रोशनी के लिए सुलभ हो सका।

1812 में 21 साल का एक नौजवान, माइकल फैराडे, हाथ में कागज़ों का एक पुलिन्दा लिए डेवी के दरवाज़े पर दस्तक देने आया। इन कागज़ों पर डेवी के कुछ लैक्चरों के नोट्स लिए हुए थे; कभी-कभी फैराडे भी उन्हें सुनने आ जाता था। डेवी ने इस नौजवान को अपने साथ काम करने के लिए भाड़े पर रख लिया। और यह भी आगे चल कर 'विज्ञान का एक और दिग्गज' बन गया।
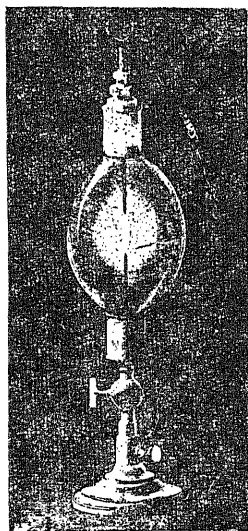
एक पुराना चापदीप, जिसका नाम डेवी लैम्प है।

उस वर्ष बादशाह ने डेवी को नाइट का खिताब दे दिया। और उससे अगले साल उसने एक सम्पन्न विधवा के साथ शादी कर ली। डेवी, नई बहू, और सेक्रेटरी फैराडे अब दुनिया की वैज्ञानिक राजधानियों की यात्रा करने निकल पड़े। पेरिस में उसे फ्रेंच इन्स्टीट्यूट का सदस्य मनानीत कर लिया गया। जेनोआ (इटली) में डेवी ने टार्पीडो मछली द्वारा उत्पादित विद्युत् की परीक्षा की। इटली के ही फ्लॉरेन्स शहर में उसने अपनी विद्युत्-चाप का प्रयोग हीरे को जलाने के लिए किया—यह सिद्ध करने के लिए कि हीरा भी तो आखिर शुद्ध कार्बन ही है! स्वीडन में यह रसायनविद् बेर्जीलियस से मिला और दोनों में क्लोरीन के सम्बन्ध में कुछ विवेचन भी हुआ।

डेवी का कहना था कि क्लोरीन एक तत्त्व है, यौगिक नहीं—जैसा कि उन दिनों आम तौर पर यह समझा जाता था। बेर्जीलियस का विचार भी अब तक यही था कि

क्लोरीन एक यौगिक ही है किन्तु कुछ ही क्षणो मे उसे विश्वास हो गया कि डेवी ही ठीक है। किन्तु डेवी का 'शऊर' वेर्जीलियस को जरा नही जचा—एकदम उजड्ड और गर्व का पुतला ! वेर्जीलियस एक नाज़ुक-मिजाज़ वैज्ञानिक था, दोनो मे बनती कैसे ? डेवी ने अन्त मे जर्मनी का एक दौरा किया, और उसकी यह यात्रा समाप्त हो गई।

1915 मे इग्लैड वापस लौटने पर उसके सम्मुख एक नई समस्या पेश की गई। न्यूकैसल की कोयले की खानो से बडे धमाको और तबाहियो की शिकायते सुनने मे आई, और सब उन खानो मे काम करनेवालो के लैम्पो की वजह से। लैम्प क्या थे—खुली टार्चे, सो, आग लग जाना या कुछ फट जाना आए दिन की घटनाए हो गई थी । प्रश्न यह था कि एक ऐसा लैम्प ईजाद किया जाए जिससे ये धमाके नामुमकिन हो जाए। यह सब बिजली के लैपो से पहले की बाते हैं ।

हम्फ्री डेवी ने जो समाधान प्रस्तुत किया वह जहा बुद्धिमत्तापूर्ण था, वहा उतना ही सरल भी था। उसने, और कुछ नही किया, फकत एक लोहे की जाली लैप की लपट के गिर्द टिका दी। विस्फोटक गैसे अब जाली के अन्दर नही पहुच सकती थी, और न लपट की गरमी के सपर्क मे आ सकती थी। उधर, जाली खुद इतनी गरम किसी भी हालत मे नही हो पाती थी कि इन गैसो मे धमाका ला सके। कुछ गैस अगर जाली मे से अन्दर पहुच भी जाए तो वही अन्दर ही जलकर खत्म हो जाए । अब खानो मे लैप सुरक्षित हो गए और वहा की दुर्घटनाओ की सभावना बहुत ही कम रह गई।

डवी ने इस नई ईजाद के लिए कोई पेटेण्ट नही कराया, उलटे, बगैर एक भी पैसा लिए उसे खान मे काम करनेवालो को ही दे दिया। किन्तु खानो के मालिक कृतज्ञता प्रकाशित कैसे न करते ? उन्होनें एक पूरा का पूरा चादी का डिनर-सर्विस सेट डेवी को भेंट मे दिया। मरने के बाद, उसकी वसीयत मे अभिव्यक्त इच्छा के अनुसार सेट को पिघला-कर बेच दिया गया जिसकी वसूली से हर साल, यूरोप और अमरीका मे रसायनशास्त्र की सबसे बडी खोज पर एक 'डेवी मेडल' देने की व्यवस्था की जाती है।

1818 मे डेवी को बैरोनेट बना दिया गया, और उसके दो साल बाद रॉयल सोसाइटी का प्रेसिडेंट भी चुन लिया गया। वह सनकी मिजाज का वैज्ञानिक था, अध्यक्ष पद पर उसे उतनी सफलता नही मिली। शालीनता न उसकी रग मे थी न शिक्षा-दीक्षा मे, हुआ यह कि सोसाइटी के सदस्य उससे तग आने लगे और अतत दुश्मन बनते गए।

डेवी कभी-कभी कुछ कविता भी कर लेता था । शौकिया। सेमुएल टेलर कॉलरिज, जो कि डेवी का एक समकालीन था और 'राइम आफ द एन्शेण्ट मैरिनर' का कवि था, डेवी के बारे मे कहता है, "भाग्य से यदि अपने युग का वह प्रथम रसायन शास्त्री न होता, तो अवश्य हमारा ही अन्यतम कवि होता।"

हम्फ्री डेवी की मृत्यु 1826 मे 50 साल की आयु मे हुई, और 50 भी कोई आयु होती है ? एक गरीब लडका था जिसे कुछ भी नियमित शिक्षा हासिल नही हुई थी किन्तु इग्लैड का बैरोनेट बनकर ही वह मरा। उसका जीवन एक वाक्य मे—खान मे काम करनेवालो के अधिरक्षक का, छ भौतिक तत्त्वो के आविष्कार का, और इलैक्ट्रो-कैमिस्ट्री के जनक का जीवन है।

एल्बर्ट आइन्स्टाइन

"डिअर मिस्टर प्रेसीडेंट" पत्र का आरम्भ करते हुए विश्वविख्यात वैज्ञानिक एल्बर्ट आइन्स्टाइन ने लिखा : "ई० फर्मि तथा एल० जीलार्ड के कुछ नये अनुसन्धानों से मुझे अवगत कराया गया है। इन अनुसन्धानों की पाण्डुलिपि का अध्ययन करने के पश्चात् मुझे विश्वास हो गया है कि निकट भविष्य में ही वैज्ञानिक यूरेनियम को एक नये और महत्त्वपूर्ण, शक्ति-स्रोत के रूप में प्रयुक्त करने में सफल हो जाएंगे। इस तरह का केवल एक ही बम अगर किसी बन्दरगाह पर फेंका गया तो वह उस बन्दरगाह के साथ-साथ आसपास के इलाके का भी सफाया कर देगा।"

यह पत्र प्रेसीडेंट फ्रेंकलिन डी० रूज़वेल्ट के नाम 1939 की शिशिर ऋतु में लिखा गया था। और 6 साल बाद, 6 अगस्त, 1945 के दिन इस तरह का केवल एक ही बम जापान के शहर हीरोशिमा पर फेंका गया, जिसके परिणामस्वरूप—6,000 व्यक्ति मारे गए, 1,00,000 घायल हुए और 2,00,000 बेघर हो गए। उस पहले एटम बम ने शहर के 600 मुहल्लों को मिट्टी में मिला दिया। कुछ दिन पश्चात् एक और इसी तरह का बम नागासाकी पर फेंका गया। जापानी सरकार ने घुटने टेक दिए और द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त हो गया।

एटम बम के मूल में जो सिद्धान्त काम करता है वह आइन्स्टाइन ने 1905 में ही आविष्कृत कर लिया था कि किसी भी द्रव्य को शक्ति में तथा शक्ति को द्रव्य में परिवर्तित किया जा सकता है। विज्ञान का पुराना सिद्धान्त यह था कि द्रव्य का स्वतः न निर्माण किया जा सकता है न विनाश। आइन्स्टाइन के निष्कर्षों को एक सरल सूत्र के रूप में

प्रस्तुत करना इष्ट हो तो

$$श = द्र \times प्र^2$$

अर्थात् इस विपरिणाम द्वारा विसर्जित शक्ति (श) का परिणाम होगा—द्रव्य (द्र) का 'प्रकाश की गति' (प्र) के वर्ग से गुणित फल। अब, क्योकि प्रकाश की गति स्वय एक अपरिमेय-सी वस्तु है—1,86,000 मील प्रति सेकण्ड अथवा 60,00,00,00,000 फुट प्रति मिनट—थोडे से भी द्रव्य से विकीर्ण शक्ति बहुत ही अधिक निर्माण व सहार कर सकती है। सचमुच, अगर किसी भी वस्तु के एक पौड को मान लीजिए, कोयले को यदि पूर्णतया शक्ति मे विपरिणमित किया जा सके, तो उसका परिणाम होगा 10,00,00,00,000 किलोवाट घटो से भी अधिक परिमाण की शक्ति का उदय! अर्थात् किसी भी द्रव्य के 10 पौड से इतनी बिजली पैदा की जा सकती है जो दुनिया-भर की एक महीने की आवश्यकता को आसानी से पूरा कर दे।

एलबर्ट आइन्स्टाइन का जन्म 14 मार्च, 1879 को उल्म के दक्षिणी जर्मन शहर मे हुआ था। एक साल बाद ही आइन्स्टाइन परिवार यहा से उठकर म्यूनिख मे आ बसा। एल्बर्ट का पिता एक छोटी-सी इलेक्ट्रो-कैमिकल फैक्टरी का मालिक भी था, ऑपरेटर भी। एल्बर्ट का एक चाचा था जिसने शादी नही की थी और इजीनियरिंग मे ट्रेनिंग हासिल की हुई थी। वह भी आकर परिवार के साथ ही रहने लगा और परिवार के इस धन्धे मे मदद देने लगा। मा की अभिरुचि सगीत मे थी और बीथोबेन मे विशेषकर।

मा की इस दिलचस्पी का ही परिणाम यह हुआ कि बालक को 6 साल की उम्र से ही वॉयलिन मे सबक मिलने लगे। शुरू-शुरू मे यह 'विद्या-दान' आइन्स्टाइन को बुरा लगता था, किन्तु धीमे-धीमे वह इस कला मे निपुणता प्राप्त करता गया। आइन्स्टाइन की अपनी पसन्द का सगीत था—मोजार्त की एक-स्वर, द्वि-स्वर, सरल धुने। सगीत मे यह प्रारम्भिक दीक्षा आइन्स्टाइन की आजीवन सगिनी रही—इन्ही गीतो मे थका-हारा वैज्ञानिक क्षणिक विश्रान्ति और सुख उपलब्ध किया करता था।

शैशव मे एल्बर्ट ने कोई चीकने पात नही दिखाए। उलटे, वह बोलना भी इतनी देर से सीखा कि मा-बाप को डर ही लगने लगा कि बालक मन्दबुद्धि है, जड है। बडी ही छोटी उम्र से वह अपनी उम्र के और बच्चो से अलग रहने लगा और सारा दिन 'कुछ न करना'—बस, दिवास्वप्नो मे गुम। किसी तरह की कडी मेहनत या व्यायाम से कोई वास्ता नही, मेहनत के खेल न खेलना और 'सिपाही बनने' से तो जैसे सचमुच नफरत ही हो। उन दिनो म्यूनिख की गलियो मे आए दिन जर्मन फौजे परेड करने निकला करती, और बच्चे कितने चाव से उन्हे देखने आते। लेकिन एल्बर्ट था कि उसका दिल इन नज़ारो से बैठने लगता। उसे बिलकुल नापसन्द था यह देखना तक भी कि इन्सान किस तरह एक निर्जीव मशीन की तरह, जैसे वह आप कुछ सोच न सकता हो, अकड-अकडकर चलने-फिरने के लिए तैयार हो जाता है।

म्यूनिख मे आम शिक्षा के लिए कोई सरकारी प्रबन्ध नही था। प्रारम्भिक स्कूल जो थोडे-बहुत थे उनकी व्यवस्था दो-एक धर्म-सस्थाओ के अधीन थी। आइन्स्टाइन के

घर वाले यहूदी थे किन्तु उन्हे किसी भी धर्म मे शुरू से ही कुछ भी अभिरुचि नही थी। एक कैथोलिक प्राथमिक स्कूल ही नजदीक पडता था—आइन्स्टाइन को उसीमे दाखिल करा दिया गया। 10 साल की उम्र मे उसे एक माध्यमिक स्कूल, जिम्नेज़ियम मे डाल दिया गया कि वह विश्वविद्यालय की उच्च शिक्षा की योग्यता प्राप्त कर सके। स्कूल-जीवन मे न उसे कुछ सुख ही हासिल हुआ, न सफलता। यहा रिवाज था पाठ को कण्ठस्थ करने का। किसी विषय पर खुलकर विवेचन विनिमय की कोई छूट नही कि विषय का अन्तरग परिचय भी तनिक प्राप्त हो सके।

किन्तु जिम्नेज़ियम मे रहते हुए ही आइन्स्टाइन को यहूदी धर्म मे पहली-पहली दीक्षा मिली। कैथोलिको की उदारता के विषय मे उसका कुछ परिचय प्राथमिक स्कूल मे ही हो चुका था। इस शिक्षा-दीक्षा का परिणाम यह तो अवश्य हुआ कि धर्म की सार्वजनीन नीति-परता (चरित्र-प्रियता) मे उसकी आस्था बद्धमूल हो गई किन्तु, साथ ही, उसने हृदय से यह भी अनुभव किया कि सभी कर्मकाण्ड—किसी भी धर्म व सम्प्रदाय के हो—'अधी जडता' के अतिरिक्त कुछ नही है। इनका निर्माण ही शायद इसलिए किया गया था कि मनुष्य स्वतन्त्रतापूर्वक चिन्तन करना छोड दे। जिम्नेज़ियम से स्नातक होकर आइन्स्टाइन ने अपने धर्मसम्प्रदाय की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया, सालो बाद ही कही आकर वह अपनी पुरानी (यहूदियो की) बिरादरी मे मिला—उन दिनो जब कि, हिटलर के अधीन नात्सी अनुशासन मे, जर्मनो ने यहूदियो के बीज-नाश की कसम खा ली थी।

आइन्स्टाइन के इजीनियर चाचा ने बालक की गणित मे अभिरुचि जगाई। उसी ने अबोध शिशु को सबसे पहले यह समझाया कि किस प्रकार एक प्रश्न के समाधान मे बीजगणित के प्रयोग से समय बच सकता है। और सब-कुछ परिहास और विनोद मे—बालक की निजी परिहास-बुद्धि को प्रबुद्ध करते हुए "देखो, कितनी दिलचस्प साइस है यह, एक जानवर है, जिसका हम शिकार कर रहेहै, लेकिन वह काबू मे नही आ रहा, हम उसका, क्षण के लिए, नाम रख देते है—'क्ष' और अपना शिकार जारी रखते है जब तक कि उसका 'क्षय' नही हो जाता—वह पकड मे नही आ जाता!" किन्तु जिस विद्या का सबसे अधिक असर बालक आइस्टाइन पर पड़ा वह थी—ज्यामिति। ज्यामिति के तौर-तरीको से वह कितना उल्लसित होता—साफ-सुथरे नपे-तुले शब्दो मे ही सब कुछ कह देना, हर वाक्य के लिए प्रमाण तथा समर्थन की अपेक्षा, और हर सिद्धि मे युक्ति-क्रम की अटूट शृखला, और हर प्रश्न को हल करने के लिए निजी चिन्तन का अवसर। आइन्स्टाइन ने खुद स्वीकार किया है कि दो घटनाए थी जो बचपन मे उसके लिए वरदान सिद्ध हुई—एक तो पाच साल की उम्र मे उसे किसीने एक चुम्बकीय कम्पास ला दिया था और, दूसरी, बारह साल की उम्र मे यूक्लिड की ज्योमेट्री से प्रथम परिचय। आइन्स्टाइन के शब्द हैं कि "स्कूल के उन दिनो मे यूक्लिड हाथ मे आते ही अगर हममे से किसीको ऐसा अनुभव नही होता था कि मेरी दुनिया ही बदल गई है तो उसका अर्थ हम यही समझते थे कि इस बेचारे को परमात्मा ने समीक्षा अथवा अनुसधान की बुद्धि से ही वचित रखा है।"

आइन्स्टाइन जब 15 वर्ष का हुआ तो पिता के लिए यह जरूरी हो गया कि वह अपने बिजली के पुराने कारोबार को ठप कर दे। और परिणामत, परिवार म्यूनिख से

उठकर मीलान (इटली) मे आ गया कि कोई और धधा शुरू किया जाए। एलबट अभी कुछ समय और पीछे जिम्नेज़ियम मे ही रहा कि वह और नही तो कम से कम डिप्लोमा तो हासिल कर ले। किन्तु स्कूल की यह ज़िन्दगी आइस्टाइन के लिए दिन-ब-दिन अब असह्य होती जा रही थी। गणित मे तो उसका ज्ञान अपने और साथियो से कही अधिक था किन्तु तोता-रटन्त से पढाए जाने वाले अन्य विषयो मे उसका हाल बुरा था। दूसरे, एक बात यह भी हुई कि अपने गुरुओ के प्रति अधी भक्ति भी उसमे नही थी, जबकि बाकी विद्यार्थियो के लिए यही कुछ धर्म-कर्म था। परिणाम यह हुआ कि उसे जिम्नेजियम से फ़ारिग कर दिया गया और वह भी इटली मे अपने पिता से आ मिला।

इटली मे रहते हुए उसके कुछ ही दिन गजरे होगे जब उसे अपने भविष्य के विषय मे सोचने की कुछ चिन्ता हुई, और आइस्टाइन ने निश्चय कर लिया कि वह अपना सारा जीवन गणित तथा समीक्षात्मक भौतिकी के अध्ययन मे लगा देगा। तदनुसार ही उसने ज्यूरिख (स्विट्जरलैंड) के प्रसिद्ध स्विस फेडरल पॉलीटेक्निक स्कूल मे दाखिल होने के लिए प्रवेशिका परीक्षा दी किन्तु असफल। गणित मे कोई तुलना ही नही, किन्तु भाषाओ मे तथा प्राणिविज्ञान मे उतना ही कमज़ोर। उधर, पॉलीटेक्निक का डायरेक्टर आइन्स्टाइन की गणित मे योग्यता पर आश्चर्यचकित था और उसीने, अतत, कुछ व्यवस्था कर दी कि वह प्रवेशिका की इन 'आवश्यकताओ' को स्विट्जरलैंड मे जाकर ही पूरा कर ले। यहा पहुचकर आइन्स्टाइन की खुशी का कुछ ठिकाना न था—क्योकि म्यूनिख के स्कूलो मे और यहा की पठन-पाठन विधि मे कितना अतर था तोता-पाठ बिलकुल बन्द, कोई ज़ोर-जबरदस्ती नही, विद्यार्थी कुछ स्वतन्त्र चिन्तन भी करें, और अध्यापक हर विषय पर विद्यार्थियो के साथ विमर्श करने के लिए हर वक्त तैयार। पहला मौका था यह जब आइन्स्टाइन को जिन्दगी मे स्कूल मे कुछ दिलचस्पी महसूस होने लगी। पाठ्यविधि पूर्ण करके वह फेडरल पॉलीटेक्निक स्कूल (ज्यूरिख) मे दाखिल हो गया।

ज्यूरिख मे रहते हुए उसने निश्चय किया कि वह भौतिकी का अध्यापक ही बनेगा, और पाठ्य-विषयो का चुनाव भी उसने इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिए तदनुसार ही किया। साथ ही उसने इसके लिए यह भी आवश्यक समझा कि वह स्विट्ज़रलैंड का नागरिक बन जाए। आर्थिक दृष्टि से आइस्टाइन का ज्यूरिख मे बीता यह काल कोई सुगम समय नही था, क्योकि पिता को नये काम मे यहा सफलता नही मिल रही थी। सो, पुत्र की शिक्षा के लिए वह आवश्यक खर्च वगैरह कैसे जुटा पाता? सौभाग्य से एक सम्पन्न सम्बन्धी ने, विश्वविद्यालय के द्वारा ही उसकी कुछ सहायता का प्रबन्ध करा दिया।

बावजूद इसके कि वह स्वय एक प्रतिभा-सम्पन्न विलक्षण विद्यार्थी रहा था, बावजूद इसके कि स्वय अध्यापको ने उसकी प्रतिभा-बुद्धि को प्रमाण-पत्रो मे लिखित रूप मे स्वीकार भी किया था—आइन्स्टाइन को कही भी अध्यापक की नौकरी नही मिल सकी। लेकिन गुज़ारा तो आखिर किसी न किसी तरह चलाना ही था। वह बर्न के स्विस पेटेण्ट आफिस मे पेटेण्टो के एक परीक्षक के तौर पर नौकर लग गया।

1905 मे, इसी पेटेण्ट आफिस मे नौकरी करते हुए, आइन्स्टाइन ने 'विशिष्ट आपेक्षिकता' की स्थापना की थी जिसका मूर्त प्रत्यक्ष विश्व ने चालीस साल बाद एटम बम

के निर्माण मे किया। तब तक भौतिकी शास्त्र का सारा दारोमदार न्यूटन के दो सौ साल पुराने गति के नियमो पर आधारित था। भौतिकी के अधिकाश प्रश्नो का हल इन नियमो द्वारा निकल आता था। किन्तु कुछ कठिनाइया अब पेश आने लगी। मिसाल के तौर पर हवाई जहाज से यदि एक राकेट उडान की दिशा मे ही फेंका जाए तो, स्वभावत, राकेट की एक तो अपनी गति होगी ही और, साथ ही, जहाज की गति भी उसकी इस गति मे शामिल हो जाएगी। और यदि न्यूटन के नियमो को प्रकाश की गति मे भी लागू किया जाए तो प्रकाश की गति स्वभावत तब अधिक ही होती जाएगी जबकि प्रकाश-स्रोत भी स्वय देखने वाले की ओर बढता आ रहा हो, और इसके विपरीत, जब यही स्रोत अन्वीक्षक से परे हट रहा हो तो उसकी गति अपेक्षया कुछ कम होती जाएगी। किन्तु प्रत्यक्ष ने कुछ और ही सिद्ध कर दिखाया—ए० ए० मिचेलसन (एक अमेरिकन वैज्ञानिक, तथा एनापोलिस मे अमरीकी नौसेना एकेडमी मे एक प्राध्यापक) ने कुछ परीक्षणो द्वारा प्रमाणित कर दिखाया कि प्रकाश की गति न्यूटन के गतिविषयक नियमो का अनुसरण नही करती।

आइन्स्टाइन ने मिचेलसन के इन निष्कर्षों का अध्ययन किया और, कुछ स्वतन्त्र चिन्तन के बाद वह कुछ नूतन-सी इस स्थापना पर पहुचा कि प्रकाश का स्रोत कुछ भी क्यो न हो और द्रष्टा कही भी क्यो न खडा हो, किधर भी क्यो न चल रहा हो, प्रकाश की गति सभी ओर एक-सी ही होगी। इस स्थापना का अर्थ यह हुआ कि प्रकाश की गति मे किसी भी अवस्था मे कुछ परिवर्तन नही आ सकता।

आइन्स्टाइन की इस उक्ति मे कुछ बडी बात अथवा असामान्यता नजर नही आती, किन्तु आइन्स्टाइन की प्रतिभा की यह एक निजी विशिष्टता ही रही है कि वह अपनी स्थापनाओ को सदा कुछ अद्भुत, अविश्वसनीय किन्तु सत्य, कल्पनाओ मे अभिव्यक्त करने मे सफल रहा है। एक अद्भुत विचार, इन कल्पनाओ मे, उदाहरणत यह है कि अगर घडी खुद (उसकी सुइया ही नही) चलने लग जाए तो उसकी सुइया सुस्त पड जाएगी। इस वक्तव्य पर परीक्षण किए जा चुके है और हर बार आइन्स्टाइन की 'कल्पना' ही सच निकली है। अणु-चालित अन्तरिक्ष-विमानो मे मनुष्यो के लिए ग्रह-यात्रा का स्वप्न जब सभव हो जाएगा तब हमारा आकाश-यात्री अन्तरिक्ष-विमान की घडी के अनुसार लौटने पर देखेगा कि उसका अपना ही पुत्र उससे (बाप से) बीस साल ज्यादा बूढ़ा हो चुका है!

प्रकाश की गति की अपरिवर्तनीयता के इसी सिद्धान्त के आधार पर ही आइन्स्टाइन ने अपना द्रव्य-शक्ति का परस्पर-परिवर्तनीयता सम्बन्धी वह प्रसिद्ध सूत्र निकाला था जिसका उल्लेख हम एटम बम के सिलसिले मे पहले कर आए है। यही नियम है जो पहली-पहली बार सूर्य की शक्ति के 'स्रोत' की कुछ व्याख्या कर सका था कि सूर्य, यदि अपने ही आन्तर ईंधन द्वारा हमे प्रकाश और गरमी दे रहा होता तो, कभी का ठडा पड चुका होता, कभी का बुझ चुका होता। किन्तु द्रव्य को शक्ति मे विपरिणमित करते हुए—जैसा कि आइन्स्टाइन के सूत्र श = द्र × प्र² मे पूर्व-दृष्ट है—वही सूर्य इतने युगो से ताप और द्युति का यह विकिरण करता आ रहा है और अरबो-खरबो वर्ष आगे भी इसी तरह करता

रहेगा ।

इधर आइन्स्टाइन की स्थापनाए प्रकाशित होनी शुरू हुईं और, उधर, विश्व की परीक्षणशालाओ से तथा वेधशालाओ से, उनकी पुष्टि मे 'प्रत्यक्ष प्रमाण' आने लगे । आइन्स्टाइन की प्रतिभा को अब स्वीकार किया जाने लगा ।

1909 मे वह ज्यूरिख के विश्वविद्यालय मे असाधारण प्राध्यापक के पद पर था । वहा से वह प्राग के जर्मन विश्वविद्यालय मे आ गया । कुछ समय बाद फिर ज्यूरिख मे, और अन्त मे बर्लिन के कैसर विल्हेम इन्स्टीट्यूट मे ।

1933 मे नात्सियो का जर्मन सरकार पर कब्जा हो गया । आइन्स्टाइन तब बर्लिन विश्वविद्यालय मे प्रोफेसर था किन्तु, सौभाग्य से, इग्लैंड और अमरीका मे दो व्याख्यान-मालाए देने बाहर गया हुआ था । नात्सी नृशसो ने उसे उसकी अनुपस्थिति मे ही उसकी सम्पत्ति मे ही नही, विश्वविद्यालय के प्राध्यापक-पद से स्वय जर्मन गणराज्य द्वारा उपकृत 'समादृत नागरिक' की स्वतन्त्रता से भी वचित कर दिया । वह प्रिन्स्टन (न्यूजर्सी) की नई 'इन्स्टीट्यूट फॉर एडवान्सड स्टडीज' मे गणित के विद्यालय का निर्देशक बन कर अमरीका मे आ गया । यहा आकर उसने सबलता के साथ इजराइल मे यहूदियो के लिए एक नया राज्य स्थापित करने का समर्थन किया और, उसी प्रकार, एक विश्व सरकार के विचार को भी । किन्तु जब उसे इजराइल का राष्ट्रपति होने के लिए आमन्त्रित किया गया तो उसने स्पष्ट अस्वीकार कर दिया, यह कहते हुए कि "विज्ञान की समस्याओ से तो मेरा कुछ परिचय है, किन्तु मानव समस्याओ से जूझने की न मुझमे योग्यता ही है और न अनुभव ही ।"

आइन्स्टाइन को भी नोबल पुरस्कार मिला था—फोटोन्ज तथा क्वाण्टम-सिद्धान्त विषयक उसके विशिष्ट अनुसन्धानो के लिए । 1950 मे उसका 'अविभाजित क्षेत्र' (यूनिफाइड फील्ड) विषयक नया सिद्धान्त प्रकाशित हुआ जिसके गणित-सम्बन्धी सूत्रो मे 24 पृष्ठो मे गुरुत्वाकर्षण तथा विद्युत्-चुम्बक के क्षेत्रो को एक ही सूत्रमाला मे समन्वित कर दिखाया ।

एटम बम के आविष्कार पर आइन्स्टाइन को पश्चाताप था । उसे शुरू से यही आशा थी कि एटम की शक्ति का प्रदर्शन जापानी सरकार के प्रतिनिधियो की आखें खोल देगा । जापान के लोगो पर इसके भीषण प्रयोग की कोई आवश्यकता नही होगी । किन्तु हुआ वैसा नही । उसका स्वप्न एक यह भी था कि एटम का प्रयोग मानव-जाति की सेवा मे किया जाएगा ।

18 अप्रैल, 1955 को जब आइन्स्टाइन की मृत्यु हुई, तब भी वह सृष्टि को चालित करने वाले अन्तर्यामी नियमो को गणित की सरलता मे सूत्रित करने में ही निरत था । "सृष्टि के मूल मे पैठी महाशक्ति", उसका कहना था, "कोई जुआरिन नही है ।"
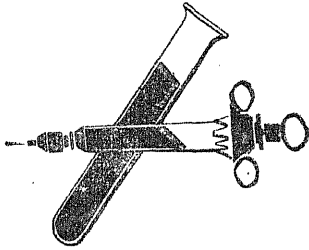
एलेक्ज़ेण्डर फ्लैमिंग

"साधारण-सी प्रतीत होने वाली घटनाओं में भी कुछ न कुछ अद्भुत तत्त्व प्रच्छन्न होता है, किन्तु उसका प्रत्यक्ष कर सकने के लिए भी आवश्यक होता है कि पहले हम एक कुशल शिल्पी बन चुके हों—हमें अपने हुनर में दक्षता प्राप्त हो चुकी हो।" सर एलेक्ज़ेण्डर फ्लैमिंग जो पेनिसिलिन का आविष्कार कर सका, वह केवल इसीलिए कि वह एक असाधारण शिल्पी था—और अपने हुनर में दक्ष था, यद्यपि उसकी अपनी नम्रता उसके मुंह से सदा यही कहलाती आई कि "सौभाग्यवश ही मैं यह कुछ कर सका हूं।" "पेनिसिलिन के आविष्कार में पहली सफलता ही," उसके शब्द हैं, "भाग्य की कृपा के कारण हुई थी।" हो सकता है कि आविष्कार में वह पहला कदम भाग्य की करनी ही हो, किन्तु एलेक्ज़ेण्डर फ्लैमिंग उसके लिए तैयार था—उसका, एक उसीका मस्तिष्क था वह जो उस घटना के लिए तब तक तैयार हो चुका था।

एलेक्ज़ेण्डर फ्लैमिंग का जन्म लॉकफील्ड फार्म पर, दक्षिण-पश्चिमी स्कॉटलैण्ड में, 6 अगस्त, 1881 के दिन हुआ था। हफ फ्लैमिंग के आठ बच्चों में वह सबसे छोटा था। अभी वह आठ साल का ही हुआ होगा कि पिता की मृत्यु हो गई; किन्तु मां ने एक ज़िन्दादिल तबियत पाई थी, और वह चरित्र की भी दृढ़ थी। वही अब घर की खेती-बारी की देखभाल करने लगी और उसीकी बदौलत, इतने बड़े परिवार में भी परस्पर-प्रेम यथावत् बना रहा। उसके तीन सौतेले लड़के भी उसके प्रति उतने ही अनुरक्त थे जितने कि उसके अपने जाए चार।

दस साल का होने तक एलेक्ज़ेण्डर पड़ोस के लूदून मूर स्कूल में पढ़ने जाता रहा। उसके बाद उसे डार्वेल स्कूल में दाखिल कर दिया गया जहां कि उसके बड़े भाई पहले से ही शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। स्कूल जाते हुए इन चार सालों तक एलेक्ज़ेण्डर को

चार मील एक पहाडी ढलान-सी उतरनी पडती और वापसी पर वही चढाई फिर तय करनी पडती। इस दैनिक पैदल यात्रा के दौरान मे उसने प्रकृति का पर्याप्त अध्ययन किया। उसकी बुद्धि कुशाग्र थी और बारह साल का होते-होते उसे किलमरनॉक एकेडमी मे भेज दिया गया।

दो साल बाद वह, अपने बडे भाई टॉमस के यहा, जॉन और रॉबर्ट नामक अपने अन्य दो भाइयो से आ मिला। यह वही टॉमस था जो आगे चलकर लन्दन का प्रसिद्ध नेत्र-विशेषज्ञ बना। जॉन और रॉबर्ट नेत्र-परीक्षक बन गए और उन्होने चश्मे वगैरह बनाने व बेचने का अपना स्वतन्त्र धन्धा ही शुरू कर दिया। उनकी परीक्षणशाला की भी लन्दन-भर मे धाक बैठ गई। चश्मो का यह कारखाना आज भी फ्लैमिंग परिवार के नियन्त्रण मे है।

किन्तु परिवार अभी आर्थिक दृष्टि से कोई बहुत समुन्नत नही हो पाया था और परिणामत आर्थिक कठिनाइयो के कारण ही एलेक्जेण्डर की पढाई-लिखाई रुक गई। सोलह साल की उम्र मे उसे एक शिपिंग कम्पनी मे नौकरी मिली, और प्रतीत होता है भाग्य यह सब देख रहा था। वह एलेक्ज़ेण्डर को देखकर मुस्कराया और एक-आख मानव-जाति को देखकर भी मुस्कराया—1901 मे एक वसीयत मे उसे भी कुछ हिस्सा मिल गया और उसकी शिक्षा फिर से शुरू हो गई। एलेक्जंण्डर ने चिकित्साशास्त्र का अध्ययन करने का निश्चय कर लिया।

शिपिग कम्पनी मे काम करते हुए एलेक्जेण्डर, जॉन और रॉबर्ट के साथ, लन्दन स्काटिश वालण्टियर्ज का सदस्य बन गया। इसके साथ ही, वह 'रेजीमेण्टल स्विमिग एण्ड वाटरपोलो' टीम का भी सदस्य था। उसकी यह टीम सेण्ट मेरी के मेडिकल स्कूल के मुकाबले मे भी शामिल हो चुकी थी। और, तमाशा यह है कि एलेक्ज़ेण्डर फ्लैमिंग ने एक खास स्कूल मे दाखिल होने का निश्चय भी फकत इसीलिए ही किया था कि वह कभी उस स्कूल के विरुद्ध वाटरपोलो खेल चुका था। यह नामुमकिन है कि उसे यह पहले से ही मालूम हो कि ऑल्मरोथ राइट स्कूल के चिकित्सा-विभाग मे बैक्टीरियॉलोजी (जीवाणु-विज्ञान) पढाने के लिए आ रहा है।

सेण्ट मेरी के स्कूल मे एलेक्जेण्डर एक ऑनर्ज का विद्यार्थी था। स्कूल के रिकार्डो मे अभी तक दर्ज है कि वह अपनी श्रेणी मे सदा चिकित्सा के हर विभाग मे प्रथम पद पर ही आया करता था फीजियॉलोजी (शारीरिक तत्र) मे भी, फॉर्मेकॉलोजी (औषध-प्रभाव) मे भी, पैथॉलोजी (रोग-विज्ञान) मे भी। हर इनाम उसीके हाथ लगता, किन्तु वह कोई किताबी कीडा नही था। उसमे प्रतिभा थी, विलक्षण बुद्धि थी। पढाई-लिखाई के अतिरिक्त और कामो मे भी उसकी दिलचस्पी कम नही थी। राइफल टीम का मेम्बर भी वह था, और स्विमिंग और वाटर-पोलो का ज़िक्र तो पहले ही आ चुका है। यही नहीं शौकिया नाट्य प्रदर्शनो मे अभिनय करने के लिए भी उसके पास वक्त निकल आता था। पढाई-लिखाई उसे स्वभाव से ही सुगम लगती थी।

1906 मे 25 वर्ष की आयु मे सेण्ट मेरी के स्कूल से स्नातक होकर एलेक्ज़ेण्डर फ्लैमिंग चिकित्सा-सम्बन्धी अनुसन्धान करने के लिए ऑल्मरोथ राइट का सहकारी हो गया। राइट भी केवल एक बैक्टीरियॉलोजी का प्राध्यापक ही नही था—रक्त के एक अश

फेजोसाइट्स (कृमि-भक्षक श्वेताणु) पर कुछ कार्य करके वह प्रसिद्धि पा चुका था।

पास्चर ने जीवाणुओं का सर्वप्रथम अन्वीक्षण किया था और यह सिद्ध कर दिखाया था कि ये 'क्षुद्र जन्तु' हर वक्त हमारे इर्द-गिर्द मंडरा रहे होते हैं और यह भी कि ये हर वक्त हमारे शरीर के अन्दर भी विद्यमान होते हैं। वैज्ञानिकों ने यह अनुभव किया कि छोटे-छोटे ये कीटाणु, जब हम हवा ले रहे होते हैं, हमारे शरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं— रोटी खाते, पानी पीते भी, और चमड़ी में जब कोई ज़ख्म या खरोंच लग जाती है तब भी तो, इन कीटाणुओं से हमारी मौत क्यों नहीं आ जाती, तबाही क्यों नहीं आ जाती? समस्या का कुछ समाधान एली मेचनिकॉफ को पेरिस में पास्चर इन्स्टीट्यूट में काम करते हुए मिल गया। उसने देखा कि खून में जो यह श्वेताणु या फेजोसाइट होता है वह एक सजीव प्राणी है जो माइक्रोब को हज़म कर जाता है। उधर रॉबर्ट कॉख कितने ही अन्वीक्षणों के आधार पर इस परिणाम पर पहुंच चुका था कि स्वयं रक्त-द्रव में ही कीटाणुओं को नष्ट करने की अन्तःशक्ति होती है।

राइट के अनुसन्धान ने ही आखिर इस वाद-विवाद पर अन्तिम निर्णय दिया कि इन कीटाणुओं को हड़प जाने के लिए इतना ही पर्याप्त नहीं होता कि ये श्वेताणुओं के सम्पर्क में आ जाएं, अपितु-रक्त-द्रव पहले उन्हें इस लायक कर दे, अर्थात् उन्हें निर्बल कर दे, तभी वे उनका भक्ष्य बन सकते हैं। राइट ने रक्त-द्रव के इस गुण का नाम रखा— ऑप्सोनिन (कृमि-पाचक)।
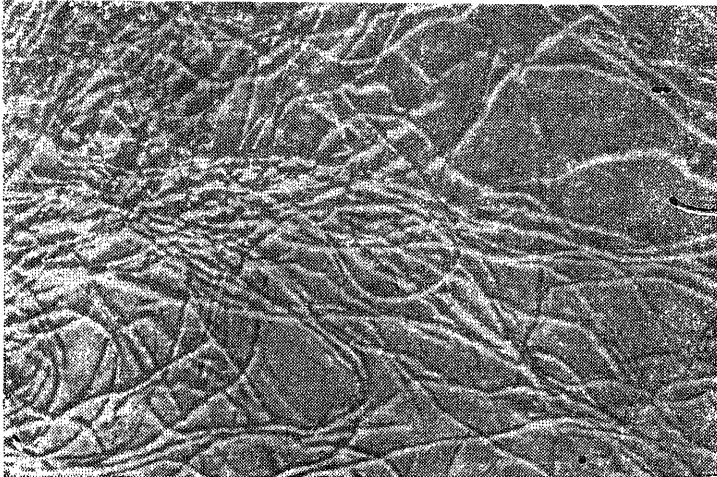
पेनिसिलिन उत्पादक फफूंद माइक्रोस्कोप में से देखे जाने पर

यह खोज, परिणामतः एक नूतन चिकित्सा-प्रणाली का प्रस्थान बिन्दु सिद्ध हुई। उस वक्त तक बीमारी का पता डाक्टर लोग मरीज़ के जिस्म को छूकर, या उसके हृदय

तथा फेफडो की गतिविधि को सुनकर, किया करते थे। अब माइक्रोस्कोप का इस्तेमाल मुमकिन हो गया—खून की परीक्षा हो सकती थी। मरीज के खून की दो बूदे माइक्रोस्कोप की स्लाइड मे देखकर बताया जा सकता था कि मरीज मे ऑप्सोनिक (कृमि-भक्षक) क्षमता कितनी है। और मरीज के खून के इन नमूने का मुकाबला एक तन्दुरुस्त आदमी के खून के साथ करके यह भी पता किया जा सकता था कि उसके श्वेताणुओ मे कीटाणुओ को निगल जाने की ताकत कितनी है। यदि रक्त मे, और उसके श्वेताणुओ मे, खुद यह काम करने की ताकत नही है तो मरीज़ को एक ऐसा टीका लगाया जा सकता है जो उन कीटाणुओ को नष्ट करने मे सहायक प्रतिपिण्ड (ऍण्टीबडीज) पैदा कर दे।

यह थी राइट की स्थापना, और राइट को यह लगा कि जो रोग इन कीटाणुओ की बदौलत होते है उनकी समस्या का हल, जैसे अब निकलने ही वाला है। ओर इसी अनुसन्धान को पूर्ण करने के लिए उसने कुशाग्रबुद्धि फ्लैमिग को अपना सहायक चुना था। राइट का आग्रह था कि कीटाणु-विशारद चिकित्सा तथा औषधि के प्रयोग मे दिन-रात रोगी की शय्या के निकट रहे और घडियो की सुइयो के मुताबिक मनोयोगपूर्वक सब कुछ देखते रहे और नोट करते रहे। बडी कडी ड्यूटी थी, किन्तु यही कुछ एक महान अनुसन्धान के लिए दीक्षा हुआ करती है।

इन्ही दिनो फ्लैमिग, प्रसगात्, प्रसिद्ध कलाकार रोनल्ड ग्रे का परम मित्र बन गया। ग्रे को उन दिनो घुटने मे एक फोडा (ट्यूबर्कल) निकल आया था, जिसका फ्लैमिग ने सफलतापूर्वक इलाज कर दिखाया। और, उधर, ग्रे की सिफारिश पर फ्लैमिग को चेलसिया आर्ट्स ग्रुप का सदस्य चुन लिया गया। इसके लिए ग्रे को खुद, प्रतिदान मे, एक गेलरी प्रदर्शनी मे सेण्ट मेरी'ज़ के बच्चो के वार्ड का एक चित्र उपहार मे देना पडा। यह चित्र चित्रकला की 'आधुनिक शैली मे अकित किया गया था। आलोचको ने जब चित्र की प्रशसा की, ग्रे को लगा जैसे उसका ध्येय पूर्ण हो गया है—यह दर्शा कर कि 'मॉडर्न आर्ट' मे कुछ भी गभीर तत्त्व नही है, किन्तु, साथ ही, उसे यह भी अनुभव हुआ कि सभवत फ्लैमिग भी एक अच्छा कलाकार है। दिल-बहलाव के लिए फ्लैमिग कीटाणुओ के ~~और~~ चित्र अकित करता रहा जिनमे रग भरने के लिए वह, और कुछ नही, कीटाणुओ की (खूनी) समुत्पाद (कल्चर) ही प्रयोग मे लाया करता।

प्रथम महायुद्ध के दौरान राइट की परीक्षणशाला को उठाकर बोलोन (फ्रास) मे ले आया गया। यहा पहुचकर राइट ने रासायनिक एण्टिसेप्टिक्स रोगनिरोधक के प्रयोग के विरोध मे एक प्रबल आन्दोलन ही खडा कर दिया। एण्टिसेप्टिक का काम होता है कि वह कीटाणुओ को नष्ट कर दे। फ्लैमिग ने अनुसन्धान करते हुए देखा कि रसायनशास्त्र के ये सशक्त रोगाणु-निरोधक जहा ज़ख्म के कुछ कीडो को मार देते है वहा वे शरीर के स्वाभाविक रक्षातन्त्र को—उसके श्वेताणुओ को—भी नष्ट कर देते है। फ्लैमिग को विश्वास हो गया कि "हमारे शरीर मे इन कीटाणुओ को नष्ट करने का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कोई उपाय यदि है तो ये हमारे अपने ही सेल हैं।" अब अनुसन्धान का यह कर्तव्य है कि इन जीवनकोशो की, शरीर मे ही अन्त स्थित इन स्वाभाविक शक्तियो की रोग-नाशक प्रवृत्ति का अध्ययन करे।

13 फरवरी, 1922 को लन्दन की रॉयल सोसाइटी के पास एक लेख पहुचा—'स्नायुओ तथा स्रावो मे उपलब्ध एक अद्भुत जीवाणु-विलायक तत्त्व।' निबन्ध मे फ्लैमिंग द्वारा एक प्राकृतिक तत्त्व 'लाइसोजाइम' की खोज का जिक्र था।

फ्लैमिंग को उन दिनो खुद नासिका-प्रणाली मे शोथ की तकलीफ थी और, उसके साथ ही, कुछ जुकाम भी था। उसने स्राव को समुत्पाद रूप मे बढाते हुए अपनी बामारी का कारण जानना चाहा। चार दिन बाद उसने देखा कि वह समुत्पाद तो एक अच्छा खासा, चमकते पीले रग का, उपनिवेश-सा बन चुका है। इस कीटाणु-समुत्थ पर अब उसने अपने नजले को कुछ क्षीण करके डालना शुरू किया, और यह देखकर वह हैरान रह गया कि इस तरह कमजोर किए जा चुके नजले की एक बूद से ही कीटाणुओ का एक क्यूबिक सेण्टीमीटर छूमन्तर हो गया। फ्लैमिंग ने अपने अनुसन्धान को जारी रखा और पाया कि यह लाइसोजाइम आसुओ मे भी मिलता है। थूक मे भी और शरीर के कितने ही अन्य अंगो और स्नायुसूत्रो मे भी यह मिलता है। खून मे भी यह अद्भुत द्रव्य रहता है। क्या और भी कही यह मिल सकता है ? फ्लैमिंग ने मुर्गी के अण्डो की परीक्षा की और देखा कि अण्डे की सफेदी मे भी यह होता है। गाय के दूध मे भी, और माताओ के दूध मे भी लाइसोजाइम की पर्याप्त मात्रा होती है। फ्लैमिंग ने लिखा, "लाइसोजाइम पर्याप्त-प्रकीर्ण कीटाणु-नाशक खमीर है, और सभवत सभी जीव-कोशो मे प्रकृतित विद्यमान है, और कीटाणुओ को नष्ट करने का शायद मुख्य प्राकृतिक उपाय भी यही है।" प्रकृति अपनी रक्षा इन कीटाणुओ से इस प्रकार आप ही कर लेती है।

1928 की गर्मियो मे सेण्ट मेरी के अस्पताल मे अपनी अधेरी परीक्षणशाला मे एलेक्जेण्डर फ्लैमिंग ने (अब वह 47 साल का हो चुका था) एक तश्तरी का ढक्कन उतारा जिसमे स्टेफीलोकॉक्स का समुत्पाद तैयार किया गया था—अगूरो के गुच्छे की तरह फोडे-फुन्सिया पैदा करने वाले कीडो का एक झुरमुट! फ्लैमिंग ने देखा कि समुत्पाद जैसे कुछ सड चुका है—उसपर नीले रग की कुछ फफूदी-सी उग आई है। खिडकी कुछ खुली रह गई थी और हवा के जरिये उडकर फफूदी का एक 'स्पोर' शायद इधर आ गया था और यहा एक ही क्षण मे, तश्तरी के खुलते ही, पेट्रि के द्रव पर आ बैठा था। एक ही 'स्पोर' अब एक पूरा का पूरा उपनिवेश बन चुका था।

इस उपनिवेश मे कुछ अजीब चीज भी थी जो फ्लैमिग की तेज नजर से बची न रह सकी फफूदी भी तश्तरी मे थी, और कीटाणुओ का यह उत्पाद भी तश्तरी के अन्दर ही था, किन्तु फफूदी के चारो ओर एक वृत्त-सा भी था जो इन कीटाणुओ से सर्वथा विमुक्त था। अर्थात् फफूदी ने कीटाणुओ को नष्ट कर दिया था, फफूदी मे कीटाणुओ को नष्ट करने की ताकत थी।

नीले रग की यह कीटाणु-नाशक फफूदी शक्ल मे ब्रश-जैसी लगती थी, इसीलिए उसका नाम भी पेनिसिलियम रख दिया गया।

अब फ्लैमिंग ने पेनिसिलियम की फफूदी की वैज्ञानिक और नियमित रूप मे परीक्षा आरभ कर दी। उसने कुछ स्पोरो को एक भोज्य (पोषक) द्रव्य पर उगाया और कुछ दिन बढने के लिए छोड दिया। इसके बाद उसने तरह-तरह के कीटाणु तश्तरी पर

उतारे और उन्हे फफूदी के सम्पर्क मे लाने की कोशिश की। परिणाम की जाच करते हुए उसने देखा कि कुछ किस्म के कीटाणु तो बढकर फफूदी तक पहुच गए है किन्तु एक किस्म के कीटाणु हैं कि उनकी यह अभिवृद्धि कुछ दूर आकर ही रुक गई है। अर्थात् फफूदी से कुछ चीज़ ऐसी उपजी थी जो एक किस्म के कीटाणुओ के लिए मौत साबित हुई।

खोज जारी रही। फ्लैमिग ने अब इस फफूदी को एक द्रव माध्यम मे उगाया। इस द्रव मे भी कीटाणुओ को नष्ट करने की शक्ति आ गई। उसे प्रत्यक्ष हो चुका था कि यह तत्त्व—जिसे आज हम पेनिसिलिन कहते है—फफूदी मे से पैदा होकर कीटाणुओ को बढने से रोक सकता है, उन्हे नष्ट कर सकता है, उन्हे घोलकर खत्म कर सकता है। पेनिसिलिन पेट्रि डिश मे पडे बैक्टीरिया को नष्ट कर सकती है। कही ऐसा तो नही हो कि यह शरीर के जीवकोशो को हानि पहुचा जाए? यह जहरीली निकली तो? और परीक्षण किए गए—इस बार खरगोशो पर और सफेद चूहो पर। परिणाम उत्साहवर्धक थे। फ्लैमिग ने कहा, "परीक्षणो द्वारा सिद्ध इसकी यह अ-विषाक्तता ही थी जिसे देखकर मेरी यह आस्था हो गई कि एक न एक दिन पेनिसिलिन एक स्वतत्र चिकित्सा के रूप मे प्रयोग मे आने लगेगी।"

पेनिसिलिन की खोज मे और परीक्षाओ मे जो सहायक वर्ग उसके साथ काम कर रहा था, फ्लैमिग उसके साथ जहा तक सम्भव था, चलता गया जितने भी सुन्दर रूप मे हो सका, अपने अनुसन्धान को उसने प्रकाशित भी किया, किन्तु सारी की सारी गवेषणा को वही ठप कर देना पडा, क्योकि पैसा खत्म हो चुका था।

इसी समय, उधर ऑक्सफोर्ड मे, प्रो० एच० डब्ल्यू० होवी तथा डाक्टर ई० बी० चेन लाइस्सोज़ाइम पर अपने अनुसन्धान समाप्त कर चुके थे और गवेषणा-जिज्ञासा के लिए एक नये क्षेत्र की तलाश मे थे। यह 1937 की बात है। उन्होने पेनिसिलिन पर फ्लैमिग की रिपोर्ट पढी और निश्चय किया कि इस नूतन द्रव्य के रसायन-तन्त्र की परीक्षा होनी चाहिए। थोडे-थोडे परिमाणो में उन्होने पेनिसिलिन का निर्माण किया और पशुओ पर, उसके साथ, परीक्षण करते हुए उन्हे अद्भुत सफलता भी मिली।

अब, समय मनुष्यो पर भी इसकी परीक्षा करने का आ गया है, उन्हे ऐसा लगा। पहला मरीज जिसपर एक नई दवाई का तजरबा किया जाता है हमेशा एक ऐसा केस ही हुआ करता है जिसपर 'आज तक' ज्ञात कोई औषध कारगर साबित नही हो सकी हो। किन्तु पेनिसिलिन का इस्तेमाल जिस शख्स पर पहले-पहल किया गया वह भला-चगा होने लग गया था तभी एकाएक दवा ही खत्म हो गई। कुछ हो, चेन और होवी के लिए इतना ही बहुत था जितना वे प्रत्यक्ष कर चुके थे उसीमें इस नई दवा की अद्भुत सम्भावनाए, कम से कम उन्हे, स्पष्ट थी।

1941 मे, ब्रिटेन उधर युद्ध मे शामिल हो चुका था। इसलिए होवी अमरीका पहुचा कि वहा के औषध-निर्माताओ की अभिरुचि इस ओर जगाए। पेनिसिलिन को शुरू-शुरू मे युद्ध की आवश्यकताए पूर्ण करने के लिए ही बनाया गया। बेशुमार लोगो की जान बचाई इसने। और शान्ति के दिनो तो और भी ज्यादा बेशुमार लोग इसकी बदौलत मरते-मरते बच चुके हैं।

पेनिसिलिन की उपयोगिता आविष्कृत करने के 17 साल बाद फ्लैमिंग को नोबल पुरस्कार दिया गया था। 1944 मे ब्रिटेन के बादशाह ने भी कृतज्ञता ज्ञापन करते हुए उसे नाइट का खिताब भेंट मे दिया। एलेक्ज़ेण्डर फ्लैमिंग स्वय मरते दम तक कीटाणु-विज्ञान मे अन्वेषण-रत ही रहा। सर एलेक्ज़ेण्डर फ्लैमिंग ने अन्वेषण के लिए एक सर्वथा नूतन क्षेत्र ही विज्ञान-जगत् को खोल दिया था। अमरीका मे, रूट्जर्स विश्वविद्यालय के डाक्टर सैल्मान ए० वाक्समान ने स्ट्रेप्टोमाइसीन का विकास किया। आज ऑरिओमाइसीन तथा टेर्रामाइसीन दो और एण्टिबायटिक भी है जिन्हे बच्चा-बच्चा जानता है, दोनो का अपना-अपना क्षेत्र है—अपने ही भोज्य कीटाणु है।

इस प्रकार प्राय एक अन्वेषण एक और अन्वेषण को जन्म दे जाया करता है। सर एलेक्ज़ेण्डर फ्लैमिंग का कहना था

"एक भले काम की परीक्षा ही शायद इसीमे होती है कि वह एक और भी ज़्यादा भलाई की चीज को पीछे छोड जाता है और इस तरह खुद को खत्म कर जाता है। अनुसन्धान का उद्देश्य होता है—ज्ञान मे प्रगति।"
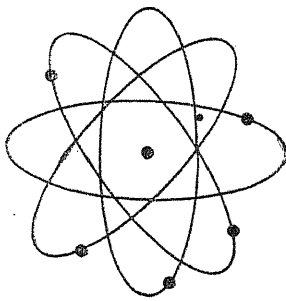
नील्स बोर

दरबारी अन्दाज़ का बूढ़ा अपनी सीट से उठा और, निहायत चुस्ती और अदब के साथ सिर से हैट उतारते हुए, उसने बन्दगी की। पास में खड़ी महिला ने, जो एक अमरीकन वैज्ञानिक की पत्नी थी, बताया था कि मेरा पति कोपेनहेगन के 'इन्स्टीट्यट फॉर थिअरेटिकल फीज़िक्स' में विद्या ग्रहण कर रहा है। सलामी का यह दृश्य एक स्ट्रीट-कार में हुआ, किन्तु उस अभिनन्दन का मात्र न वह महिला थी न बगल में खड़ा उसका पति। यह अभिनन्दन डेनमार्क के वैज्ञानिक-शिरोमणि को किया गया था। कहते हैं, डेनमार्क के लोगों को अपनी इस चीज़ पर बेहद नाज है, मुल्क के जहाज़ बनाने के उद्योग पर, अपने ही यहां उपजे दूध-मक्खन-पनीर पर, और हैन्स क्रिश्चन एण्डरसन तथा नील्स बोर पर।

नील्स बोर का जन्म 7 अक्तूबर, 1885 को हुआ था। मां का नाम था एलेन एँडलर। और बाप, क्रिश्चन बोर, कोपेनहेगन विश्वविद्यालय में शरीर-तंत्र (फीज़ियॉलोजी) का प्रोफेसर था। बालक का जन्म ननसाल में हुआ था—यह घर आज भी कोपेनहेगन की गैर-सरकारी इमारतों में खूबसूरती में बेमिसाल माना जाता है, और इसका अपना नाम भी है—'किंग जार्ज का महल'। नील्स बोर शुरू से ही एक प्रतिभाशाली विद्यार्थी था; और उसकी सम्पूर्ण शिक्षा-दीक्षा कोपेनहेगन विश्वविद्यालय में ही हुई। 22 वर्ष की आयु में डेनिश विज्ञान सोसाइटी ने उसे 'सर्फेस-टेंशन' सम्बन्धी उसके मौलिक अध्ययनों पर, एक स्वर्ण-पदक भी दिया था। नील्स और उसका भाई हैरल्ड—जो आगे चलकर एक प्रसिद्ध गणितज्ञ बन गया—दोनों, जहां-जहां भी स्कैण्डेनेविया का तन्त्र है

(उन सभी देशों मे), फुटबाल के अद्वितीय खिलाडी मशहूर हो चुके थे, और दोनो ही आल-डेनिश टीम के सदस्य भी थे।

1911 मे बोर ने भौतिकी मे पी-एच० डी० हासिल की और, उसके बाद, इग्लैड की कैवेण्डिश लेबोरेटरीज़ मे, इलेक्ट्रॉन के जनक जे० जे० टॉमसन की छत्रछाया मे अनुसन्धान करने की पिपासा से निकल पडा। कुछ देर सर अर्नेस्ट रदरफोर्ड के साथ काम करते हुए दोनो वैज्ञानिको मे आजीवन मैत्री हो गई, और बोर ने अपने पुत्र का नाम भी अर्नेस्ट ही रखा—जेसा कि रदरफोर्ड का क्रिश्चन नाम था—यद्यपि डेनिश मे अर्नेस्ट का पर्यायवाची 'अर्न्स्ट' होता है।

1913 मे बोर ने अणु की 'अन्त करण' सम्बन्धी अपनी मौलिक कल्पना विज्ञान-जगत् के सम्मुख प्रस्तुत कर दी। यह स्थापना आज कही आगे विकसित हो चुकी है—उसके मूल सिद्धान्त मे और उसके परतर रूप मे कितने ही परिवर्तन भी आ चुके है, किन्तु, मूल मे, यह बोर की वही दृष्टि ही थी जिसकी बदौलत आज भी रसायनशास्त्र मे तथा विद्युत्-विज्ञान मे कितने ही गम्भीरतर अन्वेषणो की परम्परा चली और अणु-शक्ति का विकास सम्भव हो सका।

अणु—अर्थात् किसी भी द्रव्य का छोटे से छोटा भाग, एक कण, जिसमे उस द्रव्य की निजी विशिष्टताए ज्यो की त्यो बनी रहती है, नष्ट नही हो जाती। ये अणु, उदाहरण-तया, ताबे के भी हो सकते है, निओन के भी, यूरेनियम के भी। सैद्धान्तिक रूप मे तो इन सभी छोटे, और अधिक छोटे टुकडो मे, परमाणुओ मे, तोडा जा सकता है लेकिन उन्हे इस तरह कितना ही छोटा क्यो न कर लिया जाए—अणु की अवस्था तक उनकी वह मौलिक विशिष्टता, ताबे-निओन-यूरेनियम के रूप मे वैसा ही, अविनश्वर ही—बनी रहेगी। उसमे किंचिन्मात्र भी परिवर्तन नही आएगा ताबा ताबा ही रहेगा, निओन निओन, और यूरेनियम यूरेनियम। किन्तु, हा, अणु का आगे और विभाजन हुआ नही कि वहँ कुछ से कुछ और हुआ नही, उसकी प्रकृति बदली नही।

अणु दो अशो का बना होता है—एक, 'अन्त करण' जिसे न्यूक्लियस अथवा केन्द्रक कहते है और, दूसरा, इस नाभि-सस्थान से पृथक्, दूर-स्थित इलेक्ट्रॉन नाम्न के कणो का समुच्चय—'बाह्य प्रावरण। अणु की बोर द्वारा प्रस्तुत कल्पना मे—'न्यूक्लियस' केन्द्र अथवा नाभि रूप मे स्थिर रहता है, जबकि ये इलेक्ट्रॉन उस केन्द्रबिन्दु के गिर्द वृत्ताकार परिधियो मे निरन्तर परिक्रमा काटते रहते है। अणु के सधान की इस कल्पना की तुलना, प्राय, सौरमण्डल के साथ की भी जाती है, क्योकि सौरचक्र मे भी तो ग्रह-नक्षत्र सूर्य के गिर्द, अपनी-अपनी परिधियो मे ही, घूमा करते हैं।

अणु कितना छोटा होता है, इसकी शायद कल्पना भी असभव प्रतीत होती है। साधारण परिमाण के 50,00,00,000 अणुओ को मिलाकर कुछ फैला कर—यदि एक साथ रखा जाए तब भी, शायद, यह पृष्ठ पूरी तरह से ढका न जा सके। फिर भी अणु की यह छोटी-सी दुनिया प्राय 'शून्याकाश' ही अधिक होती है। अणु के न्यूक्लियस का व्यास भी स्वय अणु के व्यास का लगभग एक-लाखवा हिस्सा होता है—जिसके गिर्द इलेक्ट्रॉन इस तेजी के साथ चक्कर काट रहे होते है कि अणु का वह अन्तरिक्ष जैसे आपूर्ण

भरा-भरा ही दिखाई देता है।

और ये इलेक्ट्रॉन, परिमाण मे वे न्यूक्लियस की अपेक्षा बहुत ही छोटे होते है, बगैर किसी तरतीब के अन्धाधुन्ध ही उडते-फिरते हो, ऐसी बात नही है। उनकी भी विनिश्चित परिधिया होती हैं। किन्तु वृत्ताकार-से ये यात्रा-पथ, इलेक्ट्रॉनो के, एक ही स्थान पर स्थिर कभी नही रहते, उनका कक्ष निरन्तर परिवर्तित होता चलता है जिससे कितने ही खोल-से चक्र एक ही इलेक्ट्रॉन के पथ-बन्धन से अविरत बनते-मिटते प्रतीत होते है।

अणु का सरलतम रूप है—हाइड्रोजन अथवा उदजन। हाइड्रोजन प्राकृतिक तत्त्वो मे सबसे हलका तत्त्व है। इसके न्यूक्लियस मे केवल एक प्रोटॉन होता है। प्रोट्रॉन मे, मात्रा मे इलेक्ट्रॉन के समान ही, आवेश होता है किन्तु प्रोटॉन मे यह (चार्ज) ऋण न होकर धन होता है। और, साथ ही, प्रोटॉन भारी भी इलेक्ट्रॉन की अपेक्षा 2,000 गुणा होता है। साधारणतया, हाइड्रोजन के न्यूक्लियस के गिर्द एक ही इलेक्ट्रॉन परिक्रमा किया करता है। सरलता की दृष्टि से, हाइड्रोजन के बाद प्रसिद्ध अ-विस्फोटक हलकी गैस हीलियम का नम्बर आता है। हीलियम के न्यूक्लियस मे दो न्यूट्रॉन होते है और दो ही प्रोटॉन, और उसकी परिधि मे भी दो ही इलेक्ट्रॉन गतिशील हुआ करते है। और यूरेनियम में—वह तत्त्व जिसने एक बार तो सचमुच हमारी इस धरती को डावाडोल करके दिखा दिया था—92 इलेक्ट्रॉन 7 साफ-सुथरी परिधियो मे चक्कर पर चक्कर काट रहे होते हैं। इस प्रकार, प्रत्येक तत्त्व मे इन प्रोटॉनो तथा न्यूट्रॉनो की अलग-अलग सख्या होती है जिनके गिर्द विभिन्न आकार एव सख्या की परिधियो मे इलेक्ट्रॉन निरन्तर घूम रहे होते है।

सभी जानते हैं कि विद्युत् के डिस्चार्ज से आसपास की कोई भी गैस सहसा चमक उठती है। निओन मे से जब विद्युत् को गुजारा जाता है, उसमे नारगी की-सी एक लाल-लाल चमक पैदा हो आती है। हर तत्त्व की, इसी प्रकार, जैसे अपनी ही एक विशिष्ट वर्ण मुद्रा होती है—अपनी ही 'अगुलि-छाप' होती है। और, सचमुच, किसी भी तत्त्व मे इस प्रकार उत्पन्न प्रकाश-चाप का वर्ण विश्लेषण करके वैज्ञानिक हमे तत्क्षण बतला सकते है कि उस तत्त्व की आन्तर रचना क्या है, किस प्रकार की है—उस तत्त्व का नाम क्या है।

बोर ने अपनी अणु-कल्पना के आधार पर, तथा कुछ क्वाण्टम सिद्धान्त के आधार पर, (अणु की प्रकृति-सम्बन्धी) इस समस्या का समाधान उपस्थित करने की कोशिश की कि क्या सचमुच विभिन्न द्रव्यो द्वारा विसर्जित प्रकाश के वर्ण-रूपो की पूर्व-कल्पना हम कुछ कर सकते हैं—इन वर्ण-रूपो के आधार पर क्या वस्तु के स्वरूप की कुछ कल्पना, कुछ पूर्वाभास, कर सकते हैं? बोर ने एक नया विचार इस सम्बन्ध मे इस प्रकार अभिव्यक्त किया कि ये इलेक्ट्रॉन सामान्यत तो अपने विनिश्चित वृत्तो मे ही चक्कर काटते है किन्तु जब अणु मे से बिजली गुज़ारी जाती है तब झट से कूदकर, ये अपनी लीक मे से अगली, और पहले से कुछ बडी, परिधि मे पहुच जाते है और वहा से फिर वापस—उसी पुरानी परिधि मे आ जाते हैं। अर्थात् परिधि-परिवर्तन की इस उछल-कूद का ही परिणाम होती है यह अद्भुत चमक-दमक जो एक प्रकार से अणु-अणु का एक और लक्षण-

सा ही बन जाती है। अणु की आन्तर रचना, तथा उसके इलैक्ट्रॉनो द्वारा यह परिधि-व्यतिक्रमण इन दो विलक्षणताओ के आधार पर, अब, बोर को अणु-अणु की वर्ण-भंगिमा का पूर्वाभ्यास देने मे भी कुछ मुश्किल पेश नही आई।

जैसा कि प्राय विज्ञान की किसी भी नूतन दृष्टि के साथ हुआ करता है, बोर की इस आन्वीक्षिकी को शुरू-शुरू मे बहुत ही कम लोग ग्रहण कर पाए थे यहा तक कि नोबल पुरस्कार समिति की आखें भी इस विषय मे कही नौ साल बाद 1922 मे खुली। लेकिन, इस देरी के बावजूद, 37 वर्ष की आयु मे बोर की छोटी उम्र का कोई भी भौतिकीविद तब तक नोबल-विजेता न बन सका था। खैर, विज्ञान-जगत् ने बोर को सम्मानित करने मे बहुत देर लगाई हो, सो भी नही। पुरस्कृत होने से पूर्व ही उसे कोपेन-हेगन के 'समीक्षात्मक भौतिकी सस्थान' का अध्यक्ष नियुक्त किया जा चुका था।

अब क्या था—दुनिया के कोने-कोने से विद्यार्थी डेनमार्क के छोटे-से देश की ओर खिंचते आते। यह सब बोर की निजी प्रतिभा का आकर्षण था। आइन्स्टाइन ने कहा "कौन कह सकता है बोर के अभाव मे अणु-सम्बन्धी ज्ञान की स्थिति क्या होती? व्यक्तित्व की दृष्टि से भी, सहयोगियो-सहकारियो मे ऐसे स्निग्ध मित्र कहा मिला करते है? बातचीत करते हुए भी, उसके साथ, यह कभी अनुभव नही होता कि कोई पूर्वाग्रही बलपूर्वक यहा कहता जा रहा है कि सत्य मुझे उपलब्ध हो चुका है, अपितु सदा यही प्रतीति होती है कि कोई सततान्वेषी ही सामने खडा है"

1939 की जनवरी में लिज़े माइतनर—नात्सी आतको से भाग खडी एक आस्ट्रियन यहूदी कन्या—और उसका भतीजा आतो फ्रीश कोपेनहेगन मे बोर के साथ काम कर रहे थे। कुछ जर्मन वैज्ञानिको की नई खोजो के बारे मे उन्होने एक लेख पढा और, उसे पढकर, उन्हे ऐसा लगा कि यूरेनियम के अन्त करण को प्राय दो समान-भागों में विभक्त किया जा सकता है। यदि न्यूक्लियस के इस विभाजन द्वारा यह सम्भव हो जाए तो (और युद्ध-विजय की दृष्टि से इसके इस परिणाम का महत्त्व कितना हो सकता था!) शक्ति के एक अनन्त स्रोत को मानो विसर्जित किया जा सकता था। बोर यह सूचना पाते ही अमरीका पहुचा और वहा आइन्स्टाइन आदि प्रख्यात वैज्ञानिको से, तथा कौलम्बिया विश्वविद्यालय में अनुसन्धान-रत एनरीको फेर्मि से, मिला। कुछ ही दिनो में विश्व-भर की परीक्षणशालाओ से माइतनर-फ्रीश के 'गूढ-अनुमान' के समर्थन आने लगे और उसके बाद की कहानी तो एटम बम का सर्व-विदित इतिहास है।

बोर डेनमार्क लौट आया और इन्स्टीट्यूट मे फिर से अपने अनुसन्धानो में लग गया। किन्तु 1940 के अप्रैल में कुछ ही घण्टो की मार मे जर्मनी ने डेनमार्क पर कब्ज़ा कर लिया। लगभग चार साल तक जर्मनो ने डेन लोगो को छुट्टी दे रखी थी कि वे अपना अनुशासन खुद ही करते रहे। उनका विचार था कि सहयोगिता एव सहानुभूति द्वारा डेनमार्क को वश में कर सकना अधिक सुगम होगा, किन्तु सब व्यर्थ। आये दिन हडताले, आये-दिन चोरी-छुपके तबाहिया—हमलावर भी आखिर तग आ गए और, 1944 के सितम्बर मे, उन्होने बादशाह को कैद कर लिया और फौज को निहत्था कर दिया। इसके बाद जब जर्मन सिपाहियो का प्रोग्राम बना कि डेनमार्क के 6,000 यहूदियो को खत्म

कर दिया जाए, उसी वक्त उन्हें खबर मिली कि इनमें 5,000 तो पहले ही छोटी-छोटी किश्तियों में स्वीडन फरार हो चुके हैं। डेनमार्क की जनता का यह, सचमुच, एक प्रशस्य वीरकृत्य था।

नील्स बोर भी—एक यहूदी मां का बेटा—नात्सियों के चंगुल में आने से पहले ही पत्नी-समेत—मछली पकड़ने की एक छोटी-सी किश्ती में सवार होकर स्वीडन पहुंच गया। कहते हैं नात्सियों ने पीछे उसके घर की तलाशी ली। लेकिन उनकी नजर शायद (नोबल पुरस्कार के प्रतीक उस) स्वर्ण-पदक पर नहीं पड़ी—तेज़ाब की एक बोतल में वह एक ओर घुला पड़ा था। खुद डेन लोगों का ही यह कर्तव्य रह गया था, अब कि युद्ध की समाप्ति पर आकर वे उसका उद्धार करें और उसे फिर से ढालकर 'स्मारक' बना लें।

स्वीडन से बोर-दम्पती अमरीका पहुंचे और वहां वे लोस अलामास के एटामिक प्राजेक्ट में अपने पुत्र—भौतिकी में ख्यातिप्राप्त—आगे से आ मिले।

लड़ाई जब खत्म हुई, बोर कोपेनहेगन और अपनी प्रिय इंस्टीट्यूट में लौट आया। बोर को दो चीज़ों में दिलचस्पी है—विज्ञान में तथा विश्व-शान्ति में। ज्यों ही अणु के विस्फोट की खबरें दुनिया में फैलने लगीं, उसने तुरंत अपील की कि इसके प्रयोग पर अविलम्ब अन्तरराष्ट्रीय नियंत्रण हो जाना चाहिए; किन्तु सुनता कौन था? डेनिश परमाणु शक्ति कमीशन का अध्यक्ष होने के नाते वह 1952 में आयोजित जिनेवा के शांति सम्मेलन में शामिल होने गया और, वहां पहुंचते ही, उसे उस अधिवेशन का अध्यक्ष चुन लिया गया अक्तूबर 1957 में नील्स बोर को 'फोर्ड एटम्स फॉर पीस' पुरस्कार (4,00,000 रुपये) मिला। जीवित वैज्ञानिकों में, संभवत: विज्ञान के इतिहास में, इतने अधिक पुरस्कार व पारितोषिक किसी और वैज्ञानिक ने नहीं लिए जितने बोर ने।
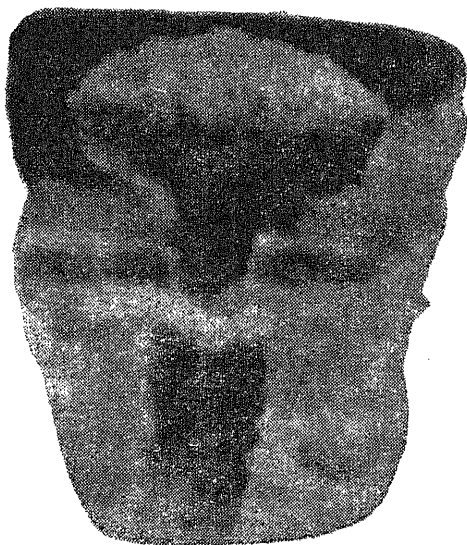
बोर की आमोद-परिहास बुद्धि भी विलक्षण है। भौतिकी मे कण-विषयक एक नई स्थापना पर विवेचन के दौरान मे उसकी एक उक्ति इस प्रकार प्रसिद्ध है कि "इस विषय मे तो हम सब एकमत है ही कि यह सिद्धान्त सचमुच कुछ न कुछ बेतुका है, लेकिन वैमत्य भी हमारा इस बारे मे ही है कि क्या इसकी कल्पना वस्तुत इस हद तक बेतुकी है कि उसके सही हो सकने की भी कुछ सभावना है। मेरा अपना विचार यही है कि यह अभी इतनी ज्यादा बेसिर-पैर की नही हो पाई।"

शक्ल-सूरत से बोर एक बूढा दादा लगता है—भारी-भरकम किन्तु गठीली देह, आखो पर भवो की वह फैलती हुई कटीली झाडी-सी, आवाज़ मद्धिम और दबी-दबी किन्तु शब्द कुछ तेजी के साथ निकलते हुए। वैज्ञानिक होने के साथ-साथ वह एक अच्छा-खासा खिलाडी भी है, और माना हुआ खिलाडी। स्काइग, बोटिंग, साइकलिंग—और सभी कुछ खूब देर तक निभा सकने का दम। 54 की उम्र मे आस्लो (नार्वे) मे एक 'स्काई रेस' उसने सचमुच जीती भी थी।

आज जब वह 80 साल का होने को है, बोर का ख्याल है कि वह अब विज्ञान की किसी नई खोज के लायक नही रह गया। आजकल उसका शुगल है—कोई आया तो कुछ पढा दिया, वरना विश्व-शान्ति के लिए कुछ न कुछ प्रयत्न करते रहे।

हम भी, गली मे खडी उस मोटर मे उठ खडे हुए उस बूढे की तरह, विज्ञान के एक दिग्गज का अभिवादन करते है—जिसकी 'अणोरणीयस्' की, केली अर्थात् नन्हे अणु के मॉडल की इस परिकल्पना ने हमारी दुनिया को इतना बदल डाला है।
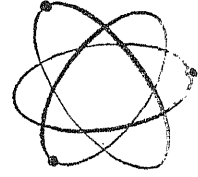
एनरीको फेर्मि

"इटली का समुद्रयात्री नई दुनिया के किनारे आ लगा। और ज़मीन पर पैर रखते ही उसने देखा कि लोग तो यहां सब दोस्त ही दोस्त हैं। और कि इधर की दुनिया उतनी पेचीदा भी नहीं है जितनी कि उसने समझ रखी थी।"

इस सन्देश का कोलम्बस के (1492 में) अमरीका पहुंचने से कोई सम्बन्ध नहीं था। शिकागो विश्वविद्यालय के 'न्यूक्लियर फिश्शन प्रॉजेक्ट' के अध्यक्ष आर्थर एच० कॉम्प्टन और नेशनल डिफेन्स रिसर्च कमीशन के डायरेक्टर जेम्स बी० कोनेण्ट के बीच टेलीफोन पर कुछ बातचीत चल रही थी; उसी बातचीत का एक अंश यह वाक्य था। कॉम्प्टन ने कोनेण्ट को एक सूचना भेजने के लिए यह अनोखा ढंग निकाला था कि विश्व में प्रथम एटामिक रिएक्शन सफल हो चुका है। यह सन्देश 1942 में प्रसारित किया गया था। 'छोटी-सी दुनिया' का मतलब था प्रस्तुत प्रतिक्रिया में अभिवांछित यूरेनियम का परिमाण; 'दोस्त बाशिन्दो' का अर्थ यह था कि प्रतिक्रिया को नियंत्रित किया जा सकता है; और 'इटली का समुद्रयात्री' था—वैज्ञानिक एनरीको फेर्मि।

और 'नई दुनिया'—वह तो, जैसे, किसी सिद्ध पुरुष की भविष्यवाणी ही थी। शिकागो यूनिवर्सिटी के स्टेडियम के नीचे बने उस वीरान स्क्वैश कोर्ट में अणु की जो वह पहली विघटन-परम्परा चली थी, उसकी बदौलत हमारी दुनिया आज इतनी अधिक बदल चुकी है कि अब कदम वापस ही नहीं ले जाया जा सकता। वह प्रथम परीक्षणात्मक चेन-रिएक्टर ही था जो अणु बम के, तथा अणु-शक्ति के, शान्तिमय प्रयोगों के अद्भुत रहस्यों की कुंजी हमारे हाथ में थमा गया है।

एनरीको फेर्मि का जन्म 29 सितम्बर, 1901 को रोम (इटली) मे हुआ था। पिता ने कोई नियमित शिक्षा न पाई थी, किन्तु कडी मेहनत करके वह, आखिर, रेलरोड के एक डिवीजन का प्रधान बन ही गया था। मा एक प्राथमिक स्कूल मे अध्यापिका थी। तीन-तीन बच्चो की एक साथ परवरिश, जबकि उनकी आयु मे अन्तर कुल मिलाकर तीन वर्ष का ही हो, किसी भी गृहिणी के (स्वास्थ्य के) लिए एक अच्छी-खासी समस्या बन जाएगा, इसीलिए, सबसे छोटे बच्चे एनरीको को गाव मे भेज दिया गया जहा वह प्राय तीन साल अपने भाई-बहिनो से अलग ही रहा। पीछे चलकर जब दोनो भाइयो मे कुछ परिचय हुआ —बडा भाई केवल एक वर्ष ही उससे बडा था—तब दोनो को एक क्षण के लिए भी अलग कर सकना मुश्किल हो गया। दिन का ज्यादा हिस्सा, दोनो का, बिजली की मोटरो और हवाई जहाजो के मॉडल बनाने मे गुजरता। दुर्भाग्य से, अभी एनरीको 14 बरस का ही हुआ था कि, उसका यह भाई गुजर गया, और उसकी मा शायद इस धक्के को सारी उम्र बरदाश्त नही कर सकी। एनरीको खुद एक लजीली प्रकृति का बालक था, भाई की इस मृत्यु से जो व्यथा और तनहाई उसके जीवन मे इस तरह आ गई उसकी किंचित् परि-पूर्ति उसके भाई के एक सहपाठी, एनरीको पेर्सिको ने कर दी—यह भी कुछ कम सौभाग्य की बात न थी। दो-दो एनरीको, और दोनो की अभिरुचिया भी प्राय एक—विज्ञान के अध्ययन को दोनो ने एक शौक बना लिया आज अपने गाव और शहर का स्थानीय चुम्बक-क्षेत्र अंकित कर रहे है तो कल आप ही आप—बिना किसी प्रकार की बाह्य सहायता के—जाइरोस्कोप के सिद्धान्त की स्थापना मे लगे हुए हैं।

1918 मे एनरीको पीसा के कालिज मे दाखिल हो गया। वहा जाकर उसने कम्प्र तन्तुओ (वाइब्रेटिंग स्ट्रिंग्ज) पर एक निबन्ध लिखा जिसकी बदौलत उसे, अपने अध्ययन को अविच्छिन्न रखे रहने के लिए, एक छात्रवृत्ति मिल गई, और 1922 मे एक्स-रे के साथ कुछ परीक्षणात्मक प्रयोगो के आधार पर वह भौतिकी का एक डाक्टर भी बन गया। इसके बाद फेर्मि की अध्ययन-पिपासा जर्मनी के गोतिंजेन विश्वविद्यालय मे लोकविश्रुत वैज्ञानिक मैक्स बार्न की छत्रछाया मे, कुछ शान्त हुई। इतालवी सरकार के शिक्षा मन्त्रालय के एक अनुदान द्वारा एनरीको की उच्च अध्ययन की यह शृंखला चल सकी थी। और 1926 का साल अभी शुरू भी नही हुआ था कि 25 साल का एनरीको फेर्मि रोम विश्वविद्यालय मे सचमुच पूरे रोबदाब के साथ प्रोफेसर नियुक्त हो चुका था।

विद्युत् से आविष्ट एक कण जब हवा मे से गुजरता है तो उसमे से चिनगारिया-सी उठती हैं—और इन चिनगारियो को फोटोग्राफ द्वारा अंकित किया जा सकता है। किन्तु उसी हवा मे से जब कोई न्यूट्रॉन गुजरता हे, तब उसके इस यात्रापक्ष का कुछ भी चिह्न फोटो-फिल्म पर अंकित नही होता। वैज्ञानिक जानते हैं कि एक न्यूट्रॉन इस प्रकार स्वतन्त्रतापूर्वक तभी कुछ हवा खा सकता है जबकि वह किसी अणु के न्यूक्लियस का छेदन-भेदन कर रहा हो, व्यभिचरण कर रहा हो। दोनो की इस टक्कर व कशमकश से न्यूट्रॉन की राह बदल जाती है। मान लीजिए—दो गेदे हवा मे कही ऊपर ही टकरा जाए—दोनो मे एक (न्यूट्रॉन) अदृश्य हो और दूसरी (न्यूक्लियस) कुछ दीख सकती हो। जो गेंद हमे साफ-साफ दीख रही है, उसकी राह बदल जाने से हम कुछ अन्दाजा लगा सकते हैं कि

आसपास ही एक और गेंद भी है जो दीख नही रही ।

इस युक्ति-शृखला से एनरीको फेर्मि इस परिणाम पर पहुचा कि ये न्यूट्रॉन ही अणु के हृदय का भेदन कर सकते है । इलेक्ट्रॉन यह काम नही कर सकता क्योकि वह एक तो इतना हलका होता है और दूसरे उसमे गति भी कोई इतनी अधिक नही होती कि वह उसके भार की उस कमी को किसी प्रकार कुछ पूरा कर सके । प्रोटॉन मे भार अवश्य होता है, किन्तु न्यूक्लियस उसे परे धकेल देगा क्योकि दोनो के चार्ज धन ही होते है—'पाजिटिव' ही होते है । इसके विपरीत, न्यूट्रॉन—परिमाण मे भी उतना ही होता है जितना कि प्रोटॉन और क्योकि इसमे कोई चार्ज (ऋण अथवा धन) होता ही नही । इसमे किसी प्रकार के आकर्षण-विकर्षण का कोई प्रश्न उठता ही नही । यह थी फेर्मि की विश्लेषण-प्रक्रिया जिसे 1934 मे उसने एक क्रियात्मक रूप देकर दिखा दिया । उसने यूरेनियम के अणु पर इन न्यूट्रॉनो की बमबारी करके देखा यूरेनियम के न्यूक्लियस ने सचमुच न्यूट्रॉन को जैसे अपनी झपेट मे ले लिया है । अर्थात्, अणु का अन्तरग बदल चुका था । अब यूरेनियम, यूरेनियम नही, कुछ और तत्त्व बन चुका था—नेप्चूनियम । यूरेनियम के न्यूक्लियस मे 92 प्रोटॉन थे और नेप्चूनियम मे 93 होते हैं । यह अतिरिक्त प्रोटॉन तभी उत्पन्न हुआ था जबकि न्यूक्लियस ने न्यूटॉन को अपना अन्तरग करते ही एक इलेक्ट्रॉन को बाहर की ओर उगला ।

दुनिया-भर के अणु-वैज्ञानिक इसके अतिरिक्त और भी बातें (अणु के विषय मे) जानने मे दिन-रात लगे हुए थे कि अणुओ की बमबारी से क्या-क्या और परिवर्तन प्रत्यक्ष हो आते है। 1939 में वह युग-परिवर्तन आखिर आ ही गया। फेर्मि की दिशा मे चलते हुए अन्य वैज्ञानिको ने यूरेनियम की न्यूट्रॉनो द्वारा बमबारी जारी रखी और अन्तत वे न्यूक्लियस के विखडन मे सफल भी हो गए । ज्यो ही अणु छूटा, उसका कुछ अश अदृश्य हो गया—किन्तु अपनी जगह वह लुप्त द्रव्य शक्ति का एक अपरिमेय परिमाण छोडता गया । अर्थात्, 'स्थूल द्रव्य' 'सूक्ष्म शक्ति' मे—और अक्षरश आइन्स्टाइन की गणनाओ के अनुसार—परिणत हो चुका था ।

डेनमार्क मे नील्स बोर के साथ अनुसन्धान करते हुए लिज़े माइतनर तथा ऑतफ्रीश ने अनुभव किया कि अणु का यह विघटन युद्ध-विजय की दृष्टि से कितना महत्त्व-पूर्ण हो सकता है । उसी क्षण नील्स बोर आइन्स्टाइन से मिलने के लिए अमरीका रवाना हो गया और, इस प्रकार, धीरे-धीरे अमरीका के वैज्ञानिको को तथा अमरीका मे काम कर रहे अन्य विदेशी वैज्ञानिको को समस्या की युद्धोपयोगी महत्ता समझ मे आने लगी । उधर, वैज्ञानिको की इस आकुलता को आइन्स्टाइन ने एक पत्र द्वारा अमरीका सरकार तक पहुचा दिया । कोलम्बिया मे एनरीको फेर्मि ने इधर अणु के क्रियात्मक विघटन को परीक्षण द्वारा समर्थित कर दिखाया और उधर 'मॅनहाटन प्रोजेक्ट' (युद्ध विभाग द्वारा अणु बम प्रायोजना को दिया गया नाम) कार्यान्वित हो रहा था ।

'मॅनहाटन प्रोजेक्ट' मे फेर्मि के जिम्मे यह पता लगाने का काम था कि क्या विस्फोट की एक अनवरत शृखला सम्भव हो सकती है और अगर हो सकती है तो कैसे । शृखला मे अविच्छेद का एक नमूना हम रोज देखते है—जब भी कोई कागज़ जलता है एक सिरे

पर तीली लगाओ और आग, क्षण मे, इस सिरे से बढती-बढती कागज़ के दूसरे सिरे तक पहुच जाती है और सारा का सारा कागज़ भभक उठता है।

विश्वविद्यालय मे विज्ञान के विद्यार्थी रूप मे ही फेर्मि का मेल, सयोग से अपनी भावी पत्नी से हुआ था। दोनो को निकट लाने वाला एक सामान्य मित्र था—जो दोनो का ही पूर्व-परिचित था। बडी शीघ्रता के साथ यह प्रेम पनपा और 1928 मे लौरा केपन और एनरीको की शादी हो गई।

इस समय तक एनरीको के कोई 30 निबन्ध—द्रव्यकण, इलेक्ट्रॉन, रेडियेशन, गैसो की प्रकृति आदि विभिन्न विषयो पर—प्रकाशित हो चुके थे जिनके आधार पर उसे इटली की रॉयल एकेडमी का सदस्य चुन लिया गया। इस समादर का मूर्त रूप था—एक चमकीली धारियो वाली पतलून, एक कसीदा-किया जैकेट और चोगा, एक परो वाली टोपी और एक तलवार और 'हिज़ एक्सलेन्सी' का खिताब, और इन सबके अतिरिक्त एक अच्छी-खासी सालाना आय। फेर्मि-दम्पती ने इसके बाद नई दुनिया की कुछ यात्रा की, 1930 मे मिशिगन विश्वविद्यालय मे और 1934 मे ब्राजील तथा अर्जेण्टीना मे फेर्मि ने कुछ व्याख्यानमालाए दी।

1938 मे हिटलर और मुसोलिनी ने—भूरी-शर्ट पहने नात्सियो और काली-शर्ट पहने फासिस्टो ने—रोम की गलियो मे बाहो मे बाहे डाले मार्च किया। इसी एक घटना से इटली के फासिज्म मे अभिशाप की कालिमा रातो-रात इस कदर बढ गई कि रोम मे पोस्टर टग गए—'यहूदियो का रोमनो से कुछ सम्बन्ध नही', 'यहूदियो को खत्म कर दो' आदि-आदि। अब तक एनरीको फेर्मि का विरोध फासिस्टो के प्रति कुछ प्रकट व उग्र रूप धारण न कर पाया था, किन्तु अब एक विभीषिका स्पष्ट सम्मुख थी—लौरा केपन यहूदी जो थी।

1938 के दिसम्बर मे एनरीको फेर्मि, फेर्मि की पत्नी तथा उनके दो पुत्रो (और पुत्रो की नर्स) ने स्वीडन जाने के लिए सरकारी अनुमति प्राप्त कर ली ताकि एनरीको भौतिकी मे वहा स्वय उपस्थित होकर नोबल पुरस्कार ले सके। किन्तु फेर्मि परिवार फिर लौटकर इटली आया ही नही, न्यूयार्क जा निकला—जहा कोलम्बिया विश्वविद्यालय में फेर्मि ने एक नियुक्ति का कुछ प्रबन्ध पहले से कर लिया था। खुद नोबल पुरस्कार के स्वत' लाभ भी कुछ कम न थे—इस वक्त तो वह उसके लिए जैसे, स्वतन्त्रता का एक परवाना ही था। फेर्मि को यह पुरस्कार नये रेडियो सक्रिय तत्त्वो को पहचानने के लिए तथा मन्दगति न्यूट्रॉनो द्वारा न्यूक्लियस की आन्तर प्रतिक्रियाओ मे अनुसन्धान के लिए दिया गया था।

नील्स बोर के मॉडल मे अणु के दो भाग होते है—एक, अन्तरग अथवा न्यूक्लियस जिसमे प्रोटॉन होते हैं तथा दूसरा, बहिरग जिसमे इलेक्ट्रॉन होते हैं। जेम्स शैडविक ने कुछ परीक्षण किए और 1932 मे, उन परीक्षणो के आधार पर यह सिद्ध कर दिखाया कि एक तीसरा कण और भी होता है—न्यूट्रॉन जो अणु के इस केन्द्रक मे आबद्ध होता है। इस नये कण का भार प्राय प्रोटॉन के बराबर तथा इलेक्ट्रॉन से 2,000 गुना अधिक होता है। किन्तु जहा प्रोटॉन मे प्रकृत्या धनावेश होता है तथा इलेक्ट्रॉन मे ऋणावेश

वहा न्यूट्रॉन मे विद्युतावेश अथवा चार्ज बिलकुल नही होता—न ऋण, न धन। अब आविष्ट ऋणो को तो चुम्बक द्वारा अथवा वैद्युत् क्षेत्रो द्वारा नियत्रित किया जा सकता है किन्तु न्यूट्रॉन की स्थिति को नियमित कर सकना तो दूर, इस प्रकार जान सकना भी असम्भव है।

अणु के विस्फोटन की अविच्छिन्न शृखला प्राय इस प्रकार सिद्ध हुआ करती है। पहले तो न्यूट्रॉनो का एक स्रोत-सा एक यूरेनियम अणु का छेदन करता है, इससे शक्ति का विसर्जन होता है, किन्तु, अणु की प्रस्तुत प्रतिक्रिया मे, यह छेदन-क्रिया नही होती जो उसमे यह निरन्तरितता सिद्ध कर सकती हो। यूरेनियम के इस विस्फोटन मे मुख्य घटना कुछ और ही होती है, और वह यह कि यह फूट रहा अणु स्वय और न्यूट्रानो को बाहर फेकता है। ये नये न्यूट्रान और अधिक अणुओ को फाडते है, और यही कुछ आगे चलता ही चलता है जब तक कि सारा यूरेनियम तहस-नहस नही हो जाता। ये यूरेनियम-अणु फटते है और अनन्त शक्ति को उगलते हैं और इस शक्ति विसर्जन से इस प्रकार एक भीषण स्फोट प्रत्यक्ष हो आता है।

मूल समस्या यह थी कि क्या विस्फोट की एक अविच्छिन्न शृखला उत्पन्न कर सकना सभव है ? यदि वह सभव है तो उसे क्रियात्मक रूप मे किस प्रकार सिद्ध किया जाए। फेर्मि ने सुझाया कि यदि यूरेनियम को ग्रेफाइट (पेन्सिल के सिक्के) के साथ मिला दिया जाए तो ग्रेफाइट की पट्टी न्यूट्रानो की गति मे कुछ रुकाव[illegible]ल देगी, और अब होगा यह कि ये न्यूट्रान यूरेनियम के अणुओ के पास से तेज़ी से गु[illegible]रने की बजाय उनसे टकराने लगेंगे। और यह बात वैज्ञानिको को पहले ही पता थी कि यह टक्कर ले सकना एक मन्दगति न्यूट्रान के लिए अधिक सभव है क्योकि ज्यो-ज्यो वह न्यूक्लियस के निकट पहुचता जाएगा वह, आपसे आप, एक प्रकार के गुरुत्वाकर्षण-क्षेत्र से आकृष्ट होता जाएगा। एक तेज़ गति के साथ भागता हुआ न्यूट्रान प्राय न्यूक्लियस के साथ सघर्ष मे नही आता। वह तेज़ी के साथ परे निकल जाता है, ठीक वैसे ही जैसे गोल्फ की गेद तेजी मे, अगर उसके रास्ते मे पडे रोल्ज़ बहुत सख्त हो तो कप के ऊपर से उडती निकल जाएगी, टकराकर उसे उलट नही देगी।

कुछ अन्य वैज्ञानिको की सहायता से फेर्मि, अन्तत, एक एटामिक पाइल खडी कर सकने मे सफल हो गया—ग्रेफाइट की एक पाइल और यूरेनियम तथा यूरेनियम ऑक्साइड की कुछ ढेरिया। इस तरह की एक पाइल मे प्राय छ टन धातु काम मे आती है। एक और धातु कैडमियम की छोटी-छोटी पट्टिया भी बीच मे पडती है। क्योकि कैडमियम का काम होता है कि वह न्यूट्रानो को अपने मे जज्ब करता चले ताकि अणु के विच्छेदन मे गति हद से न बढ जाए। विस्फोट को नियत्रित [illegible] सकने की यह प्रथम 'प[illegible]म्परा' 2 दिसम्बर, 1942 को सभव हुई थी, और यही वह अवसर [illegible] [illegible]र काम्प्टन ने जेम्स कोनैण्ट को खबर दी थी कि "इटली का समुद्रयात्री नई दुनया के किनारे आ लगा है"—अर्थात् अणु-युग का सचमुच श्रीगणेश हो चुका है।

1954 मे अमरीका के परमाणु शक्ति आयोग ने फेर्मि को, एटम बम को विकसित करने मे उसका जो योगदान रहा था उसके पुरस्कारस्वरूप सवा लाख रुपये का एक
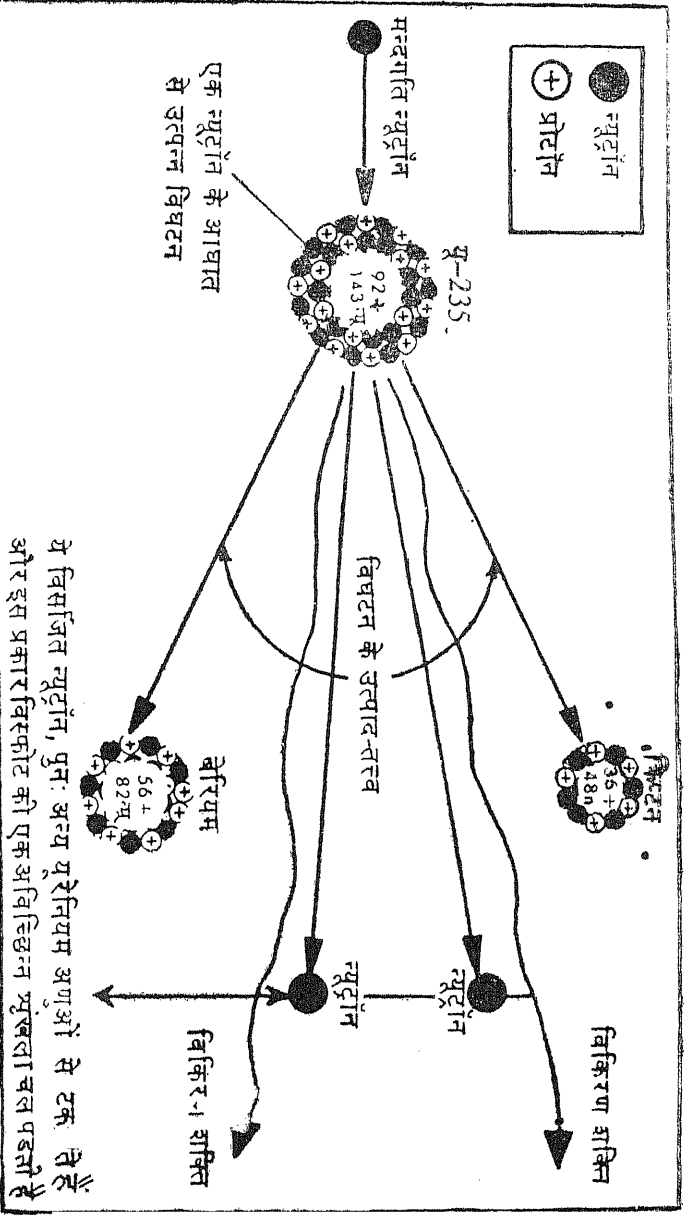
अणु से शक्ति का विसर्जन

पारितोषिक दिया। बारह दिन बाद फेर्मि की मृत्यु हो गई---कैन्सर से एक नामुराद बीमारी जिसपर एक दिन वैज्ञानिक, स्वय फेर्मि द्वारा प्रवर्तित, अणु के विस्फोट से उत्पन्न नूतन उपकरणो के प्रयोग से ही विजय पा लेंगे।

◇ ◇ ◇

पारिभाषिक शब्द

अकगणित	Arithmetic
अकुरण	Budding
अतरिक्ष	Space
अक्रिस्टलीय	Amorphous
अणु	Molecule
अभाज्य सख्या	Prime Number
अवक्षेपण	Precipitation
अश्व-शक्ति	Horse-Power
असवाहक	Non-Conductor
आक्सीकरण	Oxidation
आयनमण्डल	Ionosphere
आलम्ब, टेक	Fulcrum
आवर्धन	Magnification
आवेग	Impulse
आवेशित	Charged
उत्तल	Convex
उत्प्रेरक	Catalyst
उल्का	Meteor
उल्कापिंड, उल्काश्म	Meteorite
ऊर्जा	Energy
ऊर्ध्वाधर, खडी	Vertical
ऊष्मा	Heat
एकदिश विद्युत धारा, डी०सी०	Direct Current, D.C
किण्वन	Fermentation
किरणावली	Beam
कीट	Insect
कुडली	Coil
कुतुबनुमा	Compass
कोशिका	Cell
क्रोड	Core
क्षैतिज, पडी	Horizontal
गति	Motion
गतिज ऊर्जा	Kinetic Energy
गत्यात्मक	Dynamic
गुणनखड	Factor
गुरुत्व	Gravity
घन	Cube
घर्षण	Friction
घाताक	Exponent
घूर्णन	Rotation
चाप	Arc
चाल	Speed
चुम्बक	Magnet
जड़ता	Inertia
जीवाणु	Bacteria
ज्यामिति	Geometry
ज्योतिर्विज्ञान	Astronomy
तंत्रिका	Nerve
तत्त्व	Element
तार, टेलीग्राफ	Telegraph

दहन : Combustion
दहन कक्ष Combustion Chamber
द्रव्य Matter
द्रव्यमान . Mass
ध्वनित्र · Sourder
नत समतल Inclined Plan
नाका . Barrier
नाभिक Nucleus
निर्वात : Vacuum
परमाणु Atom
परावर्तन Reflection
परिपथ, सरकिट : Circuit
परिमाप : Perimeter
प्रतिदीप्त : Fluorescent
प्रतिरोध Resistance
प्रत्यावर्ती विद्युत्धारा, एऽसी० Alternating Current, A C.
प्रोटोजोआ, एककोशी Protozoa
फलक . Facet
बल . Force
बाह्य मण्डल : Exosphere
बिजली, विद्युन् Electricity
बीजगणित : Algebia
मदक Moderator
माइक्रोस्कोप, सूक्ष्मदर्शी · Microscope
माध्यम Medium
मिश्रण . Mixture
मिश्रधातु Alloy
मौलिक मशीन Basic Machine
याम्योत्तर Meridian
युक्ति, तरकीब, उपाय : Device
यौगिक Compound
रसायन विज्ञान Chemistry
रिक्तिका : Vacuole
विखण्डन Fission
विद्युतधारा, करेंट Current
विद्युत-विश्लेषण Electiolysis
विसवाहन · Insulation
विसरण : Diffusion
शक्ति Power
शीर्ष Vertex
सगणक · Computor
सचायक बैटरी Storage Battery
सयत्र · Plant
सलयन Fusion
सवहन · Conduction
सवाहक . Conductor
समतल . Plane
समस्थानिक, आइसोटोप Isotope
समातर : Parallel
समीकरण . Equation
सरध्र : Porous
साहुल रेखा Plumb Line
सूक्ष्म : Microscopic
सूत्र : Formula
स्पर्श रेखा . Tangent
स्वरित्र : Tuning Fork